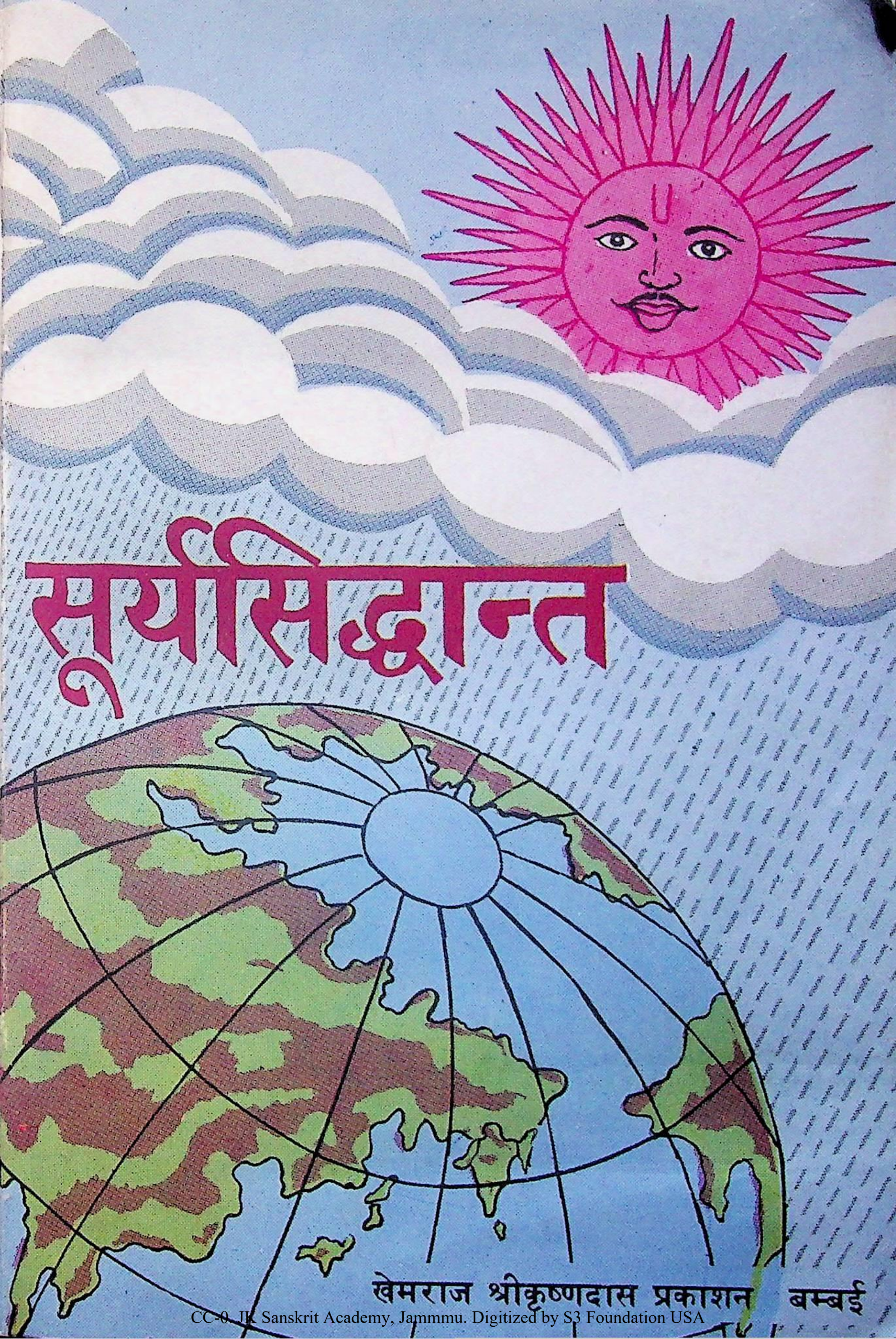

सूर्यसिद्धान्त
खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन बम्बई

श्रीः

श्रीसूर्य्यसिद्धान्त

(पूर्वोत्तरखण्ड समग्र)

गूढार्थप्रकाशसंस्कृतटीका

एवं

हिन्दीटीकासमेत

"यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा ।
तद्वद्वेदाङ्गशास्त्राणां गणितं मूर्द्धनि स्थितम्" ।।

टीकाकारः-पं० बलदेवप्रसादजी मिश्र मुरादाबाद निवासी

खेमराज श्रीकृष्णदास प्रकाशन,
बम्बई

संस्करण : दिसंबर २०१८, संवत् २०७५

मूल्य : २२० रुपये मात्र ।

मुद्रक एवं प्रकाशकः
खेमराज श्रीकृष्णदास,™
अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,
खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग,
मुंबई - ४०० ००४.

Printers & Publishers :
Khemraj Shrikrishnadass Prop: Shri Venkateshw.
Press, Khemraj Shrikrishnadass Marg, 7th Khetwadi,
Mumbai - 400 004.

Web Site : http://www.Khe-shri.com
Email : khemraj@vsnl.com

Printed by Sanjay Bajaj For M/s.Khemraj Shrikrishnadass
Proprietors Shri Venkateshwar Press, Mumbai-400 004, at
their Shri Venkateshwar Press, 66 Hadapsar Industrial
Estate, Pune 411 013

The humble translator didicates his worthless attempt to the benefactor of the Sanskrit knowing population of India i. e. Khemraj Shrikrishnadas Proprietor of the S. V. S. Press—Bombay.

P. B. PRASADA.

समर्पण।



भारतवर्षके गौरवस्तम्भ वैश्यवंशावतंस परमोदार देवभाषा उद्धारक श्रीमान् सेठ--खेमराज श्रीकृष्णदासजी गुप्त महोदयेषु।

श्रीमान्!

श्रीमान्‌ने संस्कृत भाषाका उद्धार करके भारतवासियोंका परमोपकार किया है। आपके समान धर्मरक्षक, दानशील, व आर्य ऋषियोंके बनाये प्राचीन शास्त्रोंका विस्तार करनेवाला और कोई नहीं है।

प्राचीन ऋषि मुनिजनोंके बनाए शास्त्रीय ग्रंथोंमें "सूर्यसिद्धान्त" नामक ज्योतिष ग्रन्थका आदर मान सब देशोंमें है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि, ज्योतिःशास्त्र प्रधान शास्त्र है। इस शास्त्रके रक्षित और विस्तारित होनेसे संसारका मंगल होना जानकर श्रीमान्‌के उत्साहसे उत्साहितहो अनेक यत्न और बहुत परिश्रम करके "सूर्यसिद्धान्त" ग्रंथका अनुवाद साधुभाषामें किया। श्रीमान् जानतेही हैं कि, गणितशास्त्र सर्व साधारण केलिये कितना कठिन है। इस अनुवादको पायकर ज्योतिर्विद् पण्डितोंका विशेष उपकार होगा। विशेषता यहहै कि, जो उदाहरण मैंने दिये हैं उनका अवलम्बन करके इस जटिल शास्त्रके भीतर प्रवेश करना बहुत कठिन न होगा।

सर्व शास्त्र रक्षाकर्त्ता श्रीमान्‌के करकमलमें यह अनुवादित ग्रन्थ अर्पण करके मैं आशाकरताहूँ कि इसको प्रकाशित करके आप सारे भारतवर्षमें प्रचारित करदेंगे। बिना धनवान् लोगोंकी सहायताके भारतवर्षमें कोई महान्‌कार्य नहीं होता। यह विचार कर इस ग्रंथको प्रचार होनेकी कामनासे भवदीय महायशस्वी नामके साथ इसको संयुक्त कराहूं।

भवदीय अनुग्रहीत-

बलदेवप्रसाद मिश्र,

मोहल्ला दीनदारपुरा,

मुरादाबाद (पश्चिमोत्तर)

भूमिका

अति प्राचीन समयसे सबही देशोंके रहनेवाले इस बातको जानते हैं कि, भारतवर्षके निवासी गण वैज्ञानिक विषयोंमें अत्यन्त पारदर्शी होते आए हैं। विलायतके पंडितगण इस भारतवर्षकोही गणित विद्याका मूल स्थान बतलाकर इसकी प्रतिष्ठा करते हैं। इङ्गलैण्डके तत्त्वदर्शीलोग जब भारतवर्षीय ग्रंथादिका विचार करनेको तैयार होते हैं तब वे गणितात्मक ज्योतिषशास्त्रकी अपार गवेषण निहार देशकालका विचार करके विस्मय सागरमें गोतेखाने लगतेहैं। उस गणित शास्त्रके अत्यन्त प्राचीन, सर्वमान्य अठारह सिद्धान्तोंमेंसे "श्रीसूर्यसिद्धान्त" नामक ग्रंथको बहुतही कम भारतवासी जानतेहैं। अनादर प्राप्त करते २ इस गणित शास्त्रके मुख्य २ ग्रन्थरत्न कालकी सर्व संहारिणी शक्तिके नीचे दबते चलेजाते हैं। भारतवासियोंने अपने पूर्व पुरुषोंकी कीर्तिको रक्षित करनेमें महा उदासीनता प्रगटकी है। मैं आशा नहीं करसक्ता कि, इस समय वह मुझ तुच्छके कहनेसे उदासीनताको छोडदेंगे। तथापि अपना कर्त्तव्य समझ यह सानुवाद ग्रन्थ अत्यन्त परिश्रम करके वर्तमान ज्योतिष्क मण्डली और साधारणके निकट प्रकाशित कर आनन्द प्राप्त करताहूं।

आजकल जो लोग विद्वान गिनेजाते और जिनके करने धरनेसे कुछ हो सकताहै; उन मेंसे बहुतसे तो शास्त्रको देखतेतक नहीं! बहुतसे ऐसे हैं कि, स्वयं तो शास्त्रको जानते नहीं परन्तु अपनी पंडिताई बराबर छोंके चले जाते हैं। उपरोक्त ग्रंथ विमुखता और अभिमानताही तो सब काम बिगाड़ रहीहै, और बराबर ज्योतिषी लोगोंके ऊपर अपना अधिकार करती चलीजातीहै। यहांतक कि, अब इस अदूरदर्शिताका फलभी कुछ २ फलने लगाहै। आजकल ज्योतिषी लोग पेट-चिन्तामें लगे रहकर भली भांतिसे उस विद्याको नहीं पढ़ते पढ़ाते। इसी कारण कम परिश्रम करनेकी इच्छासे अनेक करण ग्रंथोंको विनाहीं देखे भाले, उन करण ग्रंथोंके मूल श्रीसूर्यसिद्धान्तका नाम लेकर, और ग्रंथोंकी सारिणीकी सहायतासे तिन करण ग्रंथोंके फलको प्राप्तहो इस अपूर्व ग्रंथकी दुहाई दिया करतेहैं। परन्तु इस विषयका सूचीपत्र बनाते हुए-कि उनमेंसे कितनों ने श्री सूर्यसिद्धान्तका अवलोकन किया है एक साथ दुःखित होना पड़ता है।

सूर्यसिद्धान्तानुगामी सम्प्रदायके सिवाय भारतवर्षमें एक नये प्रकारके सिद्धान्त पूजकोंकी सृष्टि हुई है। इस सिद्धान्तके उत्पन्न करनेवाले अर्द्ध कुक्कुटी जरती न्यायके समान ज्योतिष शास्त्रमें प्रवेश करनेके पहलेही अपनेको पंडित और ज्योतिषी कहलाना चाहते हैं। कोई नैयायिक, कोई थवईके कार्यमें महाबुद्धिमान, कोई साधारण गणित तीर्थाभिमानी, कोई यश प्राप्त करनेके लिये नवीनमतके प्रचार करनेमें निपुण, कोई किसी ज्योतिषीका छात्र, या कोई साहित्य पारदर्शी; बस! ऐसे लोगही इसमें प्रधान उद्योगी हैं। कोई भास्कराचार्यके बनाये सिद्धान्त शिरोमणिके गणिताध्यायका अनुवर्ती है। कोई अपने गुरुसे पाएहुए दो एक अंगरेजी "फार्मिउल" का भाषान्तर हस्तगत करकेही गुरुदास्याभिमान ज्योतिषकिा पद पानेकी इच्छा करताहै, कोई बिनाही अयनांश तत्त्वके जाने हुए, इच्छानुसार चलने वाले किसी पश्चिमदेशके ज्योतिषीका अनुकरण करताहै। उपरोक्त समस्त महाशयगणही इस मूलग्रन्थको पढ़कर, अपने २ गुरु और भास्करादिके परमगुरु; श्रीसूर्यसिद्धान्तके लेखक ऋषिजीके चरणोंमें प्रतिष्ठा प्राप्तकर अन्तर्दाहको निवारण करें।

गणित-ज्योतिषमें सूर्यसिद्धान्तका नाम अत्यन्त विख्यातहै । भारतवर्षके अधिक पंचाङ्ग इसी ग्रंथसे बनतेहैं, और इसीके अनुसार हमारे सारे व्यवहार हुआ करतेहैं। इस कारण प्रत्येक विद्वानको ऐसे ग्रंथके देखनेकी इच्छाका होना कुछ असम्भव नहीं है ।

बहुतसे मनुष्य कहा करते हैं कि सूर्यसिद्धान्त यहांतक कठिन है कि, इसका पढना पढ़ाना अधिकारसे बाहर पाँव रखना है । गणित शास्त्रमें साधारण अधिकारके साथ २ क्रमशः प्रवेश करना कुछ कठिन बात नहीं है । निःसन्देह अंकपात बहुत करने पड़ते हैं सो वहभी दुरारोह नहीं है ।

नए पढ़ने वालोंके लिये तो संज्ञाज्ञानही वास्तवमें कठिन है । उदाहरणके साथ ग्रंथका पढ़ना बहुतही लाभकारी है । जहां दो एक विषय आगये, बस फिर और विषयोंका समझमें आना कुछ कठिन नहीं रहता । पश्चात् करण ग्रंथोकी स्वयंही निर्देश करदी· जा सकेगी और मूलमें पूर्णाधिकार होजायगा। अब यही निवेदनहै कि जो पहली पहल कठिन समझपड़ै, तो आप इसका पढ़ना छोडें नहीं, बरन् बराबर देखे जाँय । जहां कहीं कठिन ज्ञात हो वहीं पर दो चार बार दृष्टि डालजाओ, अवश्य सरलता पूर्वक जान जाइ· येगा। यदि पहले करणग्रन्थ पढ़लिये जाँय तो सुभीता है।

गणनाके समयमें साधारणता विकलाके नीचे सूक्ष्माङ्कका प्रयोजन नहीं है. और बहुतसे विषयोंमें तिसको छोड़देनेसे भी कुछ हानि लाभ नहीं।

गवर्नमेंटके अनुग्रहसे, स्वदेश वासियोंके अनुरागसे, धनी व धर्मात्मा पुरुषोंकी आर्थिक सहायतासे प्रतिवर्ष सहस्रों विद्यार्थी लोग अंकशास्त्रमें प्रवीण होतेहैं । आ· शाकी जातीहै कि इनमेंसे अनेक विद्यार्थी लोग निजदेशकी अंक विद्या और ज्योति षविद्यापर ध्यानदेंगे इस ग्रन्थमें १४ अध्याय हैं । इनके मध्य-

१ अध्यायमें-ग्रन्थारंभ. कालविभाग, युगमान, दिनसंख्या, अहर्गण, भगणादि ग्र· होंका मध्य, मन्दोच्च और शीघ्र देशान्तर परमविक्षेपादिहैं।

२ अध्यायमें-ग्रहगतिका कारण, गति प्रकार, ज्यानिर्णय, क्रान्ति और केन्द्रसाधन भुज और कोटीसे परिधि करके फलादि निर्णय। ग्रहस्पष्ट, भुजांतर संस्कार, स्पष्ट गति स्पष्टविक्षेप; अहोरात्रमान, चर, तिथि, नक्षत्र, योग, करण हैं।

३ अध्यायमें-पूर्व पश्चिम रेखा निर्णय, अयनांश, विषुवद्भा, लम्बज्या, नत्यानयन, अग्रा कोणशङ्कु, निरक्ष राशिमान, लग्न, दशम हैं।

४ अध्यायमें-स्पष्ट, चंद्र, छाया और सूर्यका मान, ग्रास, स्थित्यर्द्ध, कोटि, बल· नाश है।

५ अध्यायमें-चन्द्रलम्बन, अवनति (सूर्यग्रहण) हैं।

६ अध्यायमें-परिलेखाधिकार है।

७ अध्यायमें-ग्रहयुत्यधिकार, अक्ष-दृक्कर्म, अयन-दृक्कर्म, ग्रहबिम्ब । ग्रहदर्शन-युद्ध हैं।

८ अध्यायमें-नक्षत्रग्रह युत्यधिकार नक्षत्रोंके स्थान हैं।

९ अध्यायमें-उदयास्ताधिकार, कालनिर्णय, कालांश हैं।

१० अध्यायमें-शृङ्गोन्नति, चन्द्रोदय।

११ अध्यायमें-पाताधिकार, व्यतिपात, कालनिर्णय, गण्डक, भसन्धि ।

१२ अध्यायमें-अध्यात्मविद्या, कक्षास्थिति, मेरू, भद्राश्व. यमकोटी, लंका, केतुमाल-ध्रुवनक्षत्रकी पृथ्वीसे दूरी है।

१३ अध्यायमें-गोल और यंत्रादि बनाना हैं ।

१४ अध्यायमें-कालनिर्णय है ।

त्रिज्या (Radus) धनु (Aae), ज्या (Sine), कोटी (Cosine) कर्ण (yH, potenuse) आदि कई एक त्रिकोण मितिके शब्दोंका व्यवहार निरन्तर हुआ है इस कारण इनको पहलेहीसे जान रखना चाहिये। लम्ब विषुवच्छाया आदि अपने २ देशके अक्षांश से निर्णीत होते हैं। विक्षेप (Latitude) क्रान्ति (Declination) स्फुट आदिग्रहाकें अवास्थिति करके हैं। मध्य मन्दोच्च. शीघ्र, परिधि आदि स्पष्टादिलानेके प्रकरण हैं।

राशिचन्द्रका जो बिन्दु मध्यरेखाके परे स्थितहो, सो दशम और उदयगत लग्न है। त्रिप्रश्नाध्यायमें किस प्रकारसे दिक् और कालका निर्णय करना चाहिये, और पश्चात् यंत्राध्यायमें यंत्रके बननेकी रीतिको दिखाय मानमन्दिरके बनानेका उपदेश दियाहै। भूमिकाको समाप्त करने से पहले सर्वोपमोपमेय, गुणिजन मंडली मंडन पाखण्डमत खण्डन, श्रीमान् पं० ज्वालाप्रसाद मिश्र व श्रीमान् श्रीविमलाप्रसाद दिद्धान्तसरस्वती जीको बारम्वार धन्यवाद दियाजाता है, क्योंकि उपरोक्त महाशयोंके द्वारा इस ग्रंथके अनुवादमें बड़ी सहायता मिलीहै । पाठार्थियोंके लाभार्थ इस पुस्तकमें योग्य व उचित उदाहरणभी दिए हैं | अलमंतिविस्तरेण।

संवत् १९५१ विक्रमी।
चैत्रकृष्ण २ रविवार.

सुखानंदमिश्रात्मज-
बलदेवप्रसाद मिश्र,
मोहल्ला दीनदारपुरा मुरादाबाद.
पश्चिमोत्तर.



॥ श्रीः ॥

अथ सूर्यसिद्धांतस्थविषयानुक्रमणिका ।



इत्यनुक्रमणिका समाप्ता ।

श्रीगणेशाय नमः ।

अथ

श्रीसूर्यसिद्धान्तः ।

गूढार्थप्रकाशटीका—भाषाटीकाभ्यां

सहितः ।

यथाशिखामयूराणांनागानांमणयोयथा ।
तद्वद्वेदाङ्गशास्त्राणांगणितंमूर्द्धनिस्थितम् ॥

प्रथमोऽध्यायः ।

यत्स्मृत्याभीष्टकार्यस्य निर्विघ्नां सिद्धिमेष्यति । नरस्तं बुद्धिदं वंदे वक्रतुण्डं शिवोद्भवम् ॥ १ ॥ पितरौ गोजिवल्लालौ जयतोऽम्बाशिवात्मकौ । याभ्यां पञ्च सुता जाता ज्योतिःसंसारहेतवः ॥ २ ॥ सार्व्वभौमजहांगीरविश्वासास्पदभाषणम् ॥ यस्य तं भ्रातरं कृष्णबुधं वंदे जगद्गुरुम् ॥ ३ ॥ नानाग्रन्थान्समालोच्य सूर्यसिद्धांतटिप्पणम् । करोमि रंगनाथोऽहं तद्गूढार्थप्रकाशकम् ॥ ४ ॥

अथग्रहादिचरितजिज्ञासूनमुनींस्तत्प्रश्नकारकान्प्रतिस्वविदितंयथार्थतत्त्वंसूर्यांशपुरुषमयासुरसंवादंवक्तुकामःकश्चिदृषिःप्रथममारम्भणीयतत्कथननिर्विघ्नसमाप्त्यर्थं कृतंब्रह्मप्रणाममंगलं शिष्यशिक्षायैनिबध्नाति—

अचिन्त्याव्यक्तरूपायनिर्गुणायगुणात्मने ॥
समस्तजगदाधारमूर्तयेब्रह्मणे नमः ॥ १ ॥

ब्रह्मणे बृहत्त्वादपरिच्छिन्नत्वाज्जगद्व्यापकायेश्वराय "तस्माद्वाएतस्मादात्मन आकाशःसम्भूतः" इत्यादिश्रुतिप्रतिपाद्यायेत्यर्थः । नमः कायवाक्चेष्टोपलक्षितेन मानसेन्द्रियबुद्धिविशेषणमत्तस्त्वमुत्कृष्टस्त्वत्तोऽहमपकृष्टइत्यादिरूपेणनतोऽस्मीत्यर्थः । ननुव्यापकत्वेनाकाशस्यैवसिद्धिरतआह । समस्तजगदाधारमूर्तय इति । समस्तस्यस्थावरजंगमात्मकस्य जगत उत्पत्तिस्थितिविनाशवत आधाराश्रयभूताब्रह्मविष्णुशिवरूपामूर्तयः स्वरूपाणियस्यतस्मैब्रह्मविष्णुशिवात्मकायेत्यर्थः । आकाशस्यतदात्मकत्वाभावान्नसिद्धिरितिभावः । नन्वेतादृशस्यस्वरूपध्यानंकर्तुंस-

मुचितमित्यतआह । अचिन्त्याव्यक्तरूपायेति । अचिन्त्यश्चासावव्यक्तरूपस्तस्मै । अचिन्त्योध्यानाविषयः । अत्रहेतुरव्यक्तरूपः । नव्यक्तंप्रकटंरूपंस्वरूपंयस्यतथाच स्वरूपध्यानासम्भवान्नमस्कारएवसमुचित इति भावः । नन्वव्यक्तरूपः कथमित्यतआह । निर्गुणायेति । निर्गता गुणाः सत्त्वरजस्तमोरूपायस्मात्तस्मैगुणातीतायेत्यर्थः । तथाच गुणात्मकस्य व्यक्तरूपत्वेनायं तदभावादव्यक्तरूपइति भावः । नन्वेवमस्यारूपित्वमेवफलितंनाव्यक्तरूपित्वमित्यतआह । गुणात्मनइति । गुणानित्यज्ञानसुखादयआत्मगुणाआत्मस्वरूपं यस्य तस्मै नित्यज्ञानसुखाय । "सत्यंज्ञानमनन्तंब्रह्म" इतिश्रुतेरित्यर्थः । तथाचास्यरूपित्वमसिद्धमितिभावः । साक्षान्निर्गुणाय परम्परया गुणात्मने । कथमन्यथाजगत्कर्तृत्वंसम्भवति । "प्रकृतिंस्वामवष्टभ्यविसृजामि पुनःपुनः । भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशःप्रकृतेर्वशात् ॥ " इतिभगवदुक्तेरित्यन्ये ॥ १ ॥

भा०टी०-अचिन्त्य (विचारमें न आनेके योग्य) अव्यक्तरूपी, निर्गुण, गुणात्मा समस्त जगदाधारमूर्ति ब्रह्मको प्रणाम है ॥ १ ॥

अथस्वोक्तस्यस्वकल्पितत्वशङ्कावारणायतत्संवादोपक्रमं विवक्षुः प्रथमं मयासुरेण तपस्तप्तमितिश्लोकाभ्यामाह-

अल्पावशिष्टेतुकृतेमयनामामहासुरः ॥ रहस्यंपरमंपुण्यंजिज्ञासुर्ज्ञानमुत्तमम् ॥ २ ॥ वेदाङ्गमग्र्यमखिलं ज्योतिषांगतिकारणम् ॥ आराधयन्विवस्वन्तं तपस्तेपेसुदुश्चरम् ॥ ३ ॥

मयेतिनामयस्यासौमयाख्योमहादैत्यःकश्चित् । तपोऽभिमतदेवताप्रीतिकरजपहोमध्यानादिनास्वशरीरादिक्लेशनियमरूपंतेपेकृतवान् । दैत्यानां तपश्चरणंपुराणेषु प्रतिपदं सुप्रसिद्धम् । ननुतत्रतेषांतपश्चरणस्यदेवताविशेषमभिमतमुद्दिश्यप्रसिद्धेरनेनकंदेवमुद्दिश्यतपस्तप्तमित्यतआह । आराधयन्निति । विवस्वन्तंसवितृमंडलाधिष्ठातारंनारायणंसेवयन् । ननुदैत्यारिमेनंस्वशत्रुंज्ञात्वाप्ययंकथंस्वाभिमतसिद्ध्यर्थमारराध । नहिस्वशत्रुतःस्वहितासिद्धिरन्यथाशत्रुत्वव्याघातइत्यतस्तपोविशेषणमाह । सुदुश्चरमिति । सुतरांदुःखैरत्यन्तक्लेशैश्चरितुंकर्तुंशक्यमित्यर्थः । तथाचभक्तजनैकवत्सलतयाताद‍ृशतपश्चरणसुप्रसन्नोदैत्यानामप्यभिमतंपूरयतीतिपुराणेषुशतशःप्रसिद्धम् । अतस्तत्प्रतीत्याराधयन्नितिभावः । ननुपुराणेषुदैत्यानांतपश्चरणोक्तिप्रसङ्गेक्वचिदप्यस्यानुक्तेस्तत्तपश्चरणंकथंप्रमाणंज्ञेयमित्यतआह । अल्पावशिष्टइति । कृतेकृताख्येयुगचरणे तुकारात्सन्ध्यासन्ध्यांशसहितइत्य-

---

१ मयोनाम इति पाठान्तरम् ।

र्थः । तेनसन्ध्यासन्ध्यांशसमेतकेवलकृतरूपाभिमतकृतचरणेनग्रन्थान्त-रोक्तकेवलकृतइतिपर्यवसन्नम् । अल्पकालेनसन्ध्यांशान्तर्गतेनशेषिते । समास्यासन्नाभिमतकृतयुगेमयासुरेणतपस्तप्तमित्यर्थः । तथाचसाम्प्रतमेवमयासुरेणतपस्तप्तमितिसर्व्वजनावगतमत्यक्षप्रमाणसिद्धंनागमान्तरप्रामाण्यमपेक्षतइतिभावः । ननुमयासुरेणकिमर्थंतपस्तप्तंनहिप्रयोजनमनुद्दिश्यमन्दोऽपिप्रवर्त्ततइत्यतोमयासुरविशेषणमाह । जिज्ञासुरिति । ज्ञायतेऽनेनेतिज्ञानंशास्त्रं ज्ञातुमिच्छुः । तथाचशास्त्रज्ञाननिमित्तंतेनतपस्तप्तमितिभावः । किंतच्छास्त्रमित्यतोज्ञानविशेषणमाह । ज्योतिषामिति । प्रवहवायुस्थानां ग्रहनक्षत्राणागतिकारणम् । येगत्यर्थास्तेज्ञानार्थाइतिगतेःसंस्थानचलनमानादिज्ञानस्यकारणंप्रतिपादकंज्योतिःशास्त्रंजिज्ञासुरितिफलितम् । ननुज्योतिःशास्त्रज्ञानार्थमयमायासोनयुक्तस्तस्यसर्व्वविज्ञेयत्वेनादुरूहत्वादित्यतआह । अखिलमिति । समग्रंज्योतिःशास्त्रमित्यर्थः । तथाचर्षीणां मानुषत्वेनैभ्योममज्ञानमखिलंयथार्थंवा नभविष्यतीतिदैत्यबुद्ध्यामत्वानिःशेषज्योतिःशास्त्रस्यदुरूहस्याविदिततत्त्वंभगवंतमप्रतारकंसर्वज्ञंमहागुरुंसेवयामासेतिभावः । ननुतस्यासुरस्यंज्योतिःशास्त्रप्रवृत्तिर्न युक्ताफलाभावादित्यतआह । वेदांगमिति । वेदस्याङ्गम् । तथाचाङ्गिनोयत्फलंतदेवाङ्गस्येतिमोक्षरूपफलसद्भावादत्रप्रवृत्तिर्युक्तेतिभावः । अतएवपुण्यजनकंपुराणन्यायेत्यादिचतुर्दशविद्यांतर्गतत्वात् । नन्विदंवेदाङ्गंकुतइत्यतआह । परममिति । "कालोऽयंभगवान्विष्णुरनन्तःपरमेश्वरः ॥ तद्वेत्तापूज्यतेसम्यक्पूज्यःकोऽन्यस्ततो मतः ॥ १ ॥" इत्युक्तेःकालप्रतिपादकत्वेनोत्कृष्टमतोवेदाङ्गम् । एतेनपुराणादीनां निरासइतिभावः । ननुव्याकरणादीनांषण्णांवेदाङ्गत्वादस्मिन्नेवप्रवृत्तिः कथमित्यतआह । अग्र्यमिति । षण्णांवेदाङ्गानांमध्येश्रेष्ठम् । कुतइत्यतआह । उत्तममिति । मुख्याङ्गंनेत्रमित्यर्थः । तथाचंनेत्ररहितस्याकिञ्चित्करत्वादिदं ज्योतिःशास्त्रंवेदाङ्गेषुश्रेष्ठमितिभावः । ननुतथाप्येतस्यज्ञानार्थमेतावानायासोनयुक्तइत्यतआह । रहस्यमिति । " विद्याहवैब्राह्मणमाजगामगोपायमाशेवधिष्टेऽहमस्मि । असूयकायानृजवेयतायनमाब्रूयावीर्यवतीतथास्याम् ॥ " इतिश्रुत्युक्तेर्गोप्यमित्यर्थः । तथांचास्यशास्त्रस्यादेयत्वेननिश्चितत्वादनेकतत्प्राप्त्यर्थमेतावानप्यायासः कृतइति भावः ॥ २ ॥ ३ ॥

भा०टी०–सत्ययुग कुछेक (अंश) शेषरहते हुए, मयनामक महाअसुरने परमपुण्यरहस्य वेदांगोंमें श्रेष्ठ समस्त ज्योतिषों (ग्रहनक्षत्रों) की गति का कारणरूप उत्तम ज्ञानको प्राप्त करनेके लिये जिज्ञासु हो अतिकठोर तप करके सूर्यकी आराधना कीथी ॥ २ ॥ ३ ॥

ततस्तुष्टोऽर्कोमयायेदंदत्तवानित्याह-

तोषितस्तपसातेनप्रीतस्तस्मैवरार्थिने ॥
ग्रहाणांचरितंप्रादान्मयायसवितास्वयम् ॥ ४ ॥

स्वयंस्वतःप्रीतःसुखरूपः । यद्वाशोभनोऽयंप्रत्यक्षःप्रीतःसन्तुष्टोऽपिसन्सविता सवितृमण्डलमध्यवर्ती तेनसुदुश्चरेणतपसाराधनेनतोषितः । अत्यन्तंसन्तुष्टः तस्मै असुराय मयनाम्ने वरार्थिनेवरंस्वाभिमतंज्योतिःशास्त्रमर्थयतेज्ञातुमिच्छतित स्मैज्योतिःशास्त्रजिज्ञासवे ग्रहाणांप्रवहवायुस्थग्रहताराणां चरितंज्ञानंप्रादात् । प्रकर्षेणसाकल्येनयथार्थतत्त्वेनादाद्दत्तवान् ॥ ४ ॥

भा०टी०-उसके तपसे संतुष्ट हुए स्वयं सूर्यभगवानने प्रसन्न हो वरके चाहने वालेमयअसुरको ग्रहोंका चरित्र दिया ॥ ४ ॥

नन्वयंसूर्य्यःस्वकार्यार्थंशरणागतमपिस्वशत्रुंप्रतिकथमिदमुक्तवानित्यतोमयं प्रतिसाक्षात्सूर्येणोक्तस्यवचनस्यानुवादार्थमुद्यतःप्रथमंतत्संगतिप्रदर्शकमेतदाह-

श्रीसूर्यउवाच ॥

विदितस्तेमयाभावस्तोषितस्तपसाह्यहम् ॥
दद्यांकालाश्रयंज्ञानंग्रहाणांचरितंमहत् ॥ ५ ॥

श्रीसूर्यउवाचेति । तेजःसमूहैर्देदीप्यमानोऽर्कोमयासुरंप्रत्यवददित्यर्थः । अन्यथाचतुर्थपञ्चमश्लोकयोःसङ्गत्यनुपपत्तेः । किमुवाचेत्यतस्तद्वचनमनुवदति । हेमयासुरतेतवभावोमनोरथोज्योतिःशास्त्रजिज्ञासारूपः मयासूर्येणविदितस्त्वदकथितोऽपिस्वतोज्ञातः । ततःकिंनह्येतावताममतत्सिद्धिरतआह । अहमिति । तेइत्यस्यावृत्तेस्तेतुभ्यंज्ञानंशास्त्रंकालाश्रयंकालप्रधानम् । ग्रहाणांप्रवहवायुस्थानांमहदपरिमेयंचरितं माहात्म्यम् । ग्रहस्थितिचलनादिप्रतिपादकज्योतिःशास्त्रमितिफलितार्थः । अहंसूर्य्यमण्डलस्थः दद्यांदास्यामि । ननुमांदैत्यंप्रतीदंवाक्यंप्रतारकंभविष्यतीत्यतःस्वविशेषणमप्रतारणपूर्वकतत्कथनहेतुभूतमाह । तोषितइति । हियतस्तपसात्वत्कृताराधनेनात्यन्तसन्तुष्टोऽतोदद्यामित्यर्थः । तथाचत्वत्कर्म्मवश्येनमयाभक्तजनवत्सलतयाजातिवैरमुपेक्ष्यानुकम्पितप्रह्लादवत्त्वमप्रतार्योऽनुकम्पितइतिभावः ॥ ५ ॥

भा०टी०-सूर्यभगवानने कहा;-मैंने तुम्हारे अभिप्रायको जाना, तपसे संतुष्ट भी हुआ हूं, काल (समय) के आश्रित हुए ग्रहोंके चरित्रका ज्ञान तुमको दूंगा ॥ ५ ॥

ननुसूर्य्यस्यसदाजाज्वल्यमानतयातत्सन्निधौश्रवणकालपर्य्यन्तंमयःस्थातुंकथं शक्तः कथंवानवरतभ्रमस्यतस्यमयसंवादार्थभ्रमणविच्छेदःसम्भवति । अतोदानासम्भवात्कथंदद्यामित्युक्तस्तद्वचनान्तरमनुवदति–

नमेतेजःसहःकश्चिदाख्यातुंनास्तिमेक्षणः ॥
मदंशःपुरुषोऽयंतेनिःशेषंकथयिष्यति ॥ ६ ॥

हेमय तेतुभ्यमयमग्रस्थःपुरुषोनिःशेषंसम्पूर्णज्योतिःशास्त्रंकथयिष्यति । नन्वयं तथ्यंनवदिष्यतीत्यतआह । मदंशइति । ममसूर्यस्यांशःसम्बन्धीमदुत्पन्नइत्यर्थः । तथाचमदनुकम्पितंत्वांप्रत्ययंतथ्यमेववदिष्यतीतिभावः । एतेनाहंस्वांशद्वारादास्यामीत्यर्थोदद्यामितिपूर्व्वपद्योक्तस्यप्रकटीकृतः । ननुत्वयैववक्तव्यमित्यतआह । नेति । कश्चिदपिजीवोमेसूर्यमण्डलस्थस्यतेजःसहस्तेजोधारकोन । तथाचबहुकालंमत्समीपेस्थातुमशक्तस्त्वंकथंमत्तःश्रोष्यसीतिभावः । ननुस्वतपःसामर्थ्येनाहंत्वत्समीपे बहुकालंस्थातुंशक्तस्त्वत्तःश्रोष्यामीत्यतआह । आख्यातुमिति । मेसूर्य्यमण्डलस्थस्यप्रवहवायुनानवरतंभ्रममाणस्यस्वशक्त्याकदाप्यस्थिरस्यकथयितुंक्षणः कालोनास्ति । भ्रमणावसानासम्भवेनैकत्रस्थित्यसंभवात् । तथाचास्थिरस्यतवबहुकालंमत्सङ्गासम्भवान्मत्तःश्रवणमसम्भावि । नहित्वमपिमत्स्थानमाधिष्ठातुंशक्तोयेनमत्तःश्रवणंतवसम्भवति । ईश्वरनियोगाभावादितिभावः ॥ ६ ॥

भा०टी०–मेरे तेजको कोई नहीं सह सकता और हमको समयभी नहीं है । हमारा अंशरूपा यह पुरुष तुमसे विशेषतासहित कहेगा ॥ ६ ॥

अथसूर्य्यवचनानुवादमुपसंहरन्सूर्यांशपुरुषमयासुरसंवादोपक्रममाह–

इत्युक्त्वान्तर्दधेदेवःसमादिश्यांशमात्मनः ॥
सपुमान्मयमाहेदंप्रणतंप्राञ्जलिस्थितम् ॥ ७ ॥

देवःसूर्य्यमण्डलस्थः इतिपूर्वोक्तमुक्त्वाकथयित्वा आत्मनः स्वस्यांशमग्रस्थमंशपुरुषंसमादिश्यत्वंमयंप्रतिसकलंग्रहमाहात्म्यं कथयेत्याज्ञाप्य विनाज्ञांसमयंप्रतिकिंकथंकथयेत् समुच्चयार्थश्चकारोऽनुसन्धेयः अन्तर्दधे अन्तर्धानंसूर्यांशपुरुषमयनेत्रागोचरतामाप्तवान् । प्रकृतमाह । सइति । सूर्याज्ञप्तःसूर्य्यांशपुरुषो मयासुरंप्रतीदंवक्ष्यमाणमवदत् । ननुनापृष्टोवदेदित्युक्तेर्मयापृष्टोऽयंकथंमयंप्रत्यवददित्यतोमयविशेषणद्वयमाह । प्रणतं प्राञ्जलिस्थितमिति । प्रकर्षेणभक्तिश्रद्धातिशयेननतंनम्रंस्वनमस्कारकारकम् । प्रकृष्टोमानःसचेष्टाद्योतकोयोऽञ्जलिःकराग्रयोः

सम्पुटीकरणंतत्रचित्तैकाग्र्येणावस्थितम् । एतेनावनतशिरःकरसम्पुटसंयोगः कायिकनमस्कारइतिस्पष्टमुक्तम् । तथाचस्वामिन्नहंत्वांनतोऽस्मिमामनुगृहाणेदंकथये-त्युक्तिद्योतकनमस्कारोक्तेर्मयपृष्टोऽयंमयंप्रत्यवददितिभावः ॥ ७ ॥

भा०टी०-सूर्यभगवान् यह कह अपने अशीयको आज्ञा देकर अन्तर्धान हुए । और प्रणाम करते हाथ जोडकर खड़ेहुए मयसे सूर्यांशपुरुषने कहा ॥ ७ ॥

अथप्रतिज्ञाततत्संवादानुवादेमयंप्रतिज्ञानंवक्तुकामःसूर्य्यांशपुरुषः सावधानतयामदुक्तंशृणुत्वमित्याह-

शृणुष्वैकमनाःपूर्वंयदुक्तंज्ञानमुत्तमम् ॥
युगेयुगेमहर्षीणांस्वयमेवविवस्वता ॥ ८ ॥

हेमयएकस्मिन्नेवमनोयस्यासौ । अन्यविषयेभ्योमनःसमाहृत्यमदुक्तेमनोददानस्त्वंतज्ज्योतिःशास्त्रंशृणुष्व । श्रोत्रद्वारात्ममनःसंयोगेनप्रत्यक्षंकुर्वित्यर्थः । ननु त्वंस्वकल्पितंवदिष्यसीत्यतस्तच्छब्दसम्बन्धमाह । पूर्वमित्यादि । यदुत्तमंनेत्ररूपं ज्ञानंशास्त्रंज्योतिःशास्त्रमित्यर्थः । बहुकालांतरेणपूर्वकालेकदेत्यतआह । युगेयुग इति । प्रतिमहायुगेमहामुनीनांतान्प्रतीतितितात्पर्यार्थः । सूर्येणस्वयमद्वारकेणसाक्षादित्यर्थः । एवकारोयथात्वांप्रत्यहंद्वारं साक्षात् कथनासंभवात् तथातान्प्रत्यहमन्यो वाद्वारमित्यस्यवारणार्थः । तेषांस्वतपःसमाजवशीकृतेश्वराणांतत्प्रसादाधिगताप्रतिहतेच्छानांसूर्य्यमण्डलाधिष्ठानसम्भवात् । उक्तमुपदिष्टम् । तथाचसूर्योक्तंत्वांप्रतिकथ्यतेनस्वकल्पितमितिभावः ॥ ८ ॥

भा०टी०-युग २ में महर्षियोंसे आपही सूर्यभगवान् जो उत्तम ज्ञान कहा करते हैं, तिसको एकाचित्त होकर श्रवण करो ॥ ८ ॥

ननुप्रतियुगंसूर्य्योक्तस्यैक्याभावात्त्वयाकिंयुगीयंशास्त्रमुपादिश्यते । अन्यथैकदोक्त्यायुगेयुगइत्यस्यानुपपत्तेरित्यतआह-

शास्त्रमाद्यंतदेवेदंयत्पूर्वंप्राहभास्करः ॥
युगानांपरिवर्तेनकालभेदोत्रकेवलम् ॥ ९ ॥

इदंमयातुभ्यंवक्ष्यमाणं ज्योतिःशास्त्रंतत्सूर्य्योक्तम् । एवकारात्सूर्य्योक्ताभिन्नत्वेनत्वांप्रत्यनुवादोनक्वचित्स्वकल्पनान्तरेणेत्यर्थः । आद्यंप्राक्कालेसूर्य्येणोक्तम् । नन्वासन्नयुगीयसूर्य्योक्तस्यापि पूर्व्वकालोक्त्याद्यत्वसंभवइत्यतस्तत्पदापेक्षितमाद्यपदविवरणरूपमाह । यदिति । शास्त्रंसूर्य्यःपूर्व्वंप्रथमंयस्मात्पूर्वमनुक्तमित्यर्थः । प्राहप्रकर्षेणविस्तरेणमुनीन्प्रत्युक्तवान् । तथाचप्रथमातिरेकेकारणाभावात्प्रथम-

---

१ केवलइतिवापाठः ।

स्यविस्तृतत्वाच्चानन्तरोक्तपूर्वोक्तिगतार्थतयासंक्षिप्तमुपेक्ष्यप्रथमयुगीयशास्त्रमुपादिश्य-तइतिभावः । ननुतर्ह्यनन्तरयुगीयशास्त्राणांस्मूर्योक्तानांवैयर्थ्यप्रसङ्गइत्यतआह । युगानामिति । महायुगानांपरिवर्तेनपुनःपुनरावृत्त्यात्रसूर्य्योक्तशास्त्रेषुकेवलंस्वभिन्ना-भावस्तन्मात्रमित्यर्थः । कालभेदःकालकृतमन्तरम् । पूर्वशास्त्रकालादनन्तरशास्त्र-कालोभिन्नइत्येषुशास्त्रेषुभेदोनशास्त्रोक्तरीतिभेदइत्यर्थः । तथाचकालवशेनग्रहचारे-किञ्चिद्वैलक्षण्यंभवतीतियुगान्तरेतत्तदनन्तरंग्रहचारेषु प्रसाध्यतत्कालस्थितलोक-व्यवहारार्थशास्त्रान्तरमिवकृपालुरुक्तवानितिनानन्तरशास्त्राणांवैयर्थ्यम् । एवञ्चम यावर्त्तमानयुगीयसूर्योक्तशास्त्रसिद्धग्रहचारमंगीकृत्याद्यसूर्य्योक्तशास्त्रसिद्धंग्रहचारं चप्रयोजनाभावादुपेक्ष्यतदुक्तमेवत्वांप्रत्युपदिश्यतइतिभावः । एवञ्चयुगमध्येऽप्यवा-न्तरकालेग्रहचारेष्वन्तरदर्शनेतत्तत्कालेतदन्तरंप्रसाध्यग्रंथास्तत्कालवर्तमानाभियु-क्ताःकुर्वन्ति । तदिदमन्तरंपूर्व्वग्रंथेबीजमित्यामनन्ति । पूर्व्वग्रंथानांलुप्तत्वात्सूर्य्य-र्षिसंवादोऽपीदानींनदृश्यत इति । तदप्रसिद्धिरागमप्रामाण्याच्चनाशंक्या ॥ ९ ॥

भा०टी०-पहले भास्कर (सूर्य) ने जो कहाथा वही आदि शास्त्र है, केवल युग बदलनेके हेतु करके कालभेद हुआ है, सोही इस समय कहताहूं ॥ ९ ॥

अथकालभेदइत्यनेपोपस्थितंकालंप्रथमंनिरुरूपयिषुस्तावत्कालंविभजते-

लोकानामंतकृत्कालःकालोऽन्यःकलनात्मकः ॥
सद्विधास्थूलसूक्ष्मत्वान्मूर्त्तश्चामूर्तउच्यते ॥ १० ॥

कालोद्विधातत्रैकः कालोऽखण्डदण्डायमानः शास्त्रान्तरप्रमाणसिद्धः । लोका-नांजीवानामुपलक्षणादचेतनानामपि अन्तकृद्विनाशकः । यद्यपिकालस्तेषामुत्प-त्तिस्थितिकारकस्तथापि विनाशस्यानन्तत्वात्कालत्वप्रतिपादनाय चान्तकृदित्यु-क्तम् । अन्तकृदित्यनेनैवोत्पत्तिस्थितिकृदित्युक्तमन्यथानाशासम्भवात् । अतएव " कालःसृजतिभूतानिकालःसंहरतिप्रजाः ॥ " इत्याद्युक्तं ग्रन्थान्तरे । अन्यो-द्वितीयःकालःखण्डकालः । कलनात्मकोज्ञानविषयस्वरूपः । ज्ञातुंशक्यइत्यर्थः । सद्वितीयःकलनात्मकःकालोऽपिद्विधाभेदद्वयात्मकः । तदाह । स्थूलसूक्ष्मत्वा-दिति । महत्त्वाणुत्वाभ्याम् । मूर्त्तः इयत्तावच्छिन्नपरिमाणः । अमूर्त्तस्तद्भिन्नः कालतत्त्वविद्भिःकथ्यते । चकारोहेतुक्रमेणमूर्त्तामूर्त्तक्रमार्थकः । तेनमहान्मूर्त्तः कालोऽणुरमूर्त्तःकालइत्यर्थः ॥ १० ॥

भा०टी०-एक काल लोकोंका अन्तकारी अर्थात् अनादि है; दूसरा काल कलनात्मक अर्थात् ज्ञानयोग्य है । खण्डकाल स्थूल व सूक्ष्मके भेदसे मूर्त्त और अमूर्त्त है ॥ १० ॥

अथोक्तभेदद्वयंस्वरूपेणप्रदर्शयन्प्रथमभेदंप्रतिपिपादयिषुस्तदवान्तरभेदेषुभेदद्वयमाह-

प्राणादिःकथितोमूर्त्तस्त्रुट्याद्योऽमूर्तसंज्ञकः ॥
षड्भिःप्राणैर्विनाडीस्यात्तत्षष्ट्यानाडिकास्मृता ॥ ११ ॥

प्राणःस्वस्थसुखासीनस्यश्वासोच्छ्वासान्तर्वर्त्तीकालोदशगुर्वक्षरोच्चार्यमाणआदिर्यस्यैतादृशःप्राणानन्तर्गतोमूर्त्तःकालउक्तः । त्रुटिराद्यायस्यैतादृशःकाल एकप्राणान्तर्गतस्त्रुटितत्परादिकोऽमूर्त्तसंज्ञः । अथामूर्त्तस्यमूर्त्तादिभूतस्यव्यवहारायोग्यत्वेनाप्रधानतयानन्तरोद्दिष्टस्यभेदप्रतिपादनमुपेक्ष्यमूर्त्तकालस्यव्यवहारयोग्यत्वेनप्रधानतयाप्रथमोद्दिष्टभेदान्विवक्षुःप्रथमंपलघट्यावाह । षड्भिरिति । षट्प्रमाणैरसुभिः पानीयपलंभवतिपलानांषष्ट्याघटिकोक्ताकालतत्त्वज्ञैः ॥ ११ ॥

भा० टी०-प्राणादि मूर्त्तकाल है, त्रुट्यादिकी अमूर्त्त संज्ञा है । ६ प्राणकी एक विनाड़ी, (पल) और ६० पलकी एक नाड़ी (दण्ड) होती है ॥ ११ ॥

अथदिनमासावाह-

नाडीषष्ट्यातुनाक्षत्रमहोरात्रप्रकीर्त्तितम् ॥
तत्त्रिंशताभवेन्मासःसावनोऽर्कोदयैस्तथा ॥ १२ ॥

घटीनांषष्ट्याहोरात्रं नाक्षत्रमुक्तम् । तुकारादहोरात्रस्यनाक्षत्रत्वोक्त्योक्तघट्याअपिनाक्षत्रत्वमुक्तम् । एतत्षष्टिघटीभिर्भचक्रपरिवर्त्तनात् नाक्षत्रदिनानांत्रिंशत्संख्यया-मासोनाक्षत्रः । मासानामनेकत्वेनसावनमासस्वरूपमाह । सावनइति । तथा-त्रिंशदहोरात्रैःसूर्य्योदयसम्बंधैस्तदवधिकैः । सूर्य्योदयादिसूर्योदयान्तकालरूपकाहोरात्रमानमापितैरित्यर्थः । सावनोमासः ॥ १२ ॥

भा०टी०- ६० नाडीकी नाक्षत्रिक अहोरात्र (दिनरात), ३० अहोरात्रका एक मास (महीना) होता है सूर्योदयसे लेकर फिर सूर्यके उदय होनेतक सावनदिन होता है ॥ १२ ॥

अथचान्द्रसौरमासनिरूपणपूर्वकंवर्षवद्दिव्यंदिनमाह-

ऐन्दवस्तिथिभिस्तद्वत्संक्रान्त्यासौरउच्यते ॥
मासैर्द्वादशभिर्वर्षंदिव्यंतदहरुच्यते ॥ १३ ॥

---

१ उच्यत इति पाठान्तरम् ।

तद्वत्रिंशतातिथिभिश्चान्द्रो मासस्तत्रदर्शान्तावधिकःपूर्णिमान्तावधिकश्च शास्त्रेमुख्यतयाप्रतिपादितः । अत्रशास्त्रेतुदर्शान्तावधिकएवमुख्यः । इष्टतिथ्यवधिकस्तुमासोगौणः । सङ्क्रान्त्यासङ्क्रान्त्यवधिकेनकालेनसौरोमासो मासज्ञैः कथ्यते । सङ्क्रान्तिस्तुसूर्यमण्डलकेन्द्रस्यराश्यादिप्रदेशसंचरणकालः । द्वादशभिर्मासैर्वर्षम् । यन्मानेनमासास्तन्मानेनवर्षज्ञेयम् । तद्वर्षसौरमासस्यासन्नत्वात्सौरम् । अहः अहोरात्रः । दिव्यं दिविभवम् । सौरवर्षदेवानामहोरात्रमानंमानतत्त्वज्ञैःकथ्यतइत्यर्थः ॥ १३ ॥

भा०टी०–चान्द्रमास तिथियोंकरके और सौरमास राशिसंक्रमणके द्वारा निश्चित होताहै। १२ मासका एक वर्ष है यही देवताओंका एक दिन है ॥१३ ॥

ननुदेवानांयथाहोरात्रमुक्तंतथादैत्यानामहोरात्रंकथंनोक्तमित्यतस्तदुत्तरंवदन्देवासुरयोर्वर्षमाह–

सुरासुराणामन्योऽन्यमहोरात्रंविपर्ययात् ॥
तत्षष्टिःषड्गुणादिव्यंवर्षमासुरमेवच ॥ १४ ॥

देवदैत्यानां बहुत्वाद्बहुवचनम् । अन्योन्यं परस्परम् । विपययात् व्यत्यासात् अहोरात्रम् । अयमर्थः । देवानांयद्दिनंतदसुराणांरात्रिः । देवानां यारात्रिस्तदसुराणांदिनम् । दैत्यानांयद्दिनंतद्देवानांरात्रिः । दैत्यानांयारात्रिस्तद्देवानांदिनमिति । तथाचदेवदैत्ययोर्दिनरात्र्योरेवव्यत्यासाद्भेदोनमानेनेति तयोरहोरात्रस्यैक्याद्देवाहोरात्रमानकथनेनैवदैत्याहोरात्रमानमुक्तमितिभावः । युगकथनार्थंदिव्यवर्षपरिभाषयासुगममपिविशेषद्योतनार्थंप्रकारान्तरेणाह । तत्षष्टिरिति । दिव्याहोरात्रषष्टिः । देवर्त्तुरूपावर्षर्तुभिःषड्भिर्गुणितादिव्यमासुरदैत्यसम्बन्धि । चः समुच्चये । तेनद्वयोरित्यर्थः । वर्षम् । एवकारस्तयोर्दिनरात्र्योर्भेदेनवर्षभेदःस्यादिति मन्दशङ्कानिवारणार्थम् ॥ १४ ॥

भा०टी०–सुर व असुरोंकी दिना रात्रिका विपर्यय अर्थात् जब एकका दिन होताहै तो दूसरेकी रात्रि होती है ३६ दिव्य अहोरात्रसे देवासुरका एक वर्ष होता है ॥ १४ ॥

अथकल्पमानंविवक्षुःप्रथमंयुगमानमन्यदपिश्लोकाभ्यामाह–

तद्द्वादशसहस्राणिचतुर्युगमुदाहृतम् ॥
सूर्याब्दसंख्ययाद्वित्रिसागरैरयुताहतैः ॥ १५ ॥
सन्ध्यासन्ध्यांशसहितंविज्ञेयंतच्चतुर्युगम् ॥
कृतादीनांव्यवस्थेयंधर्मपादव्यवस्थया ॥ १६ ॥

तेषांदिव्यवर्षाणांद्वादशसहस्राणि चतुर्युगम् । चतुर्णांयुगानांकृतत्रेताद्वापरक- ल्याख्यानांसमाहारोयोगस्तदात्मकमहायुगमित्यर्थः । एतद्द्योतनार्थंचतुरित्यु- क्तिरन्यथायुगमित्युक्त्यातद्द्वैयर्थ्यापत्तेः । मानाभिज्ञैरुक्तम् । अथसौरमानेन तत्सं- ख्याविशेषंचाह । सूर्याब्दसंख्ययेति । तद्देवासुरमानेनोक्तंचतुर्युगंद्वादशसहस्रव- र्षात्मकंमहायुगंसन्ध्यासन्ध्यांशसहितम् । युगचरणस्याद्यन्तयोः क्रमेणप्रत्येकंस- न्ध्यासन्ध्यांशाभ्यांयुक्तंसदेवसन्ध्यासन्ध्यांशावन्तर्गतौनपृथग्यत्रैताद्दशम् । सौरवर्ष- प्रमाणेनद्वित्रिसागरैः अङ्कानांवामतोगतिरित्यनेनद्वात्रिंशदधिकैश्चतुःशतमितैः । अयुतेनदशसहस्रेणगुणितैः । खचतुष्कद्वात्रिंशच्चतुर्भिःपरिमितंज्ञेयमित्यर्थः । अथ चतुर्युगान्तर्गतयुगांघ्रीणांविशेषतोमानाश्रवणात्समंस्यादश्रुतत्वादितिन्यायेनप्रत्येकं महायुगचतुर्थांशोमानमितिचतुर्युगमित्यनेनफलितंनिषेधति । कृतादीनामिति । कृतत्रेताद्वापरकलियुगानाम् । धर्मपादव्यवस्थयाधर्मचरणानांस्थित्या । इयं वक्ष्यमाणाव्यवस्थास्थितिर्ज्ञेयानतुसमकालप्रमाणस्थितिः । अयमर्थः । कृतयु- गेचतुश्चरणोधर्मइतितस्यमानमधिकम् । ततस्त्रेतायांधर्मस्यत्रिपादवत्त्वात्तदनुरोधेन त्रेतामानंन्यूनम् । एवंद्वापरकल्योर्धर्मस्यक्रमेण द्व्येकचरणवत्त्वात्कृतत्रेतामाना- भ्यांक्रमेणोक्तानुरोधान्न्यूनमानम् । नतुसमं मानमिति ॥ १५ ॥ १६ ॥

भा०टी०-दिव्य मानके १२००० हजार वर्षका एक चौकड़ी-युग होताहै । सूर्याब्दकी संख्या ४३२०००० वर्ष है ॥ १५ ॥ सन्ध्या और सन्ध्यांशके साथ जो चतुर्युग हैं तिसमें धर्मपादके अनुसार कृतादि युगमानकी व्यवस्थिति है ॥ १६ ॥

अथसर्वधर्म्मचरणयोगेनदशांमितेनमहायुगंभवतितर्हिस्वस्वधर्म्मचरणैः किमि- त्यनुपातेनपूर्वोक्तफलितेनकृतादियुगानांमानज्ञानंसविशेषमाह-

युगस्यदशमोभागश्चतुस्त्रिद्व्येकसङ्गुणः ॥
क्रमात्कृतयुगादीनांषष्ठांशःसन्ध्ययोःस्वकः ॥ १७ ॥

प्रागुक्तदिव्यवर्षद्वादशसहस्रमितस्ययुगस्यदशमोभागोदशांशइत्यर्थः । च- तुर्द्धाक्रमेणचतुस्त्रिद्व्येकैर्गुणितः । गुणक्रमात्कृतयुगादीनांकृतत्रेताद्वापरकलि- युगानांमानंस्यादितिशेषः । ननुमनुग्रन्थेकृतादिमानंदिव्यवर्षप्रमाणेन ४००० । ३००० । २००० । १००० । अत्रतुतन्मानंतद्वर्षप्रमाणेन ४८०० । ३६०० । २४०० । १२०० । इतिविरोधइत्यतआह । षष्ठइत्ति । स्वकःस्वसम्ब- न्धीषष्ठोविभागःसन्ध्ययोराद्यन्तसन्ध्ययोरैक्यकालइतिशेषः । तथाचमदुक्त- मानानि ४८०० । ३६०० । २४०० । १२०० । एषांषडंशाः ८०० ।

६०० । ४०० । २०० । एतेस्वस्वयुगानामाद्यन्तयोःसंध्ययोर्योगाइत्येषामर्धसन्धिकालः । प्रत्येकमाद्यन्तयोःसन्धिकालः ४०० । ३०० । २०० । १०० । अनेन प्रत्येकंमदुक्तमानंन्यूनीकृतंग्रन्थान्तरोक्तंकेवलंमानंभवतिनस्वसन्धिभ्यांसहितम् । यथाकृतादिसन्धिः ४०० कृतमानं ४००० कृतान्तसन्धिः ४०० त्रेतादिसन्धिः ३०० त्रेतामानम् ३००० त्रेतान्तसन्धिः ३०० द्वापरादिसन्धिः २०० द्वापरमानं २००० द्वापरान्तसन्धिः २०० कल्यादिसन्धिः १०० कलिमानम् १००० कल्यन्तसन्धिः १०० । एवंचस्वसन्धिभ्यांसहितं मयोक्तंस्वसम्बन्धात्सन्ध्ययोस्तदन्तर्गतत्वाच्चेतिनविरोधइतिभावः ॥ १७ ॥

भा० टी०-चतुयुर्गके दशम भागको ४, ३, २ और एकसे गुणा करके कृतादिका युगमान होता है। स्वीय षष्ठांश भागही संध्या है ॥ १७ ॥

अथकल्पमानार्थमनुमानंतत्सन्धिमानंचाह-

युगानांसप्ततिःसैकामन्वन्तरमिहोच्यते ॥
कृताब्दसङ्ख्यातस्यान्तेसन्धिःप्रोक्तोजलप्लवः ॥ १८ ॥

युगानांसैकासप्ततिरेकसप्ततिर्महायुगमित्यर्थः इहमूर्त्तकालेमन्वन्तरंमन्वारम्भतत्समाप्तिकालयोरन्तरकालमानमित्यर्थः । मूर्त्तकालमानभेदाभिज्ञैः कथ्यते । तस्यमनोरन्तेविरामेजातेसतिकृताब्दसङ्ख्यामदुक्तकृतयुगवर्षमितिसन्धिः कालविद्भिःप्रकर्षेणद्वितीयमन्वारम्भपर्यन्तंभूतभाविमन्वोरन्तिमादिसन्धिरूपैककालेनकथितः । तत्स्वरूपमाह । जलप्लवइति । जलपूर्णासकलापृथ्वीतस्मिँल्लोकसंहारकालेभवति ॥ १८ ॥

भा० टी०-एकहत्तर युगका एक मन्वन्तर होता है; तिसके अन्तमें कृतयुगमानसंख्यक सन्धिमान है। उसी समय जलप्लव (बाढ) होता है ॥ १८ ॥

अथकल्पप्रमाणंसविशेषमाह-

ससन्धयस्तेमनवःकल्पेज्ञेयाश्चतुर्दश ॥
कृतप्रमाणःकल्पादौसन्धिःपञ्चदशःस्मृतः ॥ १९ ॥

तेएकसप्ततियुगरूपामनवः स्वायंभुवाद्याःससन्धयःस्वस्वसन्धिसहिताश्चतुर्दशसंख्याकाःकल्पकालेज्ञातव्याः । स्वसन्धियुक्तचतुर्दशमनुभिःकल्पःस्यादित्यर्थः । ननुग्रन्थान्तरेकल्पमानंयुगसहस्रंत्वयातुयुगमानमेकसप्ततिगुणंमनुमानम् ३०६७२०००० कृताब्द१७२८००० युक्तससन्धिमनुमानम् ३०८४४८००० । इदंचतुर्दशगुणं कल्पप्रमाणं कृतोनंयुगसहस्रमित्यतआह । कृतप्रमाण

इति । कल्पादौप्रथममन्वारम्भेकृतयुगवर्षमितोमनोश्चतुर्दशत्वेऽप्याद्यःपञ्चदशकःसन्धिःकालज्ञैरुक्तः । तथाचकृतवर्षानन्तरंप्रथममन्वारम्भइतितद्वर्षयोजनेनाविरोधइतिभावः ॥ १९ ॥

भा० टी०-कल्पमें सन्धिके साथ १४ मनु होते हैं । कल्पकी आदिमें कृतयुगप्रमाणकी एक सन्धि अर्थात् कल्पमें १४ मनु और पंद्रह सन्धियां होती हैं ॥ १९ ॥

अथब्रह्मणोदिनरात्र्योःप्रमाणमाह-

इत्थंयुगसहस्रेणभूतसंहारकारकः ॥
कल्पोब्राह्ममहःप्रोक्तंशर्वरीतस्यतावती ॥ २० ॥

इत्थंपूर्वोक्तप्रकारसिद्धेनयुगसहस्रेणभूतसंहारकारकोब्राह्मलयात्मकःकल्पकालोब्राह्मंब्रह्मणःसम्बन्ध्यहोदिनंकालज्ञैरुक्तम् । तस्यब्रह्मणस्तावतीदिनपरिमिताशर्व्वरीरात्रिः । कल्पद्वयंतदहोरात्रमितिफलितार्थः ॥ २० ॥

भा० टी०-इस प्रकारसे सहस्र युगका भूतसंहारकारी कल्प होता है; यही ब्रह्माका एक दिन और ऐसेही उसकी रात्रि है ॥ २० ॥

अथब्रह्मणआयुःप्रमाणमतीतवयःप्रमाणंचाह-

परमायुःशतंतस्यतयाहोरात्रसङ्ख्यया ॥
आयुषोऽर्द्धमितंतस्यशेषकल्पोऽयमादिमः ॥ २१ ॥

परमपरंश्रृणुपूर्वोक्तंत्वयाश्रुतमपरंचवक्ष्यमाणंश्रृणुत्वम् । यद्वापरमेतिदैत्यवरार्थकंसम्बोधनम् । त्वंतस्यब्रह्मणस्तथापूर्वोक्तयाहोरात्रमित्याकल्पद्वयरूपया शतंशतवर्षपरिमितमायुःशरीरधारणकालंजानीहि । एतदुक्तंभवति । अहोरात्रमानात्पूर्वपरिभाषयामासमानंतस्मात्पूर्वोक्तपरिभाषयामासमानतस्मात्पूर्वोक्तपरिभाषयाब्रह्मणोवर्षमानमेतच्छतसङ्ख्ययाब्रह्मायुरिति । नतुयथाश्रुतार्थेनकल्पशतद्वयमायुःकीटादिनामपि दिनसङ्ख्ययायुषोऽनुक्तेःसुतरां ब्रह्मणःशतदिनात्मकायुषोऽसम्भवात् ॥ "निजेनैवतुमानेनआयुर्वर्षशतंस्मृतम् ॥" इतिविष्णुपुराणोक्तेश्च । एतेनपरमायुरितिनिरस्तम् । ब्रह्मणोऽनियतायुर्दायासम्भवात् । तस्य ब्रह्मणआयुःशतवर्षरूपमस्यार्द्धपञ्चाशद्वर्षपरिमितमितंगतम् । अयंवर्त्तमानआदिमःप्रथमःशेषकल्पःशेषायुर्दायस्यब्रह्मदिवसउत्तरार्द्धस्यप्रथमदिवसोवर्त्तमान इति फलितार्थः ॥ २१ ॥

भा०टी०-ब्राह्म अहोरात्रकी संख्यासे ब्रह्माकी परमायु शत वर्ष है । गतकल्पमें तिनकी आधी आयु बीतगई । यह कल्प द्वितीयार्द्धका पहला दिन है ॥ २१ ॥

अथवर्त्तमानेऽस्मिन्दिवसेऽप्येतद्गतमित्याह-

कल्पादस्माच्चमनवःषड्व्यतीताःससन्धयः ॥
वैवस्वतस्यचमनोर्युगानांत्रिघनोगतः ॥ २२ ॥

अस्माद्वर्त्तमानात्कल्पाद्ब्रह्मदिवसात्षट्सङ्ख्याकामनवएकसप्ततियुगरूपाः ससन्धयःसप्तभिःसन्धिभिःकृतयुगप्रमाणैःसहिताव्यतीतागताः । चकारआयुषोऽर्धमितमिति प्रागुक्तेनसमुच्चयार्थकः । वर्त्तमानस्यसप्तमस्यमनोर्वैवस्वताख्यस्ययुगानां त्रिघनस्त्रयाणांघनःस्थानत्रयस्थिततुल्यानांघातः सप्तविंशतिसङ्ख्यात्मकोगतः । सप्तविंशतियुगानिगतानीत्यर्थः । चःसमुच्चये ॥ २२ ॥

भा०टी०--कल्पके आदिसे लेकर वैवस्वत मनुके पहले सन्धि सहित ६ मनु बीते हैं। और इस वैवस्वत मनुकेभी २७ युग बीतचुके हैं ॥ २२ ॥

अथवर्त्तमानयुगस्यापिगतमेतदितिवदन्नमितकालेऽग्रतोवर्षगणःकार्य्यइत्याह-

अष्टाविंशाद्युगादस्माद्यातमेतत्कृतंयुगम् ॥
अतःकालंप्रसङ्ख्यायसङ्ख्यामेकत्रपिण्डयेत् ॥ २३ ॥

अष्टाविंशतितमाद्वर्त्तमानान्महायुगादेतदल्पकालेनपूर्वकालेसाम्प्रतंस्थितकृतंयुगंगतम् । अतःकृतयुगान्तानन्तरमभिमतकालेकालंवर्षात्मकंप्रसंख्यायगणयित्वासंख्यांपञ्चस्थानस्थितांभिन्नामेकत्रैकस्थानेपिण्डयेत्सङ्कलनविषयांकुर्यात । सर्वेषांगतानांयोगंकुर्यादित्यर्थः ॥ २३ ॥

भा०टी०-यह अट्ठाईसवें युगका कृतयुग बीता है। इस कारण कालकी संख्या करके एक स्थानमें गतवर्ष स्थिर करो ॥ २३ ॥

अथकल्पादितोग्रहादिभचक्रनियोजनकालंग्रहगतिप्रारम्भरूपमाह-

ग्रहर्क्षदेवदैत्यादिसृजतोऽस्यचराचरम् ॥
कृताद्रिवेदादिव्याब्दाःशतघ्नावेधसोगताः ॥ २४ ॥

अस्यवर्त्तमानस्यब्रह्मणोग्रहनक्षत्रदेवदैत्यमानवराक्षसभूपर्व्वतवृक्षादिकचराचरंजंगमस्थावरात्मकंजगत्सृजतःसृजतीतिसृजन्तस्यजगन्निर्मायकस्यशतसङ्ख्यागुणिताश्चतुःसप्तत्याधिकचतुःशतसङ्ख्यादिव्याब्दागताः एभिर्दिव्यवर्षैर्ग्रहसृष्ट्यादिप्रवहवायुनियोजनान्तंकर्मब्रह्मणाकृतमितिफलितार्थः ॥ २४ ॥

भा०टी०-कल्पके आरम्भसे दिव्यमानके ४७४०० वर्ष बीतने पर ग्रह, नक्षत्र, देव, दैत्यादि चराचरकी सृष्टि हुई है ॥ २४ ॥

अथग्रहपूर्व्वगत्युत्पत्तौकारणमाह-

पश्चाद्व्रजन्तोऽतिजवान्नक्षत्रैःसततंग्रहाः ॥
जीयमानास्तुलम्बन्तेतुल्यमेवस्वमार्गगाः ॥ २५ ॥

पश्चादनन्तरंपुनरावृत्त्यापश्चात्पश्चिमदिगभिमुखंनक्षत्रैस्तारकादिभिःसहग्रहाःसूर्यादयोऽतिजवात्प्रवहवायुसत्वरगतिवशात्सततंनिरन्तरंव्रजन्तोगच्छन्तः स्वमार्गगाःस्वकक्षावृत्तस्थाजीयमानानक्षत्रैःपराजितानक्षत्राणामग्रेगमनात् । अतएवलज्जयेवगुरुभूताइतितात्पर्यार्थः । तुल्यंसमम् । एवकारादधिकन्यूनव्यवच्छेदः । लम्बन्तेस्वस्थानात्पूर्व्वस्मिल्लँम्बायमानाभवन्ति । यथालज्जितःपश्चाद्वर्तिनाग्रे । तुकारादधोऽधः कक्षाक्रमानुरोधेनशन्यादिग्रहाणांचन्द्रान्तानांगुरुतापचयःशनिरतिगुरुभूतस्तस्मात्किंचिन्न्यूनोगुरुस्तस्मादपिभौमइत्यादियथोत्तरम् । यस्यकक्षामहतीतस्य गुरुत्वाधिक्यंयस्यलम्बीतस्यतदनुरोधेनगुरुताल्पत्वामिति । एतदुक्तंभवति । ब्रह्मणाप्रवहवायौनक्षत्राधिष्ठितोमूर्तोगोलः स्थापितस्तदन्तर्गताः स्वस्वाकाशगोलस्थाः शन्यादयोनक्षत्राधिष्ठितमूर्त्तगोलस्थक्रान्तिवृत्तस्थरेवतीयोगतारासन्नरूपमेषादिप्रदेशसमसूत्रस्थाःस्थापिताः । क्रान्तिवृत्तंतुमेषतुलस्थानेविषुवद्वृत्तलग्नसम्पातात् त्रिभान्तरितक्रान्तिवृत्तप्रदेशौस्वासन्नविषुवद्वृत्तप्रदेशाभ्यांचतुर्विंशत्यंशान्तरेणदक्षिणोत्तरौमकरकर्कादिरूपौतदेवद्वादशराश्यात्मकंवृत्तंग्रहचारभूतम् । विषुवद्वृत्तंतुध्रुवमध्यस्थंनिरक्षदेशोपरिगम् । तत्रप्रवहवायुनास्वाघातेनमूर्तोनक्षत्रगोलोनाक्षत्रषष्टिघटीभिःपरिवर्तते । तदन्तर्गतवायुभिस्तदाघातेनवाग्रहाभ्रमन्त्यपिनक्षत्रगोलस्थितक्रान्तिवृत्तीयमेषादिप्रदेशेनसमंनगच्छन्तिवायूनांस्वल्पत्वात्तदाघातस्याप्यल्पत्वाद्बिम्बानांगुरुत्वाच्च । अतस्तत्स्थानाद्ग्रहाणांलम्बनंदृश्यते । अतएवनक्षत्रोदयकालेतेषांद्वितीयदिनेनोदयःकिन्तुग्रहोलम्बितप्रदेशेनवायुनातदनन्तरमूर्ध्वमागच्छतीत्यनन्तरमुदयः । लम्बनंतुशन्यादीनांकक्षानुरोधेनगुरुत्वाद्वायूनांतद्घातानां वाकक्षानुरोधेनबह्वल्पत्वात्तु यद्यपि वायोर्ध्रुवानुरोधेनसत्त्वाद्ग्रहावलम्बनंविषुवद्वृत्तेभवितुमुचितंनक्रान्तिवृत्ते । तथाचवक्ष्यमाणक्रान्त्यनुपपत्तिःक्रान्तिवृत्तस्थद्वादशराशिभोगेनवक्ष्यमाणानांभगणानामनुपपत्तिश्च । तथापिवायुनावलम्बितोग्रहोविषुवन्मार्गगोऽपितद्विषुवप्रदेशासन्नक्रान्तिवृत्तप्रदेशेनग्रहाकाशगोलएवस्वसमसूत्रेणाकृश्यतइतिनानुपपत्तिः । अतएवस्वमार्गगाइतिक्रान्तिवृत्तानुसृतस्वाकाशगोलस्थकक्षामार्गगताइत्यर्थकमुक्तमितिसंक्षेपः ॥ २५ ॥

भा०टी०—सदा अतिशीघ्र चलनेवाले नक्षत्रसे, पीछे चलते हुए ग्रह पराजित होकर अपने मार्गमें तुल्यभावसे विलम्ब करते हैं ॥ २५ ॥

अथातएवग्रहाणांलोकेप्राग्गतित्वंसिद्धमित्यतआह–

प्राग्गतित्वमतस्तेषांभगणैःप्रत्यहंगतिः ॥
परिणाहवशाद्भिन्नातद्वशाद्भानिभुञ्जते ॥ २६ ॥

अतोऽवलम्बनादेव तेषांग्रहाणांप्राग्गतित्वंप्राच्यांदिशिगतिर्येषांतेप्राग्गतयस्तद्भावःप्राग्गतित्वंसिद्धम् । लम्बनस्वरूपैवग्रहाणांपूर्व्वगतिरुत्पन्नालोकैःकारणानभिज्ञैःप्रत्यक्षावगततयातच्छक्तिजनिताकल्पितेत्यर्थः । साकियतीत्यतआह । भगणैरिति । वक्ष्यमाणभगणैःप्रत्यहंप्रतिदिनंगतिः प्राग्गमनरूपाभगणानांगत्युत्पन्नत्वाद्भगणसम्बंधिवक्ष्यमाणदिनैः सूर्य्यसावनैर्ग्रहभगणालभ्यन्तेतदैकेनदिनेन केत्यनुपाताज्ज्ञेया । ननुग्रहभगणानांतुल्यत्वाभावात्प्रतिदिनंग्रहगतिर्भिन्नेतिपूर्वलंबनरूपाग्रहगतिरयुक्तोक्ताग्रहलम्बनस्याभिन्नत्वादित्यतआह । परिणाहवशादिति । परिणाहःकक्षापरिधिस्तद्वशात्तदनुरोधादियंग्रहगतिर्भिन्नातुल्या । अयमभिप्रायः । ग्रहाणांलम्बनंतुल्यप्रदेशे न परन्तुस्वस्वकक्षायांतत्प्रदेशेतुल्येयाःकलास्तागतिकलास्तास्तुमहतिकक्षावृत्तेऽल्पालघुकक्षावृत्तेबह्व्यः । सर्वकक्षापरिधीनांक्कलांकितत्वात् । भगणास्तुगतिवशादेवयस्यकक्षावृत्तं महत्तस्याल्पायस्य चलघुकक्षावृत्तंतस्यबहवस्तदुत्पन्नागतिरपितथेतिनविरोधः । नन्वेकरूपगतिंविहायभिन्नरूपागतिः कथमङ्गीकृतेत्यतआह । तद्वशादिति । भिन्नगतिवशाद्भानिराशीन्नक्षत्राणिभुञ्जतेग्रहाभुजन्तीत्यर्थः । तथाचग्रहराश्यादिभोगज्ञानार्थमियमेवगतिरुपयुक्तानैकरूपेतिभावः ॥ २६ ॥

भा०टी०–भिन्न कक्षासे उत्पन्न हुए भगणके हेतु प्रतिदिनकी गतिमें पृथक्ता होती है, तिसीकारणसे राशिभोग कालादिकी विभिन्नता होती है ॥ २६ ॥

अथभभोगेविशेषवदन्वक्ष्यमाणभगणस्वरूपमाह–

शीघ्रगस्तान्यथाल्पेनकालेनमहताल्पगः ॥
तेषांतुपरिवर्त्तेनपौष्णान्तेभगणःस्मृतः ॥ २७ ॥

अथशब्दःपूर्वोक्तेर्विशेषसूचकः । शीघ्रगतिग्रहस्तानिभान्यल्पेनकालेननभुनत्त्यल्पगतिर्ग्रहोबहुकालेनभुनक्तितुल्यराश्यादिभोगोमन्दशीघ्रगतिग्रहयोस्तुल्यकालेनन भवतीतिविशेषार्थः । तेषांराशीनांपरिवर्तेनभ्रमणेन । तुकाराद्ग्रहादिगतिभोगजनितेनभगणःप्राज्ञैरुक्तः । क्रांतिवृत्तेद्वादशराशीनांसत्त्वात्तद्भोगेनचक्रभोगसमाक्षेर्यत्स्थानमारभ्यचलितोग्रहः पुनस्तत्स्थानमायातिसचक्रभोगः । परिवर्त्तसंज्ञोऽपिद्वादशराशिभोगाद्भगणइत्यर्थः । ननुक्रान्तिवृत्तेसर्वप्रदेशेभ्यःपरिवर्त्तसम्भवाद

त्रकःपरिवर्त्तादिभूतःप्रदेशइत्यतआह । पौष्णान्तइति । सृष्ट्यादौब्रह्मणाक्रान्तिवृत्ते रेवतीयोगतारासन्नप्रदेशेसर्व्वग्रहाणांनिवेशितत्वात्तदवधितोग्रहचलनाच्च । पौष्णस्यरेवतीयोगताराया अन्तेनिकटेप्रदेशेतथाचरेवतीयोगतारासन्नाग्रिमस्थानमेवाद्यन्तावधिभूतमितिभावः ॥ २७ ॥

भा०टी०-शीघ्र चलनेवाले ग्रह थोड़े समयमें, और थोड़े चलनेवाले अधिक समयमें गमन करते हैं। रेवतीके अंतमें फिर लौट आनेसे भगण होता है ॥ २७ ॥

ननुपरिवर्त्तस्यभगणसंज्ञात्वयुक्तात्र्यादिराशिमामपिभगणत्वादित्यतःपरिभाषाकथनच्छलेनभगणस्वरूपमाह-

विकलानांकलाषष्ट्यातत्षष्ट्याभागउच्यते ॥
तत्त्रिंशताभवेद्राशिर्भगणोद्वादशैवते ॥ २८ ॥

यथा मूर्तकालेप्राणकालआदिभूतस्तथाक्षेत्रपरिभाषयांविकलाः सूक्ष्मादिभूतास्तासांषष्ट्यैका कलाकलानांषष्ट्याभोगोंऽशः क्षेत्रपरिभाषाभिज्ञैःकथ्यते भागात्रिंशताराशिः स्यात् । तेराशयःसकलाद्वादश । एवकारस्त्रिचतुरादीनांनिरासार्थः । तथाचसाकल्येगणपदप्रयोगाद्भगणस्यभोगेऽपिभगणव्यवहाराच्चपूर्वोक्तंयुक्तमितिभावः ॥ २८ ॥

भा०टी०-६० विकलाकी एक कला, और ६० कलाका एक भाग होता है। ३० भाग (अंश) की एक राशि और १२ राशिका एक भगणहोता है ॥ २८ ॥

अथभगणान्विवक्षुःप्रथमंसूर्य्यबुधशुक्राणांभौमगुरुशनिशीघ्रोच्चानांचभगणानाह-

युगेसूर्यज्ञशुक्राणांखचतुष्करदार्णवाः ॥
कुजार्किगुरुशीघ्राणांभगणाःपूर्वयायिनाम् ॥ २९ ॥

महायुगेसूर्यबुधशुक्राणांखानांचतुष्कमेकस्थानादिसहस्रस्थानान्तचतुःस्थानस्थितानिशून्यानिततोऽयुतादिप्रयुतस्थानपर्यन्तंदन्तसमुद्रास्तथाचयुगसौरवर्षाणिखाभ्रखाभ्राद्रिरामवेदमितानिभगणाद्वादशराशिभोगात्मकपरिवर्त्तानांसङ्ख्याभवन्तीतिशेषः । भौमशनिबृहस्पतीनांयानिशीघ्राणिशीघ्रोच्चानितेषामेतन्मिताभगणाः । चकारःसमुच्चयार्थकोऽनुसन्धेयः । अत्रकक्षाक्रमेणचारक्रमेणवागुरोःखलमध्यगताभवतीतिनतथोद्देशः । स्वतन्त्रस्यनियोगानर्हत्वाद्वा । नन्वाकाशएषांबिम्बाभावादवलम्बनासम्भवेनगत्यभावात्कथंभगणाउक्ताइत्यतआह । पूर्व-

यायिनामिति । पूर्व्वगामिनाम् । तथाचतेषामदृश्यरूपाणां पूर्व्वगतिसद्भावाद्भग-णोक्तौनक्षतिः । एषांस्वरूपादिनिर्णयस्तुस्पष्टाधिकारेप्रतिपादयिष्यते ॥ २९ ॥

भा०टी०--युगमें सूर्य बुध व शुक्रके मध्य और मंगल, शनि व बृहस्पतिके मध्य शीघ्र पूर्व को चलनेवाले भगण ४३२०००० हैं ॥ २९ ॥

अथचन्द्रभौमयोर्भगणानाह-

इन्दोरसाग्नित्रित्रीषुसप्तभूधरमार्गणाः ॥
दस्रत्र्यष्टरसाङ्काक्षिलोचनानिकुजस्यतु ॥ ३० ॥

पूर्वश्लोकोक्तभगणाइत्यत्राग्रिमश्लोकेष्वप्यन्वेति । भूधराःसप्तनतुपर्वतस्यधराभि-धानत्वादेकसप्ततिः । मार्गणाःशरास्तथाचचन्द्रस्यभगणाःषडग्निदेवपञ्चसप्तसप्तपञ्च मिताः । भौमस्य तुकारादाकाशस्थबिम्बात्मकस्येतिपुनरुक्तिभ्रमवारणार्थदन्ताष्ट-षडंकाकृतिमिताः ॥ ३० ॥

भा०टी०-चन्द्रमाके ५७७५३३३६; मंगलके २२९६८३२ भगण हैं ॥ ३० ॥

अथबुधशीघ्रोच्चगुर्वोर्भगणानाह-

बुधशीघ्रस्यशून्यर्तुखाद्रित्र्यङ्कनगेन्दवः ॥
बृहस्पतेःखदस्राक्षिवेदषड्वह्नयस्तथा ॥ ३१ ॥

बुधशीघ्रोच्चस्यादृश्यरूपस्यपूर्व्वगतेर्भगणाःषष्टिसप्ततित्र्यङ्कात्याष्टिमिताः । बृह-स्पतेस्तथाबिम्बात्मकस्येतिपुनरुक्तिभ्रमवारणायनखद्विवेदषड्रामामिताः ॥ ३१ ॥

भा०टी०-बुधशीघ्रके १७९३७०६०; बृहस्पतिके ३६४२२० भगण हैं ॥ ३१ ॥

अथशुक्रशीघ्रोच्चशन्योर्भगणानाह-

सितशीघ्रस्यषट्सप्तत्रियमाश्विखभूधराः ॥
शनेर्भुजङ्गषट्पञ्चरसवेदनिशाकराः ॥ ३२ ॥

शुक्रशीघ्रोच्चस्यादृश्यरूपस्यपूर्वगतेर्भगणाःषट्सप्तत्रिद्विद्विखसप्तमिताः । एतेन-भूधराइत्यस्यैकसप्ततिरेकादशवार्थोनिरस्तः । शनेर्बिम्बात्मकस्याष्टषट्पञ्चरसेन्द्र-मिताः ॥ ३२ ॥

भा०टी-शुक्र शीघ्रके ७०२२३७६; शनिके १४६५६८ भगण हैं ॥ ३२ ॥

अथचन्द्रस्योच्चपातयोर्भगणानाह-

चन्द्रोच्चस्याग्निशून्याश्विवसुसर्पार्णवायुगे ॥
वामंपातस्यवस्वग्नियमाश्विशिखिदस्रकाः ॥ ३३ ॥

चन्द्रमन्दोच्चस्यपूर्वगतेरदृश्यरूपस्यभगणामहायुगेरामनखाष्टाष्टवेदमिताः । पातस्यचन्द्रशब्दस्यसंनिहितत्वाच्चन्द्रपातस्यादृश्यरूपस्यवामंपश्चिमगत्याद्वादशराशिभोगात्मकपरिवर्त्तरूपभगणामहायुगेअष्टरामाकृतिरामद्विमिताः । अत्रयुगग्रहणंवक्ष्यमाणग्रहोच्चपातभगणसम्बन्धिकल्पकालवारणार्थम् । ग्रहोच्चपातभगणास्तुयुगेयुगेनोत्पन्नाइत्यस्मिन्युगसम्बन्धिप्रसङ्गेनोक्ताः । मन्दोच्चपातस्वरूपादिनिर्णयस्तुस्पष्टाधिकारेव्यक्तोभविष्यति ॥ ३३ ॥

भा०टी--चंद्रोच्चके ४८८२०३, चंद्रपातके बाई ओर २३२२३८ भगण हैं ॥ ३३ ॥

अथयुगेनाक्षत्रदिवसांस्तत्स्वरूपावगमायग्रहसावनदिनस्वरूपंस्वसंख्याज्ञानहेतुकंचाह-

भानामष्टाक्षिवस्वद्रित्रिद्विद्व्यष्टशरेन्दवः ॥
भोदयाभगणैःस्वैःस्वैरूनाःस्वस्वोदयायुगे ॥ ३४ ॥

भानांनक्षत्राणांस्वतोगत्यभावेऽपिप्रवहवायुनापरिभ्रमणात्तत्संख्यातुल्याभगणाः स्वदिनतुल्याः । अतएवात्रवामामितिपूर्वोक्तस्ययुक्तोऽन्वयः । अष्टद्व्यष्टनगाग्निजातिगजदिनमिताः । ननुग्रहाणामपिप्रवहवायुनापरिभ्रमणेनोदयसद्भावात्तेषांदिवसाःकथंज्ञेयाइत्यतआह । भोदयाइति । उदयोयस्मिन्नहनिस्वाद्यन्तावधिरूपइतिव्युत्पत्त्योदयशब्देनदिनम् । तथाचभोदयानाक्षत्रदिवसाएतउक्ताःस्वैःस्वैः स्वकीयैःस्वकीयैर्भगणैः प्रागुक्तैर्वर्जिताःसन्तःस्वस्वोदया निजनिजसावनदिवसा युगेभवन्ति । युगइत्यनेनाभीष्टकालेनाक्षत्रदिवसाग्रहगतभोगादिनाभगणादिनोनाग्रहसावनदिवसाअभीष्टाभवन्ति । परन्तुराशीन्पञ्चगुणितानंशादिकंदशगुणितं कृत्वाघट्यादिस्थानेहीनंकार्यमन्यथाविजातीयत्वादन्तरानुपपत्तेरितिसूचितम् । अत्रोपपत्तिः । यदिग्रहाणांप्राग्गमनावलम्बनं नस्यात्तर्हिग्रहोदयनक्षत्रोदययोरेकहेतुत्वान्नाक्षत्रसावनदिवसयोरभेदःस्यात् । अतोग्रहाणांलम्बनेननाक्षत्रदिवसेभ्यःसावनदिवसानामन्तरितत्वादवलम्बनजभगणान्तरेणयुगेनाक्षत्रदिवसेभ्योग्रहसावनदिवसान्यूनाभवन्ति । प्रवहेणभगणतुल्यपश्चिमग्रहतुल्यानामकरणादित्युपपन्नम् । भोदयाइत्यादि । अनेनैवभगणसावनयोगोनाक्षत्रदिवसाइत्यप्यर्थसिद्धम् ॥ ३४ ॥

भा०टी०-नक्षत्रोंके १५८२२३७८२८ भगण हैं नक्षत्रोंके भगणमेंसे ग्रहोंके भगण घटानेपर युगमें अपने२ उदयकी संख्या निकल आवेंगी ॥ ३४ ॥

अथवक्ष्यमाणचान्द्रदिवसाधिमासयोः संख्याज्ञानहेतुकस्वरूपमाह-

भवन्तिशशिनोमासाःसूर्येंदुभगणांतरम् ॥
रविमासोनितास्तेतुशेषाःस्युरधिमासकाः ॥ ३५ ॥

सूर्यचन्द्रभगणयोरन्तरंचन्द्रस्यमासाभवन्ति तेचान्द्रमासारविमासोनिताः । अत्रप्रथमंतुकारान्वयाद्द्वादशगुणितरविभगणरूपवक्ष्यमाणार्कमासैरूनिताःसन्तः शेषाअवशिष्टायेचान्द्रमासास्तेऽधिमासाएवभवन्तिनान्ये । अनेनचान्द्रत्वमधिमासानांस्पष्टीकृतम् । अत्रोपपत्तिः । त्रिंशत्तिथ्यात्मकस्यरवीन्दुयुतिकालरूपदर्शान्तावधेश्चान्द्रमासस्यद्वादशराशिमितेनसूर्येन्द्वन्तरेणैवसिद्धिः । कथमन्यथादर्शान्तेजातस्यमन्दशीघ्रयोःसूर्येन्द्वोर्योगस्यपुनर्दर्शान्तेसंभवः । द्वादशराश्यन्तरंत्वेकंभगणान्तरमतोभगणान्तरेणचान्द्रोमासःसिद्धः । सौरमासापेक्षयायदन्तरेणचान्द्रमासानामधिकत्वंतएवाधिमासाइतिस्वरूपमेववक्ष्यमाणोपयोगात्परिभाषितम् ॥

भा०टी०-चंद्रमा और सूर्यका भगणान्तर चान्द्रमास है । चन्द्रमाससे रविमास घटानेपर अधिमास होजाताहै ॥ ३५ ॥

अथवक्ष्यमाणावमसूर्यसावनयोःस्वरूपमाह-

सावनाहानिचान्द्रेभ्योद्युभ्यःप्रोज्झ्यतिथिक्षयाः ॥
उदयादुदयंभानोर्भूमिसावनवासराः ॥ ३६ ॥

चान्द्रेभ्योद्युभ्योवक्ष्यमाणचान्द्रदिवसेभ्यःसकाशादित्यर्थः । सावनाहानिसावनदिनानिप्रोज्झ्यत्यक्त्वावशेषांतिथिक्षयाः । तिथिषुचान्द्रदिनेषुसावनदिनानामवशेषतुल्यःक्षयोन्यूनत्वम् । यद्वातिथिशब्देनसावनोदिवसस्तस्यचान्द्रंदिवसात्क्षय इतिस्वरूपमेववक्ष्यमाणोपयोगात्परिभाषितम् । ननुभोदयाभगणैरित्यादिनापूर्वंसर्वेषांसावनदिवसाउक्ताइत्यत्रकस्यग्राह्याइत्यतः सूर्यसावनस्वरूपकथनच्छलेनोत्तरमाह । उदयादिति । सूर्य्यस्योदयकालमारभ्याव्यवहिततदुदयकालपर्यन्तंयःकालःसएकोदिवसः । इतियेदिवसास्तेभूमिसावनवासराः । भूदिवसाउदयस्यभूसम्बन्धेनावगमात् । सावनदिवसाश्चेत्यर्थः । तथाचनिरूपपदसावनभूमिशब्दाभ्यांसूर्य्यस्यवासराएवनान्येषांसोपपदत्वाभावादितिभावः ॥ ३६ ॥

भा०टी०-चान्द्रदिनसे सावन दिन दूर करनेपर तिथिक्षय होता है ॥ सूर्यके एक उदयसे दूसरे उदयतक एक भौम या सौर दिन होता है ॥ ३६ ॥

तेकियन्तइत्यतस्तत्प्रमाणंचान्द्रदिनप्रमाणंचाह-

वसुद्व्यष्टाद्रिरूपांकसप्ताद्रितिथयोयुगे ॥
चान्द्राःखाष्टखखव्योमखाग्निखर्तुनिशाकराः ॥ ३७ ॥

अष्टाश्विगजसप्तभूगोनगसप्तपञ्चभूमितायुगेसूर्य्यसावनदिवसाः । चान्द्र

दिवसायुगतिथयइत्यर्थः । अशीतिशून्यचतुष्कत्रिखनृपाएतेत्रिंशद्भक्ताश्चान्द्रमासाउक्तप्रायाः । अनेनैवचान्द्रदिवसानामुपपत्तिःसूर्य्यचन्द्रयोर्भगणयोरन्तररूपचान्द्रमासास्त्रिंशद्गुणिताइतिस्पष्टीकृताः ॥ ३७ ॥

भा०टी०-युगमें १५७७९१७८२८ सौरदिने और १६०३०००००८० तिथि (चान्द्रदिन) हैं ॥ ३७ ॥

अथाधिमासावमयोःसंख्यामाह-

षड्वह्नित्रिहुताशाङ्कतिथयश्चाधिमासकाः ॥
तिथिक्षयायमार्थाश्विद्व्यष्टव्योमशराश्विनः ॥ ३८ ॥

अधिमासकाःप्रागुक्तस्वरूपाश्चकाराद्युगेषड्देवरामगोशरेन्दुमितास्तिथिक्षयादिनक्षयाअवमानीत्यर्थः । अर्थाःपञ्च । एवंद्विशराकृत्यष्टखतत्वानि ॥ ३८ ॥

भा०टी०-युगमें अधिमास १५९३३३६ और तिथिक्षय २५०८२२५२ हैं ॥ ३८ ॥

ननुसूर्य्यमासानुक्तेरधिमाससंख्याकथंज्ञातेत्यतोरविमाससंख्यास्वरूपेणक्षहांश्चाह-

खचतुष्कसमुद्राष्टकुपञ्चरविमासकाः ॥
भवन्तिभोदयाभानुभगणैरूनिताःक्षहाः ॥ ३९ ॥

सूर्य्यमासाद्वादशगुणितरविभगणानुरूपाः शून्यखाभ्रखवेदधृतिशरमिताः । ननुसावनदिवससंख्याप्रागुक्ताकथमवगतेत्याह । भवन्तीति । भोदयानाक्षत्रदिवसाःप्रागुक्ताःसूर्य्यभगणैःप्रागुक्तैर्वर्जिताःसन्तःक्षहाभूवासराभवन्ति भोदयाइत्यादिप्रागुक्तेः ॥ ३९ ॥

भा०टी०-युगमें रविमास ५१८४०००० हैं । नक्षत्र भगणसे सूर्यभगण घटादेनेपर कुदिन (सौरदिन) की गिनती होतीहै ॥ ३९ ॥

ननुसूर्य्यादिमन्दोच्चभौमादिपातानांयुगेभगणानुत्पत्तेः कल्पभगणकथनमावश्यकमतस्तत्पंक्त्यांप्रागुक्ताएतेभगणादयःकल्पएवकथंनोक्ताइत्यतआह-

अधिमासोनरात्र्यृक्षचान्द्रसावनवासराः ॥
एतेसहस्रगुणिताःकल्पेस्युर्भगणादयः ॥ ४० ॥

एतेप्रागुक्ताभगणादयोभगणाआदिर्येषांतेभगणादयः । अधिमासोनरात्र्यृक्षचान्द्रसावनवासराः । अधिमासाःषड्वह्नित्यादितिथिक्षयाइत्याद्यूनरात्रयोऽवमानि । ऋक्षचान्द्रसावनानांप्रत्येकंवासरसम्बन्धः । नाक्षत्रदिवसाभानामित्यादि । चान्द्रदिवसाश्चान्द्राःखाष्टेत्यादि । सावनदिवसावसुद्व्यष्टाद्रीत्यादि । अत्रसौ-

रमासाअपिखचतुष्केत्यादिग्राह्याः। सहस्रगुणिताःकल्पेभगणादयउक्ताभवन्तियुग-सहस्रस्यकल्पत्वात्। तथाचलाघवार्थयुगयुक्ताइतिभावः॥ ४० ॥

भा०टी०-एक युगके अधिमास,तिथिक्षय,चान्द्रसावनदिन आदिसबको१००० से गुणा करनेपर एक कल्पके भगणादि होते हैं॥ ४० ॥

अथश्लोकाभ्यांरविचंद्रसूर्यादिग्रहाणांमन्दोच्चभगणान्वदन्पातभगणान्प्रतिजानीते-

प्राग्गतेःसूर्यमन्दस्यकल्पेसप्ताष्टवह्नयः॥
कौजस्यवेदखयमाबौधस्याष्टर्तुवह्नयः॥ ४१ ॥
खखरन्ध्राणिजैवस्यशौक्रस्यार्थगुणेषवः॥
गोऽग्नयःशनिमन्दस्यपातानामथवामतः॥ ४२ ॥

प्राग्गतेः कल्पइत्यनयोःशनिमन्दान्तंप्रत्येकंसम्बन्धः । पूर्व्वगतेःसूर्यमन्दोच्चस्यकल्पेसप्ताष्टरामामिताः शनिपातस्यभगणाइतिवक्ष्यमाणस्यभगणाइतिपदमत्रप्रत्येकमन्वेति । कौजस्यकुजसम्बन्धिनःसूर्य्यमन्दस्येत्यस्यैकदेशोमन्दस्येति मन्दोच्चस्येत्यर्थकमत्रान्वेति । तथाचभौममन्दोच्चस्यचतुरधिकंशतद्वयम् । बौधस्यबुधमन्दोच्चस्याष्टषट्त्रिमिताः । जैवस्यगुरुसम्बन्धिनः । अत्रशनिमन्दस्येतिवक्ष्यमाणस्यैकदेशोमन्दस्येति मन्दोच्चस्येत्यर्थकमन्वेत्येकवृत्तस्थत्वात् । यद्वाद्यन्तयोर्मन्दस्यत्युक्त्यैवमध्यस्थानामन्वयःसूपपन्नइति । तथाचगुरुमन्दोच्चस्यनवशतंशौक्रस्यशुक्रमन्दोच्चस्यपञ्चत्रिंशदधिकपञ्चशतंशनिमन्दोच्चस्यैकोनचत्वारिंशत् । अथानन्तरंपातानांभौमादिपातानांवामतःपश्चिमगत्याभगणाउच्यन्तइतिशेषः॥ ४१ ॥ ४२ ॥

भा०टी०-एक कल्पमें मंदसूर्यके ३८७, मंगलके २०४, बुधके ३६८, बृहस्पतिके ९०० शुक्रके ५३५ और शनिके ३९ भगण बाईं ओरको चलते हैं॥ ४१ ॥ ४२ ॥

ताञ्छ्लोकाभ्यामाह-

मनुदस्रास्तुकौजस्यबौधस्याष्टाष्टसागराः॥
कृताद्रिचन्द्राजैवस्यत्रिखाङ्काश्चभृगोस्तथा॥ ४३ ॥
शनिपातस्यभगणाःकल्पेयमरसर्तवः॥
भगणाःपूर्वमेवात्रप्रोक्ताश्चन्द्रोच्चपातयोः॥ ४४ ॥

कुजसम्बन्धिनः । तुकारात्पातस्यभौमपातस्यकल्पेभगणाश्चतुर्दशाधिकंशतद्वयम् । बौधस्यबुधसम्बन्धिनःशनिपातस्येत्यस्यैकदेशःपातस्येत्यत्रान्वेति । बुधपातस्यद्वादशोनापञ्चशती । जैवस्यगुरुपातस्यचतुःसप्तत्यधिकंशत-

म् । भृगोःशुक्रस्यतथासम्बन्धिनश्चकारात्पातस्यशुक्रपातस्येत्यर्थः । त्र्यधिकानवशती । शनिपातस्याद्रिरसषट्काभगणाःकल्पेभवन्ति । नन्वस्मिन्प्रसङ्गेचन्द्रस्योच्चपातयोर्भगणाः कथंनोक्ताइतिमन्दाशङ्कापाकरणायपूर्वोक्तंस्मारयति । भगणाइति । चन्द्रोच्चपातयोश्चन्द्रस्यमन्दोच्चपातयोर्भगणाअत्रास्मिन्नधिकारेपूर्वंग्रहयुगभगणकथने । एवकारोविस्मरणनिरासार्थकः । प्रोक्ताश्चन्द्रोच्चस्येत्यादिश्लोकेनोक्ताः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

भा॰टी॰—एक कल्पमें मंगलके २१४, बुधके ४८८, बृहस्पतिके १७४, शुक्रके ९०३, शनिके ६६२पातके बांई ओर चलनेवाले भगण हैं। पहलेही चन्द्रमाके पात कहेहैं ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

अथाभिमतकालेग्रहगतभोगानयनंविवक्षुस्तदुपजीव्याहर्गणसाधनार्थप्रवृत्तग्रहंचारकालाद्गताब्दज्ञानोपजीव्यंकृतयुगान्तीयगताब्दज्ञानंश्लोकत्रयेणाह—

षण्मनूनांतुसम्पिण्ड्यकालंतत्सन्धिभिःसह ॥
कल्पादिसन्धिनासार्द्धं वैवस्वतमनोस्तथा ॥ ४५ ॥
युगानांत्रिघनंयातंतथाकृतयुगंत्विदम् ॥
प्रोज्झ्यसृष्टेस्ततःकालंपूर्वोक्तंदिव्यसंख्यया ॥ ४६ ॥
सूर्याब्दसंख्ययाज्ञेयाकृतस्यान्तेगताअमी ॥
खचतुष्कयमाद्यग्निशररन्ध्रनिशाकराः ॥ ४७ ॥

षण्मनूनांकालंसौरवर्षात्मकंतत्सन्धिभिः षण्मनूनांकृतयुगप्रमाणैःषड्भिःसंधिभिः सहसार्द्धंकल्पादिसन्धिनाकृतप्रमाणः कल्पादावित्यनेनकल्पप्रारम्भसम्बद्धकृतयुगमितसन्धिनासार्द्धंसार्थंसम्पिण्ड्यैकीकृत्य । तुकारादायुषोऽर्धमितंतस्येत्यस्यनिरासः । वैवस्वतमनोर्वर्त्तमानसप्तमवैवस्वताख्यस्यमनोर्युगानांत्रिघनंयातंयुगसप्तविंशतिंगतांतथैकीकृत्येदमष्टाविंशतियुगान्तर्गतं तुकारात्साम्प्रतंस्थितंकृतयुगं तथागतत्वेनैकीकृत्यततः सिद्धाङ्कात्सृष्टेः कालंसृष्टिकरणार्थंयःकालोवर्षात्मकस्तं दिव्यसंख्ययादिव्यमानेनपूर्वोक्तंकृताद्रिवेदादिव्याब्दाःशतघ्नाइत्यनेनोक्तम् । सूर्याब्दसंख्ययासौरवर्षमानेनषष्ट्यधिकशतत्रयगुणितंकृत्वेति तात्पर्यार्थः । एतेनप्रागुक्तैकीकरणंसौरवर्षप्रमाणेननदिव्यवर्षप्रमाणेनेतिव्यक्तीकृतम् । प्रोज्झ्यन्यूनंकृत्या । चःसमुच्चयार्थोऽनुसन्धेयः । अमीअवशिष्टाब्दाःखाभ्रखाभ्रद्विसप्तत्रिशरातिधृतयःकृतयुगचरणस्यावसानेगताअतीताज्ञातव्याः । ननुकल्पादस्माच्चमनवइत्यादिपूर्वोक्तसम्पिण्डितकालो त्तस्येदंषण्मनूनामित्यादिपुनरुक्तमाभाति । नचपूर्वंब्रह्मगतवयःप्रमाणज्ञानार्थमिदानींचग्रहसाधनार्थम् । अन्यथा गतब्रह्मवयःप्रमाणाद्ग्रहसाधनापत्तेरितिवाच्यम् । ब्रह्मगतवयःप्रमाणादेवग्र-

हसाधनस्ययुक्तत्वादिष्टापत्तेः । अन्यथाग्रहचक्रादेर्ब्रह्मोत्पत्तितस्तदवसानपर्यंतसत्त्वाद्ब्रह्मदिनाधिककालेगताब्दज्ञानाभावाद्ग्रहसाधुनानुपपत्तिरितिचेन्न । इत्थंयुगसहस्रेणभूतसंहारकारकः कल्पइत्यनेनब्रह्मदिनान्तेग्रहचक्रादिनाशोक्तेस्तद्दिनादौग्रहचक्रोत्पत्तेश्चब्रह्मदिवसएवतदादिगताब्दाग्रहचारोपजीव्यानब्रह्मगतायुःप्रमाणाब्दाःग्रहासत्त्वेग्रहसाधनापत्तेः । अतःपुनर्गताब्दाग्रहचारोपजीव्याब्रह्मदिवसेसाधिताः। परन्तुब्रह्मदिनादितोग्रहचारप्रवृत्तिकालपर्यंतयः सृष्टिविलम्बितकालस्तदूनाब्रह्मदिनादिगताब्दाःसृष्टिगताब्दाग्रहसाधनोपजीव्याइतितथोक्तम् । अन्यथासृष्ट्यन्तर्गतकालेग्रहचारासत्त्वेतत्साधनापत्तेः सृष्टिकालकथनानुपपत्तेश्चेतिदिक् । यथादिव्याब्दस्यसौरवर्षाणि ३६० । द्वादशसहस्रगुणितानिमहायुगम् ४३२०००० इदमेकसप्ततिगुणंमनुमानम् ३०६७२००००इदंषड्गुणितंषण्मनुमानम् १८४०३२०००० इदंस्वसन्धिभिःकृतयुगप्रमाणैःसप्तभिरेभिः १२०९६००० युगम् १८५२४१६००० एतत्सप्तविंशतियुग ११६६४०००० सहितम् १९६९०५६००० । कृतयुग १७२८००० युक्तंजातानिकल्पगतवर्षाणि १९७०७८४००० । सृष्टिदिव्याब्दैः ४७४०० । खषडाग्निगुणितैरेभिः १७०६४००० । हीनंसृष्टिगताब्दाग्रहचारोपजीव्याःकृतयुगान्तेखचतुष्केत्याद्युपपन्नाः १९५३७२०००० ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

भा०टी०—सन्धिके सहित छःमनुका समय कल्पकी आदि सन्धि, बीते हुए सत्ताईस युगका प्रमाण और कृतयुगमान जोडके उसमेंसे कल्पारम्भसे लेकर सृष्टकालतकके सौर वर्ष (२४ श्लोक) की संख्या घटानेसे सृष्टिके बीते हुए वर्ष निकल आवेंगे । सो १९५३७२०००० वर्ष हैं ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

तथाभीष्टकालेऽहर्गणसाधनं ततोदिनमासाब्दपप्रतिज्ञांवासरेश्वरज्ञानंचश्लोकचतुष्टयेनाह—

अतऊर्ध्वममीयुक्तागतकालब्दसंख्यया ॥
मासीकृतायुतामासैर्मधुशुक्लादिभिर्गतैः ॥ ४८ ॥
पृथक्स्थास्तेऽधिमासघ्नाःसूर्यमासविभाजिताः ॥
लब्धाधिमासकैर्युक्तादिनीकृत्यदिनान्विताः ॥ ४९ ॥
द्विष्ठास्तिथिक्षयाभ्यस्ताश्चान्द्रवासरभाजिताः ॥
लब्धोनरात्रिरहितालङ्कायामार्धरात्रिकः ॥ ५० ॥
सावनोद्युगणःसूर्यादिनमासाब्दपास्ततः ॥
सप्तभिःक्षयितःशेषःसूर्याद्योवासरेश्वरः ॥ ५१ ॥

अतःकृतयुगान्तादूर्ध्वमुपर्यनन्तरमित्यर्थः । अभीष्टकालेयोगतकालस्तस्यसौर-वर्षसङ्ख्ययामीकृतयुगान्तीयसृष्ट्यब्दाःखचतुष्केत्यादिपूर्वोक्तायुक्ताअभीष्टकाले-सौरगताब्दाभवंति । एतेमासीकृताद्वादशगुणिताइत्यर्थः । अभीष्टकालेमधुशुक्ला-दिभिश्चैत्रशुक्लाद्यवधिभूतैर्गतैर्मासैर्युताः । अत्रगतमासांतर्गतोऽधिमासश्चेन्नग्राह्यस्त-स्योत्तरमासाह्वयत्वेनतदन्तर्गतत्वात् तन्मासस्यषष्टिदिनात्मकत्वाच्च । तेसिद्धाःपृथ-क्स्थायुगाधिमासगुणितायुगसूर्यमासभक्ताःप्राप्ताधिमासकैर्निरग्रैःसिद्धायुक्ताः । अत्रयदास्पष्टोधिमासः पतितआनयनेनलब्धस्तदानयनप्राप्ताधिमासैःसैकैर्युक्ताः । यदातुस्पष्टोऽधिमासोनपतितआनयने प्राप्तस्तदानयनप्राप्ताधिमासैर्निरकैर्युक्ताः । अन्यथाभीष्टकालसाधिताहर्गणस्यत्रिंशद्दिनान्तरितत्वापत्तेरितिध्येयम् । एतेसिद्धा-दिनीकृत्यत्रिंशतासंगुण्येत्यर्थः। दिनान्वितावर्त्तमानमासस्यशुक्लप्रतिपदादिगताति॒थि-भिर्युक्ताइत्यर्थः । एतेद्विष्ठाःस्थानद्वयेस्थाप्याएकत्रयुगावमैर्गुणितायुगचान्द्रदिनैर्भ क्ताश्चप्राप्तावमैर्निरग्रैरपरत्रहीनाःसन्तो लङ्कादेशेऽर्धरात्रकालिकः सावनोहर्गणः स्यात् । ततःसाधिताहर्गणात्सकाशात्सूर्यात्सूर्यमारभ्यदिनमासाब्दपावारेश्वरमासे-श्वरवर्षेश्वराभवन्ति । तत्रवासरेश्वरज्ञानमाह । सप्तभिरिति । अयमहर्गणःसप्तभिः क्षयितोभक्त्वाशेषितःकार्य्यः । सशेषोऽवशिष्टःसूर्य्याद्यःसूर्य्यवारादिकोवासरेश्वरो वारस्वामीगतोभवति । तदग्रिमोवर्तमानोवारेशइत्यर्थसिद्धम् । अत्रोपपत्तिः । सौर वर्षाणांमासकरणेसृष्ट्याद्यधिमासांतकालसम्बन्धिसावयवसौरमासाअव्यवहितपू-र्वपतिताधिमासान्तकालादिस्वाभीष्टचैत्राद्यन्तकालसम्बंधिसावयवचान्द्रमासा-स्तयोर्योगश्चैत्रादौद्वादशगुणितौसौरवर्षाणिजातानिकुतइतिचेच्छृणु । द्वादश-गुणितसौरवर्षाणिसौरवर्षादौसौरमासाइंतितुनिर्विवादम् । तेस्वानीताधिमासैः सावयवैर्युताश्चांद्राःसावयवाःसौरवर्षादौ । एतेऽवयवहीनाश्चैत्रादौनिरवयवाश्चा न्द्रमासाः । अवयवस्यचैत्रादिसौरवर्षाद्यन्तरकालरूपाधिशेषत्वात् । तेनिर-ग्राधिमासोनाश्चैत्रादावधिमासोनचान्द्राद्वादशगुणितसौरवर्षरूपाउक्तयोगस्व-रूपाःसिद्धाः । कथमन्यथानिरग्राधिमासयोजनेनैषांचैत्रादौचान्द्रमासमान-त्वसम्भवः । एतेस्वाभीष्टमासादिकालसिद्ध्यर्थंचैत्रशुक्लादिगतमासैर्युक्ताः । एतेनद्वादशगुणितसौरवर्षमितसौरमासानांचैत्रादिगतचान्द्रमासाःकथंयोजि-ताएकजातित्वाभावादितिदूषणाङ्गीकारोनिरस्तः । उक्तरीत्यातत्रचान्द्रमा-सानामपिसत्त्वादेकजातीयत्वेनयोगसम्भवात् । नहिपूर्वयोगोऽस्माभिःकृतो येनविजातीययोगोदूषणंतस्यद्वादशगुणितसौरवर्षरूपत्वेनस्वतः सिद्धत्वात् अथैष निरग्राधिमासा योज्या इति सृष्ट्यादिपूर्वपतिताधिमासान्तकालावधि ये

सौरमासाः सावयवास्तेभ्योयुगसौरमासैर्युगाधिमासास्तदैभिः सौरमासैः कइत्यनुपातेननिरग्राधिमासाश्चान्द्राभवन्तिसौरेभ्यः साधितत्वात् । अथाभीष्टकालेऽधिमासावयवज्ञानार्थंयुगचान्द्रमासैर्युगाधिमासास्तदापूर्वपतिताधिमासान्तकालाभीष्टमासाद्यन्तरस्थितचान्द्रमासैः सावयवैरेभिः कइत्यनुपातेनाधिमासाभावात्तदवयवः सौरआयातिचान्द्रात्साधितत्वात् । परन्त्ववयवावयविनोरेकजातित्वासिद्धिरतस्तत्सम्पादनार्थमधिमासावयवस्योक्तसौरस्ययुगसौरमासैर्युगचान्द्रमासास्तदोक्तसौराधिमासावयवेनकिमित्यनुपातेनयुगचान्द्रमासागुणोयुगसौरमासाहरइतितुल्ययोर्गुणहरयोर्युगचान्द्रमासयोर्नाशादिष्टचान्द्रमासानांयुगाधिमासागुणोयुगसौरमासाहरइतिफलमधिमासावयवश्चान्द्रः । अथताद्दशेष्टसौरचान्द्रमासयोः पृथगज्ञानादधिमासतदवयवयोर्ज्ञानमशक्यमप्येकोहरश्चेद्गुणकौविभिन्नावित्यादिरीत्येष्टताद्दशसौरचान्द्रमासयोर्योगएवायं ज्ञातोयुगाधिमासगुणितोयुगसूर्यमासभक्तः फलमधिमासाः। शेषात्तदवयवोऽहर्गणानयनेऽनुपयुक्तः । तत्रकेवलाधिमासानामेवन्यूनत्वेनतेषामेवयोजनावश्यकत्वात् । अयंसृष्टयादितइष्टमासादिपर्यन्तंचान्द्रमासगणः सिद्धः । बहवस्तुद्वादशगुणितसौरवर्षरूपसौरमासानांसौरवर्षादितोऽभीष्टकालपर्यन्तंसौरमासानामज्ञानाज्ज्ञातचैत्रादिगतचान्द्रमासाएवयोजिताः परमिष्टसौरमासेष्वधिमासशेषमधिकंतच्चाधिमासानयनेऽधिशेषत्यागेनकेवलाधिमासयोजनेनिरन्तरंभवति अधिमासानयनंचचान्द्रमिष्टसौरमासत्वेनैवाधिशेषाधिकेष्टसौरमासानामङ्गीकारादित्याहुः । तच्चिन्त्यम् । केवलेष्टसौरमासानीताधिमासानां निरग्राणामधिशेषाधिकसौरेष्टमासेषुयोजनेनैवनिरन्तारितत्वासिद्धेः । अन्यथाधिशेषगुणितयुगाधिमासेभ्योयुगार्कमासभक्ताप्तफलेनाधिशेषमधिकमायातीति परमासन्नाधिशेषस्याधिकत्वेभवद्वीत्यनुपातानयनेनैकाधिकमासलब्ध्यायोजितेनचान्द्रमासगणएकाधिकः स्यादिति । अथाभीष्टमासादिसिद्धचान्द्रमासाश्चान्द्रदिनकरणार्थंत्रिंशद्गुणिताअभीष्टदिनेतत्सिद्धयर्थंशुक्लादिगततिथयोऽत्रयोजिताअभीष्टतिथ्यादौचान्द्राहर्गणः । युगचान्द्रदिनैर्युगावमानितदानेनकिमित्यनुपातागतावमैः सावयवैर्हीनाश्चान्द्राहर्गणस्तिथ्यन्तेसावनोऽहर्गणोयमकोटिदेशेसूर्योदयकालेग्रहचारस्यप्रवृत्तेस्तदादितोनिरवयवाहर्गणसिद्धयर्थंतिथ्यन्ततत्कालयोरन्तरमवमावयवरूपंयोज्यमतः पूर्वमेवावमावयषोऽनुपयुक्तोऽत्रनगृहीतोऽतश्चान्द्राहर्गणः स्वानीतावमैर्निरग्रैर्हीनोऽहर्गणः । सावनोनिरवयवोयमकोटिदेशीयसूर्योदयकालेतत्रतद्देशस्याप्रसिद्धतयाप्रसिद्धलङ्कादेशार्द्धरात्रस्यतद्रूपस्योक्तिः कृता । सृष्टयादावर्कवारसद्भावात् तदाद्यादिनमासवर्षेश्वराः । ग्रहाणांसप्तसङ्ख्यत्वात् सप्ततष्टोऽहर्गणः शेषंगतवारः ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥

भा०टी०-कृतयुगके बीतेहुए वर्षोंकी संख्यामें ऊपर कही हुई संख्या मिलाय, मास करके मधु शुक्लादि विगत मासकी संख्याको मिलावै ॥ ४८ ॥ और जगह उक्तमास संख्याको अधिमाससे गुणकरके, सूर्यमाससे भागकर मास संख्याके साथ मिलाय दिन करके बीते हुए दिनोंके साथ मिलावै ॥ ४९ ॥ अन्यत्र दिनसंख्याको तिथिक्षयद्वारा गुणकरके, चांद्रदिनसे भागकरे, फिर दिनकी संख्यासे घटानेपर लङ्काके आर्द्धरात्रिक अहर्गण होंगे ॥ ५० ॥ द्युगणसे दिनमासाब्दपति निकलता है। अहर्गणको ७ से भागकरके शेषाङ्क रविसे गणित करनेपर दिनका अधिपति (स्वामी) होगा ॥ ५१ ॥

अथप्रतिज्ञातयोर्मासवर्षपयोरानयनमाह-

मासाब्ददिनसङ्ख्यातंद्वित्रिघ्नंरूपसंयुतम् ॥
सप्तोद्धृतावशेषौतुविज्ञेयौमासवर्षपौ ॥ ५२ ॥

अहर्गणाद्विष्ठादेकत्रमासदिनानांसङ्ख्ययात्रिंशताभक्तादाप्तंफलम् । अपरत्रवर्षदिनानांसङ्ख्ययाषष्ट्यधिकशतत्रयेणभक्तादाप्तंफलम् । शेषयोरनुपयोगात्त्यागः । क्रमेणफलद्वयंद्वाभ्यांत्रिभिर्गुणितमुभयत्रैकसङ्ख्यायुक्तंसप्तभागहारेणभक्तात्फलत्यागेनावशिष्टौक्रमेणमासस्वामिवर्षस्वामिनौज्ञातव्यौतुकाराद्द्युक्रमेणवारेश्वरगणनातत्क्रमेणानयोर्गणनापरमत्रवर्तमानेत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । सृष्ट्यादित्रिंशदहोरात्राणामेकः सौरसावनमानस्तस्यसूर्योऽधिपतिर्मासादिदिनेऽर्कस्याधिपतित्वात् । एवंद्वितीयमासादौभौमस्यदिनाधिपतित्वाद्भौमोद्वितीयमासेश्वरइति प्रतिमासंमासेश्वरयोरन्तरंद्वयम् । त्रिंशद्दिनानांसप्ततष्टतयाद्व्यवशेषात् । एवंषष्ट्यधिकशतत्रयाहोरात्राणामेकंसौरसावनवर्षं तस्याधिपोऽर्कः । वर्षादिदिनेऽर्कस्याधिपतित्वात् । एवंद्वितीयसावनवर्षादौ बुधस्यदिनाधिपतित्वाद्बुधोद्वितीयवर्षेश्वरइतिप्रतिवर्षवर्षेश्वरयोरन्तरंत्रयंषष्ट्यधिकशतत्रयदिनानांसप्ततष्टतयात्र्यवशेषात् । तथाचवर्त्तमानकालेतद्गणनयाकियन्तोमासागताः । कियंतिचवर्षाणिगतानीतिज्ञानार्थमहर्गणस्त्रिंशद्भक्तःफलंगतमासाः । षष्ट्यधिकशतत्रयभक्तःफलंगतवर्षाणि । एकमासेद्वौवारौतदागतमासैःकइतिगतमासवारावर्तमानार्थसैकाः। एवमेकवर्षेत्रयोवारास्तदागतवर्षैः कइतिगतवर्षवारावर्त्तमानार्थसैका वाराणांसप्तसङ्ख्यत्वातसप्ततष्टौशेषौसूर्यादिकौमासवर्षेश्वरौ ॥ ५२ ॥

भा०टी०-अहर्गणको मास (३०) और वर्ष (३६०) दिनसंख्यासे भागकरके २ और तीनसे गुणा करके तिस गुणित फलमें एक मिलावै। फिर तिस संख्यामें ७ का भागदेनेपर शेषाङ्क रविसे गणित करनेपर मासेश्वर और वर्षेश्वर होगा ॥ ५२ ॥

अथग्रहानयनमाह-

यथास्वभगणाभ्यस्तोदिनराशिः कुवासरैः ॥
विभाजितोमध्यगत्याभगणादिर्ग्रहोभवेत् ॥ ५३ ॥

दिनराशिरहर्गणोयथास्वभगणाभ्यस्तोयत्कालिकनिजोक्तभगणैर्गुणितोयुगभगणैःकल्पभगणैर्वेत्यर्थः । तथाकुवासरैस्तात्कालिकसावनदिनैर्युगसावनैः । कल्पसावनैर्वेति यथायोग्यमित्यर्थः । भक्तःफलंयस्यग्रहस्यभगणागुणनार्थगृहीताःसग्रहोभगणादिर्भगणराशिभागकलाविकलात्मकभोगात्मकः । मध्यगत्यामध्यगतिमानेननप्रतिदिनविलक्षणस्फुटगतिप्रमाणेनाग्रेतत्प्रमाणेनग्रहभोगज्ञानस्योक्तेः । मध्यमोग्रहःस्यादित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । युगादिसावनैर्युगादिभगणास्तदैकेनदिनेनकेतिप्राप्तामध्यमगतिस्ततएकेनदिनेनेयंगतिस्तदेष्टाहर्गणेनकेतिरूपयोस्तुल्यत्वेनविकाराजनकत्वाच्चनाशादुपपन्नमानयनम् । यद्यपियुगादिसावनैर्युगादिभगणास्तदेष्टाहर्गणेनकिमित्येकानुपातेनानयनमुपपन्नंलाघवात्तथापिमध्यगत्येत्यस्यप्रदर्शनार्थमनुपातद्वयंगुरुभूतमपिप्रदर्शितम् ॥ ५३ ॥

भा०टी०-अपने २ भगण करके दिनराशिको (अहर्गण) गुणकरके कुदिनसे भाग करनेपर ग्रहकी मध्यगतिसे उत्पन्न हुए भगणादि मध्य होंगे ॥ ५३ ॥

अथामुंप्रकारमुच्चपातयोरानयनायातिदिशति-

एवंस्वशीघ्रमन्दोच्चायेप्रोक्ताःपूर्वयायिनः ॥
विलोमगतयःपातास्तद्वच्चक्राद्विशोधिताः ॥ ५४ ॥

येपूर्वयायिनः पूर्वदिग्गतयःस्वशीघ्रमन्दोच्चाःस्वेषांग्रहाणांशीघ्रोच्चमन्दोच्चाग्रहबहुत्वेनशीघ्रोच्चमन्दोच्चयोर्बहुत्वाद्बहुवचनम् । प्रोक्ताःपूर्वंभगणोक्त्याकथितास्तेऽप्येवंग्रहानयनरीत्यासाध्याः । ननुपूर्वयायिनएवंसाध्यास्तर्हिपश्चिमगतयः पाताःकथंसाध्याइत्यतआह । विलोमगतयइति । पश्चिमगतयःपाताअपितद्वद्ग्रहानयनरीत्यात्रचन्द्रोच्चपातौग्रहानयनवद्युगकल्पभगणसावनाभ्यांसिद्धौभवतोऽन्येषामुच्चपातौतुकल्पसावनदिनहरेणेतिध्येयम् । ननुतर्हिपूर्वपश्चिमगत्योः कोविशेषआनयनइत्यतआह । चक्रादिति । आगताराश्यादिपाताद्द्वादशराशिभ्यःशोध्याःपाताभवन्ति । एतावानेवविशेषइतिभावः । अत्रोपपत्तिः । पूर्वयायिनोमेषवृषमिथुनादिक्रमेणगच्छन्तिपश्चिमगतयस्तुमेषमीनकुम्भेत्याद्युत्क्रमेणगच्छन्ति । तत्रोत्क्रमगणनायालोकेऽनभ्यासाद्राशिक्रमेणतज्ज्ञानार्थंद्वादशराशिभ्यःशोधिताः । पूर्वगतिपंक्तिस्थाभवन्ति ॥ ५४ ॥

भा०टी०-ऐसेही अपने २ पहले चलनेवाले शीघ्रमन्दोच्चादिका मध्य निर्णय होजायगा । परन्तु समस्तपात विलोम गमन करनेवाले अर्थात् विपरीत मार्गमें चलनेवाले हैं, तिसकारणसे मध्यराश्यादि १२ राशिसे अलग करनेपर मध्य होजायगा ॥ ५४ ॥

अथसंवत्सरानयनमाह-

द्वादशघ्नागुरोर्याताभगणावर्तमानकैः ॥
राशिभिःसहिताःशुद्धाःषष्ट्यास्युर्विजयादयः ॥ ५५ ॥

अहर्गणानीतस्यभगणादिकस्यबृहस्पतेर्यातागताभगणाउपरिस्थाद्धादशगुणिता-वर्तमानकैर्यस्मिन्नधिष्ठितःसवर्त्तमानस्तत्सहितैरेकयुक्तैरित्यर्थः । राशिभिर्गणि-तागतराशिभिर्यद्वाशौतिष्ठतितस्यमेषादिसङ्ख्ययेतिफलितार्थः । युताःषष्ट्या-शुद्धाभागावशेषिताःफलंभागादिकंचानुपयोगात्त्याज्यम् । विजयादयःसंवत्स-रावर्त्तमानसहिताभवन्ति । अत्रोपपत्तिः । "मध्यगत्याभभोगेनगुरोर्गौरववत्स-राः" ॥ इतिलघुवसिष्ठसिद्धान्तोक्तेर्गुरुमध्यमराशिभोगकालएकःसंवत्सरइतिसृ-ष्ट्याद्यानीतभगणादिगुरोःसम्पूर्णराशिज्ञानार्थंभगणाद्धादशगुणावर्तमानराशिसं-ख्यायुताःषष्टितष्टाःशेषंविजयादिकःसंवत्सरोवर्तमानोभवति । संवत्सराणांषष्टिसं-ख्यत्वात् । सृष्ट्यादौविजयसंवत्सरसद्भावाच्च ॥ ५५ ॥

भा०टी०-बृहस्पतिके भगणको १२ से गुणकरके राशिके साथ मिलाय, ६० से भाग करनेपर भागफल विजयादि संवत्सर होगा ॥ ५५ ॥

अथोक्तमुपसंहरँल्लाघवेनग्रहानयनमाह-

विस्तरेणैतदुदितंसंक्षेपाद्व्यावहारिकम् ॥
मध्यमानयनंकार्य्यंग्रहाणामिष्टतोयुगात् ॥ ५६ ॥

एतत्षण्मनूनांतुसम्पिण्ड्येत्यादिविस्तरेणगणितक्रियाबाहुल्येनोदितमुक्तंव्या-वहारिकंलोकव्यवहारोपयुक्तमिदंग्रहानयनंसंक्षेपादल्पगणितप्रयासाज्ज्ञेयम् तदाह । मध्यमानयनमिति । ग्रहाणांमध्यमानयनंमध्यमानेनगणितामिष्टतोवर्त्तमाना-त्त्रेताख्याद्युगान्महायुगस्यचरणात्त्रेतायुगादितोगताब्दैरल्पभूतैरेवोक्तरीत्याहग-णमानीयोक्तरीत्यामध्यग्रहाःकार्याइत्यर्थः ॥ ५६ ॥

भा०टी०-यह समस्त विस्तारसे कहा, कार्यके संक्षेपसे भी त्रेताकी आदिसे ग्रहोंके बीचमें लाना उचित है ॥ ५६ ॥

ननुसृष्ट्यादितोग्रहचारप्रवृत्तेस्तदादितआनीतस्यग्रहस्यवास्तवत्वेनतत्तुल्योऽयं-ग्रहःकथमवगतइत्यतआह-

अस्मिन्कृतयुगस्यान्तेसर्वेमध्यगताग्रहाः ॥
विनातुपातमन्दोच्चान्मेषादौतुल्यतामिताः ॥ ५७ ॥

अस्मिन्निदानीन्तनेकृतयुगस्यावसानसमयेसर्वेसप्तग्रहाःसूर्यादयोमध्यगतामध्य-मामेषादौमेषादिप्रदेशेतुल्यतांसमानतांगणितागतराश्यादिभोगेनेताःप्राप्ताः । पात-मन्दोच्चान्विना । पातमन्दोच्चास्तुनतुल्यानवामेषादौ।तथाचग्रहाणांशीघ्रोच्चानांचभ-गणपूर्त्तित्वात्त्रेतादिसमयावगतगतकालादागतराश्यादयःसृष्ट्यादिगतकालावग-तराश्यादिभिस्तुल्याभगणानांचप्रयोजनाभावादितिभावः ॥ ५७ ॥

भा० टी०-इस कृतयुगके अन्तमें पात और मन्द व उच्चके सिवाय समस्त ग्रह मध्य मेषके प्रथममें थे ॥ ५७ ॥

अथोच्चपातयोर्विशेषमाह-

मकरादौशशाङ्कोच्चंतत्पातस्तुतुलादिगः ॥
निरंशत्वंगताश्चान्येनोक्तास्तेमन्दचारिणः ॥ ५८ ॥

चन्द्रस्यमन्दोच्चंतदानींमकरादावस्तितत्पातश्चन्द्रपातस्तुलादिस्थोस्ति। तुकारादतस्तयोस्त्रेतादितआनयनंनवषड्राशियोजनविशेषेणसुगममित्यर्थः । नन्वेवमन्येषामपियद्राश्यादिस्थत्वंतत्कथनेनतेषामप्यानयनंसुगमंभविष्यतीत्यतआह । निरंशत्वमिति।अन्येऽवशिष्टामन्दोच्चपातायेमन्दचारिणोऽल्पगतयउक्ताःपूर्वंभगणोक्त्या कथितास्तेचकारादस्मिन्कृतयुगान्तेनिरंशत्वमंशाभावतांनप्राप्ताः । तथाचतेषांराश्यादिकथनेगौरवंमन्दगतित्वादेकदानीताःसहस्रवर्षपर्यन्तमुपयुक्ताभवन्तीतिनिरन्तरंतत्साधनावश्यकताभावात्तेषामानयनंत्रेतादिगताब्देभ्यउपेक्षितमितिभावः । यद्विचततआनीयन्तेतदास्वस्वक्षेपयुक्ताःकार्याः । क्षेपकास्तुरविमन्दोच्चंराश्यादिकं ० । ७ । २८ । १२ । भौमस्य ३ । ३ । १४ । २४ । बुधस्य ५ । ४ । ४ ।४८ गुरोः ० । ९ । ० । ० । शुक्रस्य ११ । १३ । २१ । ० । शनेः ४ । २० । १३ ।१२ भौमपातस्य ९ । ११ । २० । १२ । बुधस्य ८ । ११ । १६ । ४८ गुरोः ८ । ८ ५६ । २४ । शुक्रस्य ४ । १७ । २५ । ४८ । शनिपातस्य ४ । २० । १३ । १२ । एवमिष्टकालादपिग्रहाःसाध्याःस्वस्वक्षेपयोजनपूर्वम् ॥ ५८ ॥

भा० टी०-उच्च चन्द्रमा मकरका और चंद्रमाका पात तुलाकी आदिमें था मन्दचलनेवाले मंदोच्चादिके अंशादिभी थे इसकारण नहीं कहे गए ॥ ५८ ॥

अथग्रहाणांदेशान्तरफलानयनार्थंभूपरिधिंस्वोपजीव्यभूव्यासकथनपर्वकमाह-

योजनानिशतान्यष्टौभूकर्णोद्विगुणानितु ॥
तद्वर्गतोदशगणात्पदंभूपरिधिर्भवेत् ॥ ५९ ॥

अष्टौशतानिद्विगुणानिषोडशशतंयोजनानिभूकर्णोभुवोभगोलस्यकर्णोवृत्तपरिधिमध्यभागसूत्रंपरिध्यर्द्धमितचापस्यज्यारूपंद्विगुणइत्यनेनशतान्यष्टौकेन्द्रात्परिधिपर्यन्तमृज्जुसूत्रस्यमानमितिसूचितम् । कक्षाव्यासार्द्धस्यकर्णव्यवहारवदस्यापिभूकर्णव्यवहारः । तुकारात्पुराणविरुद्धोऽपिप्रत्यक्षसहकृतागमप्रमाणसिद्धः । अस्मा-

१ मंदोच्चके ० । ७ । २८ । १२ मं ३ । ३ । १४ । २४ ५ । ४ । ४ । ४८ बृ० । ९ । शु० ११ । १३ । २१ । श ४ । २० । १३ । १२ पात म ९ । ११ । २० । १२ बु ८ । ११ १६ । ४८ । बृ ८ । ८ । ५६ । २४ । शु ४ । १७ । २५ । ४८ श ४ । २० । १३ । १२ कृतयुगके अभामें थे ।

तत्परिधिज्ञानमाह । तद्वर्गतइति । भूव्यासवर्गात्तुल्ययोर्घातरूपाद्दशगुणान्मूलम् । कस्थायंसमद्विघातइतितन्मूलंतत्प्रकारश्च ग्रन्थान्तरेप्रसिद्धः भूपरिधिः स्यात् । अत्रोपपत्तिः । गजाग्निवेदराममित ३४३८ त्रिज्यायाःकक्षाव्यासार्द्धत्वाद्द्विगुणत्रिज्यारूपव्यासेचक्रकलातुल्यःपरिधिः २१६०० तदेष्टव्यासेकइतिगुण २१६०० हरौ ६८७६ हरेणापवर्तितौहरस्थानेरूपंगुणस्थानेसार्द्धाष्टावयवयुतास्त्रयस्तथाचव्यासोऽनेनगुणितःपरिधिर्भवति । तत्रभगवतागुणस्यैकस्थानकरणार्थंवर्गःकृतः ९ । ५२ १२ । अत्रस्वल्पान्तरादशगृहीताः । वर्गेणवर्गंगुणयेदित्युक्तत्वाद्व्यासवर्गोदशगुणितस्तन्मूलंव्यासोमूलरूपगुणगुणितःसिद्धोभवति । यद्यपिवर्गस्थानेदशग्रहणेनस्थूलमिदमानयनन्तथापिपरमकारुणिकेनभगवतालोकानुग्रहार्थंगणितलाघवायांगीकृतम् । वस्तुतोभगवतावेदमंगलविश्वरूपमितव्यासस्य ११३८४ । परिधिर्गोणितागतःप्रत्यक्षेणखखखरसराममितः ३६००० अत्रपूर्वोक्तरीत्यापवर्तनेगुणाः ३ । ९ । ४४ । पादोनदशावयवयुतत्रयमस्यवर्गोदशप्रायः ९ । ५९ । ५९ । इत्युपपन्नमुक्तम् ॥ ५९ ॥

भा० टी०–भूकर्ण १६०० योजन है । तिसके वर्गको १० से गुणा करके पद अर्थात् मूल निकाल लेनेसे भूपरिधि होती है ॥ ५९ ॥

स्फुटपरिध्यानयनन्देशान्तरफलानयनंतत्संस्कारं च श्लोकाभ्यामाह–

लम्बज्याघ्नस्त्रिजीवाप्तःस्फुटोभूपरिधिःस्वकः ॥
तेनदेशांतराभ्यस्ताग्रहभुक्तिर्विभाजिता ॥ ६० ॥
कलादितत्फलंप्राच्यांग्रहेभ्यःपरिशोधयेत् ॥
रेखाप्रतीचीसंस्थानेप्रक्षिपेत्स्युःस्वदेशजाः ॥ ६१ ॥

द्वादशपलभयोर्वर्गयोगमूलमक्षकर्णः । अनेनद्वादशगुणितात्रिज्याभक्ताफलंलम्बज्या । अनयागुणितोभूपरिधिस्त्रिज्ययागजाग्निवेदराममितयाभक्तःफलंस्वकःस्वदेशसम्बन्धीस्पष्टोभूपरिधिःस्यात् । ग्रहस्यगतिर्देशान्तराभ्यस्तास्वरेखादेशस्वदेशयोरन्तरयोजनानिदेशान्तरपदवाच्यानितैर्गुणितातेनस्पष्टेनभूपरिधिनाभक्ताफलंकलादिकंतत्फलं प्राच्यां स्वरेखादेशात्स्वदेशस्यपूर्वदिग्भागस्थितत्वेग्रहेभ्यःकलादिस्थानेपरिशोधयेद्वर्जयेद्धीनंकुर्यादित्यर्थः । रेखाप्रतीचीसंस्थानेस्वरेखादेशात्पश्चिमदिग्भागस्थितेस्वदेशेग्रहेभ्यः कलादिस्थानेप्रक्षिपेद्योजयेत्कुर्यात् । गणकइतिशेषः । तेसिद्धाग्रहाःस्वदेशजाःस्वदेशीयाभवन्ति । पूर्वमहर्गणस्यलंकादेशीयत्वेनतदुत्पन्नग्रहाणांलङ्कादेशीयत्वात् । अत्रोपपत्तिः । यद्यपिभूमेःकन्दुकाकारत्वेनसर्व्वत्राभिन्नः परिधिरितिस्फुटपरिध्यसम्भवस्तथापि

निरक्षदेशस्यमध्यत्वकल्पनेनोक्तोभूपरिधिस्तद्देशानामेवतदन्यत्रतदनुरोधेनवृत्तानां-लघुत्वसम्भवेनोत्तरोत्तरंन्यूनपरिधिःस्वदेशेस्फुटसंज्ञः । एवंनवत्यक्षांशेमेरु-स्थानेवडवास्थानेचपरिध्यभावः । निरक्षदेशेपरमउक्तःपरिधिरतोयत्राक्षांशा नवतिःपरमास्तत्रलम्बांशाभावः । यतोक्षांशाभावस्तत्रलम्बांशाःपरमानव-तिः । लम्बांशाक्षांशौतुवक्ष्यमाणस्वरूपौ ॥ तथाचलम्बांशह्रासानुरोधेनप-रिधेरपिह्रासइतिपरमलम्बांशैर्नवतिमितैरुक्तोभूपरिधिस्तदास्वदेशी यलम्बांशैः कइत्यनुपातउपपन्नोऽपिवृत्ता श्रितांशेभ्योऽनुपातानामसम्भवेनसर्वैरुपेक्षितत्वाच्च ज्यानुपातस्यसर्वैरङ्गीकृतत्वात्प्रमाणस्थानेप्रमाणांशज्यापरमात्रिज्या । इच्छा-स्थानेइच्छांशानांज्यालम्बज्येतियुक्तमुक्तमुपपन्नंस्पष्टपरिध्यानयनम् । देशान्त रोपपत्तिस्तुलङ्कादेशीयोग्रहःस्वदेशतःसमसूत्रेणयोदक्षिणोत्तरयोर्निरक्षदेशआसन्न-स्तत्रकार्य्यः । तदर्थंलङ्कादेशस्वनिरक्षदेशयोरन्तरयोजनज्ञानमावश्यकम् । एत-त्त्वस्मादृशामशक्यमितिपरिध्यपचयवत्तदन्तरतोपचितंलङ्कोत्तरदक्षिणसूत्रस्थस्व रेखादेशस्वदेशयोरन्तरंस्वपरिधिस्थंगणनयाज्ञातमस्मात्स्वपरिधिनेदमन्तरंयोजना-त्मकंतदोक्तपरिधिनाकिमित्यनुपातेनलङ्कास्वनिरक्षदेशयोरन्तरमुक्तपरिधिस्थंज्ञात-म् । ततोऽर्कोदयद्वयान्तरकालेनार्कोभूपरिधिंक्रामतितत्रग्रहाः स्वांस्वांगतिंक-लात्मिकामतिक्रामन्त्यतउक्तपरिधिनाग्रहगतिकलास्तदाप्राक्सिद्धलङ्कास्वनिरक्ष-देशान्तरयोजनैःकेत्यनुपातेनोक्तपरिध्योर्गुणहरयोस्तुल्यत्वेननाशात्स्वरेखादेशस्वदे-शयोरन्तरयोजनानिग्रहगतिगुणितानिस्वपरिधिभक्तानिफलंग्रहस्यान्तरकलाः । यद्यपिस्वपरिधिनागतिकलास्तदास्वरेखादेशस्वदेशयोरन्तरयोजनैःकेत्येकानुपातेनै-वदेशान्तरफलमुपपन्नंभवतितथापिनिरक्षदेशपदार्थसम्बन्धाभावादिदमुपपन्नंफलं-निरक्षदेशीयंकथमित्याग्रहनिरतातिमन्दस्यबोधार्थंगुरुभूतमप्यनुपातद्वयमुक्तम् । तद्धनर्णोपपत्तिस्तुलङ्कादेशात्स्वनिरक्षदेशस्यपूर्वभावस्थितत्वेलङ्कादेशार्द्धरात्रात्स्व-निरक्षदेशार्द्धरात्रमर्वाग्भवति । तदुदयकालात्प्रवहानिलवेगेनपूर्वभागेपूर्वमेवोदया-त् । अतोऽग्रिमकालीनग्रहस्यपूर्वकालिकत्वसिद्ध्यर्थंतत्फलंन्यूनंकार्यम् । एवं-निरक्षदेशस्यलङ्कातःपश्चिमस्थत्वे लङ्कोदयानन्तरोदयसद्भावाल्लङ्कार्द्धरात्रादग्रिम-कालेऽर्द्धरात्रमतःपूर्वकालिकग्रहस्याग्रिमकालिकत्वसिद्ध्यर्थंतत्फलंयोज्यम् । चक्र-शोधितपातस्यायंसंस्कारो विपरीतइतिज्ञेयम् । स्वनिरक्षदेशस्यलङ्कातःपूर्वापर-भागस्थत्वंस्वरेखादेशात्स्वदेशस्यपूर्वापरभागस्थस्यानुरोधेनेतिस्वनिरक्षदेशस्वदेश-योर्याम्योत्तरैक्यादर्द्धरात्रयोरभिन्नत्वात्स्वदेशार्धरात्रेऽपिस्वनिरक्षदेशार्द्धरात्रकालिका एवग्रहाअविकृता इतिसर्वमुक्तमुपपन्नम् ॥ ६० ॥ ६१ ॥

भा०टी०-पृथ्वीकी परिधिको अपने देशकी लम्बज्यासेगुणकरके त्रिज्यासे भागकरनेपर स्फुट भूपरिधि होती है । (ज्यादिको दूसरे अध्यायमें देखना चाहिये) देशान्तर

द्वारा ग्रहभुक्ति गुणकरके स्फुट भू-परिधिसे भाग करनेपर जो कलादि फल हो, वह अपने देशसे पूर्वमें हो तो ग्रहसे घटावै । पश्चिममें हो तो मिलावै ॥ ६० ॥ ६१ ॥

अथरेखास्वरूपंतद्देशांश्चकांश्चिदाह-

राक्षसालयदेवौकःशैलयोर्मध्यसूत्रगाः ॥
रोहीतकमवन्तीचयथासन्निहितंसरः ॥ ६२ ॥

राक्षसालयंलङ्का देवानांगृहरूपःपर्वतोमेरुरनयोर्मध्येऋजुसूत्रंतत्रस्थितादेशा रेखाख्यालङ्कादक्षिणसूत्रस्थास्त्वनुपयुक्तास्तत्रमनुष्यागोचरत्वादितिनोक्ताः । ज्ञानार्थमुदाहरति । रोहीतकमिति । यथारोहीतकंनगरमवन्त्युज्जायिनीसन्निहितंसरःकुरुक्षेत्रम् । चकारस्तथेत्यव्ययपरः । तथान्यानिपरस्परसंन्निहिततयाज्ञेयानि ॥ ६२ ॥

भा०टी०-राक्षसालय और देवौक पर्वतके मध्यमें जो सूत्र रोहीतक, अवन्ती, और कुरुक्षेत्रादि स्थानके निकट दिया गया है, वही मध्य रेखा है ॥ ६२ ॥

ननुयेनस्वस्थानंरेखापुरात्पूर्वतोऽपरत्रवाकियद्योजनान्तरेणास्तीतिनज्ञायतेतेनदेशान्तरफलादिकंकथंकार्यमित्यतःश्लोकत्रयेणाह-

अतीत्योन्मीलनादिन्दोःपश्चात्तद्गणितागतात् ॥
यदाभवेत्तदाप्राच्यांस्वस्थानंमध्यतोभवेत् ॥ ६३ ॥
अप्राप्यचभवेत्पश्चादेवंवापिनमीलनात् ॥
तयोरन्तरनाडीभिर्हन्याद्भूपरिधिंस्फुटम् ॥ ६४ ॥
षष्ट्याविभज्यलब्धैस्तुयोजनैःप्रागथापरैः ॥
स्वदेशपरिधिर्ज्ञेयःकुर्याद्देशान्तरंहितैः ॥ ६५ ॥

चन्द्रस्यसर्वग्रहणान्तर्गतोन्मीलनकालाद्दिनादेशान्तरंगणितागताच्चन्द्रग्रहणोक्तप्रकारगणितज्ञानात् । अतीत्यतत्कालस्यातिक्रमणंकृत्वापश्चादनन्तरकालेमन्दबोधार्थमिदम् । अन्यथातीत्यपश्चादित्यनयोरेकतरस्यवैयर्थ्यापत्तेः । तच्चन्द्रबिम्बस्योन्मीलनंयदायदीत्यर्थः । स्यात्तदातर्हीत्यर्थः । स्वाभिमतस्थानंमध्यतोमध्यरेखादेशात्पूर्वदिशिभवेत्तिष्ठतीत्यर्थः । पश्चात्तदित्यत्रदृक्सिद्धमितिपाठेतुप्रत्यक्षमुन्मीलनमित्यर्थः । अप्राप्यतदतिक्रमणमकृत्वापूर्वकाल एव । चकाराच्चन्द्रोन्मीलनंयदिस्यात्तर्हिमध्यरेखातःस्वस्थानमित्यर्थः । प-

---

१ दैनिकग्रह भुक्तिकलादि र ५९ । ८ । चं ७९० । ३८ । मं ३१ । २६ बु-शी २४५ ३२ बृ ४ । ५९ शु-शी ९६ । ८ श २ । ० । च-उ ६ । ४१ रा, वक्र ३ । ११ । भूपरिधि ५० । ६० योजन है ।

२ अतीत्योन्मीलनादिन्दोर्दृक्सिद्धंगणितागतात् । इतिवापाठः ।

श्चात्पश्चिमदिग्भागेभवेत्तिष्ठतीत्यर्थः । ननुचन्द्रस्यस्पर्शमोक्षसम्मीलनोन्मीलनकालेषून्मीलनकालएवकथंगृहीतइत्यतआह । एवमिति । वामकारान्तरेणनिमीलनाचन्द्रसम्मीलनकालात् । एवंचन्द्रग्रहणाधिकारोक्तगणितप्रकारज्ञानादनन्तरकालेसम्मीलनंयदितर्हिमध्यरेखादेशात्स्वस्थानंपूर्वदिग्भागेतिष्ठतिपूर्वकालेसम्मीलनंयदितर्हिमध्यरेखादेशात्स्वस्थानंपश्चिमदिग्भागेतिष्ठतीत्यर्थः । अपिशब्दोनिश्चयार्थे । तेनोन्मीलनसम्मीलनकालयोर्भिन्नरीतिव्युदासः । तथाचोन्मीलनग्रहणमुपलक्षणार्थंतत्रापि स्पर्शमोक्षयोर्ग्रहणाद्यन्तरूपयोरनिश्चयत्वसम्भावनयोक्तिमुपेक्ष्यग्रहणमध्यस्थयोःसम्मीलनोन्मीलनयोर्निश्चयत्वेनोक्तिःकृतेतिभावः । अथदेशान्तरयोजनपुरःसरंदेशान्तरफलंसिद्धमित्याह । तयोरिति । प्रत्यक्षोन्मीलनकालगणितागतोन्मीलनकालयोः सम्मीलनकालयोस्तादृशयोर्वान्तरघटीभिर्भूपरिधिस्पष्टंस्वदेशभूपरिधिलंब्ज्याघ्नइत्याद्यवगतंहन्याद्गुणयेत् । तादृशंगुणितस्पष्टपरिधिषष्ट्याभक्त्वालब्धैःप्राप्तैर्योजनैःपूर्व्वभागयोजनैः । अथाथवापरैः पश्चिमविभागस्थितैर्योजनैःस्वदेशपरिधिः स्वदेशस्यपरिधिरवधिः स्वदेशस्थानमण्डलरूपस्तुकाराद्रेखादेशान्तरितइत्यर्थः । ज्ञेयोगणकेनेतिशेषः । स्वरेखास्वदेशयोरन्तरयोजनानिफलमितिफलितार्थः । तैरन्तरयोजनैर्देशान्तरं तेनदेशान्तराभ्यस्तेत्यादिप्रागुक्तप्रकारेणग्रहाणांदेशान्तरफलंकलात्मकंकुर्याद्गणकइति शेषः । हिकारात्तत्संस्कारोप्यभिन्नप्रकारत्वादभिन्नइत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । विनादेशान्तरसंस्कारंग्रहगणितंस्वरेखादेशीयंभवति । अतोगणितसाधितोन्मीलनसम्मीलनादिकालाःस्वरेखादेशेसिद्धयंति । स्वदेशेपूर्वविभागस्थेप्रथमंस्वस्यसूर्योदयादिकालास्तदन्तरंरेखायांइतिचन्द्रग्रहणस्यसर्व्वदेशेयुगपत्सम्भवात् । गणितागतकालाद्रेखादेशस्थादनन्तरंस्पर्शादिकालोभवति । एवं स्वदेशेपश्चिमविभागस्थेप्रथमंरेखादेशेऽर्कोदयादिकालास्तदनन्तरंस्वदेशइतिरेखास्थ गणितागतस्पर्शादिकालाद्धट्यात्मकात्पूर्व्वमेवस्पर्शादिकालोभवति । अतः सम्यगुपपन्नमतीत्येत्यादिसार्द्धश्लोकोक्तम् । स्वदेशरेखादेशसूर्योदयाद्यवधिकघटयात्मककालयोरन्तरंदेशान्तरघटिकाःसिद्धाःसूर्योदयद्वयान्तरकालेनार्कोभूपरिधिंक्रामतीतिषष्टिसावनघटीभिर्भूपरिधियोजनानिस्वदेशीयानितदातत्कालान्तररूपदेशान्तरघटीभिःकानीत्यनुपातेनस्वरेखादेशस्वदेशयोरन्तरयोजनानि । ज्ञातेभ्यएभ्यःपूर्व्वदिशैवदेशान्तरंभवति । सूर्यग्रहणस्यसर्वदेशेयुगपदसम्भवात्तदुन्मीलनकालादिनोक्तदिशानैतज्ज्ञानमित्यनुरुक्तेरितिध्येयम् ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

भा०टी०-गणितमें पड़ेहुए चंद्रग्रहणके पीछे जिस स्थानमें ग्रहण निकलताहो वही स्थान मध्यरेखासे पूर्वदिशामें और आगे होनेपर पश्चिममें जानना चाहिये । प्रत्यक्ष और गणि-

तसे आए हुए कालके अन्तर दण्ड स्वभूपरिधिसे गुणकरके ६० से भाग करनेपर स्वदेशान्तर योजन प्राप्त होजायँगे। तिनसे अपने देशकी भूपरिधि और देशांतरादि निर्णय करना उचित है ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

अथवारप्रवृत्तिकालज्ञानमाह-

वारप्रवृत्तिःप्राग्देशेक्षपाऽर्द्धेऽभ्यधिकेभवेत् ॥
तद्देशान्तरनाडीभिःपश्चादूनेविनिर्दिशेत् ॥ ६६ ॥

रेखातःपूर्व्वभागस्थितस्वाभिमतदेशेतद्देशान्तरनाडीभिःपूर्व्वप्रकारज्ञातदेशान्तरनाडीभिरभ्यधिकेऽधरात्रेयुक्तार्द्धरात्रसमयेऽर्धरात्रादनन्तरंदेशान्तरघटीकालइत्यर्थः वारप्रवृत्तिर्वारस्यादिभूतःकालःस्यात् । रेखातःपश्चिमभागस्थदेशेपूर्व्वप्रकारज्ञातदेशान्तरघटीभिरूनेऽर्धरात्रेऽर्धरात्रात्पूर्व्वमेवदेशान्तरघटीकालेवारप्रवृत्तिंविनिर्दिशेद्गणकःकथयेत् । अत्रोपपत्तिः । यमकोटिसूर्योदयकालोलङ्काऽर्धरात्रसमयरूपोग्रहचारप्रवृत्तिरूपःस्वदेशेकदेतिरेखातःपूर्वापरभागयोःस्वार्धरात्रकालादनन्तरंपूर्व्वक्रमेणतदर्द्धरात्रंदेशान्तरघटीभिर्भवति । स्वनिरक्षदेशस्वदेशार्धरात्रयोर्युगपत्संभवात् । अतउपपन्नंवारप्रवृत्तिरित्यादि । नन्वेतत्कालज्ञानंकिमर्थमुक्तंप्रयोजनाभावादितिचेन्न । अहर्गणोत्पन्नग्रहस्यतात्कालिकत्वात्तत्कालज्ञानेनस्वार्धरात्रसमयस्यतत्कालस्यचयदन्तरंतेनतात्कालिकस्यग्रहस्यचालने कृतेसतिस्वार्धरात्रसमयेग्रहः पूर्व्वसाधितएवभवतीतिमन्दप्रत्ययस्यैवप्रयोजनत्वात्तत्कालज्ञानेनग्रहस्यदेशांतरसंस्काराकरणमितिलाघवाच्च । अतएवसमनन्तरमेवग्रहस्येष्टकालिकत्वसिद्ध्यर्थंचालनोक्तिःसङ्गच्छते । एतेनतत्ततोऽर्धरात्रात्क्षपार्धेनिरक्षरात्र्यर्धेपञ्चदशघटिकात्मककालउत्तरगोलेऽर्कोदयाच्चरघटीमिताग्रिमकालेदक्षिणगोलेऽर्कोदयाच्चरघटीमितपूर्वकालइतिफलितम् । पूर्व्वपश्चिमदेशयोर्देशान्तरघटीभिरधिकोनेकालेक्रमेणवारप्रवृत्तिरितिव्याख्यानंलङ्कासूर्योदयकालरूपवारप्रवृत्तिबोधकमपास्तम् । तच्छब्दस्यपूर्व्वपरामर्शकत्वादर्धरात्रादित्यस्यानुपपत्तेःपञ्चदशघटिकाकालस्यक्षपार्द्धशब्देनासिद्धेश्च । श्रीभगवताहर्गणस्यलङ्कायामार्द्धरात्रिकइत्यनेन लङ्कार्धरात्रकालिकत्वोक्तेः स्वदेशेतत्कालरूपवारप्रवृत्तिकालज्ञानस्योक्तस्यसङ्गत्यनुपपत्तेः । व्यवहारयोग्यलङ्कासूर्योदयकालवारप्रवृत्तेरत्रसङ्गत्यभावाच्च ॥ ६६ ॥

भा०टी०-देशांतर घड़ीके अनुसार पूर्वदेशके मध्य मध्यरात्रमें मिलानेसे और पश्चिम देशमें घटानेसे वार आदि निकल आवेंगे ॥ ६६ ॥

अथग्रहस्यतात्कालिककरणमाह-

इष्टनाडीगुणाभुक्तिःषष्ट्याभक्ताकलादिकम् ।
गतेशोध्यंयुतंगम्येकृत्वातात्कालिकोभवेत् ॥ ६७ ॥

यत्कालिकोग्रहस्तत्कालात्पूर्वमपरंत्राभीष्टकालेयाइष्टघस्त्वस्ताभिर्गुणिताग्रहमध्य गतिःषष्ट्याभक्ताफलंकलादिकंगतेगताभीष्टकालेपूर्वकालेऽभीष्टेसतीत्यर्थः । शोध्यं-ग्रहेहीनंगम्येऽग्रिमाभीष्टकालेसतिग्रहेयुतंकृत्वागणकेनविधायतात्कालिकःस्वाभीष्ट-सामयिकोग्रहोभवेत् । गणकेनज्ञातोभवेत् । अत्रोपपत्तिः । षष्टिसावनघटीभि-र्गतिकलास्तदाभीष्टगतैष्यघटीभिःकाइत्यनुपातेनावगतकलात्मकचालनेनग्रहःक्रमेण युतोनस्तात्कालिकोग्रहोभवति । चक्रशोधितपातस्यविपरीतामितिज्ञेयम् । चालितस्पष्टग्रहापेक्षयाचालितमध्यग्रहःस्पष्टः कृतश्चेत्सूक्ष्मइतिसूचनार्थमत्रग्रहचाल-नमुक्तम् ॥ ६७ ॥

भा०टी०-भुक्तिको इष्ट नांडी से गुण करके, ६० से भागकरके फल जाननेपर योग और गत होनेपर वियोग (अलग) करनेपर तिसकालका ग्रह होगा ॥ ६७ ॥

अथचन्द्रस्यपरमविक्षेपमानमाह-

भचक्रलिप्ताशीत्यंशपरमंदाक्षिणोत्तरम् ॥
विक्षिप्यतेस्वपातेनस्वक्रान्त्यन्तादनुष्णगुः ॥ ६८ ॥

अनुष्णगुश्चन्द्रःस्वक्रान्त्यन्ताद्विषुवद्वृत्तानुकारेणावलम्बितश्चन्द्रः स्वासन्नक्रान्ति-वृत्तप्रदेशेनाकृष्यतेतथातत्स्थानात्स्वभोगमितरेवत्यासन्नाद्यवधिकाभीष्टस्थानभूत-क्रान्तिवृत्तप्रदेशादपिस्वपातेनचन्द्रपातेनदक्षिणोत्तरंदक्षिणस्यामुत्तरस्यांवातत्सूत्रेण-विक्षिप्यतेत्यज्यतेस्वभोगस्थानक्रान्तिवृत्तप्रदेशेचन्द्रबिम्बंस्थातुंपातेन नदीयतेततो-ऽपिचन्द्रबिम्बंस्थलान्तरेदक्षिणोत्तरसूत्रेणंकिंञ्चिदन्तरेणत्यज्यतइत्यर्थः । एतेनसूर्यस्य पाताभावात्स्वभोगस्थानीयक्रान्तिवृत्तप्रदेशेबिम्बंभवति नविक्षिप्तमित्यनुष्णगुरित्य-नेनापिसूचितम् । परमविक्षेपणंदक्षिणोत्तरमित्यस्यविशेषणान्याह । भचक्रेति । द्वादशराशिकलानांषट्शताधिकैकविंशतिसहस्रमितानामेषाम् २१६०० अशीति-भागःस्वसप्तयमकलामितःपरमंयस्यतद्दक्षिणोत्तरमित्यर्थः । चन्द्रस्यपरमोविक्षेपः स्वभमितइतिफलितम् । केचिदत्रसूर्यस्यशराभावात्तत्कक्षातोभचक्रस्यपञ्चमकक्षात्वा त्ततोऽपिचन्द्रकक्षायाअष्टमत्वात्तत्रदक्षिणोत्तररूपदिग्द्वयेचन्द्रस्यविक्षेपणात्पंचाष्ट-द्विघातरूपाशीत्यंशोभचक्रलिप्तानांपरमचन्द्रविक्षेपइत्युपपत्तिमाहुः ॥ ६८ ॥

भा०टी०-चन्द्रमाके पातसे भचक्र कला संख्याके अस्सिभाग, क्रान्तिसे उत्तरमें या दक्षिण में परम विक्षेप होताहै ॥ ६८ ॥

अथैवंभौमादयोऽपिस्वपातैर्विक्षिप्यन्त इत्येषामपिपरमविक्षेपानाह-

तन्नवांशंद्विगुणितंजीवस्त्रिगुणितंकुजः ॥
बुधशुक्रार्कजाःपातैर्विक्षिप्यन्तेचतुर्गुणम् ॥ ६९ ॥

---

१ मध्यरात्रसे अभीष्टदण्डकी अलगताका नाम इष्ट नाडी है । अभीष्ट दण्ड परे होनेसे इष्टदण्ड निकलते हैं ।

तन्नवांशंतस्यचन्द्रपरमविक्षेपस्यनवभागंत्रिंशतंद्विगुणितंषष्टिकलामितंपरमेणतदंतरेणेत्यर्थः । पातेनगुरुर्दक्षिणोत्तरयोःक्रमेणविक्षिप्यते । भौमःपातेनत्रिगुणितंत्रिंशतंनवतिकलामितपरमांतरेणविक्षिप्यते । चतुर्गुणंत्रिंशतांविंशत्याधिकशतकलामितपरमांतरेणबुधशुक्रशनैश्चराःस्वस्वपातैःप्रत्येकंविक्षिप्यन्तेस्वभोगक्रान्तिवृत्तप्रदेशात्स्यज्यन्ते । केचिदत्रापित्रयस्त्रिंशत्कलाबिम्बाच्चंद्रान्नवांशद्विगुणेनसत्र्यंशकलासन्नकस्यगुरुबिम्बस्यतद्रूपंविक्षपणंयुक्तमस्माद्भौमस्याधःस्थत्वात् त्रिगुणंपरमविक्षेपणमस्मादपिबुधशुक्रयोर्लघुपृथुबिम्बयोरधःस्थत्वाच्चतुर्गुणंपरमविक्षेपणंतुल्यंनाल्पाधिकमेवंशनेरुच्चकक्षास्थत्वेऽपि मन्दत्वाद्बुधशुक्रविक्षेपणतुल्यंपरमविक्षेपणंयुक्तमित्युपपत्तिमाहुः ॥ ६९ ॥

भा०टी०-तिसके नवांशसे दूना बृहस्पति,तिगुना मंगल, और चौगुने बुध शुक्र व शनि पातकरके विक्षिप्त होतेहैं ॥ ६९ ॥

नन्वेषामत्रकथनेकासङ्गतिरित्यतःपूर्वोक्तमुपसंहरन्नाह-

एवंत्रिघनरन्ध्रार्करसार्कार्कादशाहताः ॥
चन्द्रादीनांक्रमादुक्तामध्यविक्षेपलिप्तिकाः ॥ ७० ॥

एवंपूर्वश्लोकाभ्यांत्रिघनःसप्तविंशतीरन्ध्राणिनवद्वादशषट्द्वादशद्वादशैतैदशगुणिताःक्रमादुक्ताङ्कक्रमाच्चन्द्रादीनांवारक्रमाच्चन्द्रभौमबुधगुरुशुक्रशनीनां विक्षेपकला मध्याअग्रेपरमशरकलानामनियतत्वेनोक्तेः कथिताः । तथाचमध्यत्वेनैषामत्रप्रसंगसंगत्याकथनमितिभावः ॥ ७० ॥

भा०टी०-ऐसेही २७, ९, १२, ६, १२, १२, के १० से गुण करके क्रमानुसार चन्द्रादिमें विक्षेपकला होंगी ॥ ७० ॥

अथपूर्वापरग्रन्थयोरसंगतिनिवारणायाधिकारसमाप्तिफक्किकयाह-

इतिसूर्यसिद्धान्तेमध्यमाधिकारः ॥ १ ॥

मयंप्रतिसूर्यांशपुरुषेणसूर्योक्तस्यैवकथनादेतदुक्तस्यापिसूर्यसिद्धान्तत्वम् । तत्रमध्यममानेनगणितमधिक्रियतेयस्मिन्नेतादृशोग्रन्थैकदेशःपरिपूर्तिमाप्तइत्यर्थः ॥ रंगनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे ॥ मध्याधिकारःपूर्णोऽयंतद्गूढार्थप्रकाशके ॥ इतिश्रीसकलगणकसार्व्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरंगनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशकेमध्यमाधिकारःपूर्णः ॥ १ ॥

इति प्रथमाध्यायः समाप्तः ॥ १ ॥

द्वितीयोऽध्यायः ।

अथस्पष्टाधिकारोव्याख्यायते । तत्रग्रहाणांमध्यमातिरिक्तस्पष्टक्रियायां कारणमाह-

अदृश्यरूपाःकालस्यमूर्तयोभगणाश्रिताः ॥
शीघ्रमन्दोच्चपाताख्याग्रहाणांगतिहेतवः ॥ १ ॥

शीघ्रोच्चमन्दोच्चपातसंज्ञकाःपूर्वोक्तपदार्थाजीवविशेषाः सूर्यादिग्रहाणां गतिकारणभूताःसन्ति । ननुकालेनैवग्रहचलनंभवतीतिकालोगतिहेतुर्नैतइत्यत आह । कालस्येति । पूर्वप्रतिपादितकालस्यस्वरूपाणितथाचैषांकालमूर्त्तित्वेनग्रहगतिहेतुत्वंनसम्भवतीतिभावः । ननुकालस्यघटचादिमूर्त्तित्वादेषां तदात्मकत्वाभावात्कथंकालमूर्त्तित्वमित्यतआह । भगणाश्रिताइति । भगोलस्थक्रान्तिवृत्तानुसृतग्रहगोलस्थक्रान्तिवृत्तप्रदेशाश्रितताराश्यात्मकाइत्यर्थः । तथाचग्रहराश्यादिभोगानांकालवशेनैवोत्पन्नत्वात्तदात्मकानांकालमूर्त्तित्वमितिभावः । ननुदृश्यन्तेकुतोनेत्यतआह । अदृश्यरूपाइति । वायवीयशरीरा अव्यक्तरूपत्वादप्रत्यक्षाइतिभावः । एवंचग्रहाणामुच्चादिसद्भावात्स्पष्टक्रियोत्पन्नेति तात्पर्यम् ॥ १ ॥

भा०टी०–शीघ्रमन्दोच्चपात इत्यादि अदृश्यरूपी, भगणाश्रित एककालकी मूर्ति और ग्रहोंकी गतिके हेतु हैं ॥ १ ॥

अथानयोरुच्चपातयोर्मध्योच्चयोर्गतिहेतुत्वंप्रतिपादयति–

तद्वातरश्मिभिर्बद्धास्तैःसव्येतरपाणिभिः ॥
प्राक्पश्चादपकृष्यन्तेयथासन्नंस्वदिग्मुखम् ॥ २ ॥

तेषामुच्चसंज्ञकजीवानांवायुरूपायेरश्मयोरज्जवस्ताभिर्बद्धाविम्बात्मकग्रहास्तैरुच्चसंज्ञकजीवैःसव्यवामहस्तैरुच्चबहुत्वेनहस्तबाहुल्याद्बहुवचनंहस्ताभ्यामित्यर्थः । स्वदिङ्मुखंस्वाभिमुखंयथासन्नंग्रहबिम्बंभवति तथाप्राक्पश्चात्पूर्व्वपश्चिममार्गाभ्यामित्यर्थः । अपकृष्यन्तेआकर्ष्यन्ते । अयमभिप्रायः । भचक्रगोलस्थक्रान्तिवृत्तानुसृतग्रहाकाशगोलान्तर्गतक्रान्तिवृत्तेकक्षारूपे स्वस्वप्रदेशे ग्रहोच्चपातास्तिष्ठन्ति । तत्रबिम्बव्यासोनकक्षाकारसूत्रंप्रवहवाय्वतिरिक्तवायुरूपंस्वतोगतिस्वस्थानेकम्पमानंग्रहबिम्बव्यासे पूर्वापरेप्रोतमुच्चजीवहस्तद्वयान्तर्गतमस्ति । अथग्रहबिम्बमुच्चस्थानात्पूर्वस्मिन्स्वशक्त्यागच्छदपिवामहस्तस्थितसूत्रेणोच्चस्थानात्पूर्वरूपेणग्रहस्थानात्पश्चिमरूपेण बृहत्सूत्रावयवात्मकेन स्वस्थानात्पश्चात् स्वाभिमुखमपकृष्यतेनिरन्तरमुच्चदैवतैःस्वशक्त्यायावत् षड्भान्तरंतयोः । अनन्तरंतन्मार्गेणाकर्षणसम्भवात्पूर्वस्मिन्गच्छद्ग्रहविम्बं सव्यहस्तास्थितसूत्रेणोच्चस्थानात् । पश्चिमरूपेणग्रहस्थानात्पूर्वरूपेणबृहत्सूत्रावयवात्मकेनस्वस्थानात्पूर्वस्मिन्स्वाभिमुखमाकृष्यतेस्वशक्त्यानिरन्तरंयावदन्तराभावस्तयोरिति ॥ २ ॥

भा० टी०-वह वायु (अदृश्य) किरणों करके बाएं और दाहिने हाथमें खेंचकर सन्मुख पूर्व या पीछे अपने स्थानसे ग्रहोंको ले जाते हैं ॥ २ ॥

अथातएवैकरूपांपूर्वाधिकारावगतांगतिंत्यक्त्वाप्रत्यहांविलक्षणांगतिंप्राप्ताग्रहा इत्यतआह-

प्रवहाख्योमरुत्तांगस्तुस्वोच्चाभिमुखमीरयेत् ॥
पूर्वापरापकृष्टास्तेगतिंयांतिपृथग्विधाम् ॥ ३ ॥

प्रवहाख्यःप्रवहसंज्ञकोमरुद्वायुःपश्चिमाभिमुखभ्रमस्तान्ग्रहान तुकारादुच्चा-निस्वोच्चाभिमुखंस्वस्यप्रवहभ्रमणेनोच्चंभावप्रधाननिर्देशादुच्चता यस्यांदिशित-त्स्वोच्चंपूर्वदिक्पूर्वभागएवग्रहाणांप्रवहभ्रमेणोच्चगमनदर्शनात् । तत्सम्मुखंपूर्वदि-शीतितात्पर्यार्थः । ईरयेत्पश्चिमाभिमुखभ्रमणसिद्धप्रागुक्तग्रहावलम्बनरूपेण चालयतीत्यर्थः । अतःकारणात्तेग्रहाःपूर्वापरापकृष्टाउच्चदैवतैःपूर्वपश्चिमदिशोरा-कृष्टाः पृथग्विधांप्रथमावगतैकरूपभिन्नप्रकारावगतांप्रतिक्षणविलक्षणांगतिंगम-नक्रियांयान्तिप्राप्नुवन्ति । अवलम्बनाकर्षणाभ्यांप्रतिदिनंग्रहाणांगतेरन्यादृशत्वं तदनुसारेणग्रहचारज्ञानंयुक्तमितिग्रहाणांस्पष्टक्रियोत्पन्नेतिभावः । यद्वा । ननुवा-युरज्जुभिः कथंग्रहाणांमाकर्षणंसम्भवतितद्रज्जूनांविरलतयाघनीभूतत्वाभावेना-कर्षणायोग्यत्वादित्यतआह । प्रवहाख्यइति । उच्चदेवताहस्तद्वयस्थितकक्षा-कारसूत्रंवायुः प्रवहवायुसम्बन्धात्प्रवहसंज्ञोनपश्चिमाभिमुखभ्रमप्रवहात्मकस्ता-न्ग्रहान्स्वोच्चाभिमुखंस्वोच्चदेवतास्थानसम्मुखमीरयेत्प्रेरयतिचालयति । तुकारा-दुच्चस्थानात्पूर्वस्मिन्ग्रहेवायुः पश्चिमगत्याग्रहंचालयतिपश्चिमस्थेवायुःपूर्वगत्याग्रहं चालयतीत्यर्थः । तथाचकक्षाकारसूत्रंतदातदातथातथाभ्रमतीति दैवतैराकृष्यत-इत्युपचारादुच्यतइतिभावः । अतएवग्रहाणांस्पष्टक्रियोत्पन्नेत्याह । पूर्वापराप-कृष्टाइति । उच्चदैवतैःपूर्वापरदिशयोरपकृष्टाग्रहाःपृथग्विधांमध्यमातिरिक्तप्रका-रांगतिंगमनक्रियांयान्ति । अतोनकेवलंमध्यक्रिययानिर्वाहः ॥ ३ ॥

भा० टी०-प्रवह नामक वायु ग्रहको अपनी ऊंची २ दिशाओंमें लेजाता है । इसप्रकार पूर्व पश्चिम दिशामें खींचकर पृथक् गतिको प्राप्त करता है ॥ ३ ॥

अथप्राक्पश्चादपकृष्यन्तइत्युक्तंविशदयति-

ग्रहात्प्राग्भगणार्द्धस्थःप्राङ्मुखंकर्षतिग्रहम् ॥
उच्चसंज्ञोऽपरार्द्धस्थस्तद्वत्पश्चान्मुखंग्रहम् ॥ ४ ॥

ग्रहस्थानात्पूर्वभागस्थराशिषट्कस्थितउच्चसंज्ञोजीवोग्रहबिम्बंपूर्वदिगभिमुखंस्वा भिमुखंकर्षत्याकर्षति । अपरार्द्धस्थोग्रहस्थानात्पश्चिमभागस्थराशिषट्कस्थितउच्चसं-ज्ञोजीवइत्यर्थः।ग्रहबिम्बंपश्चान्मुखंपश्चिमदिगभिमुखंस्वाभिमुखंतद्वदाकर्षतीत्यर्थः॥४॥

भा० टी०-पूर्व आधे भगणमें स्थित उच्चग्रहको पूर्वमें और दूसरे अर्द्धमें स्थितग्रहको पश्चिममें खेंचता है ॥ ४ ॥

अथपूर्वोक्तसिद्धंफलितमाह-

स्वोच्चापकृष्टाभगणैःप्राङ्मुखंयान्तियद्ग्रहाः ॥
तत्तेषुधनमित्युक्तमृणंपश्चान्मुखेषुतु ॥ ५ ॥

स्वोच्चजीवाकर्षिताग्रहाःपूर्वाभिमुखंभगणैराशिभिर्भगोलस्थक्रान्तिवृत्तानुमृतस्वाकाशगोलान्तर्गतक्रान्तिवृत्तेद्वादशराश्यन्तिकेयद्राशिविभागैरित्यर्थः । यद्यत्सङ्ख्यामितंगच्छन्तिततत्संख्यामितंभागादिकंफलरूपंतेषुपूर्वावगतग्रहराश्यादिभोगेषुधनंयोज्यम् । पश्चान्मुखेषुपाश्चिमाकर्षितग्रहपूर्वावगतराश्यादिभोगेषुतुकाराद्यत्संङ्ख्यामितंफलरूपंपाश्चिमतोगच्छन्तितदित्यर्थः । ऋणंहीनमिति । एतत्पूर्वैःकथितम् ॥ ५ ॥

भा० टी०-अपने उच्चसे खेंचकर जब ग्रह पूर्वदिशामें जातेहैं, तब तिसमें धन विपरीत पश्चिम दिशामें जाय तो ऋण होता है ॥ ५ ॥

अथपातानांग्रहविक्षेपरूपगतिहेतुत्वंप्रतिपादयति-

दक्षिणोत्तरतोऽप्येवंपातोराहुःस्वरंहसा ॥
विक्षिपत्येषविक्षेपंचन्द्रादीनामपक्रमात् ॥ ६ ॥

चन्द्रादीनांविरविग्रहाणामपक्रमात् क्रान्तिवृत्तस्थस्पष्टग्रहभोगस्थानाद्दक्षिणोत्तरतोदक्षिणस्यामुत्तरस्यांवादिशि । अपिशब्दःपूर्वापराभ्यांसमुच्चयार्थकः । एषगणितागतःपातःपातराश्यादिभोगस्थानम् । अत्राप्यपिशब्दउच्चेनसमुच्चयार्थकोऽन्वेति । एवमुच्चेनपूर्वापरयोःफलान्तरंभवतितथेत्यर्थः । विक्षेपंविक्षेपणंस्वरंहसात्मवेगेनविक्षिपतिकरोति । विशिष्टवाचकानांपदानांविशेषणवाचकपदसमवधानेविशेष्यमात्रार्थत्वात् । चन्द्रादीन्विक्षिपतीतितात्पर्यार्थः । ननूच्चेनस्वाधिष्ठितजीवद्वाराग्रहाकर्षणं क्रियतेतथापातेनाचेतनत्वाद्वेगाभावेनग्रहविक्षेपणंकर्त्तुमशक्यमित्यतआह । राहुरिति । पातस्थानाधिष्ठात्रीदेवताराहुर्जीवविशेषश्चन्द्रपातस्तुदैत्यविशेषोराहुः । रहतित्यजतिग्रहमितिराहुरितिव्युत्पत्तेः ॥ ६ ॥

भा० टी०-अपने बलसे पातहुआ राहु, ग्रहोंको दक्षिण व उत्तरादिशामें विक्षिप्त करता है। क्रान्तिवृत्तसे चन्द्रादिके विक्षेपको विक्षेप कहते हैं ॥ ६ ॥

अथैतद्विशदयति-

उत्तराभिमुखंपातोविक्षिपत्यपरार्द्धगः ॥
ग्रहंप्राग्भगणार्द्धस्थोयाम्यायामपकर्षति ॥ ७ ॥

अपरार्द्धगोग्रहस्थानात्पश्चिमविभागस्थितभगणार्धात्मकराशिषट्कास्थितो राहु-ग्रहबिम्बंस्वराश्यादिभोगस्थानीयप्रदेशादुत्तरदिगभिमुखंविक्षिपतिविक्षेपान्तरेणत्य-जति । प्राग्भगणार्धस्थःग्रहस्थानात्पूर्वविभागस्थितराशिषट्कमध्यास्थितोदक्षिण-स्यांदिश्यपकर्षति विक्षिपति ॥ ७ ॥

भा० टी०-पश्चिमके आधे भगण में गए हुए पात ग्रहोंको उत्तराभिमुखमें और पूर्वके आधे भगणमें स्थित ग्रहोंको दक्षिण दिशामें खेंचता है ॥ ७ ॥

अथबुधशुक्रयोर्विशेषमाह-

बुधभार्गवयोःशीघ्रात्तद्वत्पातोयदास्थितः ॥
तच्छीघ्राकर्षणात्तौतुविक्षिप्येतेयथोक्तवत् ॥ ८ ॥

बुधशुक्रयोःशीघ्रोच्चाज्जात्यभिप्रायेणैकवचनम् । बुधशुक्रयोःपातोजात्यभिप्रा-येणैकवचनम् । तद्वत्परार्धपूर्वार्धभगणार्धमध्येयदायत्कालेस्थितस्तुकारात् यत्का-लेपाताभ्यामित्यर्थः । .. ..(?) । तौबुधशुक्रौयथोक्तवत्पूर्वार्धपरार्धक्रमेणदक्षिणोत्तरयोर्विक्षिप्येतेविक्षेपान्तरेणत्यज्ये-ते । तनूच्चात्तादृगवस्थितपातौसम्बन्धाभावादबुधशुक्रौदक्षिणोत्तरयोः कथंत्य-जतोऽन्यथावैयधिकरण्येनातिप्रसङ्गापत्तेरित्यतःकारणमाह । तच्छीघ्राकर्षणा-दिति । बुधशुक्रयोःशीघ्रोच्चेतयोराकर्षणाभ्यांजात्यभिप्रायेणैकवचनम् । तथा-चतदुच्चाभ्यांतादृगवस्थितपातौतदुच्चजीवौदक्षिणोत्तरयोस्त्यजतइतिपूर्वोक्तरीत्या-न्यायसिद्धमतस्तदुच्चसूत्रबद्धत्वादबुधशुक्रयोस्तथाविक्षेपणंन्यायसिद्धमेवेतिभावः । ननुभौमगुरुशनीनामेवंकथंनोक्तमनयोर्वाकथमेतदुक्तंसर्वेषामेकरीतिकथनस्यसमुचि-तत्वात् । किञ्चगुरुभौमशनीनामुच्चदेवताः स्वस्वकक्षास्थाइतिफलमुप-पन्नंभवतिबुधशुक्रयोरुच्चदेवतयोः कक्षातोदक्षिणोत्तरयोः स्थितत्वेनपूर्वोक्तरी-त्याफलानुपपत्तिर्विलक्षणप्रवहवायुसूत्रस्थदेवतासम्बद्धस्यस्पष्टभूपरिध्याकारत्वेनक-क्षाकारत्वाभावात् । विनाकक्षाकारतांफलोत्पादनस्यब्रह्मणोऽप्यशक्यत्वाच्च । नचविलक्षणप्रवहवायुसूत्रंदेवतासम्बद्धंग्रहाकाशगोलेकक्षाकारत्वाभावेऽपिकक्षातुल्यं स्थानांतरइतिफलोत्पत्तिर्याम्योत्तरान्तरसत्त्वेऽपिकल्पनयेतिवाच्यम् । उच्चदेव-तास्थानस्यकक्षातोदक्षिणत्वेतत्षड्भान्तरप्रदेशस्योत्तरत्वावश्यसम्भावेनोच्चबुधशुक्र-योरेकदिग्विक्षेपतुल्यत्वनियमानुपपत्तेः । तत्कथमिदंसङ्गतंभगवदुक्तमितिचेत्।अत्रो-च्यते । स्वरुच्यासङ्गतार्थमङ्गीकृत्यतद्दूषणोद्घाटनेनभगवदुपालम्भनकर्तूरसनाच्छेद-स्तत्तत्वार्थप्रकाशेनावश्यंकरणीयः । तथाहिस्वशीघ्रोच्चाद्बुधशुक्रयोर्यदन्तरंराश्यात्मकं तद्वत्पातस्थेनान्तरेणयुक्तःपूर्वातीतपातइत्यर्थः। यथाबुधशुक्रयोरपरपूर्वार्धक्रमेणस्थि-तोऽवस्थितस्तुकारात्तथेत्यर्थः।तच्छीघ्राकर्षणात्तादृशपाताभ्यांशीघ्रवेगेनाकर्षणंतस्मा-

त्पातस्थानाधिष्ठातृदेवताभ्यां स्वहस्तस्थितग्रहसम्बद्धवायुसूत्रस्यातिवेगाकर्षणरचनादित्यर्थः । तौबुधशुक्रावुक्तवदुत्तरदक्षिणक्रमेणविक्षिप्येते । अत्रपातशब्देनचक्रशोधितपातोबोध्यः । अन्यथाग्रहोनशीघ्रोच्चरूपकेन्द्रयोजनस्योपपत्तिसिद्धत्वेनशीघ्रोच्चोनग्रहरूपकेन्द्रयोजनोक्त्यनुपपत्तेः । तथाचसर्वग्रहसाधारणंविक्षेपकथनंपात भेददर्शनार्थंबुधशुक्रयोःपृथगुक्तम् । नह्यन्यस्मिन्पक्षउच्चयोर्विक्षेपणंप्रतीयतेयेनप्रागुक्तसर्वविलोपाशङ्कनंशङ्कनीयम् । पातभेदोक्तिकारणंच "येचात्रपातभगणाःकथिताज्ञभृग्वोस्तेशीघ्रकेन्द्रभगणैराधिकायतःस्युः । स्वल्पाःसुखार्थमुदिताश्चलकेन्द्रयुक्तौपातौतयोःपठितचक्रभवौविधेयौ ॥" इतिभास्कराचार्योक्तमितिदिक् ॥ ८ ॥

भा० टी०—बुध और शुक्रका पात, शीघ्रसे पहली कहीहुई रीतिकरके स्थित होनेपर शीघ्राकर्षणके हेतुसे पहलेकी समान विक्षिप्त होता है ॥ ८ ॥

स्यादेतत्परमुच्चदेवतयोरविशेषात्सूर्यचन्द्रयोःसमंफलंकुतोनभवतीत्यतआह—

महत्त्वान्मण्डलस्यार्कःस्वल्पमेवापकृष्यते ॥
मण्डलाल्पतयाचन्द्रस्ततोबह्वपकृष्यते ॥ ९ ॥

सूर्योमण्डलस्यबिम्बस्यमहत्त्वाद्गुरुत्ववत्त्वात्स्वल्पमितरग्रहापेक्षयाल्पंपरमफलम् एवकारोनिर्धारणेऽपकृष्यते उच्चजीवेनापकृष्यते । चन्द्रोमण्डलाल्पतयांबिम्बस्यलघुत्वेनततःसूर्यफलाद्बह्वधिकंपरमफलमुच्चजीवेनाकृष्यते ॥ ९ ॥

भा० टी०—सूर्यमंडल अधिकभारी होनेसे कम खिंचता है, चंद्रमा स्वल्प होनेसे अधिक खिंचा जाता है ॥ ९ ॥

अथातएवभौमादीनामल्पमूर्तित्वादाभ्यांफलाधिकत्वंसम्भवतीत्याह—

भौमादयोऽल्पमूर्तित्वाच्छीघ्रमन्दोच्चसञ्ज्ञकैः ॥
दैवतैरपकृष्यन्तेसुदूरमतिवेगिताः ॥ १० ॥

भौमादयःपञ्चग्रहाअल्पमूर्तित्वाल्लघुतरबिम्बत्वाच्छीघ्रमन्दोच्चसञ्ज्ञकैःशीघ्रोच्चमंदोच्चसंज्ञैर्दैवतैःसुदूरमत्यन्तंबह्वपकृष्यंते ॥ अतएवातिवेगिताअत्यंतवेगः संजातोयेषांतेबिम्बलघुत्वेनोच्चद्वयाकर्षणेनचबहुपरमफलाइत्यर्थः । ननुसूर्यचन्द्रयोःकक्षाकारविलक्षणप्रवहवायुचलनेनफलोत्पादनंयुक्तंभौमादीनांतुप्रत्येकमुच्चद्वयसद्भावाद्वायुरश्म्याकर्षणासम्भवेनकक्षाकारप्रवहविलक्षणवायुचलनेनफलोत्पादनार्थमंगीकृतंकथंसम्भवति । उच्चद्वयस्थानस्यैकत्वाभावान्नह्येकमेववायुमण्डलंयुगपद्विरुद्धगत्योराश्रमंस्वतोभवितुमर्हतीतिचेन्नभौमादीनांशीघ्रमन्दोच्चदेवताद्वयेनतत्सूत्रमार्गेणग्रहबिम्बाकर्षणस्यैवस्वशक्त्यारचनात् । नवायुमण्डलचलनकल्पनंसूर्यचन्द्रयोरप्येवमे-

वांगीकारेबाधकाभावाच्च । वायुमण्डलकल्पनंतुतद्वातरश्मीत्युक्त्वानुपपत्यानातिप्रयोजनम् । तद्वातरश्मिभिर्बद्धाइत्यस्यपश्चिमभ्रमात्मकप्रवहवायौस्वस्वाकाशगोलेसमसूत्रसम्बन्धेनस्थिता इतिग्रहस्थितिस्वरूपोक्त्यासमर्थनात् । नहितदत्रहेतुगर्भयेनानुपपत्तिः शङ्कनीया । उच्चदेवताकल्पनेनाकाशस्थग्रहाणांतथातथास्वशक्त्यातदाकर्षणात्फलद्वयसंस्काररूपैकफलोत्पादनंसंगच्छते । अतएवसूत्रंग्रहबिम्बप्रोतकक्षाकारमितिकल्पनमपिनिरस्तम् । उच्चद्वयात्तुल्यकर्षणेनविरुद्धकर्षणेनच सूत्रमण्डलभंगापत्तेरिति ॥ १० ॥

भा०टी०-मंगल आदि छोटी मूर्त्तिवाले होनेके कारणसे, शीघ्रमन्दोच्च देवताओंकरके दूर खिंचे जाते और अति शीघ्र चलते हैं ॥ १० ॥

अथैतदुपसंहरति-

अतोधनर्णंसुमहत्तेषांगतिवशाद्भवेत् ॥
आकृष्यमाणास्तैरेवंव्योम्नियान्त्यनिलाहताः ॥ ११ ॥

अतः पूर्वोक्तसुदूराकर्षणप्रतिपादनात्तेषांभौमादीनांगतिवशादाकर्षणोत्पन्नचलनवशात्सुमहदत्यधिकंफलंधनर्णंस्वोच्चापकृष्टेत्यादिनाभवति । नन्वाकर्षणोत्पन्नचलनंकथंनप्रत्यक्षमित्यतआह । आकृष्यमाणाइति । तैरुच्चपातदेवतैरेवमुक्तप्रकारेणाकृष्यमाणाआकर्षिताएतेभौमादयोव्योम्निस्वस्वाकाशगोलेऽनिलाहताःपश्चिमाभिमुखानवरतप्रवहवाय्वाघातायान्तिगच्छन्ति । तथाचावलम्बनोत्पन्नपूर्वगतिर्यथानप्रत्यक्षातथापूर्वगतिविकृत्यात्मकमेतदाकर्षणचलनमनियतंप्रवहवायुभ्रमणप्राबल्यादप्रत्यक्षमितिभावः ॥ ११ ॥

भा०टी०-इस चालके वशसे उनका धन और ऋण अत्यन्त अधिक होताहै। इसप्रकार आकाशमार्गमें खिंचते हुए होकर पवनके सहारेसे चलते हैं ॥ ११ ॥

अथैवंगतिकारणसश्चयैर्ग्रहाणांभौमादीनांफलितेकागतिरष्टभेदात्मिकेत्याह-

वक्रानुवक्राकुटिलामन्दामन्दतरासमा
तथाशीघ्रतराशीघ्राग्रहाणामष्टधागतिः ॥ १२ ॥

भौमादिग्रहाणांविरविचन्द्राणामष्टप्रकारागतिःफलिता । तत्रवक्रेत्यादिसमेत्यन्तंषट्प्रकारागतिःशीघ्रतराशीघ्रेतिगतिद्वयम् । तथासमुच्चये । आसांस्वरूपज्ञानमग्रेस्फुटम् ॥ १२ ॥

भा०टी०-वक्र, अनुवक्र, कुटिल, मन्द, मदन्तर, सम, शीघ्र, शीघ्रतर यह आठप्रकारकी गति हैं ॥ १२ ॥

थैनामष्टधागतिंभेदद्वयेनक्रोडयाति-

तत्रातिशीघ्राशीघ्राख्यामन्दामन्दतरासमा ॥
ऋज्वीतिपञ्चधाज्ञेयायावक्रासानुवक्रगा ॥ १२ ॥

तत्राष्टविधगतिष्वतिशीघ्रेत्यादिसमेत्यन्ताइत्येवंपञ्चधागतिः । ऋज्वी मार्गीगतिर्ज्ञेयायागतिःसानुवक्रगानुवक्रगमनेनसहवर्तमानापूर्वश्लोकेऽनुवक्रगतेर्वक्रकुटिलमध्याभिधानादुभयथासन्नत्वाच्चवक्रानुवक्राकुटिलेतिगतिर्वक्राज्ञेयातथाचग्रहाणांमार्गीवक्रेतिगतिद्वयम् ॥ १३ ॥

भा०टी०-तिनमें अतिशीघ्र, शीघ्र, मन्द, मन्दतर और सम यह पांच सीधी गति हैं । कुटिल, वक्र, और अनुवक्र यह तीन वक्रगति हैं ॥ १३ ॥

अथग्रहाणांस्पष्टक्रियांप्रतिजानीते-

तत्तद्गतिवशान्नित्यंयथादृक्तुल्यतांग्रहाः ॥
प्रयांतितत्प्रवक्ष्यामिस्फुटीकरणमादरात् ॥ १४ ॥

नित्यंप्रत्यहंतत्तद्गतिवशात्तास्तागतयएकस्मिन्दिनेशीघ्रापरादिनेऽतिशीघ्रेत्यादिनायस्मिन्दिनेयागतिस्तत्सम्बन्धानुरोधादित्यर्थः । ग्रहाःसूर्यादयोयथायेनप्रकारेणदृक्तुल्यतांवेधितग्रहसमतांगच्छन्तितत्तादृशंस्फुटीकरणंस्पष्टक्रियागणितप्रकारमादरादत्यन्ताभिनिवेशादेतेनासङ्गतत्वनिरासः । प्रवक्ष्यामिसूक्ष्मत्वेनकथयामि ॥ १४ ॥

भा०टी०-इन गतियोंके वश होकर ग्रह सदा दृक्तुल्यता प्राप्त करते हैं । इससमय वही स्पष्टीकरण आदरसहित कहूंगा ॥ १४ ॥

अथतत्रप्रथमंज्यासाधनार्थंज्यापिण्डान्विवक्षुस्तदानयनंश्लोकाभ्यामाह-

राशिलिप्ताष्टमोभागःप्रथमंज्यार्धमुच्यते ॥
तत्तद्विभक्तलब्धोनमिश्रितंतद्द्वितीयकम् ॥ १५ ॥
आद्येनैवंक्रमात्पिण्डान्भक्त्वालब्धोनसंयुताः ॥
खण्डकाःस्युश्चतुर्विंशज्ज्यार्धपिण्डाःक्रमादमी ॥ १६ ॥

एकराशिकलानामष्टादशशतानामष्टमोंऽशस्तत्त्वाश्विमितः प्रथममाद्यंज्यार्धंसंपूर्णजीवार्द्धपिण्डकःकथ्यतेतदभिज्ञैः । ततःप्रथमज्यार्धंत्तेनप्रथमज्यार्धेनभक्ताल्लब्धेनहीनमन्यस्याप्रसंगात्प्रथमज्यार्धमनेनयुक्तंतत्प्रथमज्यार्धं द्वितीयकंज्यार्धंभवति । द्विगुणप्रथममेकोनम् । तृतीयादीनामानयनार्थमुक्तप्रकारमतिदिशति । आद्येनेति । प्रथमज्यार्धपिण्डेन । एवमुक्तरीत्याक्रमात्सिद्धपिण्डान्भक्त्वालब्धैरूनमाद्यंखण्डमनेनयुताः खण्डकाअसिद्धाव्यवहितसिद्धज्यार्धपिण्डाअसिद्धपिण्डाभवन्ति । यथाप्रथमखण्डं २२५ प्रथमभक्तंफलं १ द्वितीयखण्डं ४४९ प्रथमभक्तंफलंद्वयम् २ अर्धाधिकावयवस्यैकाधिकत्वे-

नग्रहस्यसाम्प्रदायिकत्वात् । फलैक्योनंप्रथमम् २२२ अनेनद्वितीयखण्डो ४४९ युतस्तृतीयम् ६७१ एवमिदमप्रथमखण्डभक्तंफलम् ३ अनेनपूर्वफलैक्यं ३ युतंजातं ६ सर्व्वफलैक्यमनेनप्रथमंखण्डंहीनम् २१९ अनेनतृतीयं ६७१ युतंचतुर्थम् ८९० एवमिदंप्रथमखण्डभक्तंफलं ४ पूर्वलब्धैक्योनप्रथमखण्डरूपं २१९ ज्यान्तररूपखण्डकमनेन ४ हीनम् २१५ अनेनचतुर्थंयुतंपञ्चमम् ११०५ एवमग्रेऽपि । यथोक्तरीत्यासङ्ख्यखण्डानांसम्भवात्खण्डनियममाह । स्युरिति । एवंचतुर्विंशत्सङ्ख्याकाज्यार्धपिण्डाःकार्यानतदधिकाः । अत्र ॥ " एकविंशाच्चविंशाच्चषष्ठात्पञ्चदशादपि ॥ सप्तमाद्द्वादशात्सप्तदशान्नार्धोत्तरंमतम् ॥ " इति ब्रह्मसिद्धान्तोक्तस्थलेऽर्धाधिकावयवस्यैकाधिकत्वेननग्रहइतिध्येयम् । गणितस्याविकृतत्वात्सिद्धाःपिण्डाःकथंनोक्ताइत्यतआह । क्रमादिति । अमी सिद्धाःपिण्डाःक्रमात्समनन्तरमेवोच्यन्ते । अत्रोपपत्तिः । समायांभूमौवृत्तंभगणकलाङ्कितंतिर्यगूर्ध्वाधरव्यासमितरेखाभ्यां चतुर्भागंकार्यंतत्रोर्द्धरेखासक्तपरिधिप्रदेशादुभयत्रसमविभागंविगणय्यतदग्रयोर्बद्धंसूत्रंवृत्ते द्विगुणविभागमितसम्पूर्णचापस्यसम्पूर्णज्या । अत्रगणितऊर्द्धरेखातोऽर्वज्यायाएवप्रयोजनात्तदर्धचापस्यतदर्धमर्धज्या । एवंवृत्तचतुर्थांशऊर्द्धरेखातोऽभीष्टांशानां चापार्धाकाराणामर्धज्याअभीष्टागण्याः । तत्रभगवतास्वेच्छयावृत्तचतुर्थांशे त्रिराशिमितेचतुर्विंशज्ज्याःकल्पितास्तज्ज्ञानंतुवृत्ते चक्रकलानामङ्कितत्वात्तत्परिधिव्यासार्धत्रिराशिज्यान्तिमा । भनन्दाग्निमितपरिधौखबाणसूर्यमितोव्यासस्तदाचक्रकलापरिधौकइत्यनुपातेनव्यासानयनम् । यथाचक्रकलाः २१६०० खबाणसूर्यगुणाः २७०००००० भनन्दाग्नि ३९२७ भक्ताव्यासः ६८७६ एतदर्धमन्तिमाज्या ३४३८ अथवृत्तेचापज्ययोर्व्विवेकेतयोरतुल्यत्वमपिभगवताकोऽपिवृत्तभागःसमोऽस्त्यन्यथामलकादौसर्षपाद्यवस्थानं नस्यादितिमत्वातद्भागस्यज्यातत्तुल्यैवेति । " वृत्तस्यषण्णवत्यंशोदण्डवद्दृश्यतेतुसः ॥ " इति शाकल्योक्तेः । प्रथमज्याचक्रकलाद्वादशांशरूपैकराशिकलानामष्टभागस्तत्त्वाश्विमितः । एतन्मितमेवप्रथमचापमतएतदन्तरेणाभीष्टाज्याश्चतुर्विंशत् । अथचतुर्व्विंशतिजीवानांयथोत्तरमुपचयात्तदन्तररूपखण्डानांयथोत्तरमपचयस्यवृत्तेज्यांकनेनप्रत्यक्षत्वाज्ज्यान्तररूपखण्डानामन्तरंयथोत्तरमुपचितमितिद्वाविंशतित्रयोविंशतिचतुर्विंशतिज्यानामन्तरयोरन्तरमिदंपरमंखण्डान्तरंसूक्ष्मज्योत्पत्तिप्रकारेणावगतम् १५ । १६ । ४८ । अथत्रिज्ययेदंखण्डकान्तरन्तदाप्रथमज्ज्याकिमित्यनुपातेनफलप्रमाणयोःफलेनापवर्त्यप्रमाणस्थानेतत्त्वाश्विनोऽनेनभक्ताःप्रथमज्याफलंपूर्वद्वितीयखण्डयोरन्तरम् । अनेनपूर्व्वखण्डंहीनंद्वितीयंखण्डंभवति । तत्रपूर्व्वखण्डंप्रथमज्यातुल्यमेव । द्वितीयखण्डंप्रथमज्यायांयुतंद्वितीयज्या ।

एवमस्यास्तत्त्वाश्विभागलब्धं द्वितीयतृतीयखण्डकयोरन्तरमनेन द्वितीयखण्डमूनं तृतीयखण्डमित्येनेनद्वितीयज्यायुतातृतीयज्या । एवंचतुर्थाद्याः । तत्रपूर्वमर्धाभ्यधिकग्रहणेनोत्तरत्राधिकान्तरपातसम्भावनयाक्वचित् क्वचिदर्धाभ्याधिकावयवस्यैकाधिकत्वेनाग्रहइत्युपपन्नंश्लोकद्वयम् ॥ १५ ॥ १६ ॥

भा०टी०-राशिकलाका (१८८०) अष्टमभाग प्रथम ज्यार्द्ध है । तिसको तिसकरके भागकरके, भाग फलहीन करके पूर्वके साथ मिलानेसे दूसरा ज्यार्ध है ॥ १५ ॥ विगतपिण्डोंको क्रमशः आदि २२५ से भागलब्ध एकत्रकर २२५ से अलगकर तिसको पूर्वखण्डमें मिलानेसे खण्ड होंगे इसप्रकार निम्नलिखित २४ ज्यार्द्ध पिण्ड नियत होंगे ॥ १६ ॥

अथैताःसिद्धाःश्लोकषट्केनकथयन्नुत्क्रमज्यार्धपिण्डज्ञानमाह—

तत्त्वाश्विनोऽङ्काब्धिकृतारूपभूमिधरर्तवः ॥
खाङ्काष्टौपंचशून्येशावाणरूपगुणेन्दवः ॥ १७ ॥
शून्यलोचनपञ्चैकाश्छिद्ररूपमुनीन्दवः ॥
वियच्चन्द्रातिधृतयोगुणरंध्राम्बराश्विनः ॥ १८ ॥
मुनिषड्यमनेत्राणिचन्द्राग्निकृतदस्रकाः ॥
पञ्चाष्टविषयाक्षीणिकुञ्जराश्विनगाश्विनः ॥ १९ ॥
रन्ध्रपञ्चाष्टकयमावस्वद्ध्यङ्कयमास्तथा ॥
कृताष्टशून्यज्वलनानगाद्रिशशिवह्नयः ॥ २० ॥
षट्पञ्चलोचनगुणाश्चन्द्रनेत्राग्निवह्नयः ॥
यमाद्रिवह्निज्वलनारन्ध्रशून्यार्णवाग्नयः ॥ २१ ॥
रूपाग्निसागरगुणावस्वग्निकृतवह्नयः ॥
प्रोज्झ्योत्क्रमेणव्यासार्धादुत्क्रमज्यार्धपिण्डकाः ॥ २२ ॥

तथासमुच्चये । एतानुक्तान्क्रमज्यार्धपिण्डान् । उत्क्रमेणोपान्त्यपिण्डादिप्रथमपिण्डान्तंप्रत्येकंव्यासार्धात्त्रिज्यारूपपरमपिण्डात्प्रोज्झ्यन्यूनीकृत्यक्रमेणोत्क्रमज्यार्धपिण्डाभवन्ति । यथात्रयोविंशतितमंज्यार्धमुक्तंरूपाग्निसागरगुणाइतिवस्वग्निकृतवह्नयइतिचरमपिण्डादूनंसप्रथमउत्क्रमज्यार्धपिण्डः । एवंद्वाविंशतितमंचरमाच्छुद्धंद्वितीयउत्क्रमज्यार्धपिण्डः । एवमग्रेपीतिचतुर्विंशदुत्क्रमज्यार्धपिण्डाः । अत्रोपपत्तिः । ज्याचापयोर्बाणरूपमन्तरमुत्क्रमज्या । यद्यपिपूर्वार्द्धज्यावद्बाणस्यार्धंनसम्भवतीत्युत्क्रमज्यापिण्डाइतिवक्तुमुचितंनोत्क्रमज्यार्धपिण्डाइति । तथापिभगवतानुगतपरिभाषार्थंचापबाह्यशराग्राभावेनोत्क्रमज्यायाः

पूर्णशरांशत्वादुत्क्रमज्यार्धमित्युक्तम् । अथवृत्तचतुर्थांशेसर्वज्याङ्केनेनयदंशानांज्या-त्रिज्यातोहीनातत्कोटयंशानामुत्क्रमज्येतिस्फुटंदृश्यतेअतउक्तज्यार्धक्रमेणोत्क्रम-ज्याज्ञानार्थंव्युत्क्रमेणत्रिज्याशुद्धाउक्तपिण्डाउत्क्रमज्यापिण्डाइत्युपपन्नंभोज्ज्येत्या-दि ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

अथश्लोकपञ्चकेनोत्क्रमज्यापिण्डान्पूर्वोक्तसिद्धान्निबध्नाति-

मुनयोरन्ध्रयमलारसषट्कामुनीश्वराः ॥
द्व्यष्टैकारूपषड्दस्राःसागरार्थहुताशनाः ॥ २३ ॥
खर्त्तुवेदानवाद्र्यर्थादिङ्नगाद्र्यर्थकुञ्जराः ॥
नगाम्बरवियच्चन्द्रारूपभूधरशङ्कराः ॥ २४ ॥
शरार्णवहुताशैकाभुजङ्गाक्षिशरेंदवः ॥
नवरूपमहीध्रैकागजैकांकनिशाकराः ॥ २५ ॥
गणाश्विरूपनेत्राणिपावकाग्निगुणाश्विनः ॥
वस्वर्णवार्थयमलास्तुरङ्गर्तुनगाश्विनः ॥ २६ ॥
नवाष्टनवनेत्राणिपावकैकयमाग्नयः ॥
गजाग्निसागरगुणाउत्क्रमज्यार्धपिण्डकाः ॥ २७ ॥

एतउत्क्रमज्यापिण्डाःपूर्वसिद्धानिबद्धामहीध्रःपर्व्वतोभुजज्याभावेकोटयुत्क्रमज्या याःपरमत्वाच्छून्यज्योनात्रिज्यापरमोत्क्रमज्यापिण्डास्त्रिज्यायाउभयत्रपरमत्वेनार्थ-सिद्धमन्त्यपिण्डत्वंवेतिध्येयम् ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

ज्यासंख्या	ज्यापिण्ड	उत्क्रम	ज्यासंख्या	ज्यापिण्ड	उत्क्रम	ज्यासंख्या	ज्यापिण्ड	उत्क्रम
१	२२५	७	९	१९१०	५७९	१७	३०८४	१९१८
२	४४९	२९	१०	२०९३	७१०	१८	३१७७	२१२३
३	६७१	६६	११	२२६७	८५३	१९	३२५६	२३३३
४	८९०	११७	१२	२४३१	१००७	२०	३३२१	२५४८
५	११०५	१८२	१३	२५८५	११७१	२१	३३७२	२७६७
६	१३१५	२६१	१४	२७२८	१३४५	२२	३४०९	२९८९
७	१५२०	३५४	१५	२८५९	१५२८	२३	३४३१	३२१३
८	१७१९	४६०	१६	२९७८	१७१९	२४	३४३८	३४३८

अथप्रसङ्गात्परमक्रान्तिज्यांवदन्क्रांत्यानयनमाह-

परमापक्रमज्यातुसप्तरन्ध्रगुणेन्दवः ॥
तद्गुणाज्यात्रिजीवाप्तातच्चापंक्रान्तिरुच्यते ॥ २८ ॥

त्र्यूनंचतुर्दशशतं १३९७ परमक्रांतिज्यातुकाराच्चतुर्विंशत्यंशानांवक्ष्यमाणज्यानयनमकारसिद्धेत्यर्थः । अभीष्टाज्यापरमक्रान्तिज्ययागुणितात्रिज्याभक्ताफलस्यवक्ष्यमाणप्रकारेणधनुःक्रांतिःकलात्मिकातत्त्वज्ञैःकथ्यते । अत्रोपपत्तिः । विषुवद्वृत्तात्क्रांतिवृत्तभागस्ययाम्योत्तरस्यान्तरंध्रुवाभिमुखवृत्ताकारसूत्रेक्रान्तिः । तत्रसायनमेषतुलादिस्थानेतयोरन्तराभावात् । कर्कमकरादौतयोःपरमान्तरत्वादभीष्टभुजज्यावशात्क्रान्तिरुपपन्नेति त्रिज्यातुल्यभुजज्ययापरमक्रांतिज्या तदेष्टभुजज्ययाकेत्यनुपातेनफलंध्रुवाभिमुखसूत्रेतदन्तररूपार्धचापस्यार्धज्याविषुवद्वृत्तोर्ध्वाधरमध्यसूत्रात्तच्चापंतदन्तरकलात्मिकाक्रान्तिः ॥ २८ ॥

भा०टी०-परमापक्रमज्या १३९७ इसको इसकी ज्यासे गुणकरके त्रिज्या (३४३८) से भाग करनेपर क्रान्तिज्या होगी । इसको धनु करनेसे क्रान्ति होगी ॥ २८ ॥

अथफलानयनार्थकेंद्रपदाद्भुजकोटिज्येकार्येइत्याह-

ग्रहंसंशोध्यमन्दोच्चात्तथाशीघ्राद्विशोध्यच ॥
शेषंकेन्द्रपदंतस्माद्भुजज्याकोटिरेवच ॥ २९ ॥

ग्रहंराश्यादिकंमन्दोच्चात्प्रागानीतस्वकीयराश्यादिकमन्दोच्चभोगात् संशोध्योनीकृत्यशीघ्रात्प्रागानीतराश्यादिशीघ्रोच्चात् । चःसमुच्चये।ऊनीकृत्यशेषंराश्यात्मकंतथोच्चसम्बन्धेनकेन्द्रंमन्दोच्चाद्धीनोग्रहोमन्दकेन्द्रम् । शीघ्रोच्चाद्धीनोग्रहः शीघ्रकेन्द्रंभवतीत्यर्थः । तस्मात्केन्द्रात्पदंराशित्रयात्मकंविषमंसमंपदंज्ञेयम् । त्रिराश्यन्तर्गतंचेत्प्रथमंविषमंपदम् । ततःषड्राश्यन्तर्गतंचेत्त्र्यूनंकेन्द्रंद्वितीयंसमंपदम् । ततोनवराश्यन्तर्गतंचेत्षड्नंतृतीयंविषमंपदम् । ततोनवोनंचतुर्थंपदंसममित्यर्थः । तस्मात्पदाद्भुजस्यज्याकोटिःकोटेर्ज्याचःसमुच्चये । एवकारादेकाद्द्वयंसाध्यमित्यर्थः ॥ अत्रोपपत्तिः । उच्चस्थानाभिमुखमुच्चंदैवतैर्ग्रहाणामाकर्षणोक्तेरुच्चाद्ग्रहःकियदन्तरेणेतिज्ञानार्थमुच्चहीनोग्रहःकेन्द्रमुच्चग्रहणवशात्तदाख्यम् । तत्रभगवतास्वेच्छयाग्रहादुच्चंयदन्तरेणतत्केन्द्रंकृतम् । उभयथाभुजकोटयोस्तुल्यत्वात् । द्वादशराश्यङ्कितेवृत्तउच्चस्थानाच्चतुर्विभागात्मकएकैकोभागोराशित्रयात्मकःपदसंज्ञः । अथोच्चस्थानाद्ग्रहःकस्मिन्पदेस्तीतिशून्यत्रिषण्णवोनंकेन्द्रंकृतंज्यानांपदान्तर्गतत्वात् । ग्रहाधिष्ठितपदाद्भुजज्याकोटिज्ययोर्ज्ञानम् ॥ २९ ॥

भा०टी०-मन्दोच्चसे ग्रहमध्य वियोग करनेपर अथवा शीघ्रसे ग्रहमध्य हीन करनेपर, केन्द्र होता है । भगणके जिस पादमें केन्द्र है, तिस्से भुजज्या और कोटिज्या स्थिर होती है ॥ २९ ॥

---

१ एकादि ज्यासंख्याके क्रमसे अपक्रमज्या ९१, १८२, २७३, ३६२, ४४९, ५३५, ६१८, ६९९, ७७६, ८५०, ९२१, ९८८, १०५०, ११०७, ११६२, १२१०, १२५३, १२९१, १३२३, १३४९, १३७०, १३८८, १३९५, १३९७ ॥

ननुपदेग्रहस्यराशिविभागात्मकेनैकत्वाद्भुजकोटिज्ययोरतुल्ययोःसाधनंकथ-मित्यतआह-

गताद्भुजज्याविषमेगम्यात्कोटिःपदेभवेत् ॥
युग्मेतुगम्याद्बाहुल्यात्कोटिज्यातुगताद्भवेत् ॥ ३० ॥

विषमेपदेगताद्ग्रहस्यपदादितोयद्गतंराशिविभागात्मकंप्राग्ज्ञातंतस्मादित्यर्थः । भुजज्यास्यात् । गम्याद्गतोनंत्रिभंग्रहात्पदान्तावधिकमेष्यम् । तस्मात्कोटिः कोटिज्यास्यात् । युग्मेसमेतुकारात्पदएष्याद्भुजज्यागतात्कोटिज्यास्यात् । तुकारोविशेषद्योतकः । एकस्मादेवोक्तरीत्याद्वयंसाधितामित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । विषमपदेग्रहोच्चोर्ध्वाधररेखान्तरानुसारेणफलमुत्पद्यतेततोवृत्तान्तस्तदन्तरमर्धज्या भुजरूपातदर्धचापंतदंतरांशावृत्तभागस्थागताः । ऊर्ध्वाधररेखामत्स्यसम्पन्नातिर्यग्रेखाग्रहयोरन्तरसूत्रमर्धज्यापदान्तःकोटिज्याभुजोत्क्रमज्योनव्यासार्धरेखारूपकोटितुल्यत्वात् । तदर्धचापंभुजांशोनंत्रिभंमितिगम्यात्कोटिज्या । समपदेग्रहोर्ध्वाधररेखान्तरंतिर्यगर्धज्याभुजज्येतितदर्धचापंयदैष्यंतिर्यग्रेखाग्रहान्तरंतिर्यगर्धज्या-कोटितुल्यत्वात्कोटिस्तच्चापंपदगतमित्युपपन्नंगतादित्यादि ॥ ३० ॥

भा०टी०-विषम पदमें गतसे भुजज्या और गम्यसे कोटिज्या होतीहै । युग्मपदमें गम्यसे भुजज्या और गतसे कोटिज्या होतीहै ॥ ३० ॥

अथाभीष्टकालानांज्यासाधनंश्लोकाभ्यामाह-

लिप्तास्तत्त्वयमैर्भक्तालब्धंज्यापिण्डकंगतम् ॥
गतगम्यान्तराभ्यस्तंविभजेत्तत्त्वलोचनैः ॥ ३१ ॥
तदवाप्तफलंयोज्यंज्यापिण्डेगतसञ्ज्ञके ॥
स्यात्क्रमज्याविधिरयमुत्क्रमज्यास्वपिस्मृतः ॥ ३२ ॥

यस्यराश्यात्मकस्यपदान्तर्गतस्यज्याकर्तुमिष्टातस्यकलाःकार्याः । तत्त्वाश्विभिर्भक्तालब्धंचतुर्विंशज्ज्यापिण्डेषुपूर्वोक्तेषुलब्धसंख्याकः पिण्डोगतोभवतितदग्रिमापिण्डएष्यः पूर्वतुस्वरूपोक्त्यर्थंपिण्डानांज्यार्धेयुक्तिरिदानींतुतेषामेवार्धत्यामेनज्यापिण्डत्वोक्तिः । अर्धग्रहणेगणितक्रियायांव्याकुलतापत्तेः । नतुपूर्वपिण्डाद्द्विगुणागणितक्रियायांग्राह्याइत्याशयेनार्धातुक्तिगौरवात् । भागेऽवशिष्टंतद्गतैष्यपिण्डयोरन्तरेणगुणितंतत्त्वाश्विभिर्भजेत् तस्मात्प्राप्तंयत्कलादिकंफलंतद्गतेज्यापिण्डेयुक्तंकार्यम् । उत्क्रमज्याभीष्टांशकलानामर्धज्यारूपाक्रमज्याभवति । अयमुक्तःप्रकारउत्क्रमज्यापिण्डेषुकथितः । अभीष्टांशकला-

नामुत्क्रमज्यापिण्डैरुक्तविधिनोत्क्रमज्यास्यादित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । त-त्त्वाश्विकलाभिरेकाज्यातदाभीष्टकलाभिः केत्यनुपातेनगतज्याततस्तत्त्वाश्विक-लाभिर्गताग्रिमज्यान्तरंलभ्यतेतदाशेषकलाभिः केत्यनुपातागतलब्धेन युक्ता-भीष्टज्या ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

भा०टी०-केन्द्रपद कलाको २२५ से भाग करनेपर जो प्राप्त हो तिसके परिमाणसे ज्यापिण्ड गत हुए हैं गत और गम्य ज्यापिण्डके अन्तरकी बचीहुई कलासे गुणकरके २२५ से भागकरे ॥ ३१ ॥ भागफल, गतज्यापिण्डमें मिलावै। इस प्रकारसे क्रमज्या और उत्क्रमज्याका विधान होताहै । उत्क्रमज्याके स्थानमें उत्क्रमखण्डाज्या ग्रहण करनी चाहिये ॥ ३२ ॥

अथज्यातोधनुरानयनमाह-

ज्यांप्रोज्झ्यशेषंतत्त्वाश्विहतंतद्विवरोद्धृतम् ॥
सङ्ख्यातत्त्वाश्विसंवर्गेसंयोज्यधनुरुच्यते ॥ ३३ ॥

यस्यधनुःकर्तुमिष्टंतस्मिन्नशुद्धपूर्वज्यापिण्डंन्यूनीकृत्यशेषं पश्चाकृतिगुणंतद्विव-रोद्धृतंतयोः शुद्धाशुद्धपिण्डयोरन्तरेणभक्तंफलंशुद्धज्यायतमाततमसङ्ख्यातत्त्वाश्वि नोःसंवर्गेघातेसंयोज्यसिद्धंधनुःकथ्यते । अत्रोपपत्तिः । ज्यायतमाशुद्धयतितत चापाश्चापकलास्ततमसङ्ख्यागुणिततत्त्वाश्विनः। ज्यान्तरेणतत्त्वाश्विकलास्तदा-शेषज्ययाकेत्यनुपातागतफलयुताइतिवैपरीत्येनसुगमतरा ॥ ३३ ॥

भा०टी०-इष्टज्यासे निकटतम न्यून ज्यापिण्डको अलग करके शेषको २२५ से गुणकरके निकटतम न्यूनज्या और पल्लीज्याके अन्तरसे भागकरे। इस भागफलको २२५ गुणित ग्रह-णकीहुई ज्यापिण्डकी संख्यामें मिलानेसे धनुकला निकल आवेगी ॥ ३३ ॥

अथग्रहाणांमन्दपरिध्यंशान्विवक्षुः प्रथमंसूर्यचन्द्रयोराह-

रवेर्मन्दपरिध्यंशा मनवःशीतगोरदाः
युग्मान्तेविषमान्तेचनखलिप्तोनितास्तयोः ॥ ३४ ॥

सूर्यस्यपरमाकर्षणोत्पन्नपरमपूर्वापरगमनरूपपरममन्दफलांशानांज्यापरमफल-ज्यातत्तुल्यव्यासार्धेनोत्पन्नवृत्तेकक्षावृत्तस्थितांशप्रमाणेनयेंऽशास्तेमन्दपरिध्यंशाःके-न्द्रयुग्मपदान्तेनीचोच्चसमेऽर्केचतुर्दशचन्द्रस्यतत्रतेद्वात्रिंशत् । केन्द्रविषमपदान्ते-नीचोच्चाभ्यांत्रिभान्तरितेचकारादुक्तामन्दपरिध्यंशाविंशतिकलोनाः सन्तःसूर्यच-न्द्रयोर्मन्दपरिध्यंशा भवन्ति ॥ ३४ ॥

---

१ केन्द्रराश्यादि, ३ राशिकान्यून होनेसे समपाद, तदुपरान्त ६ राशितक २ दूसरापाद, फिर ९ राशि-तक तीसरापाद और शेष चौथे पादके अन्तर्गत है। पहला और तीसरापाद विषम है, तीसरे चौथे युग्म-पाद हैं। गत अर्थात् उस पादके जितने गए हैं, गम्य अर्थात् उस पादके पूर्ण होनेमें जितने बाकी हैं। अर्थात् ३ राशिसे अलग करनेपर जितने बाकी रहैं ॥ इस प्रकारसे निर्णय हुए केन्द्रको केंद्रपात कहते हैं। यहां ज्या और ज्यार्द्धका कोई भेद नहीं है।

भा०टी०-युग्मपादके अन्तमें सूर्यकी मन्दपरिधि १४ अंश, चन्द्रमाकी ३२ अंश. विषम पादान्तमें २० कला कम हैं (अर्थात र १३।४० चं ३१।४०) ॥ ३४ ॥

अथभौमादीनामाह-

युग्मान्तेऽर्थाद्रयः खाग्निसुराः सूर्यानवार्णवाः ॥
ओजेद्व्यगावसुयमारुद्रारुद्रागजाब्धयः ॥ ३५ ॥

भौमस्यपञ्चसप्ततिः । बुधस्यात्रिंशत् । गुरोस्त्रयस्त्रिंशत् । शुक्रस्यद्वादश । शनेरेकोनपंचाशत् पूर्वोक्तमन्दपरिध्यंशाइतिवक्ष्यमाणकुजादीनामितिचात्रान्वेति । एतेयुग्मपदान्ते । ओजेविषमपदान्तेभौमस्यद्विसप्ततिःबुधस्याष्टाविंशतिः । गुरोरेकादश । शुक्रस्यैकादश । शनेरष्टचत्वारिंशत् ॥ ३५ ॥

भा०टी-युग्मके अन्तमें मन्दपरिधि अंशमें मं, ७५, बु ३०, बृ, ३३; शु १२, शनि ४९, । विषमान्तमें मं ७२, बु २८, बृ ११, शु ११, श ४८ ॥ ३५ ॥

अथभौमादीनांयुग्मपदान्तेशैघ्र्यपरिध्यंशानाह-

कुजादीनामतःशैघ्र्यायुग्मान्तेऽर्थाग्निदस्रकाः ॥
गुणाग्निचन्द्राःखनगाद्विरसाक्षीणिगोऽग्नयः ॥ ३६ ॥

भौमादीनामतोमन्दपरिध्यंशकथनानन्तरंशैघ्र्याःशीघ्रपरिध्यंशायुग्मपदान्तेभौमस्यपंचत्रिंशदधिकंशतद्वयम् । बुधस्यत्रयस्त्रिंशदधिकंशतम् । गुरोःसप्ततिः । शुक्रस्यद्विषष्ट्यधिकंशतद्वयम् । शनेरेकोनचत्वारिंशत् ॥ ३६ ॥

भा०टी०-युग्मके अन्तमें शीघ्र परिधि अंश मं० २३५, बु० १३३, बृ० ७०, शु० २६२ श० ३९, ॥ ३६ ॥

अथैतेषांविषमपदान्तेशैघ्र्यपरिध्यंशानाह-

ओजान्तेद्वित्रियमलाद्विविश्वेयमपर्वताः ॥
खर्तुदस्रावियद्वेदाःशीघ्रकर्मणिकीर्त्तिताः ॥ ३७ ॥

विषमपदान्तेशीघ्रकर्मणिशीघ्रफलसाधनार्थपरिधयउक्ताः । एतेशीघ्रपरिधयःकुजादीनामितिपूर्वोक्तमत्रान्वेति । भौमस्यदन्ताश्विनाः । बुधस्यदन्तेन्दवः । गुरोर्द्विसप्ततिः । शुक्रस्यषष्ट्यधिकंशतद्वयम् । शनेश्चत्वारिंशत् । अत्रकीर्तिताइत्यनेनयुग्मान्तेफलाभावादेवपरिधयःकथंसम्भवन्ति । अतोविषमपदान्तेपरमफलस्यसत्वात्तत्रैवयुक्ताःपरिधयःशनिमन्दशीघ्रपरिध्योःक्रमेणाधिकन्यूनत्वंचसंज्ञाव्याघातादयुक्तमित्यादिनाशङ्कनीयमागमप्रामाण्यात् ॥ "श्रुतिर्यत्रप्रमाणंस्याद्युक्तिःकातत्रनारद" ॥ इतिब्रह्मसिद्धान्तोक्तेश्चेतिसूचितम् ॥ ३७ ॥

भा०टी०-विषमकेअंतमें शीघ्रपरिधि अंश मं २३२, बु १३२, बृ ७२, शु २६०, श ४० ॥ ३७ ॥

अथाभीष्टकेन्द्रसम्बन्धेनपरिधिभागानयनमाह-

ओजयुग्मान्तरगुणाभुजज्यात्रिज्ययोद्धृता ॥
युग्मवृत्तेधनर्णंस्यादोजादूनाधिकेस्फुटम् ॥ ३८ ॥

भुजज्या यत्परिधिःस्फुटीकर्तुमिष्यतेतत्केन्द्रस्यमन्दशीघ्रान्तरस्यभुजज्यौजयुग्मान्तरगुणाविषमसमपदान्तीयकेन्द्रीयपरिध्योरन्तरेणगुणितात्रिज्ययाभक्ताफलं-युग्मवृत्तेकेन्द्रयुग्मपदान्तीयपरिधौ । ओजात्केन्द्रीयविषमपदान्तीयपरिधेःसकाशादूनाधिकेक्रमेणधनर्णंहीनेयुक्तमधिकेहीनंस्फुटंपरिधिमानंस्यात् । अत्रोपपत्तिः । युग्मपदान्तीयस्थात् परिधेर्विषमपदान्तीयपरिधिर्यावतान्यूनाधिकस्तदन्तरंविषमपदत्वाद्भुजज्ययोपचितमतस्त्रिज्यातुल्यभुजज्ययेदमन्तरंतदेष्टभुजज्ययाकिमितिफलंयुग्मपरिधौ । ओजपरिधेर्न्यूनत्वेऋणमधिकत्वे धनमिति । विषमपदपरिधेराधिकन्यूनयुग्मपरिधाववर्णधनंकृतमित्युपपन्नम् ॥ ३८ ॥

भा०टी०-विषम और युग्मपरिधिके अन्तरसे भुजज्याको गुणकरके त्रिज्यासे भाग करनेपर जो प्राप्तहो, लब्धफलपरिधिमें धन वा हीन करनेपर स्फुट परिधि होगी विषमान्तसे युग्मान्त अधिक होनेपर लब्धफलहीन अन्यथा योगकरे ॥ ३८ ॥

अथभुजकोटिफलानयनंमंदफलानयनं चाह-

तद्गुणेभुजकोटिज्येभगणांशविभाजिते ॥
तद्भुजज्याफलधनुर्मान्दंलिप्तादिकंफलम् ॥ ३९ ॥

भुजकोटिज्ये मन्दशीघ्रान्तरसंबन्धेनकेन्द्रभुजकोटिज्येतद्गुणेस्वीयस्फुटपरिधिनागुणितेभगणांशैःषष्ट्यधिकशतत्रयेणभक्तेभुजफलकोटिफलेभवतः । मन्दकेंद्रभुजज्योत्पन्नफलस्यधनुःकलादिकंमांदंफलंभवति । अत्रोपपत्तिः । कक्षास्थोच्चस्थानस्थितदेवतयास्वहस्तस्थितसूत्रप्रोतंग्रहबिंबंस्वाभिमुखाकर्षणेनकक्षास्थमध्यग्रहस्थानात्परमफलज्यांतरितस्थानआकर्षणसूत्रमार्गरूपतिर्यक्कर्णमार्गेणाकर्ष्यते । तेनमध्यग्रहस्थानीयकक्षाप्रदेशांत्यफलज्याव्यासार्धेनोत्पन्नवृत्तेभगणांशांकितेभूमध्यग्रहस्पृग्रेखासक्ततद्वृत्तप्रदेशरूपोच्चस्थानात्केन्द्रान्तरेणकक्षाविपरीतमार्गेणतद्वृत्तपरिधौग्रहोभवति । तस्मिन्नीचोच्चवृत्तऊर्ध्वरेखाग्रहयोस्तिर्यगन्तरसूत्रमर्धज्याकारंपरमफलज्यानुरुद्धंभुजफलं तस्मिन्नेववृत्तेव्यासमिततिर्यग्रेखाग्रहयोरन्तरमूर्ध्वाधरमर्धज्याकारंपरमफलज्यानुरुद्धंकोटिफलम् । एतेतत्रकक्षास्थभुजज्याकोटिज्यावद्भुजकोटिरूपे इतिकक्षास्थभगणांशप्रमाणेनैतेभुजज्याकोटिज्यारूपे भुजकोटीतदाकक्षास्थभागप्रमाणानुरुद्धमागुक्तनीचोच्चपरिधिभागैःकेत्यनुपातेनफलवृत्तस्थत्वाद्भुजकोटिफले । तत्रनीचोच्चपरिधिवृत्तस्थग्रहमध्यसूत्रंकर्णरूपंकक्षावृत्तेयत्रलग्नंतत्रस्पष्टोग्रहभोगः । नीचवृत्तमध्यस्पष्टग्रहभोगस्थानयोः । कक्षावृत्तेयदंतरांशमानंतत्फलंतदर्धज्यातिर्यक्सूत्रंमध्यग्रहस्थोर्ध्वाधर-

रेखारूपमध्यसूत्रात्स्पष्टग्रहभोगस्थानासक्तं फलं ज्या । कर्णाग्रेभुजफलंत-दांत्रिज्याग्रेकिमित्येतदनुपातावगतास्वाश्चापंफलम् । तत्रमन्दफलज्याभुजफ-लरूपा कर्णानुपातोपेक्षयाभगवतांगीकृता । मन्दकर्णस्यत्रिज्यासन्नत्वेनस्व-ल्पान्तरेणत्रिज्यातुल्यत्वेनाङ्गीकारात् । तच्चापंमन्दफलमित्युपपन्नंसर्वमुक्तं बोधार्थं-छेद्यकन्यासश्चयथा ॥ ३९ ॥

भा० टी०-स्फुट परिधिको भुज और कोटिज्यासे गुणकरके ३६० से भाग करनेपर भुज और कोटिफल होगा । भुजज्याका धनुर्निर्णय होजानेपर कलादि मान्दफल होगा ॥ ३९ ॥

अथशीघ्रफलंश्लोकत्रयेणाह-

शैघ्र्यंकोटिफलंकेन्द्रेमकरादौधनंस्मृतम् ॥
संशोध्यंतुत्रिजीवायांकर्कादौकोटिजंफलम् ॥ ४० ॥
तद्बाहुफलवर्गैक्यान्मूलंकर्णश्चलाभिधः ॥
त्रिज्याभ्यस्तंभुजफलंचलकर्णविभाजितम् ॥ ४१ ॥
लब्धस्यचापंलिप्तादिफलंशैघ्र्यमिदंस्मृतम् ॥
एतदाद्येकुजादीनांचतुर्थैचैवकर्मणि ॥ ४२ ॥

शीघ्रसम्बन्धिकोटिफलंमकरादिषड्भेशीघ्रकेन्द्रेत्रिज्यायांयोज्यमुक्तम् । क-र्कादिषड्भे...(?) शीघ्रकेन्द्रेकोट्युत्पन्नंफलंत्रिज्यायांहीनंकार्यम् । तुर्विशेषे । तेनमन्दकर्मण्येतत्क्रियानिरासः । कोटिफलसंस्कृतात्रिज्याभुजफलयोर्वर्गयो-र्योगान्मूलंशीघ्रसञ्ज्ञःकर्णः । भुजफलंत्रिज्ययागुण्यंशीघ्रकर्णेनभक्तंफलस्यध-नुःकलादि । इदंसिद्धंशीघ्रसम्बन्धिफलंकथितम् । भौमादीनामेतच्छीघ्रफ-लमाद्येप्रथमेकर्मणिचतुर्थेकर्माणि । चःसमुच्चये । कार्यगेचकाराद्द्वितीयतृ-तीयकर्मणोर्नेत्यर्थः । अर्थात्तत्रमन्दफलंसंस्कार्यमितिसिद्धम् । अत्रोपप-त्तिः । मन्दस्पष्टभोगस्थानीयकक्षावृत्तप्रदेशाद्ग्रहबिम्बं शीघ्रोच्चस्थानस्थितत-द्देवतयास्वहस्तास्थितसूत्रेणस्वाभिमुखंशीघ्रान्त्यफलज्यान्तरेणाकर्ष्यते । तेनमन्द-स्पष्टस्थानाच्छीघ्रान्त्यफलज्ययावृत्तेभांशाङ्कितेशीघ्रनीचोच्चसञ्ज्ञेपूर्वरीत्या शीघ्रो-च्चस्थानाच्छीघ्रकेन्द्रान्तरेणकक्षामार्गवैपरीत्येनग्रहबिम्बंभवति । तत्रपूर्ववत्कोटि-फलभुजफलेकोटिभुजौकक्षास्थतिर्यग्रेखातः शीघ्रनीचोच्चवृत्ततिर्यग्व्यासरेखात्रिज्या-न्तरेणेतित्रिज्याकोटिफलयोगोमकरादौ । कर्कादौकोटिफलोनत्रिज्याशीघ्रनीचो-च्चपरिधिस्थग्रहकक्षातिर्यग्रेखयोरंतररज्जुसूत्ररूपाकोटिः । कोटिमूलमध्ययोर-न्तरंकक्षा तिर्यग्रेखान्तर्गतंभुजफलतुल्यंभुजोग्रहभूमध्यस्थसूत्रं तिर्यक्कर्णः । कोटिभुज फलयोर्वर्गयोगमूलंततःकक्षायांकर्णसूत्रं यत्रलग्नं तत्र स्पष्टोग्रहभोगःकक्षामध्यसूत्रा

द्गहसक्तात्स्पष्टभोगस्थानपर्यन्तमर्धज्याकारंसूत्रंशीघ्रफलज्याशीघ्रकर्णाग्रेभुजफलं तदात्रिज्याग्रेकिमित्यनुपातज्ञाता । अस्याश्चापंमन्दस्पष्टस्पष्टग्रहभोगस्थानयोरन्तररूपंशीघ्रफलम् । अथनीचोच्चवृत्तमध्यज्ञानायमन्दस्पष्टज्ञानमावश्यकम् । ततः शीघ्रफलसंस्कारेणस्पष्टज्ञानम् । तत्रस्फुटसाधितमन्दफलसंस्कृतमध्यग्रहोमन्दस्फुटः सूक्ष्मइतिपूर्व्वमध्यग्रहस्यासन्नस्फुटत्वसिद्ध्यर्थफलयोः संस्कारआवश्यकस्तत्रापिप्रथमंमन्दफलंशीघ्रफलसंस्कृतान्मध्यग्रहसाधितमन्दफलापेक्षयासूक्ष्ममितिप्रथमंशीघ्रफलसंस्कृतमध्यग्रहान्मन्दफलंशीघ्रफलसंस्कृतमध्यग्रहेसंस्कार्यस्फुटासन्नोभवति ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

भा०टी०-शीघ्र कोटिफल मकरादि ६ राशिमें त्रिज्यामें योग और कर्कादिमें वियोग करना होता है इस संख्याके वर्गमें, शैघ्र्य भुजफलवर्ग योग करके मूल निकालनेसे शीघ्रकर्ण होगा शीघ्र भुजफलको त्रिज्यासे गुणकरके शीघ्रकर्णद्वारा भागकरनेपर जो लब्ध हो तत्परिमाणानुसार धनुनिर्णय करनेपर शीघ्रफल होगा । यह शीघ्रफल भौमादिके प्रथम और चतुर्थ संस्कारमें प्रयोजनीय है ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

ननुसूर्येन्द्वोः शीघ्रफलाभावात्कथंस्पष्टत्वंभवतीत्यतस्तदुत्तरंवदन्नैतदाद्येकुजादीनामित्यर्थंस्फुटयति-

मान्दंकर्मैकमर्केन्द्वोर्भौमादीनामथोच्यते ॥
शैघ्र्यंमान्दंपुनर्मान्दंशैघ्र्यंचत्वार्यनुक्रमात् ॥ ४३ ॥

सूर्यचन्द्रयोर्मान्दंकर्मैकंतथाचानयोः शीघ्रफलाभावात्केवलेनमन्दफलेनैवस्पष्टत्वम् । एकमित्यनेनसकृन्मान्दंफलंसाध्यंमध्यग्रहेणैवमन्दनीचोच्चमण्डलमध्यज्ञानान्नकर्मान्तरापेक्षेत्युपपत्तिः स्पष्टा । अथानन्तरंभौमादीनामुच्यते । प्रागुक्तंस्फुटतयाकथ्यते । तदाह । शैघ्र्यमिति । प्रथमतोमध्यग्रहात्साधितशीघ्रफलंमध्यग्रहेसंस्कार्यमस्मान्मन्दफलमस्यैवसंस्कार्य्यमस्मात्पुनर्द्वितीयवारंमन्दफलंसाधितंमध्यग्रहेसंस्कार्यमन्दःस्पष्टोभवति । अस्मादपिशीघ्रफलंसाधितमस्यैवसंस्कार्यमेवमनुक्रमाच्चत्वारिकर्माणिभवन्तीतिप्रागुक्ततात्पर्यम् ॥ ४३ ॥

भा०टी०-सूर्य और चंद्रमाका मान्द्यकर्म एक संस्कार है भौमादिके शैघ्र्य, मान्द्य, पुनर्मान्द्य, और पिछला शैघ्र्य क्रमशः यह चार संस्कार हैं ॥ ४३ ॥

अथात्रापिविशेषमाह-

मध्येशीघ्रफलस्यार्धंमान्दमर्धफलंतथा ॥
मध्यग्रहेमन्दफलंसकलंशैघ्र्यमेवच ॥ ४४ ॥

मध्यग्रहेस्वसाधितशीघ्रफलस्यार्धसंस्कार्यम् । अस्मात्साधितंमन्दसम्बन्ध्यर्ध-

---

१ शीघ्रफलके साधनकालमें शीघ्रकेन्द्र और शीघ्रपरिधि आदिका व्यवहार होता है ॥

फलंसाधितमन्दफलस्यार्धमित्यर्थः । तथायस्मात्साधितंतस्यैवसंस्कार्यम् । शीघ्रफलार्धसंस्कृतेसंस्कार्यमितिफलितार्थः । अस्मात साधितंमन्दफलं सम्पूर्णमध्यग्रहेसंस्कार्यंमन्दस्पष्टोभवति । अस्मात्साधितंशीघ्रफलंसम्पूर्णम् । चःसमुच्चये । तेनमन्दस्पष्टेसंस्कार्यम् । एवकारादुक्तरीत्यासिद्धोग्रहः स्पष्टोनान्यथेति । अत्रोपपत्तिः । मन्दफलंस्फुटसाधितंवास्तवंस्फुटस्तुमन्दफलसापेक्षइत्यन्योऽन्याश्रयात्सूक्ष्ममन्दफलसाधनशक्यमपिभगवतातदासन्नसाधनार्थमर्धस्फुटादेवमन्दफलंसाधितंमध्यग्रहसाधितमन्तफलापेक्षयासूक्ष्मम् । अर्धस्फुटस्तुफलद्वयार्धसंस्कृतोमध्यग्रहः । अत्रापिमन्दफलस्यार्धंशीघ्रफलार्धसंस्कृतात्किञ्चित्सूक्ष्मत्वार्थसाधितमित्युपपन्नंमध्येशीघ्रफलस्येत्यादि ॥ ४४ ॥

भा०टी०-ग्रहमध्यमें शीघ्रफलका अर्द्धसंस्कार करे (संस्कारका अर्द्ध मिलाना या अलग करना है-४५ श्लोकके अनुसार) शैघ्यार्द्ध संस्कृत मध्यानुसार, मन्दफलार्द्ध- फिर शैघ्यार्द्ध-संस्कृत मध्यमें संस्कार करनेसे शीघ्रार्द्ध-मन्दार्द्ध-संस्कृत मध्य होगा शीघ्रार्द्ध मन्दार्द्ध संस्कृत मध्यानुसारसे फिर दूसरा मन्दफल निर्णय करे। मन्दफल ग्रहमध्यमें संस्कारकरे। यह शेष-मन्दफल-संस्कृत-मध्यानुसारसे शीघ्रफल साधन करके शेष-मन्द-फल-संस्कृतमें संस्कार करनेपर स्फुट होगा ॥ ४४ ॥

ननुफलयोःसंस्कारःकथंकार्य्यइत्यतआह-

अजादिकेन्द्रेसर्वेषांशैघ्रेमान्देचकर्माणि ॥
धनंग्रहाणांलिप्तादितुलादावृणमेवच ॥ ४५ ॥

सर्वेषांग्रहाणांशैघ्रेकर्मणिमान्देकर्माणि । चकारःसमुच्चये । कलात्मकंफलंमेषादिषड्भान्तर्गतकेन्द्रेयुतंकार्यंतुलादिषड्भान्तर्गतकेन्द्रेहीनंकार्यम् । चकारोव्यवस्थार्थकः । एवकारःफलयोरानयनप्रकारभेदेऽपिधनर्णरीतिभेदव्यवच्छेदार्थकः । अत्रोपपत्तिः । पूर्वाकर्षणेग्रहस्यफलंधनंपश्चादाकर्षणऋणमितिप्रागुक्तम् - तत्रग्रहादुच्चपर्यंतंकेन्द्रेगृहीतेपूर्वाकर्षणंमेषादिकेन्द्रंभवति पश्चादाकर्षणेतुलादि। केन्द्रंभवतीतितथोक्तमुपपन्नम् ॥ ४५ ॥

भा०टी०-मेषादिकेन्द्रमें ग्रहोंके शीघ्र और मन्द संस्कार योग और तुलादिकेन्द्रमें फल (कलादि) वियोग करनी चाहिये ॥ ४५ ॥

अथग्रहाणांभुजान्तरफलमाह-

अर्कबाहुफलाभ्यस्ताग्रहभुक्तिर्विभाजिता ॥
भचक्रकलिकाभिस्तु[1]लिप्ताः कार्याग्रहेऽर्कवत् ॥ ४६ ॥

स्पष्टासूर्यादिग्रहगतिः सूर्यस्यभुजफलेनमन्दफलेनकलात्मकेनगुणिताद्वादशराशिकलाभिः षट्शतयुतैकविंशतिसहस्रमिताभिर्भक्ताप्राप्तफलकलाग्रहेसूर्यादिग्रहेर्कवत्सूर्यमन्दफलधनर्णवशादित्यर्थः । कार्याः । तुकाराद्धनर्णसंस्कार्याः।

१ भचक्रकलिकाभिःस्युर्लिप्ताः कार्या इति वा पाठः।

अत्रोपपत्तिः । अहर्गणस्यैकरूपमध्यममानेनसत्त्वात्तदुत्पन्नग्रहाणांमध्यममानेनयदर्धरात्रंतात्कालिकत्वंसिद्धम् । मध्यममानार्द्धरात्रेतुमध्यमसूर्यमितक्रान्तिवृत्तप्रदेशोऽधोयाम्योत्तरवृत्तेभवति । अस्मात्कालात्स्पष्टार्द्धरात्रंस्पष्टसूर्यमितक्रान्तिवृत्तप्रदेशाधोयाम्योत्तरवृत्तसंयोगरूपंमन्दफलधनर्णक्रमेणानन्तरपूर्व्वकालेभवति । अतोमन्दफलकलाभोगसम्बन्धिकालेनग्रहोऽनन्तरपूर्व्वकालयोश्चाल्पःस्पष्टार्द्धरात्रसमयेभवति । एतेनानेनकर्मणास्फुटार्धरात्रकालीनग्रहाःक्रियन्ते । सूर्यश्चस्फुटार्द्धरात्रकालीनएवातःसूर्यस्यनायंसंस्कारइतिपर्व्वतोक्तंनिरस्तम् । सूर्यव्यतिरिक्तग्रहामध्यार्धरात्रेसूर्यस्तुस्फुटार्धरात्रइत्यत्राहर्गणोत्पन्नत्वेनसर्वेषामेककालिकत्वसिद्धहेत्वभावादिति । तत्रमन्दफलकलानांकालस्त्वेकराशिकलाभिः सायनस्पष्टार्कांक्रान्तराश्युदयासवोलभ्यन्तेतदामन्दफलकलाभिःकइत्यनुपातेनततोऽहोरात्रासुभिर्गतिकलास्तदाफलकलासुभिः काइतिमन्दफलकलाग्रहेधनर्णमन्दफलवशाद्धनर्णकार्याइतिसिद्धम् । तत्रापि भगवतालोकानुकम्पयास्वल्पान्तरेण नाक्षत्रंदिनेग्रहगतिभोगमङ्गीकृत्यचक्रकलापरिवर्तात्मकनाक्षत्राहोरात्रेणगतिकलास्तदासूर्यमन्दफलकलाभ्रमणेनका इत्येकानुपाताल्लाघवादानीताश्चालनकलाइत्युपपन्नम् ॥ ४६ ॥

भा०टी०-सूर्य भुजमान्द्य-फलसे ग्रह-भुक्तिको गुणकरके २१६०० द्वारा भाग करके लब्धकलादि ग्रहोंमें संस्कार करना चाहिये । अर्थात् सूर्य स्फुटकालमें भुजफल मिलानेसे मिलाने और अलग (घटाने) करदेनेपर वियोग करना चाहिये ॥ ४६ ॥

अथस्पष्टगतिंविवक्षुश्चन्द्रस्यप्रथमंविशेषमाह-

स्वमन्दभुक्तिसंशुद्धामध्यभुक्तिर्निशापतेः ॥
दोर्ज्यान्तरादिकंकृत्वाभुक्तावृणधनंभवेत् ॥ ४७ ॥

ग्रहगतिसाधनेवक्ष्यमाणेगतिफलंग्रहगतेः साधितंतथाचन्द्रगतेश्चन्द्रगतिफलं नसाध्यंकिन्तुचन्द्रस्यमध्यमगतिःस्वस्यचन्द्रस्यमन्दंमन्दोच्चंतस्यदिनगत्याहीनाकार्यातादृशगतेः सकाशाद्दोर्ज्यान्तरादिकंदोर्ज्यान्तरमादिभूतंयस्यैतादृशंगतिफलं वक्ष्यमाणप्रकारेदोर्ज्यान्तर्गुणाभुक्तिरित्यादौदोर्ज्यान्तरादेवगतिफलोत्पत्तेः । सिद्धंकृत्वाचन्द्रमध्यमगतावृणधनंवक्ष्यमाणरीत्याभवति । अत्रोपपत्तिः । वक्ष्यमाणगतिफलंकेन्द्रगत्योपपन्नमित्यनेनसूर्यादिग्रहाणांविचन्द्राणांमन्दोच्चगतेरत्यल्पत्वात्स्वगत्यैवगतिफलमुक्तम् । तत्रचन्द्रस्यतथासाधनेवह्वन्तरपातात्तस्यमन्दोच्चगत्यूनस्वगतिरूपकेंद्रगतेः फलंसाधितंगतिफलंयद्गतेः साध्यं तद्गतावेवसंस्कार्यमितिवक्ष्यमाणरीतिव्युदासायचन्द्रभुक्तावित्युक्तमन्यथाकेन्द्रगतेरेवस्फुटत्वंस्यान्नचन्द्रगतोरिति ॥ ४७ ॥

भा०टी०-चंद्रभुक्तिसे तिसकी मन्दोच्चभुक्ति अलग करके (नीचे कहे अनुसार) दोर्ज्यान्तरसाधन करके मध्यगतिसे योग या वियोग करनेपर स्पष्टगति होती है ॥ ४७ ॥

अथग्रहाणांमन्दस्पष्टगतिंवासनासूचनपूर्वगतिफलानयनपूर्विकांश्लोकाभ्यामाह-

ग्रहभुक्तेःफलंकार्यंग्रहवन्मन्दकर्मणि ॥
दोर्ज्यान्तरगुणाभुक्तिस्तत्त्वनेत्रोद्धृतापुनः ॥ ४८ ॥
स्वमन्दपरिधिक्षुण्णाभगणांशोद्धृताकलाः ॥
कर्कादौतुधनंतत्रमकरादावृणंस्मृतम् ॥ ४९ ॥

मन्दकर्मणिगतिमन्दफलक्रियानिमित्तमित्यर्थः । ग्रहवद्ग्रहमन्दफलानयनरीत्यापरिधिगुणनभगणांशभजनाप्तचापमित्यात्मिकयाग्रहगतेः सकाशात्फलं ग्रहमन्दगतिफलंसाध्यम् । यथाग्रहमन्दफलंकेंद्रभुजज्यातःसाधितंतथेदंगतिफलंग्रहगतेःसाध्यमित्यर्थः । तथाहिग्रहमन्दफलान्तरस्यैकदिनान्तरीयस्यग्रहगतिमन्दफलत्वाद्भुजज्ययोरेकदिनान्तरयोरन्तरात्फलंमन्दगतिफलंपर्यवसितं तत्र केंद्रयोरन्तरस्यकेंद्रगतित्वात् । तज्ज्ययोरन्तरंतत्त्वाश्विप्रमाणेनोक्तज्यापिण्डान्तरंगतिकलापरिणामितंभवति । तदेवाह । दोर्ज्यान्तरगुणेति । ग्रहमध्यगतिःकेन्द्रगतिरूपा । उच्चगतेरत्यल्पत्वात् । दोर्ज्यान्तरगुणाभुजज्यानयनावसरेयज्ज्यापिण्डान्तरंतेनगुणितापश्चाकृतिभिर्भक्तापुनरनन्तरमित्यर्थः । ग्रहमन्दपरिधिनास्फुटेनगुणिताषष्ट्युतशतत्रयेणभक्ताफलंगतिमन्दफलकलाः । यद्यपिगतिज्यातःफलज्यानयनंकृत्वातच्चापंगतिफलंसमुचितम् । तथापिग्रहगतेस्तत्त्वाश्विभ्योन्यूनत्वाज्ज्याचापयोस्तुल्यत्वेनतदनुक्तावक्षति । चन्द्रस्यतुस्वल्पान्तरात्तत्करणमुपेक्षितम् । मन्दस्पष्टगतिसिद्ध्यर्थंमध्यगतौफलसंस्कारमाह । कर्कादाविति । तत्रग्रहमध्यगतौपूर्वानीतफलंकर्कादिषड्भान्तर्गतकेन्द्रेधनंमकरादिषड्भान्तरगतकेन्द्रऋणमुक्तम् । तुकारान्मन्दस्पष्टगतिःसिद्धाभवतीत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । ऋणफलोपचयेपूर्वफलादग्रिमफलमधिकंहीनमितिफलान्तरंगतावृणम् । ऋणफलापचयेपूर्वफलादग्रिमफलंन्यूनंहीनमितिफलान्तरंगतौधनम् । धनफलोपचये पूर्वफलादग्रिमफलमधिकंयुतमितिफलान्तरंगतौधनम् । ऋणफलापचयस्तु मकरादितःप्राक्त्रिभे । धनफलोपचयस्तुतुलादितःप्राक्त्रिभइतिकर्कादिकेन्द्रेगतिफलंधनम् । धनफलापचयेपूर्वफलादग्रिमंफलंन्यूनंहीनमितिफलान्तरंगतावृ-

१ दोर्ज्यान्तर अर्थात् भुजज्यान्तर । केन्द्रज्या साधनकालके समय ३१ श्लोकमें जिसको गत और गम्यज्यापिण्डका अन्तर कहा गया है ॥

णम् । धनफलापचयस्तुकर्कादितःप्राक्त्रिभऋणफलोपचयस्तुमेषादितःप्राक्त्रिभङ्तिमकरादिकेन्द्रेगतिफलमृणंसिद्धम् ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

भा० टी०-शेष मन्द संस्कारके स्थानमें दोर्ज्यान्तरको भुक्तिद्वारा गुण करके २२५ से भागकरे । भागफलको मान्दस्फुट परिधिसे गुणकरके ३६० द्वारा भागकरनेपर कलादिफल होता है । कर्कटादिकेन्द्र भुक्तिमें धन और मकरादिकेन्द्रमें वियोग करनेपर मन्दगति होगी ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

अथश्लोकाभ्यांस्पष्टगतिसाधनमाह--

मंदस्फुटीकृतांभुक्तिंप्रोज्झ्यशीघ्रोच्चभुक्तितः ॥
तच्छेषंविवरेणाथहन्यात्रिज्यान्त्यकर्णयोः ॥ ५० ॥
चलकर्णहृतंभुक्तौकर्णेत्रिज्याधिकेधनम् ॥
ऋणमूनेऽधिकेप्रोज्झ्यशेषंवक्रगतिर्भवेत् ॥ ५१ ॥

मन्दस्पष्टांगतिंप्राक्सिद्धांशीघ्रोच्चगतेः पातयित्वातत्रावशिष्टंत्रिज्यान्त्यकर्णयोस्त्रिराशिज्याद्वितीयशीघ्रकर्णयोर्ग्रन्थान्तरैकवाक्यतार्थत्रिज्याशब्देनद्वितीयशीघ्रफलकोटिज्याग्राह्येतिध्येयम् । अन्तरेणगुणयेत् । तत्रयत्सिद्धंतच्छीघ्रकर्णेनद्वितीयेन भक्तंफलंमन्दस्पष्टगतौ द्वितीयशीघ्रकर्णेत्रिज्याधिकेगृहीतफलकोटिज्यातोऽधिकेसतिहीनेचसतिधनमृणंक्रमेणकार्यंस्पष्टगतिःस्यात् । ननुयदामन्दस्पष्टगतितोगतिशीघ्रफलमधिकंतदामन्दस्पष्टगतौफलमूनंनस्यादितितत्रस्पष्टगतिज्ञानंकथम् । नचैतदसम्भवइतिवाच्यम् । नीचासन्नेग्रहेफलकोटिज्याशीघ्रकर्णान्तराच्छीघ्रकर्णस्यन्यूनत्वात्फलस्यावश्यंमन्दस्पष्टगत्यधिकत्वसम्भवादित्यतआह । अधिकइति । मन्दस्पष्टगतिः । अधिकेफलेपातयित्वाशेषंवक्रगतिर्विपरीतगतिः । पश्चिमगतिःस्यात्तथाचनक्षतिः । अत्रोपपत्तिः । "फलांशखाङ्कान्तरशिञ्जिनीघ्नीद्राक्केन्द्रभुक्तिःश्रुतिहृद्विशोध्या । स्वशीघ्रभुक्तेःस्फुटखेटभुक्तिःशेषंचवक्रारिपरीतशुद्धौ ॥" इतिसिद्धांतशिरोमणौवृद्धवसिष्ठसिद्धान्तोक्तेःसूक्ष्मप्रकारस्तस्योपपत्तिस्तुतट्टीकायांव्यक्ता । तत्रद्राक्केंद्रभुक्त्यर्थंप्रथमार्धमुक्तम् । इयंगतिःफलकोटिज्ययागुण्याकर्णभक्ताफलंस्वशीघ्रोच्चगतेःशोध्यम् । तत्रप्रथममेवसमच्छेदपूर्वकशोधनार्थंशीघ्रोच्चगतेःकर्णोगुणः ।·तत्रापिशीघ्रोच्चगतेः केंद्रग्रहगतियोगरूपत्वात्खण्डद्वयंकेंद्रगतावेवफलहीनंकृतमितिकर्णगुणितकेंद्रगतिफलकोटिज्यागुणितकेंद्रगत्योरंतरंतत्रापिगुणितयोरंतरेऽन्तरेवागुणितेसमत्वाल्लाघवाच्चफलकोटिज्याकर्णांतरेणकेन्द्रगतिर्गुणिताकर्णभक्तेतितच्छेषमित्यादिहृतामित्यंतमुपपन्नम् । अथफलकोटिज्यातुल्यकर्णेमुख्यप्रकारेणगतेर्मंदस्पष्टगतितुल्यतयासिद्धत्वात् । फलाभावःकर्णस्यन्यूनत्वेफलस्यशीघ्रकेंद्र-

गत्यधिकत्वात्तदूनेशीघ्रोच्चगतौशीघ्रकेंद्रगतिनाशादधिकस्यगतिफलरूपस्यमंदस्पष्टगतौहीनत्वंपर्यवसन्नम् । कर्णस्याधिकत्वेपूर्वप्रकारफलस्यशीघ्रकेन्द्रगतितोन्यूनत्वात्तदूनेशीघ्रोच्चगतौयन्न्यूनंतदधिकामन्दस्पष्टगतिः स्पष्टगतिरितिपर्यवसन्नम् । तदत्रशीघ्रोच्चगतिस्थानेशीघ्रकेंद्रगतिग्रहणेनफलंगतिफलमेवोत्पन्नंतंमंदस्पष्टगतौफलकोटिज्यातः कर्णस्याधिकन्यूनत्वक्रमेणधनमृणमित्युपपन्नंकर्णइत्याद्यूनइत्यन्तम् । ऋणफलस्यमन्दस्पष्टगतितोऽधिकत्वेविपरीतशोधनाच्छेषंपश्चिमगतिरेवस्पष्टेतिसर्वमनवद्यम् ॥ ५० ॥ ५१ ॥

भा०टी०-मन्द स्पष्टगति शीघ्र भुक्तिसे अलग करके त्रिज्या और दूसरे शीघ्रकर्णके अन्तरसे गुणकरे । गुणफलको दूसरे शीघ्रकर्णसे भाग करनेपर लब्धफल मन्द स्पष्ट भुक्तिमें, दूसरा शीघ्रकर्ण त्रिज्यासे अधिक होनेपर योग और नहीं तो वियोग करनेसे स्पष्टगति होगी । वियोगफल ऋण होनेसे वक्रगति होता है ॥ ५० ॥ ५१ ॥

अथवक्रगत्युपपत्तिमाह-

दूरस्थिताःस्वशीघ्रोच्चाद्ग्रहःशिथिलरश्मिभिः ॥
सव्येतराकृष्टतनुर्भवेद्वक्रगतिस्तदा ॥ ५२ ॥

स्वशीघ्रोच्चाद्दूरस्थितस्त्रिभाधिकान्तरितोग्रहोभौमादिकःशिथिलरश्मिभिःशीघ्रोच्चदेवताहस्तस्थितग्रहबिम्बप्रोतरज्जुभिःसव्येतराकृष्टतनुर्देवतायाः सव्येतरेवामभागेतरेआकर्षितातनुःशरीरंबिम्बरूपंयस्यासौयदातदावक्रगतिःस्यात् । अयंभावः । त्रिभादूनान्तरितोग्रहोवृत्ताकारसूत्रैराशिथिलैर्दैवतैर्यथाकर्षितुंशक्यते तथात्रिभाधिकान्तरितोग्रहोदैवतैर्वृत्ताकारसूत्रैः शिथिलैराकर्षितुंनशक्यतेऽतोऽल्पधनंर्णफलस्थानेग्रहोवक्रीभवति । आकर्षणोत्कर्षाभावेनवृत्तमार्गेवस्तुनोनीचगामित्वसंभवादिति ॥ ५२ ॥

भा०टी०-अपने शीघ्रोच्चसे दूर रहकर ग्रह शिथिलरश्मिसे अर्थात् स्वल्पबलसे दाहिने और बांये खिंचते हैं, तिस्से वक्रगति होती है ॥ ५२ ॥

अथयत्केंद्रांशेषुगतिफलमृणंमन्दस्पष्टगतितुल्यंभवतितान्वक्रारंभभागांस्तदंतभागांश्चविनागतिसाधनप्रकारंग्रहवक्रतदन्तज्ञानार्थंश्लोकाभ्यामाह-

कृतर्तुचन्द्रैर्वेदेन्द्रैःशून्यत्र्येकैर्गुणाष्टिभिः ॥
शररुद्रैश्चतुर्थेषुकेन्द्रांशैर्भूसुतादयः ॥ ५३ ॥
भवन्तिवक्रिणस्तैस्तुस्वैःस्वैश्चक्राद्विशोधितैः ॥
अवशिष्टांशतुल्यैःस्वैःकेन्द्रैरुज्झन्तिवक्रताम् ॥ ५४ ॥

---

१ त्रिज्याके स्थानमें दूसरी शीघ्र-फलकोटिज्याके ग्रहण करनेको रंगनाथकी सम्मति है ॥

भौमाद्याग्रहाश्चतुर्थकर्मसुकेन्द्रांशैःशीघ्रकेन्द्रांशैः कृततुर्चन्द्रैरित्याद्युक्तरूपैः क्रमेणवक्रिणोभवन्ति । स्वकीयैः स्वकीयैस्तैःकेन्द्रांशैरुक्ततुल्यैश्चक्राद्द्वादशराशिभागेभ्यः षष्टियुतशतत्रयेभ्योविशोधितैर्हीनैरवशेषसमानैः स्वकीयैश्चतुर्थकेन्द्रांशैः । तुकारःक्रमार्थे । भौमादयोवक्रत्वंत्यजन्ति । परिवर्तवारद्वयंभुजतुल्यत्वेननीचासन्नेमन्दस्पष्टगतितुल्यगतिफलस्यसम्भवादिति ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

भा० टी०-शेषशीघ्रकेन्द्र मं. १६४, बु. १४४, बृ. १३०, शु. १६३ और शनि ११५ अंश होनेपर वक्रगति प्रारम्भ होती है ॥ ५३ ॥ शेषशीघ्रकेन्द्र (चक्रसे ऊपर कहे अंक शोधन करनेपर अर्थात्) मं. १९६ बु. २१६, बृ. २३०, शु. १९७, श २४५ अंश होनेपर वक्रको त्याग करता है ॥ ५४ ॥

अथवक्रान्तभागानामतुल्यत्वेकारणान्तरमप्याह–

महत्त्वाच्छीघ्रपरिधेः सप्तमेभृगुभूसुतौ ॥
अष्टमेजीवशशिजौनवमेतुशनैश्चरः ॥ ५५ ॥

शीघ्रकेन्द्रस्यसप्तमेराशौशुक्रभौमौवक्रत्वंत्यजतः । अष्टमेराशौगुरुबुधौवक्रत्यजनार्हौ । अत्रशुक्रगुर्वोःपूर्वोद्देशइतरापेक्षयाभ्यर्हितत्वज्ञापकः । नवमेराशौशनिर्वक्रत्वंत्यजति । तुरेवार्थे । तेनशनिरेवतत्रवक्रत्वंत्यजतिनान्ये । अत्रकारणमाह । महत्त्वादिति । अन्येषांशीघ्रपरिधेः प्रागुक्तस्यमहत्त्वाच्छनिशीघ्रपरिधेरधिकत्वात् । तथाचपरिध्यधिकत्वेनपूर्वमेववक्रत्यजनमतएव भौमशुक्रयोर्बुधगुरुभ्यांप्रथमोद्देशः । शनेस्तुसुतरांबुधगुर्वोःशनितः पूर्वोद्देशः भृगुभूसुतौजीवशशिजावित्यत्रपरिध्यधिकत्वेनशुक्रगुर्वोः प्रथमंकेवलमुद्देशोन भागानामल्पत्वक्रमइतिभावः । ननुपरिध्यधिकत्वेपूर्वपूर्वराशौवक्रत्यजने कोपपत्तिरितिचेच्छृणु । शून्यगतिसम्बद्धशीघ्रकर्णात्फलांशखाङ्कान्तरेत्यादेर्विलोमविधिनाशीघ्रोच्चगतेः फलकोटिज्यास्याःफलज्यास्यात्रिज्याभ्यस्तंभुजफलंचलकर्णविभाजितमित्यस्यविलोमविधिनाभुजफलमस्मात्तद्गुणे भुजकोटिज्येभगणांशविभाजिते इत्यस्यविलोमप्रकारेणभुजांशज्ञानार्थंभौमादीनांभुजज्याउत्तरोत्तरमधिकाः शीघ्रपरिधिभ्योयथोत्तरमपचयवद्योहरेभ्योलब्धत्वाद्धाराधिकन्यूनत्वाभ्यांफलयोर्न्यूनाधिकत्वनिश्चयात् । तासांचापानिभुजभागायथोत्तरमधिकावक्रारंभेतदन्तेचतुल्याअतएवतृतीयपदेवक्रान्तत्वाद्भुजभागाः षड्युतायथोत्तरमधिकंशीघ्रकेन्द्रंतेषांवक्रान्तेभवति । वक्रारम्भस्याद्वितीयपदेसम्भवाद्भुजभागहीनाःषड्राशयस्तेषांवक्रारम्भेयथापचितंकेन्द्रंभवति । तदुक्तरीत्याभौमशुक्रयोःषष्ठराशौबुधगुर्वोःपञ्चमराशौशनेश्चतुर्थराशावितिज्ञेयम् । इदंभगवताविनावक्रशोधनमापाततः शीघ्रकेन्द्रराशिज्ञानाद्वक्रान्तज्ञानंलोकानुकम्पार्थमनतिप्रयोजनमुक्तमितिध्येयम् ॥ ५५ ॥

भा॰टी॰-शीघ्रपरिधिका अधिकार होनेसे शुक्र और मंगल केन्द्रकी सातवीं राशिमेंही और बृहस्पति बुध अष्टममें और शनि नवम राशिमें वक्रका त्याग करता है ॥ ५५ ॥

अथचन्द्रादिग्रहाणांविक्षेपसाधनंश्लोकाभ्यामाह-

कुजार्किगुरुपातानांग्रहवच्छीघ्रजंफलम् ॥
वामंतृतीयकंमान्दंबुधभार्गवयोःफलम् ॥ ५६ ॥
स्वपातोनाद्ग्रहाज्जीवाशीघ्राद्भृगुजसौम्ययोः ॥
विक्षेपघ्नान्त्यकर्णाप्ताविक्षेपस्त्रिज्ययाविधोः ॥ ५७ ॥

भौमशनिगुरूणांयेपातामध्याधिकारावगतास्तेषांशीघ्रजंफलंस्वग्रहसम्बन्धिच-तुर्थकर्म्मस्थशीघ्रफलंपूर्व्वसिद्धंग्रहवद्ग्रहेयथासंस्कृतंतथासंस्कार्यम् । ग्रहशीघ्रफलं ग्रहेचेद्युतंतदातत्पातेतदेव फलंयोज्यंचेद्धीनंतदाहीनंकार्यमित्यर्थः । बुधशुक्रयोस्तृतीयकंतृतीयकर्मसम्बन्धिमान्दंफलंतत्पातयोर्विपरीतं संस्कार्यं बुध शुक्रयोर्मन्द फलंधनमृणंचेचत्पातयोस्तदेवफलमृणधनंक्रमेणकार्यमित्यर्थः । अनुक्तत्वाच्चन्द्रस्ययथागतएवपातोज्ञेयः । स्पष्टग्रहात्स्वस्य फलसंस्कृतोयः पातस्तेनहीनाद्भुजज्या । बुधशुक्रयोर्विशेषमाह । शीघ्रादिति । शुक्रबुधयोः शीघ्रोच्चात्पातेनहीनाद्भुजज्यानपातोनबुधशुक्राभ्यांभुजज्या । विशेषस्यसामान्यबाधकत्वात् । अर्थात्पूर्व्वोक्तंचन्द्रभौमगुरुशनीनांसिद्धम् । मध्याधिकारोक्तस्वमध्यमविक्षेपकलाभिर्गुण्याचतुर्थकर्म्मणियः शीघ्रकर्णस्तेनभक्ताफलं ग्रहाणांविक्षेपकलाः स्फुटाभवन्ति । ननुचन्द्रस्यशीघ्रकर्णासम्भवात्तत्पातोन तद्भुजज्याखभगुणिताकेनभाज्येत्यतआह । त्रिज्ययेति । चन्द्रस्यविक्षेपसाधने तादृशीभुजज्यात्रिज्ययाभाज्येत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । यथाविषुवद्वृत्तात्क्रान्ति वृत्तयाम्योत्तरभागौयदन्तरेणयाम्योत्तरसूत्रे साध्रुवाभिमुखीक्रान्तिस्तथाक्रान्तिवृत्ताद्विक्षेपवृत्तभागौयदन्तरेणयाम्योत्तरसूत्रेसाविक्षेपः कदम्बाभिमुखः । तथाहि । विक्षेपवृत्तानिग्रहबिंबाधिष्ठितानिसूर्यव्यतिरिक्तग्रहाणांषण्णांस्वस्वगोले भिन्नानिसूर्य्यस्यानित्यंक्रांतिवृत्तस्थत्वमेवतानिक्रांन्तिवृत्तेस्वस्वगत्याप्रोतान्येवगच्छन्ति तत्रविक्षेपक्रान्तिवृत्तसम्पातेपातस्थाने तत्षड्भान्तरप्रदेशेचस्थिते ग्रहबिम्बेवृत्तप्रदेशैक्यादन्तराभावेनग्रहविक्षेपाभावः । यथातस्माद्ग्रहबिम्बंगच्छतितथाग्रहबिम्बक्रान्तिवृत्तस्थचिह्नयोर्याम्यमुत्तरंवान्तरं क्रांतिवृत्ताद्ग्रहस्यभवति तदेवविक्षेपसञ्ज्ञम् । सचपातात्त्रिभान्तरेग्रहे मध्याधिकारोक्तः । अन्तरालेपात स्थानाद्ग्रहचिह्नंक्रान्तिवृत्ते यदन्तरेण तदन्तरं राश्याद्यात्मकंपातोनग्रहरूपंतद्भुजज्ययानुपातः । त्रिज्याभुजज्ययापरमविक्षेपस्तदेष्टयाभुजज्ययाकइति । एवंचन्द्रस्यैवत्रिज्याव्यासार्धगोलेपरमशरस्यगणितागतपातस्यचलक्षितत्वात ।

अन्येषांतुपरमशराःशीघ्रोच्चदेवताकृष्टग्रहविम्बाधिष्ठितकल्पितवृत्तेशीघ्रकर्णव्यासार्द्धेलक्षिताः । कथमन्यथाशीघ्रफलसंस्कारेणग्रहस्यस्पष्टत्वंयुक्तम् । ग्रहबिम्बस्यतत्स्थत्वेतत्पातस्यापितत्स्थत्वंयुक्तम् । ग्रहबिम्बाधिष्ठितवृत्तेग्रहभोगस्यमन्दस्पष्टत्वेनगणितागतपातान्मन्दस्पष्टाच्छरसाधनमुपपन्नम् । तदुक्तं सिद्धान्तशिरोमणौ । "मन्दस्फुटोद्राक्प्रतिमण्डलेहिग्रहोभ्रमत्यत्रचतस्यपातः ॥ पातेनयुक्ताद्गणितागतेनमन्दस्फुटात्खेचरतःशरोऽस्मात ॥ " इति । तत्रस्पष्टाच्छरसाधनार्थंशीघ्रफलंपातेसंस्कृतंशीघ्रफलव्यस्तसंस्कृतस्पष्टग्रहस्य मन्दस्पष्टत्वाद्यथोक्तसंस्कृतपातोनेस्पष्टग्रहेपातोनमन्दस्फुटग्रहस्यासिद्धे। अथबुधशुक्रपातभगणौवास्तवौनोक्तौ । तौतुशीघ्रकेन्द्रभगणाधिकावतोगणितागतपातयोर्मध्यग्रहोनशीघ्रोच्चरूपशीघ्रकेन्द्रयुतयोर्द्वादशराशिशुद्धयोःपातत्वम् । तत्रपूर्वपातस्यद्वादशशुद्धत्वाच्छीघ्रकेन्द्रंचक्रशुद्धंयोज्यमतो लाघवाद्गणितागतपातस्यशीघ्रोच्चोनमध्यग्रहरूपंकेन्द्रंयोज्यमयं पातोमन्दस्पष्टे मन्दफलसंस्कृतमध्यरूपेहीनइतिग्रहयोर्मध्ययोर्नाशाद्यथागतमन्दफलसंस्कृतं शीघ्रोच्चंपातोनमितिसिद्धम् । तत्रापिमन्दफलंपातेव्यस्तंकृत्वातदूनंशीघ्रोच्चंकृतंसंस्कृतपातपंक्त्यांसंस्कृतपातयोर्युक्तत्वात् । अथैतदानीतविक्षेपःकर्णव्यासार्धवृत्तेनत्रिज्यावृत्तेस्फुटग्रहस्थानअतःकर्णाग्रेऽयंपूर्वानुपातानीतविक्षेपस्तदात्रिज्याग्रेकइत्यनुपातेनत्रिज्यागुणःकर्णोहरःपूर्वं त्रिज्याहरइतित्रिज्ययोर्नाशाद्भुजज्यापरमविक्षेपगुणिताशीघ्रकर्णभक्तेतिसर्व्वमुक्तमुपपन्नम् ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

भा०टी०–मंगल शनि और बृहस्पतिके चतुर्थ संस्कारगत शीघ्रफल पहले ग्रहमें जिसप्रकार संस्कृत हुए हैं । वैसेही इन फलोंको फिर इनहींके पातोंसे संस्कारित करे। बुध और शुक्रके कालमें तीसरा मान्दफल जिस भावसे संस्कारको प्राप्त हुआ है, तिसके विपरीतभावसे उक्तफल तिनके पातोंमें संस्कार करे । अर्थात मान्दफल ग्रहमें योग करनाहो तो वियोग करे, और वियोग करनाहो तो योगकरे। चन्द्र, मंगल, शनि, और बृहस्पतिके स्थानमें स्फुटसे उसके स्पष्टपात अलगकरके शुक्र और बुधके स्थानमें शीघ्रसे स्फुटपात हीन करके भुजज्या स्थिर करे। भुजज्याको परमाविक्षेप (१ अध्याय ७० श्लोक) से गुणकरके शेष शीघ्रकर्णके अनुसार भाग करनेपर विक्षेप-स्पष्ट होगा । चंद्रमाके पक्षमें त्रिज्यासे भाग करनेपरही विक्षेप-स्पष्ट होजायगा ॥ ५६ ॥ ५७ ॥

अथदिनरात्रिमानज्ञानार्थंचरानयनंविवक्षुःप्रथमंतदुपयुक्तांस्पष्टक्रान्तिमाह–

विक्षेपापक्रमैकत्वेक्रान्तिर्विक्षेपसंयुता ॥
दिग्भेदेवियुतास्पष्टाभास्करस्ययथागता ॥ ५८ ॥

यस्यग्रहस्यस्पष्टक्रान्तिरभीष्टातस्यग्रहस्यायनांशसंस्कृतस्यभुजज्यातः परमापक्रमज्येत्यादिनाक्रान्तिरयनांशसंस्कृतग्रहगोलदिक्काज्ञेया । तस्यविक्षेपो-

ऽपिपूर्वोक्तप्रकारेणपातोनगोलदिक्कोज्ञेयः । गोलस्तुमेषादिषङ्कमुत्तरस्तुलादि-षट्कंदक्षिणः । अथशरक्रांत्योरेकदिक्त्वेनक्रांतिःकलाद्याकलात्मकविक्षेपेणयुता तयोर्दिगन्यत्वेक्रान्तिर्विक्षेपेणवियुतान्तरिताशेषदिक्कास्पष्टाक्रान्तिःस्यात् । ननु-सूर्यस्यविक्षेपाभावात्कथंस्पष्टाक्रान्तिर्ज्ञेयेत्यतआह । भास्करस्येति । सूर्य्य-स्ययथागतापूर्वागताक्रान्तिरेवस्पष्टाक्रान्तिः । अत्रोपपत्तिः । विषुवद्वृत्ता-द्ग्रहबिम्बकेन्द्रपर्यन्तंयाम्युत्तरंवान्तरंस्पष्टक्रान्तिरितितयोरेकदिक्त्वेतद्योगतुल्यम-न्तरंभिन्नदिक्त्वेतदन्तरमितमन्तरमिति । अत्रशरस्यक्रान्तिसंस्कारयोग्यत्वसम्पा-दिकाक्रियालोकश्रमभयात्स्वल्पान्तरत्वाच्चोपेक्षिताभगवताकृपावता । अन्यथाशर-स्यध्रुवाभिमुखत्वेभगवदुक्तमायनदृक्कर्मकथमव्याहतंस्यादित्यलम् ॥ ५८ ॥

भा०टी०-ग्रहका विक्षेप और क्रान्ति एक दिशामें गत हों तो मध्य क्रान्तिमें विक्षेप मिलानेसे और अलग किसी दिशामें हों तो वियोग करनेसे स्पष्टक्रान्ति होगी। सूर्यकी मध्य क्रान्तिही स्पष्ट क्रान्ति है ॥ ५८ ॥

अथदिनरात्रिमानज्ञानार्थमहोरात्रासून्साधयति-

ग्रहोदयप्राणहताखखाष्टैकोद्धृतागतिः ॥
चक्रासवोलब्धयुताःस्वाहोरात्रासवः स्मृताः॥ ५९ ॥

ग्रहस्यऽयनांशसंस्कृतराशेर्व्वक्ष्यमाणनिरक्षोदयासवस्तैर्गुणितानिजस्फुटगतिः कलाद्याष्टादशशतभक्ताफलेनयुताश्चक्रासवः षष्टिघटिकानामसवःषट्शतयुतैक-विंशतिसहस्रमिताःस्वस्वग्रहस्याहोरात्रासवःकालतत्त्वज्ञैःकथिताः । अत्रोपपत्तिः-ग्रहः पूर्वगत्यालम्बितःप्रवहेणगतिभोगकालेनभचक्रपरिवर्तानन्तरमुदेत्यतोभचक्रप-रिवर्त्तकालःषष्टिघटिकासुमितोग्रहगतिकलासम्बद्धास्वात्मककालेनाधिकोग्रहाहोरा त्रमस्वात्मकंनाक्षत्रप्रमाणेनभवति । तत्रैकराशिकलाभिर्ग्रहसम्बद्धराश्युदयप्रा-णास्तदागतिकलाभिः कइत्यनुपातेनगत्यसवइत्युपपन्नंग्रहोदयेत्यादि । अने-नैवश्लोकेनग्रहाणामुदयान्तरकर्मास्तीत्युक्तंभगवता । तथाहि । अनुपाता-नीतमध्यग्रहाणांनियताहोरात्रमानान्तरकालेसिद्धत्वान्नमध्यरात्रकालेग्रहाणांसि-द्धिः । रविमध्यगत्यसूनांप्रतिराशौभिन्नत्वेनमध्यमसूर्याहोरात्रमानस्यनियतत्वा-भावादतस्त्रैराशिकावगतग्रहाअनियतमध्यार्काहोरात्रमानान्तरेणार्धरात्रे यत्सं-स्कारेणभवन्तितदेवोदयान्तरंतत्साधनंभगवतास्वल्पान्तरत्वादुपेक्षितम् । कथ-मन्यथागतिकलासूनांसमत्वमुपेक्ष्यगतिकलानामसवो भगवदुक्ताःसङ्गच्छन्ते । उदयान्तरस्यगतिकलासुभेदोत्पन्नत्वात् ॥ ५९ ॥

---

१ मेषादि छःराशि उत्तर दिशाकी और तुलादि ६ राशि दक्षिण दिशामें हैं।

भा०टी०-सायनग्रह जिस राशिमें हो उस स्पष्ट राशिकी प्राणसंख्या तिसकी स्पष्ट गतिसे गुणकरके, १८०० से भाग करनेपर फल दैनिक प्राणसंख्यामें अर्थात् २१६०० ग्रहका स्पष्टाहोरात्रमान होगा ॥ ५९ ॥

अथचरोपयुक्तांक्रान्तिज्याद्युज्यांचाह-

क्रान्तेःक्रमोत्क्रमज्येद्वेकृत्वातत्रोत्क्रमज्यया ॥
हीनात्रिज्यादिनव्यासदलंतद्दक्षिणोत्तरम् ॥ ६० ॥

स्पष्टक्रान्तेःक्रमोत्क्रमज्येक्रमज्योत्क्रमज्येद्वेअपि प्रसाध्यतत्रतन्मध्येक्रान्त्युत्क्रमज्ययात्रिज्याहीनादिनव्यासदलमहोरात्रवृत्तस्यव्यासार्धंद्युज्येत्यर्थः । तद्दिनव्यासार्धंदक्षिणोत्तरंदक्षिणगोलउत्तरगोलेचस्यात् । क्रान्तेर्गोलद्वयेऽपिसत्वात् । अपराक्रान्तिज्यैव । अत्रोपपत्तिः । क्रान्त्यंशानांक्रमज्याक्रान्तिज्याभुजो विषुवद्वृत्तानुकाराण्यहोरात्रकृतान्युभयगोलेतदुभयतस्तद्व्यासार्धं द्युज्याकोटिस्त्रिज्याकर्णइतिगोलेप्रत्यक्षम् । त्रिज्यावृत्तउन्मण्डलेयाम्योत्तरवृत्तेवाप्रत्यक्षम् । तत्रभुजकर्णयोर्वर्गान्तरपदंकोटिरितिक्रान्तिज्यावर्गोनात्रिज्यावर्गान्मूलं द्युज्या । तत्रापिभुजोत्क्रमज्ययाहीनात्रिज्याद्युकोटिक्रमज्यास्यादितिवृत्तेप्रत्यक्षदर्शनात्क्रान्त्युत्क्रमज्ययोनात्रिज्याद्युज्यास्यादितिलाघवेनवर्गमूलनिरासेनोक्तंभगवता क्रान्तेरित्यादि ॥ ६० ॥

भा०टी०-क्रांतिसे क्रमज्या और उत्क्रमज्या निश्चय करे। त्रिज्यासे उत्क्रमज्या घटानेपर तिस दिनका व्यास उत्तर और दक्षिणके अनुसार नियत होताहै ॥ ६० ॥

अथचरानयनपूर्वकंदिनरात्रिमानसाधनंश्लोकत्रयेणाह-

क्रान्तिज्याविषुवद्भाघ्नीक्षितिज्याद्वादशोद्धृता ॥
त्रिज्यागुणाहोरात्रार्धकर्णाप्ताचरजासवः ॥ ६१ ॥
तत्कार्मुकमुदक्क्रान्तौधनहानीपृथक्स्थिते ॥
स्वाहोरात्रचतुर्भागेदिनरात्रिदलेस्मृते॥ ६२ ॥
याम्यक्रान्तौविपर्यस्तेद्विगुणेतुदिनक्षपे ॥
विक्षेपयुक्तोनितयाक्रान्त्याभानामपिस्वके ॥ ६३ ॥

क्रांतिज्याविषुवद्दिनीयमध्याह्नेद्वादशांगुलशङ्कोश्छाययागुण्याद्वादशभक्ताफलंकुज्यास्यात् । सात्रिज्ययागुणिताहोरात्रार्धकर्णाप्ताहोरात्रवृत्तस्यार्धकर्णेनव्यासदलेनद्युज्ययाभक्ताफलंचरजाज्याचरज्येत्यर्थः । अस्याश्चरज्यायाधनुरसवश्चरासवोभवन्ति । स्वाहोरात्रचतुर्भागेस्वस्यचरसम्बन्धिनोग्रहस्यप्रागुक्ताहोरात्रासवस्तेषांचतुर्थांशेपृथक्स्थितेस्थानद्वयस्थेउत्तरक्रान्तौ सत्यांचरासूधनहानीयुतहीनौ

कार्यौतौक्रमेणदिनरात्रिदलेदिनार्धरात्र्यर्धेकालविद्भिरुक्ते । दक्षिणक्रान्तौसत्यां विपर्यस्तेदिनरात्रिदलेयत्रहीनंतद्दिनार्धयत्रयुतंतद्रात्र्यर्धमित्यर्थः । तुकारात्तेदिनरात्र्यर्धेद्विगुणेदिनक्षपे दिनमानरात्रिमानेग्रहस्यस्तः । उक्तरीत्या नक्षत्राणामपिदिनरात्रिमानेसाध्येइत्याह । विक्षेपेत्यादि । नक्षत्रध्रुवाणामानीतयाक्रान्त्यानक्षत्रविक्षेपेणैकभिन्नादिक्क्रमेणयुक्तयान्तरितयोक्तप्रकारेणसिद्धयास्वकेनक्षत्रंदिनरात्रिमानेसाध्येइत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । द्वादशांगुलशंकुःकोटिःपलभाभुजोऽक्षकर्णःकर्णःक्रान्तिज्याकोटिःकुज्याभुजोऽग्राकर्णइत्यक्षक्षेत्रद्वयं प्रसिद्धम् । तत्रद्वादशकोटौपलभाभुजःक्रान्तिज्याकोटौकोभुजइत्यनुपातेनकुज्या । तत्स्वरूपंतु निरक्षदेशक्षितिजस्वदेशक्षितिजान्तरालस्थिताहोरात्रवृत्तप्रदेशस्यद्युज्याप्रमाणेनज्येति त्रिज्याप्रमाणेनतज्ज्याचरज्येतिद्युज्याप्रमाणेनकुज्यात्रिज्या प्रमाणेनकेत्यनुपातेन । चरज्यातद्धनुश्चरासवोऽहोरात्रवृत्तखण्डप्रदेशेनिरक्षस्वक्षितिजान्तरालउत्तरगोलेस्वक्षितिजस्यनिरक्षक्षितिजादधःस्थत्वान्निरक्षक्षितिजयाम्योत्तरवृत्तान्तरालेऽहोरात्रवृत्तचतुर्थांशत्वादहोरात्रासुचतुर्थांशेचरासवो युतादिनार्धहीनारात्र्यर्धदक्षिणगोलेस्वक्षितिजस्यनिरक्षक्षितिजादूर्ध्वस्थत्वाद्धीनादिनार्धयुतारात्र्यर्धमित्युपपन्नंसर्वक्रान्तिज्येत्यादि ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

भा०टी०-क्रांतिज्या विषुवच्छायासे गुणकरके १२ से भाग करनेपर क्षितिज्या होगी । क्षितिज्याको त्रिज्यासे गुणकरके दिनके व्याससे भागकरके धनु नियत करनेपर चर प्राणसंख्या होगी ॥६१॥ अहोरात्रके चौथे भागको दो स्थानोंमें रखकर कहाहुआ चर प्राण एकमें मिलावै और दूसरेसे घटावै । उत्तर क्रांति होनेपर योगफल दिनार्द्ध और वियोगफल रात्र्यर्द्धमान होगा ॥ ६२ ॥ परंतु दक्षिणक्रांतिमें उलटा अर्थात् वियोगफल दिनार्द्ध और योगफल रात्र्यर्द्ध होता है । इनको दूना करनेसे दिनादिमान होता है । इसप्रकार नक्षत्रोंके विक्षेपसे क्रांतिका निर्णयकरके दिनादिमान निर्णीत होता है ॥ ६३ ॥

अथग्रहस्यनक्षत्रानयनमाह-

भभोगोऽष्टशतीलिप्ताःखाश्विशैलास्तथातिथेः ॥
ग्रहलिप्ताभभोगाप्ताभानिभुक्त्यादिनादिकम् ॥ ६४ ॥

अष्टशतमिताःकलानक्षत्रभोगः । प्रसङ्गात्तिथिभोगमाह । खाश्विशैलाइति । तिथेर्विंशत्यधिकसप्तशतमिताः कलास्तथाभोगइत्यर्थः । यस्य ग्रहस्यनक्षत्रज्ञानमिष्टं तस्यग्रहस्यराशयस्त्रिंशद्गुण्याअंशायोज्यास्तेषष्टिगुणिताःकलायोज्याइतिपरिभाषयाकलानक्षत्रभोगभक्ताःफलंग्रहस्यगतनक्षत्राणिशेषंवर्तमाननक्षत्रस्यगतकलास्तस्मात्तस्यगतदिनाद्यानयनमाह । भुक्त्येति । ग्रहस्यकलात्मिकयागत्याशेषदिनादिकंगतं भागहरणेनसाध्यमेवं शेषोनाद्भोगाद्गतिकलाभागै

नैष्यदिनादिकंसाध्यम् । अत्रोपपत्तिः । भचक्रभोगेनसप्तविंशतिनक्षत्राण्यश्विन्यादीनिग्रहोऽमुनक्त्यतःसप्तविंशतिनक्षत्राणांचक्रकलाः षट्शतयुतैकविंशतिसहस्रमिताभोगस्यतदैकनक्षत्रस्यकइत्यनुपातेनाष्टशतकलाभोगः । एवंतिथेश्चान्द्रमासत्रिंशदंशत्वाच्चान्द्रमासस्यसूर्यचन्द्रान्तरैकभगणसिद्धत्वाच्च। त्रिंशत्तिथीनांचक्रकलाभोगस्तदैकातिथेःकइत्यनुपातेनविंशत्यधिकसप्तशतकलाभोगः । अथाष्टशतकलाभिरकंनक्षत्रंतदाग्रहकलाभिःकिमित्यनुपातेनफलमश्विन्यादीनिग्रहभुक्तानिशेषकलाग्रहाधिष्ठितनक्षत्रस्यगतं भभोगाद्धीनंतस्यैष्यमाभ्यांग्रहगत्यैकंदिनंतदाभीष्टकलाभिः किमित्यनुपातेनतस्यगतैष्यंदिवसाद्यंभवति । एवंचन्द्राद्दिननक्षत्रं ज्ञेयम् ॥ ६४ ॥

भा०टी०-नक्षत्र भोग ८०० कला, तिथिभोग ७२० कला हैं। ग्रहकलाको (स्पष्ट राश्यादि) ८०० से भाग करके लब्ध संख्या, गत नक्षत्र और अवशेषको स्पष्ट गतिसे भाग करनेपर भोग निर्णीत होता है ॥ ६४ ॥

अथप्रसङ्गाद्योगानयनमाह-

रवीन्दुयोगलिप्ताभ्योयोगाभभोगभाजिताः ॥
गतागम्याश्चषष्टिघ्नाभुक्तियोगाप्तनाडिकाः ॥ ६५ ॥

सूर्यचन्द्रयोगस्य राश्यादिकस्यपरिभाषयायाःकलास्ताभ्योयोगाविष्कंभादयो भभोगभाजिताभभोगेनपूर्वोक्तेनविभक्ताभवन्ति । एकैकयोगस्यभभोगमितोभोगःसप्रत्येकंताभ्योऽपनीययन्मितीःशुद्धास्तन्मितायोगागताः । यस्यभोगोनशुध्यतिसवर्तमानइत्यर्थः । कलाभभोगभक्तानतायोगास्तदग्रिमोवर्तमानइतितात्पर्यम्। तस्यशेषंगतंभोगात्पतितमेष्यंताभ्यांघटिकाद्यानयनमाह । गता इति । गता एष्याः । चःसमुच्चये । कलाःषष्टिगुणिताःकार्यास्ताभ्योभुक्तियोगाप्तनाडिका रविचन्द्रकलात्मकगत्योर्योगेनभजनाल्लब्धाघटिकागतैष्याभवंति । अत्रोपपत्तिः। सूर्यचन्द्रयोगमितस्यग्रहस्यनक्षत्राणिविष्कम्भादिसंज्ञानियोगोत्पन्नत्वाद्योगाअतस्तदानयनंपूर्वोक्तवत् । अतएवसूर्यचन्द्रगतियोगतुल्यतद्गत्याषष्टिसावनघटिकास्तदागतैष्यकलाभिः काइत्यनुपातेनगतैष्यघटिकानयनंयुक्तमुक्तम् ॥ ६५ ॥

भा०टी०-सूर्य और चन्द्रमाका स्फुट मिलाय कला करके ८०० से भाग करनेपर लब्धफल गतयोग होगा। अवशिष्टगत और ८०० से वियोग करनेपर गम्य होता है। तिसको ६० से गुणकरके भुक्तियोगद्वारा भागकरनेपर गत और गम्य दण्ड होंगे ॥६५॥

अथप्रसङ्गात्तिथ्यानयनमाह-

अर्कोनचन्द्रलिप्ताभ्यस्तिथयोभोगभाजिताः ॥
गतागम्याश्चषष्टिघ्नानाड्योभुक्त्यंतरोद्धृताः ॥ ६६ ॥

पूर्वार्धव्याख्यानंपूर्वश्लोकपूर्वार्धरीत्याज्ञेयमुत्तरार्धस्पष्टम् । अत्रोपपत्तिः । तिथिभोगकलाभिरेकातिथिस्तदासूर्योनचन्द्रकलाभिः काइत्यनुपातेनफलंगततिथयो वर्त्तमानतिथेर्गतैष्येशेषशेषोनभोगकलेताभ्यां गत्यन्तरकलाभिरनुपातेनगतैष्यघटिकाःपूर्ववत् ॥ ६६ ॥

भा०टी०-चन्द्रमासे सूर्यको वियोगकरके तिथिभोग (७२०) से भागकरनेपर लब्धगत तिथि होती है । अवशिष्ट और ७२० से अवशिष्ट वियोग करनेपर गत और गम्य होते हैं । तिनको ६० से गुणकरके चन्द्ररवि-भुक्त्यन्तरसे भागकरनेपर गत और गम्य दण्ड होंगे ॥ ६६ ॥

अथपश्चांगावशिष्टंकरणानयनंविवक्षुस्तावत्स्थिरकरणान्याह-

ध्रुवाणिशकुनिर्नागंतृतीयंतुचतुष्पदम् ॥
किंस्तुघ्नंतुचतुर्दश्याःकृष्णायाश्चापरार्धतः ॥ ६७ ॥

कृष्णपक्षीयायाश्चतुर्दश्यास्तिथेर्द्वितीयार्धाद्द्वितीयार्धमारभ्येत्यर्थः । चकारएवार्थे तेनान्यतिथेरेतत्तिथिपूर्वार्धस्यचानिरासः । स्थिराणिकरणानि । तान्याह । शकुनिरिति । चतुरङ्घ्रिस्तृतीयमनेनशकुनिनागयोःक्रमेणाद्यद्वितीयत्वंसूचितम् तुकारात्क्रमेणतिथ्यर्धेषुभवन्ति । किंस्तुघ्नंचतुर्थम् । तुरन्तावधिद्योतकःतेनोक्तातिरिक्तंस्थिरकरणंनास्तीतिसूचितम् ॥ ६७ ॥

भा०टी०-शकुनि, नाग, चतुष्पद और किंस्तुघ्न यह चार ध्रुव करण हैं । कृष्णा चतुर्दशीके शेषार्द्धसे क्रमशः भोग करते हैं ॥ ६७ ॥

अथचरकरणान्याह-

बवादीनिततःसप्तचराख्यकरणानिच ॥
मासेऽष्टकृत्वएकैकंकरणानांप्रवर्त्तते॥ ६८ ॥

ततःस्थिरकरणपूर्त्यनन्तरंबवादीनिचरसंज्ञककरणानिसप्तभद्रान्तानिशुक्लप्रतिपद्द्वितीयार्द्धतश्चतुर्थ्यन्तंभवन्तीतिचार्थः। ननुपञ्चम्यादितःकानिकरणानिभवन्तीत्यतआह । मासइति । चरकरणानांबवादीनांसप्तानांमध्यएकैकमेकमेकंकरणंमासेस्थिरकरणकालोनितत्रिंशत्तिथ्यात्मकमासे स्वल्पान्तरान्मासग्रहणम् । अष्टकृत्वोऽष्टवारंप्रवर्ततेप्रकर्षेणतिष्ठतिभवतीत्यर्थः । तथाचपंचम्याद्यर्धादेतानिकरणानिपुनःपुनःपरिभ्रमन्ति । कृष्णचतुर्दश्याद्यार्धपर्यन्तमितिभावः ॥ ६८ ॥

भा० टी०-बवादि सात चर करण क्रमानुसार एक चांद्रमासमें आठवार घूमते हैं ॥ ६८ ॥

ननुस्थिरकरणोक्तावपरार्धतइत्युक्त्यातेषांचतुर्णां तिथ्यर्धभोगेनशुक्लप्रतिपदाद्यर्धपर्यन्तंक्रमेणावस्थानंयुक्तंचरकरणानांतुकेवलोक्त्यातदनन्तरंकृष्णचतुर्दश्याद्यार्धपर्यंतमेकएवपरिभ्रमोऽस्त्वित्यतस्तदुत्तरंकथयन्नन्यदप्याह-

तिथ्यर्द्धभोगंसर्वेषांकरणानांप्रकल्पयेत् ॥
एषास्फुटगतिःप्रोक्तासूर्यादीनांखचारिणाम् ॥ ६९ ॥

सप्तानांचरकरणानांप्रत्येकंतिथ्यन्तश्चासौभोगश्चतंतिथ्यर्धकालमितावस्थानं प्रकल्पयेत् । एकत्रनिर्णीतःशास्त्रार्थोऽपरत्रभवतीतिन्यायात्करणत्वेनैषामप्यवस्थानंतत्तुल्यंकुर्यादित्यर्थः । अतएवतिथ्यर्धकरणंस्मृतमित्युक्त्याचान्द्रमासे त्रिंशत्तिथ्यात्मकेषष्टिकरणानां सन्निवेशाच्चरकरणानामेवपरिभ्रमणेप्रतिमासमनियतातिथिभोगकंकरणंभवतीति तद्वारणकप्रतिमासनियततिथिभोगककरणकसिद्ध्यर्थं चरकरणानामष्टवारपरिभ्रमणोत्तरमवशिष्टतिथ्योश्चतुर्ष्वर्धेषु स्थिरकरणान्युक्तानीतितात्पर्य्यम् । तत्रापिकृष्णचतुर्दश्यपरार्धतस्तत्कल्पनंतदिच्छानियामकंस्वतन्त्रेच्छस्यनियोगानर्हत्वात् । अथाग्रिमग्रन्थासङ्गतित्वनिरासार्थमुक्ताधिकारमुपसंहरति । एषेति । हेमयसूर्य्यादीनांसप्तग्रहाणामेषादृश्येत्यादिकल्पयेदित्यन्तंयावार्तासास्फुटगतिः. स्पष्टगतिः स्पष्टक्रियाज्ञानसम्पादिकाप्रोक्तातुभ्यंमयोक्ता । एतेनस्पष्टाधिकारःपरिपूर्त्तिमाप्तइति सूचितम् ॥ ६९ ॥

भा०टी०-करण आधी तिथिको भोगते हैं । इसप्रकार सूर्यादिग्रहोंके स्फुटगति कहीगई ॥ ६९ ॥

रङ्गनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे ॥
स्पष्टाधिकारः पूर्णोयंतद्गूढार्थप्रकाशके ॥

इति श्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरङ्गनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशकेस्पष्टाधिकारःसंपूर्णः ॥ २ ॥

इति द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

अथ तृतीयोऽध्यायः ।

अथत्रिप्रश्नाधिकारोव्याख्यायते । तत्रविनाप्रश्नंगुरोस्तत्प्रतिपादनेच्छानुदयाद्विनाचतदिच्छांछात्राणांतज्ज्ञानासम्भवात्त्रयाणांदिग्देशकालानांप्रश्नाइतित्रिप्रश्नव्युत्पत्तेस्तद्दिग्ज्ञानंश्लोकचतुष्टयेनाह-

शिलातलेऽम्बुसंशुद्धेवज्रलेपेऽपिवासमे ॥
तत्रशंक्वंगुलैरिष्टैःसमंमण्डलमालिखेत् ॥ १ ॥
तन्मध्येस्थापयेच्छङ्कुंकल्पनाद्वादशांगुलम् ॥

तच्छायाग्रंस्पृशेद्यत्रवृत्तेपूर्वापरार्धयोः ॥ २ ॥
तत्रबिन्दूविधायोभौवृत्तेपूर्वापराभिधौ ॥
तन्मध्येतिमिनारेखाकर्त्तव्यादक्षिणोत्तरा ॥ ३ ॥
याम्योत्तरदिशोर्मध्येतिमिनापूर्वपश्चिमा ॥
दिङ्मध्यमत्स्यैःसंसाध्याविदिशस्तद्वदेवहि ॥ ४ ॥

तत्रदिक्साधनोपक्रमेप्रथममम्बुसंशुद्धेजलवत्समीकृतेशिलाप्रदेशे । अपिवाथवातदभावेऽन्यत्रवज्रलेपेचत्वरादौ घुण्टनादिनासमस्थानेकृतेशङ्कङ्गुलैः शङ्कुस्थाङ्गुलविभागमानगृहीतैरभीष्टसङ्ख्याकाङ्गुलैर्व्यासार्धरूपैर्वृत्तमवक्रमालिखेत्। सर्वतःकेन्द्राद्वृत्तपरिधिरेखातुल्यास्यात्तथेत्यर्थः । ततस्तन्मध्येतस्य केन्द्ररूपमध्येकल्पनयाद्वादशसङ्ख्याकाङ्गुलानितुल्यानियस्मिंस्तंद्वादशविभागाङ्कितमित्यर्थः । शङ्कुंसमतलमस्तकपरिधिकाष्ठदंडंस्थापयेत् । ततःपूर्वापरार्धयोर्दिनस्यप्रथमद्वितीयभागयोस्तच्छायाग्रंस्थापितशङ्कोश्छायान्तप्रदेशो मण्डलपरिधौयस्मिन्विभागेस्पृशेत । दिनस्यप्रथमविभागेऽनुक्षणंछायाह्रासाद्वृत्तेयत्रप्रविशतिदिनस्यापरार्द्धेछायानुक्षणवृद्धेर्वृत्तंयत्रनिर्गच्छतीत्यर्थः । तत्र निर्गमनप्रवेशस्थानयोरुभौद्वौः बिन्दूपूर्वापरसंज्ञौक्रमेणवृत्तेपरिधिरेखायांकृत्वातन्मध्येपूर्वापरबिन्द्वन्तरमध्येतिमिनामत्स्येनरेखाकार्या सादक्षिणोत्तररेखा भवति । मत्स्यस्तुबिन्द्वन्तरालसूत्रमितेनव्यासार्द्धेनबिन्दुद्वयकेन्द्रकल्पनेनवृत्तद्वयंनिष्पाद्यवृत्तद्वयसंयोगाभ्यांवृत्तद्वयपरिधिविभागाभ्यामन्तर्गतं मत्स्याकारंस्थानंभवति । तत्रैकःसंयोगोमुखंबाह्यवृत्तभागसम्मार्जनेनापरसंयोगस्तुपुच्छमितरवृत्तभागद्वयंसम्मार्जनेन । मुखपुच्छावध्यृज्वीरेखादक्षिणोत्तररेखा । तत्राबिन्दोःसव्यंरेखाग्रंदक्षिणादिक् । पश्चिमबिन्दोःसव्यंरेखाग्रमुत्तरादिक् । अनन्तरंपूर्व्ववृत्तंमत्स्यश्चसम्मार्जनीयः । शंकुरपितत्स्थानान्निष्कास्यइतिकेवलादक्षिणोत्तररेखास्थितेतितात्पर्यम् । दक्षिणोत्तरदिशोर्मध्यस्थानेतिमिनादक्षिणोत्तररेखामितेनव्यासार्द्धेनदक्षिणोत्तरस्थानाभ्यांपूर्ववत्प्रत्येकंवृत्तंविधायपूर्ववत्सिद्धेनमत्स्येनेत्यर्थः । पूर्वपश्चिमारेखाकार्या । तत्रपूर्वबिन्दोरासन्नं रेखाग्रं पूर्वा पश्चिमाबिन्दोरासन्नंरेखाग्रंपश्चिमेतिमत्स्यसंमार्जनेनकेवलापूर्वापररेखासिद्धा । अथरेखासंयोगस्थानादिक्साधनोपक्रमोक्तंपूर्ववृत्तमुल्लिखेत्तद्वृत्तपरिधौयत्ररेखालग्नातत्रदिगितितद्वृत्तमध्यस्य दिक्चतुष्टयंवृत्तेसिद्धम् । तद्वत् । यथादक्षिणोत्तराभ्यांपूर्वापरासाधितातत्प्रकारेणेत्यर्थः । एवकारोऽन्यप्रकारनिरासार्थकः । हि निश्चयेन । विदिशकेणदिशोदिशांपूर्वादिसिद्धदिशांयमध्यमत्स्याअव्यवहितदिग्द्वयान्तरोत्पन्नाः

लघवस्तैःसंसाध्याःसम्यक्प्रकारेणसाध्याः रेखावृत्तसंयोगस्थत्वेनज्ञेयाः । अत्रोपपत्तिः । क्षितिजपूर्वापरवृत्तसंयोगौपूर्वापरविभागस्थौ पूर्वापरदिशेतत्र पूर्वापरविभागज्ञानंसूर्योदयास्ताभ्यां तत्रक्षितिजेपूर्वापरवृत्तंकुत्रलग्नमिति ज्ञानं तुविषुवद्वृत्तक्रान्तिवृत्तसम्पातस्थसूर्यस्योदयास्तस्थलज्ञानेन विषुवद्वृत्तस्य पूर्वापरक्षितिजवृत्तसम्पातयोः सम्बद्धत्वात् । अथान्यस्मिन्दिने सूर्यस्योदयास्तावग्रांशान्तरेण याम्योत्तरे भवतइति । सूर्योदयास्तस्थानाभ्यामग्रांशान्तरेणोत्तरयाम्ये पूर्वापरस्थानं भवतीतिक्षितिजस्य महत्त्वाद्दूरत्वाच्चतदानेन पूर्वापरज्ञानमशक्यमतस्तत्सूत्रेण स्वाभीष्टप्रदेशेतज्ज्ञानार्थमभीष्टसमस्थलेक्षितिजानुकारं वृत्तं कृतम् । तत्रापि सूर्योदयास्तसमसूत्रेणस्थलज्ञानस्यदुःशकत्वाच्छायार्थं शंकुःस्थाप्यः । तथापि सूर्योदये छायानन्त्याद्वृत्तपरिधौतदग्रस्पर्शाभावः । परन्तुयथायथासूर्यऊर्ध्वः भवति तथा तथा छायाह्रासाद्यत्रछायावृत्तपरिधौ यदा प्रविशतितत्स्थानात्तात्कालिकोवक्ष्यमाणभुजोव्यस्तोऽर्धज्याकारेण देयस्तदुत्क्रमज्यात्र परिधिप्रदेशेलगतितत्रशंकुस्थानस्य पाश्चमा । छायाग्रस्यपूर्वापरसूत्राद्भुजान्तरेणयाम्योत्तरपतनात्सूर्यापरादिशिछायापतनाच्च । एवंदिनापरार्द्धेसूर्योयथायथाधःसञ्चरतितथातथाछायावृद्धेः शंकुच्छायावृत्तपरिधौयत्रयदानिर्गच्छतितात्कालिको वक्ष्यमाणभुजो व्यस्तोऽर्धज्याकारेण तत्स्थानादेयस्तदुत्क्रमज्यायत्रपरिधिप्रदेशेलगति तत्रशंकुस्थानस्यपूर्वा । तत्सूत्रंपूर्वापरसूत्रम् । इदंशङ्कोरुपलक्षणत्वेनज्ञातंतथाछायोपलक्षणेनापिप्रदेशस्यपूर्वापरसूत्रज्ञानम् । तथाहि । छायाग्रंविशतितत्रापराछायाग्रंनिर्गच्छतितत्रपूर्वा । तत्रापिप्रवेशनिर्गमयोरेककालत्वासम्भवाद्यत्कालिकः प्रवेशस्तत्कालेछायायाःपश्चिमत्वंतत्रवस्तुभूतं तत्कालेनिर्गमनस्यपूर्वत्वासम्भवः । एवंनिर्गमकालेनिर्गमस्थानस्यपूर्वत्वंवस्तुभूतंतत्कालेनिर्गमनस्यपश्चिमत्वासम्भवः । एककालिकसिद्धयर्थमुभयोरेकतरं चिह्नं चाल्यंतात्कालिकभुजयोरन्तरेणतत्रपूर्वचिह्नंभुजान्तरांगुलैरयनदिशिचाल्यम् । पश्चिमचिह्नंवाव्यस्तायनदिशिचाल्यम् । तत्सूत्रं सूत्रमध्यदेशस्य पूर्वापरसूत्रम् । एतन्मध्येस्थापितशङ्कोश्छायाग्रप्रवेशनिर्गमचिह्नाभ्यांयथोक्तरीत्याभुजदानेनसिद्धपूर्वापरसूत्रेणाभिन्नत्वात् । तदुक्तं सिद्धान्तशिरोमणौ- । "तत्कालापमजीवयोस्तुविवराद्भाकर्णमित्याहताल्लम्बज्याप्तनितांगुलैरयनदिश्यैन्द्रीस्फुटाचालिता ॥" इति । तदेतद्भगवता लोकानुकम्पयास्वल्पान्तरत्वादेकतरबिन्दुचालनं नोक्तं सुखार्थंकिञ्चित्स्थूलावेव निर्गमप्रवेशबिन्दुपूर्वापराभिधावुक्तौ । एवञ्चाभीष्टंस्थानं प्रवेशनिर्गमसूत्रमध्ये यथाभवतितथानेनप्रकारेणमण्डलकेन्द्रशंकुस्थापनादिनाभीष्टप्रदेशे पूर्वापरदिशे साध्येइति । तन्मध्येदक्षिणोत्तररेखाबिन्दुद्वयोत्पन्नमध्यमत्स्यरेखैवेति ।

याम्योत्तरमध्येपूर्वापरारेखातद्दिङ्मध्यमत्स्येनेतियाम्योत्तरदिशोरित्यादिसम्यगुक्तम् । ननुपूर्वापरबिंदुभ्यांमत्स्येनयादक्षिणोत्तररेखातदग्राभ्यांमत्स्येन रेखापूर्वापरबिन्दुस्पृष्टैवेतिपूर्वतस्याएवबिन्द्वन्तरत्वेनासिद्धत्वात्पुनः साधनंव्यर्थमन्यथादक्षिणोत्तररेखायाअप्यसङ्गतत्वापत्तेरितिचेत्सत्यम् । दक्षिणोत्तररेखाशुद्ध्यर्थमेव पूर्वापरबिन्दुस्पृष्टरेखायाःपुनः साधनमितिकेचित् । वस्तुतस्तुदक्षिणोत्तर पूर्वापरसूत्रसम्पातरूपाभीष्टस्थानात्केन्द्रात्प्रागुक्तवृत्तस्य वक्ष्यमाणोपयोगित्वेनावश्यकत्वात्तस्यचपूर्वापरबिन्द्वन्तरसूत्राधिकव्यासमूत्रत्वाद्बिन्द्वन्तररेखाया मूलाग्रयोर्वर्धनीयासातत्रवृत्तेपूर्वापररेखाभवति । तस्याबिन्दोरुपर्यधश्चवक्रत्वं कदाचित्स्यादतः प्रथममेवपूर्णरेखासिद्ध्यर्थंबिन्द्वन्तरासिद्धमत्स्यमुखपुच्छगतरेखायाबिन्द्वन्तराधिकत्वेनतदुत्पन्नमत्स्यरेखायाऋज्व्याः सुतरामधिकत्वेनपुनःपूर्वापररेखासाधनंयुक्ततरमितितत्त्वम् । एवमेवाव्यवहितंदिग्द्वयान्तरोत्पन्नलघुमत्स्यैश्चतुर्भिः सूत्रैर्वृत्तेकोणदिशः । तदिदमभीष्टस्थानकेन्द्रमण्डलेदिगष्टकंसिद्धम् ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

भा०टी०-जलकी समान इकसार शिलापर अथवा कैड़े समक्षेत्रमें इष्ट अंगुलके परिमाणका सममण्डल (वृत्त) खेंचे। तिसमें १२ अंगुलके परिमाणका शंकु स्थापन करे तिसकी छायाके अग्रभाग वृत्तको पूर्व या अपराह्णमें जिस स्थानपर स्पर्श करे तहां दो पूर्वापर संज्ञा बिन्दु विधान करे। तिमि[1] से जिनमें दक्षिण व उत्तरकी रेखाको खेंचैं । दक्षिणोत्तरके दो बिन्दुओंको केन्द्रकरके व्यासार्द्धके परिमाणसे वृत्तअंकित करनेपर तिमि होगा। तिससे पूर्व पश्चिम रेखा बनती है । दिक् मध्य मत्स्यसे ईशानादि दिक्को निर्णय करना चाहिये ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथदिक्सूत्रसम्पातरूपाभीष्टस्थानात्तात्कालिकच्छायाग्रस्थानमाह-

चतुरस्रंबहिःकुर्यात्सूत्रैर्मध्याद्विनिर्गतैः ॥
भुजसूत्रांगुलैस्तत्रदत्तैरिष्टप्रभास्मृता ॥ ५ ॥

मध्यादभीष्टस्थानाद्दिग्रेखासम्पातरूपाद्विनिर्गतैर्निःसृतैरष्टदिग्रेखारूपैः । बहिर्दिक्सूत्रसम्पातकेन्द्रवृत्ताद्बहिः । अनेनैववृत्तकरणंपूर्वमनुक्तंद्योतितम् । अन्यथाबहिरित्यस्यानुपपत्तेः । पूर्ववृत्तग्रहणेतुदिग्रेखासम्पातस्यमध्यत्वानुपपत्तेः । चतुरस्रंकोणरेखाधिकसूत्रकर्णद्वयतुल्यंसमचतुर्भुजंकुर्यात् । तथाचतद्दर्शनम् । तत्रचतुरस्रेभुजसूत्रांगुलैर्वक्ष्यमाणभुजमितसूत्रस्यांगुलैर्निर्गमप्रवेशकालिकैर्दत्तैः पूर्वापरसूत्रादर्धज्यावद्दीयमानैस्तत्रवृत्तेयस्मिन्प्रदेशेभुजाग्रंतत्प्रदेशइष्टप्रभानिर्गमप्रवेशान्यरतकालिकच्छायाग्रमुक्तम् । प्रतीतिस्तुदिक्सूत्रसम्पा-

---

[1] दो वृत्तके छेदमें उत्पन्न मत्स्याकार स्थानका नाम तिमि है'

तस्थशङ्कुनाज्ञेया । अत्रोपपत्तिः । वक्ष्यमाणभुजस्यछायाग्रपूर्वापरसूत्रान्तरत्वे-नप्रतिपादितत्वादिष्टछायाग्रमुक्तदिशाज्ञानंसम्यक् । चतुरस्रकरणं वक्ष्यमाणाग्रा-साधकप्राच्यपररेखानुकाररेखायावृत्तान्तस्तद्वहिर्वाऋजुत्वसिद्ध्यर्थामिति ॥ ५ ॥

भा०टी०-छायाके परिमाणसे वृत्त खैंचकर पूर्व पश्चिमकी रेखासे वृत्तके बाहर एक-सम चतुष्कोण कल्पित करे। वृत्तमें छायाके अनुसार भुजं । पूर्वमें या पश्चिममें उत्त-रमें या दक्षिणमें खैंचकर अग्रके सहित केन्द्र संयोग करनेसे इष्ट छायाकी दिक्का निर्णय होजायगा ॥ ५ ॥

अथपूर्वापररेखायाःसंज्ञान्तरमाह-

प्राक्पश्चिमाश्रितारेखाप्रोच्यतेसममण्डलम् ॥
उन्मंडलंचविषुवन्मण्डलंपरिकीर्त्यते ॥ ६ ॥

प्राक्पश्चिमाश्रितापूर्वपश्चिमसम्बद्धासाधितारेखासमवृत्तमुच्यते । सैवरे-खोन्मण्डलंविषुवन्मण्डलम् । चःसमुच्चये । उभयसञ्ज्ञककथ्यते । अत्रो-पपत्तिः । क्षितिजपूर्वापरवृत्तसंयोगौपूर्वापरेतत्सूत्रंपूर्वापरसूत्रमिति । पूर्वापरवृत्त-स्य भूमावूर्ध्वाधरानुकारिवृत्तत्वेनादर्शनाद्रेखाकारतयैवदर्शनाच्चपूर्वापरवृत्तमपि तत्सूत्रम् । पूर्वापरवृत्तस्यसममण्डलत्वेनाभिधानात्तद्रेखासममण्डलसञ्ज्ञो-क्ता । अथस्वनिरक्षदेशक्षितिजवृत्तस्योन्मण्डलाख्यस्यतत्संयोगयोः । संलग्नत्वा-त्तन्मध्यसूत्रत्वेनपूर्वापरसूत्रस्यापिसत्त्वात्पूर्वापरसूत्रमुन्मण्डलसञ्ज्ञम् । एते-नान्यदेशक्षितिजसञ्ज्ञयास्वदेशक्षितिजसंज्ञासुतरां सिद्धेतिपूर्वापरसूत्रस्य क्षिति-जवृत्तसञ्ज्ञाद्योतिता । पूर्वापरस्थानयोः क्षितिजवृत्तस्यसंलग्नत्वादाल्लिखितवृ-क्षस्यक्षितिजानुकारित्वाच्च । एवंनिरक्षदेशपूर्वापरवृत्तंविषुवन्मण्डलाख्यंपूर्वा-परस्थानयोः संलग्नमितितन्मध्यसूत्रत्वेनापिपूर्वापरसूत्रस्यासिद्धत्वात्पूर्वापरसूत्रं विषुवन्मण्डलसंज्ञं क्रांतिवृत्तस्यदृग्वृत्तस्यचलत्वात्कादाचित्कत्वेन पूर्वापरस्थान-संलग्नत्वात्तत्संज्ञानोक्तेतिध्येयम् ॥ ६ ॥

भा०टी०-सममण्डल, उन्मण्डल, या विषुवन्मण्डल पूर्व व पश्चिमकी आश्रित रेखा है ॥ ६ ॥

अथाग्राज्ञानमाह-

रेखाप्राच्यपरासाध्याविषुवद्भाग्रगातथा ॥
इष्टच्छायाविषुवतोर्मध्यमग्राभिधीयते ॥ ७ ॥

तस्मिंश्चतुरस्रेपूर्वापररेखातउत्तरभागे विषुवद्भाग्रगाक्षभाग्रप्रदेशस्थाक्षभाङ्गुला-न्तरितेत्यर्थः । प्राच्यपरारेखापूर्वापररेखानुकारारेखातथासर्वतस्तुल्यान्तरेण यथेष्टच्छायाग्रेरेखाभुजान्तरेणतथाक्षमान्तरेणकार्या । अनन्तरमिष्टच्छाया-

१ शङ्कुग्रच्छायाकी दूरताके परिमाणको भुज कहते हैं।

विषुवतोरिष्टच्छायाग्रेरेखाक्षभाग्रेरेखयोरित्यर्थः । मध्यंचतुरस्रेऽङ्गुलात्मकमन्तरालंसर्वतस्तुल्यम् । अग्राकर्णवृत्ताग्रोच्यते । तत्रोपपत्तिः । भुजस्यकर्णवृत्ताग्रापलभासंस्कारेणाग्रउक्तत्वाद्दक्षिणगोलेपलभाधिकोत्तरभुजसद्भावेन पलभोनो भुजोऽग्रेतिप्राच्यपरसूत्रादुत्तरभागेऽक्षभाग्रेरेखाभुजमध्ये भवतीतिद्वयोरेखयोरन्तरमग्रापलभोनभुजरूपा । एवमुत्तरगोलउत्तरभुजस्यपलभाल्पत्वाद्भुजोनपलभाग्रेति पलभारेखा प्राच्यपरसूत्राद्युत्तरभागस्थाभुजरेखातोऽप्यग्रान्तरेणोत्तरदिशीतिद्वयोरेखयोरन्तरभुजोनपलभारूपंकर्णवृत्ताग्रा । एवंदक्षिणभुजस्यपलभोनाग्रात्वात्पलभायुतोभुजोऽग्रेतिप्राच्यपरसूत्राद्भुजाग्रपलभाग्रेरेखयोः क्रमेणयाम्योत्तरत्वात्तयोरन्तरालपलभाभुजैक्यरूपमग्रापलभायाः शङ्कुतलानुकल्पत्वात्सदोन्तरत्वंछायासम्बन्धाद्युक्तम् । गोलेशङ्कुतलस्यदक्षिणत्वाद्भहापरदिशिच्छायासद्भावाच्च । अतएवप्राच्यतरसूत्राद्दक्षिणभागेदक्षिणंभुजवशादक्षभाग्रेरेखाकल्पनउक्तानुत्पत्त्या सम्यगुत्तरभागे पूर्वापरसूत्रादितिविषुवद्भाग्रगेत्यत्रव्याख्यातम् ॥ ७ ॥

भा०टी०–विषुवच्छायाके परिमाणमें पूर्वपश्चिम रेखासे दूर एक सम रेखा साधन करे। विषुवद्रेखासे इष्टछाया रेखाके अन्तरको अग्रा कहते हैं ॥ ७ ॥

अथप्रसंगाज्ज्ञातच्छायातःकर्णज्ञानंतच्छुद्धिंचाह–

> शङ्कुच्छायाकृतियुतेर्मूलंकर्णोऽस्यवर्गतः ॥
> प्रोज्झ्यशङ्कुकृतिंमूलंछायाशङ्कुर्विपर्ययात् ॥ ८ ॥

द्वादशाङ्गुलशङ्कुच्छाययोर्वर्गयोगात्पदंछायाकर्णः स्यात् । अथास्यशुद्धिरूपं छायासाधनमाह । अस्येति । छायाकर्णस्यवर्गाच्छङ्कुवर्गचतुश्चत्वारिंशदधिकंशतंविशोध्यमूलंछाया । प्रकारान्तरेणछायाकर्णशुद्धिमाह । शङ्कुरिति । विपर्ययाच्छायासाधनवैपरीत्याच्छायाकर्णवर्गाच्छायावर्गविशोध्यमूलमित्यर्थः । शङ्कुर्द्वादशाङ्गुलमितः स्यात् । अत्रोपपत्तिः । द्वादशाङ्गुलशङ्कुःकोटिरक्षभाभुजस्तत्कृत्योर्योगपदंकर्णइत्यक्षकर्णः । कर्णइत्याद्यक्षक्षेत्राद्युक्तरीत्योपपन्नम् । ननुदिक्साधनोत्तरमिष्टप्रभाग्राकर्णसाधनंभगवतासर्व्वज्ञेन किमर्थमुक्तमग्रेऽग्रादीनां स्वतंत्रतयोक्तत्वात् । नचविनागणितश्रममग्राज्ञानार्थमिदंयुक्तमुक्तमितिवाच्यम् । वक्ष्यमाणभुजज्ञानस्याग्रोपजीव्यत्वेनतस्याश्चभुजोपजीव्यत्वेनान्योन्याश्रयात् । गणितज्ञाताग्रायाःपुनः साधनस्यव्यर्थत्वाच्च । नचभुजसूत्राङ्गुलैर्दत्तैरित्यनेनेष्टच्छायावृत्तंज्ञातमितिनकिन्त्वेतदुक्त्या दिक्सूत्रसम्पातस्थशङ्कोर्वृत्तपरिधौछायावृत्तज्ञानात्तत्पूर्वापरसूत्रान्तरेभुजसद्भावाद्विनागणितंभुजोऽपिज्ञात इति नान्योन्या-

भयइतिवाच्यम् । तथापिभगवतःसर्वज्ञस्यनिष्प्रयोजनत्वोक्तेरनुचितत्वात् । विना प्रयोजनंमन्दोक्तेरप्यभावाच्च । नहिदिक्साधनेऽग्राभुजादिकमावश्यकंयेनतदुक्तिर्युक्ता । किंचकर्णसाधनस्यगणितोक्त्यावक्ष्यमाणकर्णसाधनतुल्यत्वेनात्रकथनमनुचितम् । नहिदिक्साधनार्थंभाकर्णमित्याहतादितिसिद्धान्तशिरोमण्युक्तिवदत्रछायाकर्णउपयुक्तोयेनतदुक्तिर्युक्तेतिचतुरस्रमित्यादिश्लोकचतुष्टयमन्येनमन्दबुद्धिनाक्षिप्तंनभगवतोक्तमितिचेन्मैवम् । भुजसाधनोपजीव्याग्रायाएतदुक्तप्रकारेणसिद्धौ दिशः सम्यक्सिद्धाइतिदिक्साधनशुद्ध्यर्थमग्रासाधनम् । प्रकारान्तरेणापिवक्ष्यमाणत्रिज्यावृत्तीयाग्रयात्रिज्यालभ्यतेतदानयागतयाकेत्यनुपातेनसाधितकर्णासंवादेन शुद्धचवगमार्थंकर्णसाधनंचोक्तम् । अनयाग्रयाकर्णस्तदात्रिज्यावृत्तीयाग्रयाकइतिफलस्यत्रिज्यातुल्यस्यानयनार्थंवाकर्णसाधनमितिकेचित् । वस्तुतस्तुमण्डलेछायाप्रवेशनिर्गमस्थानास्थितपूर्वापरबिन्द्वोः प्रत्येकंरेखेतिरेखाद्वयसर्व्वतस्तुल्यान्तरं कार्यंतेनान्तरेणान्यतरोबिन्दुश्चाल्पस्तौपूर्वापरबिन्दूतद्रेखामध्यस्थानस्यपूर्वापर रेखेति । तत्रोभयबिन्दुरेखयोरन्तरांगुलमानंस्वल्पत्वाद्गणयितुमशक्यमतः प्रत्येकरेखेप्राच्यपररेखेप्रकल्प्यतन्मध्यकेन्द्रात्पूर्व्ववृत्तप्रत्येकमितिवृत्तद्वयंकुर्यात् । तत्रस्वस्ववृत्तेस्वस्वप्राच्यपररेखास्पृष्टाकार्याताभ्यांस्वस्वकालिकौभुजौस्वस्ववृत्तेदेयौतदग्रेछायाग्रेरेखेस्वस्ववृत्तेकार्येस्वस्वप्राच्यपरसूत्रात्स्वस्ववृत्तउत्तरभागेऽक्षभांगुलमान्तरेणरेखेकार्येततः स्वस्ववृत्तेस्वस्वतद्रेखयोरन्तरंस्वस्ववृत्तउभयकालिककर्णवृत्ताग्रेबहुत्वेनगणयितुंशक्येतदन्तरंपूर्व्वबिन्द्वोर्याम्योत्तरमन्तरं कर्णवृत्ताग्रासाधनकथनेनानीतंभुजान्तरस्यबिन्द्वन्तरत्वात्तस्यचाग्रान्तरत्वेनफलितत्वात् । विषुवद्दिनेगोलभेदेतुभुजान्तरमग्रायोगइतिबिन्द्वोर्याम्योत्तरमग्रायोगइति । तेनोक्तरीत्याबिन्दुश्चाल्यस्तत्सूत्रंपूर्वापरसूत्रंस्फुटमित्याशयेनभगवताग्रानिरूपितातस्याःशुद्ध्यर्थंकर्णोऽपिसाधितइतितत्त्वम् ॥ ८ ॥

भा०टी०-शंकुच्छायावर्ग और शंकुवर्ग मिलाकर मूल करनेसे छायाकर्ण होता है। कर्णवर्गसे शंकुवर्ग हीन करके मूल करनेसे छाया और तिसके विपरीत अर्थात् कर्णवर्गछाया वर्गहीन करनेपर शंकुकवर्ग होगा ॥ ८ ॥

अथपूर्वाधिकारेक्रान्ताद्यानयनमुक्तंतत्पूर्वाधिमासावगतग्रहात्केवलान्नसाध्यमिति श्लोकाभ्यामाह-

त्रिंशत्कृत्योयुगेभानांचक्रंप्राक्परिलम्बते ॥
तद्गुणाद्भूदिनैर्भक्ताद्द्युगणाद्यदवाप्यते ॥ ९ ॥
तद्दोस्त्रिघ्नादशाप्तांशाविज्ञेयाअयनाभिधाः ॥
तत्संस्कृताद्ग्रहात्क्रान्तिच्छायाचरदलादिकम् ॥ १० ॥

भानांचक्रंराशीनां वृत्तंक्रांतिवृत्तंस्वस्वविक्षेपमितशलाकाग्रप्रोतनक्षत्रगणैर्युक्तमित्यर्थः । युगेमहायुगेप्राक्पूर्वविभागेत्रिंशत्कृत्यस्त्रिंशत्संख्याकाकृतिर्विंशतिःषट्शतमित्यर्थः । परिलम्बतेध्रुवाधारभगोलस्थानात्तद्द्वारमवलम्बते । अत्रपरिलम्बतइत्यनेनभचक्रपूर्णभ्रमणाभावउक्तोऽन्यथाग्रहभगणप्रसंगेनमध्याधिकारएवैतदुक्तंस्यात् । तथाचतद्द्वारमवलम्बनोक्त्यापरावर्त्त्ययथास्थितंभवतीत्यागतंतत्रापिस्वस्थानात्तथैवपश्चिमतोऽप्यवलम्बतइतिसूचितम् । एवञ्चभचक्रंपश्चिमतईश्वरेच्छयाप्रथमतःकतिचिद्भागैश्चलतिततःपरावृत्त्ययथास्थितंभवतिततोऽपितद्भागैः क्रमेणपूर्वतश्चलतिततोऽपिपरावर्त्त्ययथास्थितमित्येकोविलक्षणोभगणः । तेनप्रागित्युपलक्षणम् । पश्चिमावलम्बनानुक्तिस्तुसंवादकालेतदभावात् अत्रत्रिंशत्कृत्वेतिपाठःप्रामादिकः । "युगेषड्शतकृत्वोहिभचक्रंप्राग्विलम्बते ॥" इतिसोमसिद्धान्तविरोधात् । तत्पश्चाच्चलितंचक्रमितिब्रह्मसिद्धान्तोक्तेश्च । अहर्गणात्तद्गुणात्षट्शतगुणिताद्भूदिनैर्युगीयसूर्यसावनदिनैर्भक्ताद्यत्फलंभगणादिकंप्राप्यते तस्यभगणत्यागेनराश्यादिकस्यभुजःकार्यस्तस्माद्दशाप्तांशादशभिर्भजनेनाप्तभागास्त्रिगुणिताअयनसंज्ञकाज्ञेयाः । भुजांशास्त्रिगुणितादशभक्ताःफलमयनांशाइतितात्पर्यार्थः । तत्संस्कृतात्तैरयनांशैर्भचक्रपूर्वापरचलनवशाद्युतहीनाद्ग्रहात्पूर्वापरभचक्रचलनावगमस्त्वयनग्रहस्यषड्भानन्तर्गतांतरगतत्वक्रमेणक्रान्तिच्छायाचरदलादिकंसाध्यम् । नकेवलाद्विशेषोक्तेः । छायावक्ष्यमाणाचरदलंचरंपर्वाधिकारोक्तम् । आदिशब्दादयनवलनमायनदृक्कर्मसंगृह्यते । यद्यपितत्संस्कृताद्ग्रहात्क्रान्तिरित्येववक्तव्यमन्येषामत्रतदुपजीवित्वाद्ग्रहणंव्यर्थ तथापिक्रांतिरित्युक्त्याकेवलक्रांतिज्ञानार्थंतत्संस्कृतग्रहात्क्रांतिःसाध्या । पदार्थांतरोपजीव्यायाः क्रांतेः साधनंतुकेवलादित्यस्यवारणार्थंक्रांतिमात्रंतत्संस्कृतात्साध्यमितिसूचकच्छायाचरदलादिकथनम् । अत्रोपपत्तिः । ईश्वरेच्छयाक्रांतिवृत्तंस्वमार्गेपश्चिमतः सप्तविंशत्यंशैःक्रमोपचितैश्चलितंततःपरावृत्त्यस्वस्थानआगत्यतत्स्थानात् । पूर्वतः सप्तविंशत्यंशैश्चलितम् । तथाचसृष्ट्यादिभूतक्रांतिविषुवद्वृत्तसम्पाताश्रितक्रान्तिवृत्तप्रदेशीरेवत्यासन्नःप्रागानीतग्रहभोगावधिरूपःस्वस्थानात्पूर्वमपरत्रवाक्रांतिवृत्तमार्गेगतः । विषुवद्वृत्तेतुतद्भागस्यपश्चिमभागःपूर्वभागोवागतः सम्पातेतद्वृत्तयोर्याम्योत्तरांतराभावात्क्रान्त्यभावः । पूर्वसम्पातप्रदेशेतुतयोर्याम्योत्तरान्तरत्वात्क्रांतिरुत्पन्नातोयथास्थितग्रहभोगात्क्रांतिरसंगतेतिसम्पातावधिकग्रहभोगात्क्रांतिर्युक्ता । तत्रसम्पातावधिकग्रहभोगज्ञानार्थंपूर्वसम्पातावधिकः पूर्वाधिकारोक्तोग्रहभोगोवर्तमानसम्पातपूर्वसम्पाताश्रितक्रांतिवृत्तप्रदेशयोरन्तरभागैरयनांशाख्यैः पूर्वसम्पातप्रदेशस्यपूर्वपश्चिमावस्थानक्रमेणयुतहीनोभवति ।

क्रान्त्युपजीव्यपदार्थाअपिवर्त्तमानसम्पातादुत्पन्नाइतितत्साधनमपि तत्संस्कृतग्रहात् । अथायनांशज्ञानंतुषट्शतभगणेभ्यःपूर्वानुपातरीत्याहर्गणाद्ग्रहभोगोभगणादिकस्तत्रगतभगणमितंपरपूर्वभचक्रावलम्बनंगतम् । वर्तमानंत्वारम्भेपश्चिमावलम्बनाद्राशिषट्कान्तर्गतेराश्यादिकेपश्चिमावलम्बनमनन्तर्गतेपूर्वावलम्बनम् । तत्रापित्रिभान्तर्गतानन्तर्गतत्वक्रमेणचलनंपरावर्तनंचेतिभुजःसाधितस्ततोनवत्यंशैःसप्तविंशतिभागास्तदाभुजांशैः कइत्यनुपातेन गुणहरौनवभिरपवर्त्यभुजांशास्त्रिगुणितादशभक्ताइतिसर्वमुपपन्नम् ॥ ९ ॥ १० ॥

भा०टी०–भचक्र महायुगमें ६०० वार पूर्वदिशामें परिलम्बमान होता है । उस संख्याको दिनगणसे गुणकरके भूदिन संख्यासे भागकरनेपर लब्ध संख्या भगणादि होंगे। (भगण छोडकर) राश्यादि भुज (जैसा पहले कह आये हैं) करे। भुजको तीनसे गुणकरके और दशसे भागकरनेपर अयन होगा । ग्रहमें अयन संस्कार करके क्रान्तिज्या, चर आदि निर्णयकरे। दोनों विषुवमें यह सरलतासे दृग्गोचर होताहै ॥ ९ ॥ १० ॥

अथोक्तस्यान्तरस्यप्रत्यक्षसिद्धत्वमितिसार्धश्लोकेनाह–

स्फुटंदृक्तुल्यतांगच्छेदयनेविषुवद्वये ॥
प्राक्चक्रंचलितंहीनेछायार्कात्करणागते ॥
अन्तरांशैरथावृत्तपश्चाच्छेषैस्तथाधिके ॥ ११ ॥

अयनेदक्षिणोत्तरायणसन्धौविषुवद्वयेगोलसन्धौचलितंचक्रंदृक्तुल्यतांदृष्टिगोचरतांस्फुटमनायासंगच्छेत् । तत्रप्रत्यक्षतस्तन्मितमन्तरंदृश्यतइत्यर्थः । तथाचसृष्ट्यादिकालेरेवतीयोगतारासन्नावधिमेषतुलाद्योः कर्कमकराद्योर्विषुवायनप्रवृत्तेरिदानींत्वन्यत्रतत्स्वरूपेप्रत्यक्षेइतिक्रान्तिवृत्तंचलितमन्यथातदनुपपत्तेरिति भावः । ननुपूर्वतोऽपरत्रवाचलितमितिकथंज्ञेयमित्यतआह । प्रागिति । छायार्काद्यद्दिनेसूर्यस्यायनदिक्परावर्तनमुदयेप्राच्यपरसूत्रस्थत्वंवातस्मिन्दिनेऽन्यस्मिन्दिनेवामध्याह्नच्छायातोवक्ष्यमाणप्रकारेणसूर्यःसाध्यस्तस्मादित्यर्थः । करणागतेप्रागुक्तप्रकारेणानीतःस्पष्टःसूर्यस्तस्मिन्नित्यर्थः । न्यूनेसति । अन्तरांशैःसूर्ययोरन्तरांशैश्चक्रंक्रांतिवृत्तंप्राक्पूर्वस्मिंश्चलितमितिज्ञेयम् । अथयद्यधिकेसतिशेषैःसूर्ययोरन्तरांशैश्चक्रमावृत्त्यपरिवृत्त्यपश्चात्पश्चिमाभिमुखंतथाचलितमिति ज्ञेयम् । अत्रोपपत्तिः । छायातोवक्ष्यमाणप्रकारेणसूर्योवर्तमानसम्पाताद्गणितागतस्तुरेवतीयोगतारासन्नाद्यावधितोऽतस्तयोरन्तरमयनांशास्तत्रक्रान्तिवृत्तस्य पूर्वचलनेगणितागतार्काच्छायार्कोऽधिकोभवति । पश्चिमचलनेतुन्यूनोभवतीतिसम्यगुपपन्नम् ॥ ११ ॥

भा०टी०–छायागत अर्कसे गणितागत न्यून होनेपर चक्र पूर्वचारी है। अधिक होनेपर पश्चात्गामी अर्थात् पीछे चलनेवाला है। अन्तरांश परिमाणमें क्रान्तिवृत्त चलता है ॥ ११ ॥

अथचराद्युपजीव्यांपलभामाह–

एवंविषुवतिच्छायास्वदेशेयादिनार्धजा ॥
दक्षिणोत्तररेखायांसातत्रविषुवत्प्रभा ॥ १२ ॥

स्वाभीष्टदेशएवंविषुवतीचलितविषुवद्दिनसम्बद्धरवित्यासन्नस्याप्युपचाराद्विषुवत्सञ्ज्ञातद्व्यावर्तकमेवमिति । दिनार्धजामाध्याह्निकीयायन्मितद्वादशांगुलशङ्कोश्छायादक्षिणोत्तररेखायांनिरक्षोत्तरदक्षिणदेशक्रमेणोत्तरस्यां दक्षिणस्यांप्रभायाःदक्षिणोत्तररेखास्तत्वंविनामध्याह्नासम्भवात्सातन्मितातत्रतस्मिन्नभीष्टदेशेविषुवत्प्रभाक्षभाभवति । एतेनद्वादशांगुलशंकुःकोटिःपलभाभुजस्तत्कृत्योर्योगपदं कर्णइत्यक्षकर्णःकर्णइत्यक्षक्षेत्रंवक्ष्यमाणोपयुक्तंप्रदर्शितम् । तदासूर्यस्य विषुवद्वृत्तस्थत्वाद्विषुवत्प्रभेतिसंज्ञोक्ता ॥ १२ ॥

भा०टी०-इसप्रकारसे विषुवदिनके मध्याह्नकी छाया दक्षिणोत्तर रेखामें दिखाई देती है, सोई तहांकी विषुवच्छाया हैं ॥ १२ ॥

अथलम्बाक्षयोरानयनमाह-

शंकुच्छायाहतेत्रिज्येविषुवत्कर्णभाजिते ॥
लम्बाक्षज्येतयोश्चापेलम्बाक्षौदक्षिणौसदा ॥ १३ ॥

त्रिज्येद्विस्थानस्थेशंकुच्छायाहतेएकत्रद्वादशगुणितापरत्रप्रागुक्तया विषुवत्कर्णभाजितोभयत्राक्षकर्णेनभक्ताफलेक्रमेणलम्बज्याक्षज्येतयोर्ज्यर्ययोर्धनुषीक्रमेण लम्बाक्षौसदोभयगोलेदक्षिणदिक्स्थौभवतः । अत्रोपपत्तिः । याम्योत्तरवृत्तेनिरक्षस्वदेशपूर्वापरवृत्तयोर्यदन्तरंतदक्षः । याम्योत्तरवृत्तेदक्षिणक्षितिजप्रदेशाद्विषुवद्वृत्तस्ययदन्तरंतल्लम्बः । उभावूर्ध्वगोलेस्वपूर्वापरवृत्ताद्दक्षिणौतज्ज्ये अक्षलम्बज्येभुजकोटीत्रिज्याकर्णइत्यक्षक्षेत्रादक्षकर्णकर्णेद्वादशपलभेकोटिभुजौतदात्रिज्याकर्णकावित्यनुपाताभ्यांलम्बाक्षज्येतद्धनुषीलम्बाक्षावित्युपपन्नम् ॥ १३ ॥

भा०टी०--विषुव दिनके शंकु (१२) और छायाको त्रिज्या (३४३८) से अलग गुणकरके कर्णसे भागकरनेपर क्रमानुसार लम्बज्या और अक्षज्या होगी तिसका धनु करनेसे लंब और अक्ष होगा ॥ १३ ॥

अथमध्याह्नच्छायातोऽक्षानयनंश्लोकाभ्यामाह-

मध्यच्छायाभुजस्तेनगुणितात्रिभमौर्विका ॥
स्वकर्णाप्ताधनुर्लिप्तानतास्तादक्षिणेभुजे ॥ १४ ॥
उत्तराश्चोत्तरेयाम्यास्ताःसूर्यक्रांतिलिप्तिकाः ॥
दिग्भेदेमिश्रिताःसाम्येविश्लिष्टाश्चाक्षलिप्तिकाः ॥ १५ ॥

अभीष्टदिनेमाध्याह्निकीछायाभुजसंज्ञाज्ञेया । तेनभुजेनत्रिज्यागुणितामध्या-

हृच्छायाकर्णेनभक्ताफलस्यधनुः कलानतानतसञ्ज्ञास्तानतकलादक्षिणेभुजेमध्याह्नच्छायारूपभुजेप्राच्यपरसूत्रमध्याद्दक्षिणदिक्स्थेसति । उत्तरदिक्काउत्तरेभुजे दक्षिणाः । चोविषयव्यवस्थार्थकः । तानतकलाःमर्यक्रांतिकलाःप्रागुक्ताः । दिग्भेदेस्वदिशोर्भिन्नत्वेमिश्रिताःसंयुक्ताः साम्येऽभिन्नदिक्त्वेविश्लिष्टाअन्तरिताः । चो विषयव्यवस्थार्थकः । अक्षकलाभवन्ति । अत्रानावश्यकभुजसञ्ज्ञयाभगवतोपपत्तिरुक्ता । तथाहिद्वादशांगुलशङ्कुकोटौमध्याह्नच्छायाकर्णेवामध्यच्छायाभुजस्तथास्वस्वस्तिकान्मध्याह्नकालेसूर्यस्ययाम्योत्तरवृत्तेयदन्तरेणनतत्वंतानतकलास्तज्ज्यानतांशज्यामध्याह्नोन्नतांशज्यारूपशङ्कौ त्रिज्याकर्णेवाभुजइति मध्याह्नच्छायाकर्णेकर्णेमध्याह्नच्छायाभुजस्तदात्रिज्याकर्णेको भुजइत्यनुपातेननतज्यातद्धनुरत्रकलात्मकत्वान्नतकलास्ताग्रहसंबद्धाइतिछायादिदिग्विपरीतादिक्काः । अथक्रान्त्यंशाक्षांशयोरेकदिक्त्वेयोगेननतांशाइतिदाक्षिणानतकलादक्षिणक्रान्तिकलाभिर्हीनाअक्षांशाभवन्ति । क्रान्त्यंशाक्षांशयोर्भिन्नदिक्त्वेऽन्तरेण नतांशायदिदक्षिणास्तदाक्रान्त्यूनाक्षांशस्यनतत्वादुत्तरक्रान्तियुताअक्षांशाः । यदितूत्तरांस्तदाक्षीनक्रान्तेर्नतत्वान्नतोत्तरक्रान्तिरक्षइतिसम्यगुपपन्नम् । केचित्तु भुजग्रहणादभीष्टकाले प्राच्यपरसूत्राच्छायाग्रं यदन्तरेण याम्यमुत्तरंवाभुजस्तंस्वल्पान्तरान्मध्यच्छायांप्रकल्प्यतस्याःकर्णचानीयोक्तदिशानतालिप्तास्ताअभीष्टक्रान्तिसंस्कृताअक्षांशाभवन्तीत्याहुः ॥ १४ ॥ १५ ॥

भा०टी०–मध्यमाह्नकी छायाही भुज है।तिसको त्रिज्यासे गुणकरके छायाकर्णसे भागकरके धनु निर्णय करनेपर नति होगी। छाया दक्षिणमें हो तो उत्तर नति और उत्तरमें होनेसे दक्षिण नति होती है। यह अलग दिशामें हो तो सूर्यक्रान्तिमें योग करनेसे स्वीय अक्ष होगा। सम दिशामें होनेसे वियोग करना चाहिये ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथाक्षात्पलभानयनमाह–

नाभ्योऽक्षज्याचतद्वर्गंप्रोज्झ्यत्रिज्याकृतेःपदम् ॥
लम्बज्यार्कगुणाक्षज्याविषुवद्भाथलम्बया ॥ १६ ॥

ताभ्योऽक्षकलाभ्योऽक्षज्याभवति । चःसमुच्चये । अक्षज्यावर्गंत्रिज्यावर्गात्त्यक्त्वा शेषान्मूलंलम्बज्या । अनन्तरमक्षज्याद्वादशगुणालम्बयालम्बज्ययागुणनस्यभजनसम्बन्धाद्भक्तेत्यर्थसिद्धम् । अक्षभास्यात् । अत्रोपपत्तिः । अक्षकलानांज्याक्षज्यातस्यात्रिज्याकर्णेभुजत्वात्तद्वर्गोनात्रिज्यावर्गान्मूलंलम्बज्याकोटिः । तयाक्षज्याभुज स्तदाद्वादशकोटौकोभुजइत्यनुपातेनविषुवच्छायेति ॥ १६ ॥

भा०टी०–अक्षज्यावर्ग त्रिज्यावर्गसे अलग करके अन्तरमेंसे लम्बज्या होती है द्वादश गुणित अक्षज्या, लम्बज्यासे भागकरनेपर विषुवद्भा होती है ॥ १६ ॥

अथाक्षज्ञानेननतभागेभ्यःक्रान्तिद्वारासूर्यसाधनंसार्धश्लोकाभ्यामाह-

स्वाक्षार्कनतभागानांदिक्साम्येऽन्तरमन्यथा ॥ १७ ॥
दिग्भेदेऽपक्रमःशेषस्तस्यज्यात्रिज्ययाहता ॥
परमापक्रमज्याप्ताचापंमेषादिगोरविः ॥ १८ ॥
कर्कादौप्रोज्झ्यचक्रार्धात्तुलादौभार्धसंयुतात् ॥
मृगादौप्रोज्झ्यभगणान्मध्याह्नेऽर्कःस्फुटोभवेत् ॥ १९ ॥

स्वदेशाक्षांशेष्टदिनीयमध्याह्नसूर्यनतांशयोर्भागानांबहुत्वात्बहुवचनम् । एकदिक्त्वेन्तरमन्यदिक्त्वेऽन्यथायोगःकार्यः । शेषउक्तसंस्कारसिद्धोऽङ्कः क्रान्तिः स्यात् । तस्यापक्रमस्यज्या त्रिज्यया गुण्यापरमक्रान्तिज्यया प्रागुक्तयाभक्ताफलस्यधनुर्भागादिकंमेषादिगोमेषादिराशित्रितयान्तर्गतोऽर्कःस्यात् । कर्कादित्रयेऽर्केचक्रार्धात्षड्राशितआगतार्कंत्यक्त्वाशेषंमध्याह्नकालेस्फुटोऽर्कःस्यात् । तुलादित्रितयेषड्भयुतादागतार्कात्स्फुटोऽर्कोज्ञेयः । आगतोऽर्कःषड्भयुतःस्फुटोर्कः स्यादित्यर्थः । मकरादित्रयेऽर्केद्वादशराशिभ्यआगतात्यक्त्वाशेषमयनांशसंस्कृतःस्फुटोऽर्कःस्यात् । करणागतज्ञानार्थंव्यस्तायनांशसंस्कृतइत्यर्थसिद्धम् । पूर्वंतत्संस्कृतग्रहात्क्रान्तिःसाध्येत्यर्थस्योक्तेः । अत्रोपपत्तिः । एकदिशिक्रान्त्यक्षयोगान्नतंदक्षिणमतोऽक्षोनंक्रान्तिर्दक्षिणा । भिन्नदिशिक्रान्त्यूनाक्षोनतंदक्षिणमनेनाक्षोहीनःक्रान्तिरुत्तरा । अक्षोनक्रान्तिर्नतंतूत्तरमतोऽक्षयुतंक्रान्तिरुत्तरा । अस्याज्याक्रान्तिरर्क ? ज्या । परमक्रान्तिज्ययात्रिज्याभुजःस्यात्तदानयाकेतीष्टासायनार्कभुजज्यातद्धनुःसायनार्कभुजः । भुजस्यचतुर्षुपदेषुतुल्यत्वात्प्रथमपदेमेषादित्रयेसूर्यस्यैवभुजत्वाद्भुजएवसूर्यः । कर्कादित्रयेद्वितीयपदेषड्भादूनस्यार्कस्यभुजत्वाद्भुजोनषड्भमर्कः । एवंतृतीयपदतुलादित्रयेषड्भेनहीनार्कस्यभुजत्वात्षड्युतोभुजोऽर्कः । चतुर्थपदेमकरादित्रयेसूर्योनभगणस्यभुजत्वाद्भुजोनभगणोऽर्कइतिसर्ववैपरीत्यात्सुगमतरम् ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

भा॰टी॰-निजदेशके अक्ष और सूर्यनतांश एकदिशामें हों तो अन्तर करनेसे, अन्य दिशामें योगकरनेसे अपक्रम होगा। इस अपक्रमकी ज्या, त्रिज्यासे गुणकरके परमापक्रमज्या (१३९७) से भागकरके ज्याकरनेसे मेषादिमें सायन रवि स्पष्ट होगा। कर्कटादिमें चक्रार्ध (६ राशि) से वियोग करनेपर, तुलादि ६ राशिमें योग करनेसे और मकरादिमें १२ राशिसे वियोग करनेपर (सायन) रविस्पष्ट होगा ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथागतस्फुटसूर्यस्यकरणागतस्फुटतुल्यत्वज्ञानमागतस्फुटसूर्यान्मध्यमयकरणागतमध्यमार्कतुल्यत्वेनाविशेषंवक्तुंश्लोकार्धेनाह-

तन्मान्दमसकृद्वामंफलंमध्योदिवाकरः ॥

तस्मादागतस्फुटसूर्यान्मान्दफलंमन्दफलमसकृदनेकवारंवामंव्यस्तं संस्कृतं स्फुटसूर्येऽहर्गणानीतःस्फुटसूर्यःस्यात् । अयमर्थः । स्फुटसूर्यमध्यमंप्रकल्प्य पूर्वमन्दोच्चात्प्रागुक्तरीत्यामन्दफलं धनमृणमानीयस्फुटसूर्यऋणंधनंकार्यमध्यमसूर्यः । अस्मादपिमन्दफलंस्पष्टसूर्येव्यस्तंसंस्कृतंमध्यमोऽस्मादपिमन्दफलंस्पष्टेव्यस्तंमध्यस्तं मध्यमार्कइति यावदविशेषस्तावदसकृत्साध्योऽर्कोमध्योऽहर्गणानीतोभवतीति । तथाचमध्यमार्कात्स्फुटार्कसाधनएकवारंमन्दफलसंस्कारःस्फुटार्कान्मध्यार्कसाधनेत्वनेकवारं मन्दफलव्यस्तसंस्कारइतिविशेषोऽभिहितः । अत्रोपपत्तिः । मध्यमसूर्यादानीतमन्दफलेनसंस्कृतोमध्यःस्फुटोऽर्कोभवति । वातेनैवमन्दफलेनव्यस्तंसंस्कृतोमध्योभवति । अत्रस्फुटार्कान्मध्यार्कसाधनेमध्यमज्ञानासम्भवात्तदानीतमन्दफलज्ञानमशक्यमतः स्फुटसूर्यमध्यमंप्रकल्प्यानीतमन्दफलेनाभिमतासन्नेनस्पष्टोऽर्कोव्यस्तंसंस्कृतोमध्यमासन्नः । अस्मादपिमन्दफलमभिमतासन्नमपिपूर्वस्मात्सूक्ष्ममितियावदविशेषेमध्यार्कसाधितंमन्दफलंभवतीतिनिरवद्यंसर्वमुक्तम् ॥

निरयण रवि स्पष्टसे मान्द्यफल निर्णयकरके विपरीतभावसे असकृत संस्कार करनेसे रविमध्य लाभ होगा। अर्थात् रविस्पष्टको रविमध्यकी समान गिनकर मन्दोच्च संस्कारादिके द्वारा मान्दफल प्राप्त होकर विपरीत संस्कार करनेसे सूर्यका स्थूल होगा । तिसको मध्य ज्ञानकरके मान्द फल फिर कहीहुई रीतिसे रविस्पष्टमें विपरीत भावकरके संस्कार करे।

अथमध्याह्नेछायाकर्णयोरानयनंविवक्षुःप्रथमंतात्कालिकनतांशज्ञानंकथयंस्तद्भुजकोटिज्येकार्येइत्याह-

स्वाक्षार्कापक्रमयुतिर्दिक्साम्येऽन्तरमन्यथा ॥
शेषंनतांशाःसूर्यस्यतद्बाहुज्याचकोटिजा ॥ २० ॥

दिक्साम्यएकदिक्त्वेस्वदेशाक्षांशमध्याह्नकालिकसूर्यक्रान्त्यंशयोर्योगः । अन्यथाअतउक्तादेकदिक्त्वाद्वैपरीत्येभिन्नदिक्त्वादित्यर्थः । अक्षांशक्रान्त्यंशयोरन्तरंकार्यशेषंसंस्कारोत्पन्नंसूर्यस्यमध्याह्नेनतांशास्तेषां नतांशानांभुजरूपाणां ज्याकोटिज्यातदंशानवतिशुद्धाःकोटिस्ततउत्पन्नाज्या । चःसमुच्चयेसाध्या । अत्रोपपत्तिः । याम्योत्तरवृत्तेसूर्यस्यमध्याह्नेस्वस्वस्तिकादनन्तरंनतांशाविषुवद्वृत्तपर्यन्तमक्षांशाः । विषुवद्वृत्तसूर्ययोरन्तरंक्रान्त्यंशाः । अतोदक्षिणक्रान्तौ क्रान्त्यक्षयोगोनतांशाउत्तरक्रान्तौक्रान्त्यूनाक्षोऽक्षोनक्रान्तिर्वादक्षिणोत्तरनतांशास्तेषां ज्याद्दग्भ्यांभुजस्तत्कोटिज्यामहाशंकुःकोटिस्त्रिज्याकर्णइतिच्छायाक्षेत्रेतदंशानांभुजत्वात् ॥ २० ॥

भा०टी०-निजदेशके अक्षांश और सूर्यक्रान्ति एकदिशामें हों तो योग, और विपरीतमें अन्तर करनेसे शेषमाध्याह्निक सूर्यकानतांश हैं तिसकी भुजज्या और कोटिज्या करे ॥ २०॥

अथच्छायाकर्णयोरानयनमाह-

शङ्कुमानाङ्गुलाभ्यस्तेभुजत्रिज्येयथाक्रमम् ॥
कोटिज्ययाविभज्याप्तेछायाकर्णावहर्दले ॥ २१ ॥

भुजत्रिज्येनतांशज्यात्रिज्येइत्यर्थः । शङ्कोःप्रमाणांगुलानिद्वादशतैर्गुणिते कार्ये । उभयत्रकोटिज्ययानतांशोननवत्यंशानांज्ययेत्यर्थः । भक्त्वालब्धे द्वेयथाक्रमंभुजज्यात्रिज्यास्थानीयफलक्रमेणमध्याह्नेछायातत्कर्णौभवतः । अत्रोपपत्तिः । द्वादशांगुलशंकुःकोटिरिष्टच्छायाभुजस्तत्कृत्योर्योगपदंकर्णइतिच्छायाकर्णः कर्णइतिच्छायाक्षेत्रे । महाशंकुकोटौदिग्ज्यात्रिज्येभुजकर्णौतदाद्वादशांगुलशंकुकोटौकावित्यनुपातेनमध्याह्नकालेछायातत्कर्णौभवतः । साधकयोस्तात्कालिकत्वादित्युपपन्नम् ॥ २१ ॥

भा०टी०-शंकुमानांगुलि (१२) से भुजज्या (नतांशको) और त्रिज्याको अलग-अलग गुणकरके कोटिज्यासे विभक्त करनेपर छाया और कर्ण होंगे ॥ २१ ॥

अथभुजसाधनंविवक्षुःप्रथममग्रांकर्णाग्रआनयति-

क्रांतिज्याविषुवत्कर्णगुणाप्ताशंकुजीवया ॥
तर्काग्रास्वेष्टकर्णघ्नीमध्यकर्णोद्धृतास्वका ॥ २२ ॥

सूर्यक्रान्तिज्याअक्षकर्णगुणिताशङ्कुजीवयाशंकुर्द्वादशांगुलस्तद्रूपाज्यातयेत्यर्थ द्वादशभिरितिफलितम् । भक्ताफलंसूर्यस्याग्रा । उपलक्षणाद्ग्रहस्यापि । इयमग्रास्वाभिमतकालिकच्छायाकर्णेनगुणितामध्यकर्णोद्धृताकर्णस्यव्यासस्यमध्यमर्धमितिमध्यकर्णोव्यासार्धत्रिज्यातयेत्यर्थः । पूर्वापरप्रथमचरमजघन्यसमानमध्यमध्यमवीराश्चेतिसूत्रेणमध्यपदस्यपूर्वनिपातः । भक्ताफलंस्वकास्वकर्णाग्रास्यात् । अत्रोपपत्तिः । क्रांतिज्योन्मण्डलेकोटिरक्षितिजेकर्णःकुज्याभुजइत्यक्षक्षेत्रेद्वादशकोटावक्षकर्णः कर्णस्तदाक्रान्तिज्याकोटौकःकर्णइत्यनुपातेनाग्रा । त्रिज्यावृत्तइयंकर्णवृत्तेकेत्यनुपातेनकर्णवृत्ताग्रेत्युपपन्नम् ॥ २२ ॥

भा०टी०-क्रान्तिज्याको अक्षकर्णसे गुणकरके शंकु (१२) से भागकरनेपर सूर्याग्रा होती है । अग्राको इष्टदिवसीय कर्णसे गुणकरके त्रिज्यासे भागकरनेपर स्वकर्णाग्रा होगी ॥ २२ ॥

अथभुजानयनश्लोकाभ्यामाह-

विषुवद्भायुताग्राऽयाम्येस्यादुत्तरोभुजः ॥
विषुवत्यांविशोध्योदग्गोलेस्याद्बाहुरुत्तरः ॥ २३ ॥
विपर्ययाद्भुजोयाम्योभवेत्प्राच्यपरान्तरे ॥
माध्याह्निकोभुजोनित्यंछायामाध्याह्निकीस्मृता ॥ २४ ॥

अर्काग्रामूर्यस्याभीष्टकालिककर्णाग्रायाम्ये दक्षिणगोलेविषुवद्भायुताक्षच्छायया युक्तोत्तरादिक्कोभुजःस्यात् । उत्तरगोलेविषुवत्यांपलभायांकर्णाग्रांविशोध्यन्यूनीकृत्यशेषमुत्तरदिक्कोभुजः स्यात् । ननुकर्णाग्रापलभायांयदानशुद्ध्यतितदाकथंभुजः साध्यइत्यतआह । विपर्ययादिति । अक्षभांकर्णाग्रायांविशोध्यशेषंदक्षिणोभुजः स्यात् । ननुभुजस्ययाम्यत्वमुत्तरत्वंवाकस्मादित्यतआह । प्राच्यपरान्तरइति । पूर्वापरसूत्रादन्तरालप्रदेशेयाम्यउत्तरोवाभुजः स्यादित्यर्थः । ननुतथापिद्दितीयावधेरनुक्तत्वादन्तरस्याप्रसिद्धेः पूर्वापरसूत्रात्कस्यान्तरं भुजइत्याशङ्कायाउत्तरं मध्याह्नच्छायास्वरूपकथनच्छलेनाह । माध्याह्निकइति । मध्याह्नकालिको भुजः सदामाध्याह्निकीमध्याह्नकालिकीछायोक्ता । तथाचछायाग्रंप्राच्यपरसूत्राद्याम्यमुत्तरंवायदन्तरेणसभुजइतिव्यक्तीकृतम् । अत्रोपपत्तिः । शङ्कुमूलंप्राच्यपरसूत्राद्याम्यमुत्तरंवायदन्तरेणसयाम्योत्तरोभुजोग्रहस्य । शङ्कुस्तुग्रहादवलम्बसूत्रंक्षितिजसमसूत्रावधितत्रायंभुजः शंकुतलाग्रयोः संस्कारजः । शंकुतलंतुस्वाहोरात्रवृत्तस्थितोदयास्तसूत्राच्छङ्कुमूलंयदंतरेणतद्दक्षिणम् । अग्रानुपूर्वापरसूत्रादुदयास्तसूत्रावध्यन्तरमुत्तरदक्षिणगोलक्रमेणोत्तरदक्षिणा । तत्र ग्रहापरदिशिषडभान्तरेऽस्माद्व्यक्तमितिशङ्कतलमुत्तरमग्रापिव्यक्तदिक्केति तत्संस्कारोभुजोगोलेप्रत्यक्षयः ।समहाशङ्कोरितिमहाशङ्कोरयंतदाद्वादशाङ्गुलशङ्कोः कइत्यनुपातेनभुजः पूर्वापरसूत्राच्छायाग्रावधि । तत्रशङ्कुतलाग्रेद्वादशाङ्गुलशङ्कोः साधिते तत्संस्कारेणभुजः सएव । तत्राप्यग्रात्पूर्वसाधिताशङ्कुतलंतुद्वादशाङ्गुलशङ्कोः पलभामहाशङ्कुः कोटिः शङ्कुतलंभुजोहृतिः कर्णइत्यक्षक्षेत्रेद्वादशकोटौ पलभाभुजस्तदामहाशङ्कुकोटौकोभुजइत्यनुपातेनशङ्कुतलमानीयमहाशङ्कोरियं द्वादशाङ्गुलशङ्कोः किमित्यनुपातेगुणहरयोस्तुल्यत्वान्नाशेन पलभायाएवावशिष्टत्वात् । सातूत्तरादक्षिणगोलेऽग्रायाउत्तरत्वादेकदिक्त्वेनपलभाग्रयोर्योगउत्तरो भुजः । उत्तरगोलेऽग्रायादक्षिणत्वेनभिन्नदिक्त्वात्पलभाग्रयोरन्तरंभुजस्तत्र पलभायाः शेषमुत्तरोभुजोऽग्रायाः शेषंदक्षिणोभुजः । मध्याह्नेछायायाभुजरूपत्वान्मध्याह्नकालिकोभुजोमध्याह्नच्छायेतिसर्वंयुक्तम् ॥ २३ ॥ २४ ॥

भा०टी०-दक्षिणगोलमें विषुवद्भासे स्वकर्णाग्राका योग और उत्तरमें विषुवद्भासे वियोग करनेपर उत्तर भुज होता है ॥ २३ ॥ विषुवद्भासे वियोग असम्भव होनेपर स्वकर्णाग्रासे वियोग करनेपर दक्षिणभुज होता है। मध्याह्नभुजको मध्यान्हच्छाया कहते हैं ॥ २४ ॥

अथयाम्योत्तरवृत्तस्थच्छायाकर्णमुक्त्वापूर्वापरवृत्तस्थच्छायाकर्णंप्रकारद्वयेनाह—

लम्बाक्षजीवेविषुवच्छायाद्वादशसंगुणे ॥
क्रान्तिज्याप्तेतुतौकर्णौसममण्डलगेरवौ ॥ २५ ॥

लम्बज्याक्षज्येक्रमेणाक्षभाद्वादशाभ्यांगुणिते उभयत्रक्रान्तिज्ययाभक्तेतुकारा-रफलेसमवृत्तस्थेऽर्केतौदृग्योग्यच्छायासम्बद्धौकर्णौभवत उभयत्र छायाकर्णः स्यात् । अत्रोपपत्तिः । स्वमस्तकोपरिपूर्वापरानुकारेणयद्वृत्तंतत्सममण्डलसंज्ञम् । तत्रस्थस्यच्छायाकर्णानयनम् । पलभाभुजेऽक्षकर्णःकर्णस्तदाक्रान्तिज्याभुजेकःकर्ण इतिसमशङ्कुःक्रान्तिज्याभुजेसमशङ्कुःक्रान्तिज्याभुजेसमशङ्कुज्योनतद्वृत्योः क्रमेण-कर्णकोटित्वात्। अस्माच्छङ्कुमानांगुलाभ्यस्तेइत्यादिनात्रिज्याद्वादशगुणितानेनभक्ता तत्र । छेदंलवंचपरिवर्त्यहरस्यशेषःकार्योऽत्रभागहरणेगुणनाविधिश्च । इत्युक्तेः । पलभयात्रिगुण्याक्रान्तिज्याक्षकर्णाभ्यांभक्ता । तत्रत्रिज्याद्वादशगुणिताक्षकर्णभ-क्तालम्बज्यैवसिद्धातोलम्बज्यापलभागुणिताक्रान्तिज्याभक्ताफलं समवृत्तगतच्छा याकर्णः । अथात्रैवपलभाभुजेद्वादशकोटिरक्षज्याभुजेका कोटिरितिलम्बज्याग्र-हणेपलभयोस्तुल्यत्वान्नाशादक्षज्याद्वादशगुणाक्रान्तिज्याभक्ताछायाकर्णःसममण्डल गतः । क्रान्तिज्यायाः सदायंकर्णःसिद्ध्येन्नहिसर्वदासमवृत्तगताग्रहइतिसमवृत्तगत-ग्रहस्यैवकर्णः साध्योनान्यदेतिसूचनार्थंसममण्डलगेरवावित्युक्तम् ॥ २५ ॥

भा०टी०–रविमण्डलस्थ होनेपर लम्बज्याको विषुवच्छायासे गुण अथवा अक्षज्याको द्वादशद्वारा गुणकरके क्रान्तिज्यासे भाग करनेपर कर्ण होगा ॥ २५ ॥

ननुग्रहाधिष्ठिताहोरात्रपूर्वापरवृत्तसम्पातादवलम्बरूपसमशङ्कोर्गोलेप्रत्यक्षसिद्ध-स्यसाधनार्थंसमवृत्तस्थत्वाभावेऽपिच्छायाकर्णः साध्यः । सममण्डलगेरवावित्युक्ति-स्तुस्वाधिष्ठिताहोरात्रवृत्तपरा नत्वन्यदानसाध्योऽन्यथालक्षत्वेनप्रकारस्यातिप्रसङ्गा-पत्तेः । नहिप्रकारेतद्व्यावर्त्तकंविशेषणंप्रसिद्धंयेननातिप्रसङ्गः । परन्तु यदासममण्ड-लेऽक्षांशाधिकक्रान्त्याग्रहाधिष्ठितद्युरात्रवृत्तानामसम्बन्धस्तदागोले समशङ्कोरदर्श-नात्तत्रकथंतत्साधनमनिवारितमित्यतः सममण्डलगेरवावित्यस्यपूर्वोक्तएवार्थइत्य-भिप्रायं सममण्डलकर्णानयनप्रकारान्तरकथनच्छलेनाह–

सौम्याक्षोनायदाक्रान्तिःस्यात्तदाद्युदलश्रवः ॥
विषुवच्छाययाभ्यस्तःकर्णोमध्याग्रयोद्धृतः ॥ २६ ॥

यदोत्तराक्रान्तिरक्षादल्पास्यात्तदाद्युदलश्रवः समवृत्तस्यार्कक्रांतिसाधितम-ध्याह्नकर्णः । नतुमध्याह्नकालिकः । अक्षभयागुणितोमध्याग्रयागृहीतम-ध्याह्नकर्णाग्रयाभक्तः फलंसममण्डलगतग्रहबिम्बस्यच्छायाकर्णः स्यात् । अत्र सौम्येत्यनेनदक्षिणक्रान्तौतदसाधनं सममण्डलगतग्रहबिम्बस्यादर्शनादितिस्फु-टमुक्तम् । अन्यथाक्षाल्पक्रान्तौदक्षिणगोले समशङ्कोः प्रत्यक्षत्वात्तन्निवारणानुपप-त्तेः । अत्रोपपत्तिः । सममण्डलप्रवेशकालिकमध्याह्नच्छायाकर्णादवस्तुभूता-

त्कर्णेनद्वादशांगुलशंकुस्तदात्रिज्याकर्णेनकइतिमध्यशकुस्तात्कालिकः । द्वादशकोटावक्षभाभुजस्तदामहाशंकुकोटौकइतिशंकुतलम् । द्वादशयोर्नाशात्पलभात्रिज्याघातोमध्यकर्णभक्तइति । अनेनभुजेनमध्यशंकुस्तदाग्राभुजेनकइतिसमशंकुर्द्वादशाग्रामध्यकर्णघातोमध्यकर्णपलभाभ्यांभक्तोऽग्राभुजेसमशंकुतद्वृत्योःकोटिकर्णत्वात् । अस्मात्पूर्वप्रकारेणच्छायाकर्णानयनेद्वादशयोर्नाशान्मध्यकर्णपलभात्रिज्याघातोऽग्रामध्यकर्णाभ्यांभक्तइतितुल्ययोर्मध्यकर्णमितगुणहरयोर्नाशाकरणेनासिद्धम् । स्वतन्त्रेच्छस्यनियोक्तुमशक्यत्वात् । तत्रापि भाज्यहरौत्रिज्ययापवर्त्यहरस्थानेमध्यकर्णगुणिताग्रा त्रिज्याभक्तेतिमध्यकर्णाग्रासिद्धातोमध्याग्रयोद्धृतइत्युक्तम् । भाज्यस्थानेतुमध्यकर्णपलभाघातइतिदक्षिणगोले ग्रहादर्शनान्नसाधितः । उत्तरगोलेऽपिक्रांतिरक्षाधिकातदासममण्डलप्रवेशासम्भवान्नसाधितः सममण्डलावध्यक्षांशत्वात् । अल्पक्रांतौतत्सम्भवात्साधितः । नह्यसिद्धं गोलेगणितसाध्यंमानाभावादित्युपपन्नंसौम्येत्यादि । भास्कराचार्यैस्तु । "मार्त्तण्डःसममण्डलंप्रविशनिस्वल्पेऽपमेस्वात्पलाद्दृश्योद्युत्तरगोलएवसविशन्साध्यातदैवास्यभा । अप्राप्तेऽपिसमाख्यमण्डलमिनेयः शंकुरुत्पद्यते नूनंसोऽपिपरानुपातविधयैनैवंक्वचिद्दृश्यति ॥" इत्यनेनतत्रापि साधितः ॥ २६ ॥

भा०टी०-जब क्रान्ति अक्षसे कम होवै, तब विषुवच्छाया गुणित मध्याह्न कर्णको मध्याग्रासे भाग करनेपर पहला कहा हुआ कर्ण होगा ॥ २६ ॥

अथस्वाभिमतकर्णेनस्वस्वकालेभुजार्थकर्णवृत्ताग्रासाध्येतिसूचनार्थकर्णाग्रामुक्तप्रकारेणपुनरपिमध्यकर्णइतिप्रागुक्तस्यस्फुटीकरणार्थंचाह-

स्वक्रान्तिज्यात्रिजीवाघ्नीलम्बज्याप्ताग्रमौर्विका ॥
स्वेष्टकर्णहताभक्तात्रिज्ययाग्राङ्गुलादिका ॥ २७ ॥

स्वाभिमतकालिकक्रांतिज्यात्रिज्ययागुणितालम्बज्ययाभक्ताफलमग्राज्यारूपा । लम्बज्याकोटौत्रिज्याकर्णःक्रांतिज्याकोटौकः कर्णइत्यग्रेत्युपपत्तिः । उत्तरार्द्धपुनरुक्तव्याख्यातप्रायम् । यदितु पूर्वोक्तकर्णवृत्ताग्रानयनश्लोकेशङ्कुजीवयेत्यस्यशङ्कोः कोटिरूपत्वात्पूर्वंसाधितनतांशभुजकोटिज्ययेत्यर्थोमध्यकर्णइत्यस्यचतात्कालिकमध्याह्नच्छायायाःकर्णस्तदानपुनरुक्तम् । परन्त्वर्काग्रेत्यस्यतात्कालिकमध्याह्नकालिककर्णाग्रार्थः स्वकेत्यस्यचस्वाभीष्टकालिककर्णाग्रार्थो बोध्यः । एतदुपपत्तिस्तुद्वादशकोटावक्षकर्णः कर्णस्तदाक्रांतिज्याकोटौकः कर्णइतिस्वकालिकाग्रा । त्रिज्यावृत्तइयंतदातात्कालिकमध्याह्नकालिकच्छायाकर्णेननतांशकोटिज्याभक्तद्वादशत्रिज्याघातात्मकेनकेति द्वादशत्रिज्याघातयोर्गुणहरत्वेनतुल्ययो-

र्नांशादक्षकर्णगुणितक्रान्तिज्यातात्कालिकमध्याह्ननतांशकोटिज्ययाभक्तेति । तात्का-लिकमध्याह्नच्छायाकर्णेनेयंकर्णाग्रातदास्वाभीष्टकालिकच्छायाकर्णेनकेतिस्वकालि-काकर्णाग्रेत्युपपन्ना । सूर्याधिष्ठिताहोरात्रवृत्तयाम्योत्तरवृत्तोर्ध्वसम्पातस्तात्का-लिकमध्याह्नं परानुपातार्थं बोध्यम् ॥ २७ ॥

भा० टी०-स्वक्रांतिज्या, त्रिज्यासे गुणकरके लम्बज्यासे भाग करनेपर अग्रा होगी उसको उसके इष्टकर्णसे गुणकरके त्रिज्यासे भागकरनेपर अंगुलादिक होंगे ॥ २७ ॥

अथ कोणच्छायाकर्णसाधनार्थंकोणशंकुदृग्ज्येश्लोकपञ्चकेनाह-

त्रिज्यावर्गार्धतोऽग्रज्यावर्गोनाद्द्वादशाहतात् ॥
पुनर्द्वादशनिघ्नाच्चलभ्यते यत्फलंबुधैः ॥ २८ ॥
शङ्कुवर्गार्धसंयुक्तविषुवद्वर्गभाजितात् ॥
तदेवकरणीनामतांपृथक्स्थापयेद्बुधः ॥ २९ ॥
अर्कघ्नीविषुवच्छायाग्रज्ययागुणितातथा ॥
भक्ताफलाख्यंतद्वर्गसंयुक्तकरणीपदम् ॥ ३० ॥
फलेनहीनसंयुक्तंदक्षिणोत्तरगोलयोः ॥
याम्ययोर्विदिशोःशङ्कुरेवंयाम्योत्तरेरवौ ॥ ३१ ॥
परिभ्रमतिशङ्कोस्तुशङ्कुरुत्तरयोस्तुसः ॥
तत्त्रिज्यावर्गविश्लेषान्मूलंदृग्ज्याभिधीयते ॥ ३२ ॥

पूर्वप्रकारानीतैस्तात्कालिकाग्रज्यायानतुकर्णाग्रायाःपूर्वकर्णस्यैवासिद्धेः । वर्गेण-हीनात्त्रिज्यावर्गार्धाद्द्वादशगुणात्पुनर्द्वितीयवारंद्वादशगुणात् । चः समुच्चये । तेन द्वादशगुणितस्यद्विधास्थापननिरासाच्चतुश्चत्वारिंशदधिकशतगुणितादित्यर्थः । पृथग्गुणकोक्तिस्तुगुणनसुखार्थम् । शङ्कोर्द्वादशांगुलात्मकस्यवर्गार्धेनद्विसप्तत्या-युक्तेनपलभावर्गेणभाजिताद्बुधैर्गणितकर्तृभिर्यत्संख्यामितंफलंप्राप्यतेतत्सङ्ख्यामितं करणीनामसञ्ज्ञयाकरणी । तांकरणींबुधोगणकःपृथगेकत्रस्थानेस्थापयेत् । ततोद्वादशगुणितापलभाग्रज्ययापूर्वगृहीतयागुणितातथाद्विसप्ततियुतेनपलभावर्ग-णभक्ताल्लब्धं फलसंज्ञंतस्यफलस्यवर्गेणयुतायाःकरण्यामूलंदक्षिणोत्तरगोलयोःक्रमे-णफलेनोनयुतम् । एवमुक्तप्रकारेणसिद्धःशंकुशङ्कोर्गणितकर्तुःसकाशाद्दक्षिणोत्तरे-सूर्येपरिभ्रमतिसाति तुकारःक्रमार्थे क्रमेणयाम्ययोरुत्तरयोर्विदिशोराग्नेयनैर्ऋत्यों-रीशानीवायव्योःकोणयोरित्यर्थः । द्वितीयतुकारःपूर्वापरदिनेविभागक्रमार्थकत्वेन-विदिशोरित्यत्रान्वेति ।

तेनदिनपूर्वार्धेआग्नेयैशान्योर्दक्षिणोत्तरक्रमेण दिनापरार्धेनैर्ऋत्यवायव्योर्दक्षिणोत्तरक्रमेणेतिफलितार्थः । सकोणसञ्ज्ञःशंकुःस्यात् । कोणशंकुत्रिज्ययोर्वर्गान्तरान्मूलंदृग्ज्योच्यते । अत्रोपपत्तिर्बीजैकवर्णमध्यमाहरणेन । तत्र "यावत्तावत्कल्प्यमव्यक्तराशेर्मानंतस्मिन्कुर्वतोद्दिष्टमेव । तुल्यौपक्षौसाधनीयौप्रयत्नात्त्यक्त्वाक्षिप्त्वावापिसंगुण्यभक्त्वा॥"इत्युक्तेः । समौपक्षौसाध्यौतदर्थंकोणशंकुमानम् । या १ द्वादशकोटौपलभाभुजःशंकुकोटौकोभुजइतिकोणशंकुतलम् । या.प. $\frac{१}{१२}$ । अग्रयायुतंदक्षिणगोलेभुजः । या.प.अ.$\frac{१३}{१२}$ । उत्तरगोलेऽग्रयान्तरितंभुजस्तत्रसमवृत्ताद्दुत्तरंशंकुतलोनाग्राभुजः । या. प. $\frac{०}{}$ अ. $\frac{१३}{१२}$ । समवृत्ताद्दक्षिणेऽग्रोनंशंकुतलंभुजः । या. प. १ अ. $\frac{१३}{१२}$ । कोणस्यदक्षिणोत्तरपूर्वापरसूत्रमध्यत्वाद्भुजतुल्यसमचतुरस्रेकर्णःस्वस्वस्तिकात्कोणस्थसूर्यनतांशानां ज्यादृग्ज्येतिभुजवर्गोद्विगुणोदृग्ज्यावर्गोदक्षिणगोले । याव. प. व. १. या.प.अ. २४ अव $\frac{१४४}{}$ उत्तरगोले । याव. पव. १ या.प. अ.२४अव $\frac{१४४}{}$ । अयंकोणशंकुः । या १ वर्गयाव १हीनत्रिज्यावर्गरूपदृग्ज्यावर्गयाव१ त्रिव १ समइतिपक्षौसमच्छेदीकृत्यच्छेदगमे पक्षयोःशोधनार्थंन्यासः ।

दक्षिणगोले { याव. पव. १ या. प. अ. २४ अव १४४ }
{ याव. ७२ या. त्रिव. ७२ }

उत्तरगोले { याव. पव. १ या. प. अ. २४. अव १४४ }
{ या. ७२ या. त्रिव. ७२ }

"अथ एकाव्यक्तंशोधयेदन्यपक्षाद्रूपाण्यन्यस्येतरस्माच्चपक्षात् ॥" इत्युक्तेनाव्यक्तपक्षेऽव्यक्तवर्गस्थानेद्विसप्ततिपलभावर्गयोगो यावत्तावद्वर्गगुणोव्यक्तस्थानेपलभाग्राचतुर्विंशतिघातोयावत्तावद्गुणोदक्षिणगोलेधनमुत्तरगोलऋणम् । रूपपक्षेतुचतुश्चत्वारिंशदधिकशतगुणितेनाग्रावर्गेणहीनोद्विसप्ततिगुणस्त्रिज्यावर्गस्तत्रद्विसप्ततिगुणस्त्रिज्यावर्गश्चतुश्चत्वारिंशदधिकशतगुणितेनत्रिज्यावर्गार्धेननतुल्यत्वात्तुल्यगुणलाघवार्थंतथैवधृतः । तत्राप्येकदैवगुणनार्थंत्रिज्यावर्गार्थमग्रावर्गेणहीनंचतुश्चत्वारिंशदधिकशतगुणमितिसिद्धम् । सार्धराशिज्याधिकाग्रायांतुत्रिज्यावर्गार्धेनहीनोऽग्रावर्गश्चतुश्चत्वारिंशदधिकशतगुणऋणम् ॥ "अव्यक्तवर्गादियदावशेषंपक्षौतदेष्टेननिहत्यकिञ्चित् । क्षेप्यंतयोर्येनपदप्रदःस्यादव्यक्तपक्षोऽस्यपदेनभूयः । व्यक्तस्यपक्षस्यसमक्रियैवमव्यक्तमानंखलुलभ्यतेतत् ॥" इत्युक्तेःपक्षयोर्मूलार्थमव्यक्तवर्गाङ्केनापवर्तःकार्यः । वर्गाङ्कस्तुद्विसप्ततियुतःपलभावर्गस्तेनापवर्तितेऽव्यक्तपक्षेप्रथमस्थानेयावत्तावद्वर्गःसिद्धः । द्वितीयस्थाने

द्विमितगुणकस्यपृथक्करणादर्कघ्नी विषुवच्छायाग्रज्ययागुणितातथाभक्ताफलाख्यमित्युक्त्याफलंद्विगुणंयावत्तावद्गुणंदक्षिणोत्तरगोलक्रमेणधनमृणम् । रूपपक्षेऽपवर्त्तितेकरण्याख्यंसार्द्धराशिज्यातोऽग्रायामूनाधिकायांधनमृणम् । ततोऽपिमूलार्थपक्षयोरव्यक्ताङ्कार्धरूपफलस्यवर्गोयोजितः । तत्राव्यक्तपक्षयोजनपूर्वकमूलग्रहणेप्रथमस्थानेयावत्तावत् । द्वितीयस्थानेफलंदक्षिणोत्तरगोलयोर्धनमृणम् । यथा । या १ फ १ । या १ फ१ । उत्तरगोलेऽव्यक्तस्यर्णत्वंवा । या१फ १ । उभयथामध्याव्यक्तनाशसम्भवात् । रूपपक्षेतुफलग्रहणेतद्वर्गसंयुक्तकरणीपदामिति सार्धराशिज्यानधिकाग्रायामधिकायां तु करण्यूनस्यफलवर्गस्यमूलम् तथाचत्रिज्यावर्गार्धतोऽग्रज्यावर्गोनादित्यत्रसार्धराशिज्याधिकाग्रायामुक्तानुपपत्तावपि । "यत्रक्वचिच्छुद्धिविधौयदेहशोध्यंनशुद्धेद्विपरीतशुद्ध्या । विधिस्तदाप्रोक्तवदेवकिन्तुयोगेवियोगःसुधियाविधेयः ॥" इतिभास्करोक्तरीत्याग्रज्यावर्गोनादित्यत्राग्रावर्गेणाग्रावर्गाद्वाहीनादित्यर्थद्वयेनक्रमेणन्यूनाधिकाग्रासम्बन्धेनवानक्षातिरिति ध्येयम् । अथ पुनःसमशोधनार्थम् ।

पक्षयोर्न्यासः । दक्षिणगोले $\left\{\begin{matrix}\text{या१फ१}\\ \text{या०प१}\end{matrix}\right\}$ करण्यूनफलवर्गपदस्यफलतोन्यूनत्वात्

तत्पक्षयोरपिन्यासः । $\left\{\begin{matrix}\text{या१फ१}\\ \text{या०प १}\end{matrix}\right\}$ अत्रैकाव्यक्तमित्यादिना ।

"शेषाव्यक्तेनोद्धरेद्रूपशेषव्यक्तंमानंजायतेऽव्यक्तराशेः ॥" इत्यनेनचप्रथमस्थानेपदंफलेनहीनमित्युपपन्नम् । द्वितीयस्थानेपदेनहीनंफलमित्यृणकोणशंकुर्भगवतायंनोक्तः । ऋणस्यस्थितिविपरीतत्वात् । नह्यूर्ध्वगोलेस्थितिविपरीतमधोगोलेऽदृश्यमपिदृश्यते येनतत्कथनमावश्यकम् । नाप्यधोगोलेऽदृश्यत्वात् तत्कथनापत्तिः । ऊर्ध्वगोलस्थस्यच्छायासाधकत्वेनसाधनात् तत्रच्छायासम्भवादेवाप्रयोजकत्वात् । उत्तरगोलेतु $\left\{\begin{matrix}\text{या१फ१}\\ \text{या०प १}\end{matrix}\right\}$ वा

$\left\{\begin{matrix}\text{या१फ१}\\ \text{या०प १}\end{matrix}\right\}$ प्रथमस्थानेफलेनयुतंपदमुपपन्नम् । द्वितीयस्थानेफलेनोनंपदमित्यृणत्वान्नोक्तः । छायानुपयुक्तत्वात् । करण्यूनफलवर्गपदस्यफलतोन्यूनत्वात् तत्पक्षयोरपिन्यासः । $\left\{\begin{matrix}\text{या१फ.१}\\ \text{या०प.१}\end{matrix}\right\}$ वा $\left\{\begin{matrix}\text{या१फ१}\\ \text{या०प१}\end{matrix}\right\}$ अत्रप्रथमस्थानेपदेनयुक्तंफलंकोणशंकुरुपपन्नः । द्वितीयस्थानेपदेनहीनंफलंकोणशंकुरितितद्द्वयमुपपन्नम् । नन्विदंततोर्ध्वगोलेदिनार्धएवकोणशंकुद्वयं दृश्यत्वाद्भगवताकथमुपेक्षितमिति चेन्न । तत्रत्रिज्यावर्गार्धतइत्यत्रव्यस्तशोधनात्फलेनहीनसंयुक्तंपदमित्यत्राप्यु-

त्तरगोलएवहीनसंयुक्तमित्यस्यावृत्त्याफलंपदेनहीनसंयुक्तमित्यर्थसिद्धेर्भगवतातद्द्वय-स्यानुपेक्षितत्वात् । समवृत्ताद्दक्षिणस्थत्वेकोणशंकुर्दिनेपूर्वापराधक्रमेणाग्नेय्यां नैर्ऋत्यां वोत्तरस्थत्वेनैशान्यांवायव्यांवाभवतीतिसर्वमुपपन्नम् । अत्र बीजक्रियोपपादकमूत्राणामुपपत्तिर्विस्तरभीत्यानोक्ता । सात्वग्रजकृष्णदैवज्ञ-गुरुचरणरचितायांभास्करीयबीजटीकायांसम्यगुक्तावर्धयेति । शंकुःकोटिस्त्रि-ज्याकर्णस्ववर्गान्तरपदंदृग्ज्यादृग्वृत्तनतांशानां ज्येतितात्रिज्यावर्गविशेषान्मूलेदृग्-ज्येत्युपपन्नम् ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

भा०टी०-त्रिज्यावर्गार्द्धसे (५९०९९२२) तात्कालिक अग्रज्यावर्ग वियोगकरके १४४से गुणकरके जो फललाभ होगा तिसको शंकुवर्गार्द्ध (७२) संयुक्त विषुवच्छाया वर्गसे भागकरनेपर करणी होगी । तिसको अलगकर रखना चाहिये ॥ २८ ॥ २९ ॥ द्वादशगुणित विषुवच्छाया अग्रज्यासे गुणकरके पहले कहेहुये शंकुवर्गार्द्ध (७२) संयुक्त विषुवच्छायावर्गसे भाग करनेपर फल होगा । इसका वर्ग और करणी योग-करके मूलकरनेसे जो हो तिससे दक्षिणगोलमें फलहीन और उत्तरगोलमें फल योग करने-पर कोणशंकु होगा । सूर्यदक्षिणमें हो, कोणशंकु, दक्षिणके दो कोनोंमें और उत्तरमें होनेपर उत्तरके दो कोणोंमें होगा ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

अथैतच्छायाच्छायाकर्णयोरानयनमाह-

स्वशङ्कुनाविभज्याप्तेदृक्त्रिज्येद्वादशाहते ॥
छायाकर्णौतुकोणेषुयथास्वंदेशकालयोः ॥ ३३ ॥

कोणीयदृग्ज्यात्रिज्येद्वादशगुणेदृग्ज्यासम्बन्धिकोणशंकुनाभक्त्वालब्धेदृग्ज्या-त्रिज्याक्रमेणच्छायाच्छायाकर्णौस्तः । तुकारादेवकोणेषुचतुर्षुदेशकालयोः । यथा-स्वंस्वमनतिक्रम्येतियथास्वंयथादेशंयथाकालंछायाच्छायाकर्णौसाध्यौ । अयमर्थः । क्वचिद्देशेचतुर्षुकोणेषुक्वचिच्चकोणद्वयेक्वचिद्दिनार्धएवकोणद्वयइत्यादिदेशकालानु-रोधेनयथायोग्यमिति । अत्रोपपत्तिः । प्रागुक्तास्पष्टाच ॥ ३३ ॥

भा०टी०-तिसकावर्ग और त्रिज्यावर्गका अन्तर मूलकरनेसे दृग्ज्या होगी । द्वादशगुणित दृग्ज्या और द्वादशगुणितत्रिज्या (४१२५६) कोण शंकुसे भाग करनेपर इष्टस्थानमें यथास-मयमें छाया और कर्ण होगा ॥ ३३ ॥

अथदिक्प्रदेशसम्बन्धेनच्छायाकर्णावुक्त्वाकालसंबन्धेनसार्धश्लोकाभ्यामाह-

त्रिज्योदक्चरजायुक्तायाम्यायांतद्विवर्जिता ॥
अन्त्यानतोत्क्रमज्योनास्वाहोरात्रार्धसङ्गुणा ॥
त्रिज्याभक्ताभवेच्छेदोलम्बज्याघ्नोऽथभाजितः ॥ ३४ ॥
त्रिभज्ययाभवेच्छङ्कुस्तद्वर्गंपरिशोधयेत् ॥
त्रिज्यावर्गात्पदंदृग्ज्याछायाकर्णौतुपूर्ववत् ॥ ३५ ॥

उत्तरगोलेचरोत्पन्नयाज्ययाचरज्येत्यर्थः । पूर्वचरानयनेचरज्यायाश्चरज्येति सञ्ज्ञोक्तेः । युक्तात्रिज्यान्त्यास्यात् याम्यगोलेतयाचरज्ययोनात्रिज्यान्त्या स्यात् । नतोत्क्रमज्योनामूर्योदयाद्दिनगतघटचोर्दिनशेषघटचोर्वादिनार्द्धान्तर्गताउन्नतसञ्ज्ञास्ताभिरूनंदिनार्धनतकालोघटचात्मकस्तस्यासुभ्योलिप्तास्तस्वयमैरित्यादिविधिनामुनयोरंध्रयमलाइत्याद्युक्तोत्क्रमज्यापिण्डैर्ज्योत्क्रमज्या । पञ्चदशघटचधिकनतेतुपञ्चदशघटचूननतस्यक्रमज्याखण्डैः क्रमज्यातयायुक्तात्रिज्योत्क्रमज्याभवति । तयाहीनेत्यर्थः । स्वाहोरात्रार्धसंगुणा । गृहीतचरज्यासम्बन्ध्यहोरात्रवृत्तव्यासार्द्धद्युज्यातयागुणितात्रिज्ययाभक्ताफलंछेदसञ्ज्ञः स्यात्।अथानन्तरंछेदोलम्बज्ययागुणितस्त्रिज्ययाभाज्यःफलमिष्टकालेशंकुः स्यात् । तस्यशङ्कोर्वर्गंत्रिज्यावर्गाच्छोधयेत् । शेषस्यमूलंदृग्ज्या । आभ्यांछायाकर्णौतुपूर्ववत् पूर्वोक्तरीत्याभवतः । अत्रच्छायाकर्णौत्वितिकोणच्छायाकर्णसाधनश्लोकान्तर्भागस्य ग्रहणात्तच्छ्लोकोक्तरीत्याभीष्टशंकुदृगज्याभ्यांछायाकर्णौसाध्यावित्युक्तम् । अत्रोपपत्तिः । याम्योत्तरवृत्तोर्ध्वभागग्रहाधिष्ठितद्युरात्रवृत्तसम्पातात्क्षितिजद्युरात्रवृत्तसम्पातद्वयबद्धोदयास्तसूत्रक्षितिजसम्बद्धयाम्योत्तरवृत्तसूत्रसम्पातपर्यन्तमहोरात्रवृत्ते सूत्रं त्रिज्यातुरुद्धमन्त्या सातूत्तरगोलेचरज्यायुतात्रिज्यादक्षिणगोलेचरज्ययोनात्रिज्या । उन्मण्डलयाम्योत्तरसूत्रावध्यहोरात्रवृत्तव्यासार्द्धेत्रिज्यात्वात् । उन्मण्डलस्योत्तरदक्षिणक्रमेणक्षितिजादूध्वाधःस्थत्वेनतद्याम्योत्तरसूत्रयोर्मध्येचरज्यात्वाच्च । ग्रहाहोरात्रवृत्ते याम्योत्तराहोरात्रवृत्तसम्पातादुभयत्रनतघटयन्तरेणस्थानेतत्सूत्रंनतकालस्थसम्पूर्णज्या । तन्मध्यादूर्ध्वंसूत्रंशररूपंनतोत्क्रमज्या । तयाहीनान्त्याग्रहस्थानादहोरात्रवृत्तउदयास्तसूत्रपर्यन्तमृजुसूत्रंत्रिज्यानुरुद्धमिष्टान्त्या । तत्तुल्यायाम्योत्तरोर्ध्वव्यासमूत्रान्तर्गतासाद्युज्याप्रमाणसाधितेष्टहृतिः । द्युज्यागुणात्रिज्याः भक्ताफलंछेदः । अस्मात्रिज्याकर्णलम्बज्याकोटिस्तदेष्टहृतिकर्णेकाकोटिरित्यनुपातेनेष्टशंकुः । अस्माद्दृग्ज्याच्छायातत्कर्णाउक्तरीत्यासिद्धयन्तीत्युक्तमुपपन्नम् ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

भा०टी०-उत्तर दिशामें सूर्य होनेपर त्रिज्यासे चरज्याको योग और दक्षिणमें रहनेसे त्रिज्यासे चरज्याका वियोग करनेपर अन्त्य होताहै मध्याह्नसे इष्टकाल वियोग करके अंशादिमें परिवर्त्तन करनेसे नत होताहै, नतके अनुसार उत्क्रमज्या अन्तसे वियोग करके स्वाहोरात्रार्द्ध व्यासद्वारा गुणकरके त्रिज्या (३४३८) से भाग करनेपर छेद होताहै। छेदको लम्बज्यासे गुणकरके त्रिज्यासे भाग करनेपर शंकु होगा। त्रिज्यावर्ग (११८१९८४४) से शंकु वर्ग(१४४) वियोगकरके मूलकरनेपर दृग्ज्या होतीहै। इसकी छाया और कर्ण पहले जैसे होंगे ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

अथश्लोकत्रयेणच्छायाकर्णाभ्यांनतकालानयनमाह-

अभीष्टच्छाययाभ्यस्तात्रिज्यातत्कर्णभाजिता ॥

दृग्ज्यातद्वर्गसंशुद्धात्रिज्यावर्गाच्चयत्पदम् ॥ ३६ ॥
शङ्कुःसत्रिभजीवाघ्नःस्वलम्बज्याविभाजितः ॥
छेदःसत्रिज्ययाभ्यस्तः स्वाहोरात्र्यार्द्धभाजितः ॥ ३७ ॥
उन्नतज्यातयाहीनास्वान्त्याशेषस्यकार्मुकम् ॥
उत्क्रमज्याभिरेवंस्युःप्राक्पश्चाधनतासवः ॥ ३८ ॥

अभीष्टकालिकच्छाययागुणितात्रिज्यागृहीतच्छायायाश्छायाकर्णेनभक्ताफलदृग्ज्यायावर्गेणहीनात्रिज्यावर्गाद्यत्सङ्ख्यामितंमूलम् । चकारोयत्तदोर्नित्यसम्बन्धात्तच्छब्दपरः । अभीष्टशंकुः । सइष्टशंकुस्त्रिज्ययागुणितः स्वदेशीयलम्बज्ययाभक्तःफलंछेदः । सच्छेदस्त्रिज्ययागुणितोद्युज्ययाभक्तउन्नतकालस्यज्याविलक्षणा । यद्धनुरुन्नतकालोनभवति । तयानीतयोन्नतज्यया हीनास्वान्त्यास्वद्युज्यासम्बद्धचरज्ययावगतान्त्या । अवशेषस्योत्क्रमज्याभिर्मुनयोरंध्रयमलाइत्याद्युक्तोत्क्रमज्यापिण्डैर्धनुः । अवशेषस्यत्रिज्याधिकत्वेतुयदधिकंतस्यक्रमज्यापिण्डैर्धनुश्चतुःपश्चाशद्युक्तमुत्क्रमधनुर्भवति । एवंप्रकारेणासिद्धाङ्कादिनस्यपूर्वार्धापरार्धयोर्नतकालासवोभवन्ति । अत्रोपपत्तिः पूर्वोक्तव्यत्यासात्सुगमा । तत्रच्छेदस्त्रिज्यापरिणतइष्टान्त्यातस्याज्यात्वासम्भवः । अवद्युदयास्तत्सूत्रस्याहोरात्रवृत्तव्याससूत्रत्वाभावादित्युन्नतज्याकारेणस्वलपान्तरत्वेन दर्शनादुन्नतज्येत्युक्तम् । अतएवभास्कराचार्यैः । इष्टान्त्यकासुन्नतकामौर्वीतुल्याप्रकल्प्येत्याद्युक्तम् । तद्धनुरसूनामुन्नतकालत्वापत्त्यातयाहीनेत्यादिभागस्य व्यर्थत्वापत्तेरितिदिक् ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

भा० टी०–इष्टच्छायाको त्रिज्यासे गुणकरके तिसको कर्णद्वारा भाग करनेपर दृग्ज्या होतीहै । त्रिज्यावर्गसे दृग्ज्यावर्ग वियोग करके मूल करनेसें शंकु होताहै । शंकुको त्रिज्यासे गुणकरके स्वीय लम्बज्यासे भाग करनेपर छेद होताहै । छेदको त्रिज्यासे गुणकरके स्वाहोरात्रार्द्धसे भाग करके स्वीय अन्त्यसे वियोग करनेपर शेष उन्नतज्या होगी । तिस्से धनुकरे । उन्नतज्याके उत्क्रमज्याके परिमाणसे धनकरनेपर पूर्वापर नति प्राण सिद्ध होगा ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

अथेष्टकालिकाग्रयाक्रान्तिज्याद्वारासूर्यसाधनं सार्धश्लोकेनाह–

इष्टाग्राघ्नीतुलम्बज्यास्वकर्णाङ्गुलभाजिता ॥
क्रान्तिज्यासात्रिजीवाघ्नीपरमापक्रमोद्धृता ॥
तच्चापंभादिकंक्षेत्रंपदैस्तत्रभवोरविः ॥ ३९ ॥

इष्टकालिकाकर्णाग्रयागुणितालम्बज्या । तुकारादग्रज्यायानिरासः । तात्कालिकच्छायायाःकर्णाङ्गुलसङ्ख्याभिर्भक्ताफलंक्रान्तिज्या । साक्रान्तिज्या त्रिज्य-

यागुणितापरमक्रान्तिज्ययाभक्ताफलस्यधनूराश्यादिकंक्षेत्रंस्थानंभुजइति यावत् । पदैश्चतुर्भिश्चिह्नज्ञातैस्तत्रपदेभवउत्पन्नः । यथोक्तरीत्याकर्कादौप्रोज्झ्यचक्रार्धेत्याद्युत्तयासूर्यःस्यात् । अत्रोपपत्तिः । कर्णाग्रेकंर्णाग्रालभ्यतेत्रिज्याग्रेकेत्यग्रा । त्रिज्याकर्णेलम्बज्याकोटिस्तदाग्राकर्णेकाकोटिरित्यनुपातेनत्रिज्ययोस्तुल्ययोर्गुणहरयोर्नाशादिष्टकर्णाग्रागुणितलम्बज्याकर्णभक्ताक्रान्तिज्या।अस्यासूर्यानयनंप्रागेवोक्तमितिपुनरुक्तत्वात्सुगमतरम् ॥ ३९ ॥

भा०टी०–इष्टाग्रसे लम्बज्याको गुण करके अपने कर्णांगुलसे भाग करनेपर रविक्रान्ति ज्या होगी । तिसको त्रिज्यासे गुणकरके परमापक्रमज्यासे भाग करनेपर लब्ध ज्या संख्याके धनु निर्णय करनेसे (यह जाना हुआ रहनेसे कि चक्रके कौन पदमेंहै) रविका (सायन) स्फुट होताहै ॥ ३९ ॥

अथ भाभ्रमणमाह–

इष्टेऽह्निमध्येप्राक्पश्चाद्धृतेबाहुत्रयान्तरे ॥
मत्स्यद्वयान्तरयुतोस्त्रिस्पृक्सूत्रेणभाभ्रमः ॥ ४० ॥

अभिमतेदिवसेपूर्वविभागेपश्चिमविभागेबाहुत्रयान्तरेपूर्वापरसूत्राद्भुजत्रयान्तरेस्थानेधृते । अयमर्थः । पूर्वापरसूत्रस्यमध्यस्थानाद्भुजांगुलान्तरेणाचिह्नमेकंद्वितीयंपूर्वविभागेपूर्वापरसूत्रात्कालान्तरीयभुजांगुलान्तरेणाचिह्नतृतीयंपश्चिमविभागेपूर्वापरसूत्रादितरकालान्तरीयभुजांगुलान्तरेणचिह्नम् ॥ एवमेकस्मिन्दिवसेकालत्रयेस्वभुजान्तरेणपूर्वापरसूत्राच्चिह्नत्रयेकृतेसतीति । मत्स्यद्वयान्तरयुतेरव्यवहितचिह्नाभ्यांप्रत्येकंमत्स्यमुत्पाद्योति मत्स्यद्वयस्यप्रत्येकमुखपुच्छगतरूपमध्यसूत्रयोःस्वमार्गानुसारेणप्रसारितयोर्योगोयस्मिन् स्थानेतस्मादित्यर्थः । त्रिस्पृक्सूत्रे । चिह्नत्रयलग्नतुल्यसूत्रमितितेनव्यासार्धेनभाभ्रमच्छायामार्गमण्डलंभवति । प्रथमान्तिमकालान्तर्गतकालिकच्छायाग्रंतद्वृत्तपरिधौभवतीत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । प्राच्यपरसूत्राद्भुजान्तरेछायाग्रमितिछायाग्रत्रयंज्ञात्वातत्स्पृष्टपरिधिवृत्तस्यमध्यज्ञानार्थमव्यवहितचिह्नद्वयमत्स्याभ्यामव्यवहितचिह्नमध्यस्यदक्षिणोत्तरसूत्रेभवतः । तत्रवृत्तपरिधिप्रवेशेभ्यः केन्द्रस्यतुल्यान्तरत्वेनाव्यवहितचिह्नमध्यस्थानस्यावश्यंपरिधिसक्तत्वात्तत्सूत्रमपिकेन्द्रेलग्नंभवति । एवंप्रत्येकाव्यवहितचिह्नमध्यसूत्रयोर्योगस्तद्वृत्तकेन्द्रंसिद्धम् । मध्येरखाज्ञानार्थमत्स्यद्वयंतत्केन्द्राद्वृत्तंभागत्रयस्पृग्भवतीतिकिंचित्रम् । यद्यपिछायाग्रस्यसूर्यचलनानुरोधेनचलनात्तस्यतुवृत्ताकारासम्भवात्प्रतिक्षणद्युरात्रवृत्तभेदात् । अन्यथाक्रान्तिभेदातुपपत्तेरित्येकवृत्तपरिधौछायाग्रभ्रमणंनसम्भवति । अतएवभास्कराचार्यैर्भ्रांतितयाद्भाभ्रमणंनसदित्युक्तम् । तथापिसाधितभाग्राणामवश्यमेकवृत्तस्थत्वसम्भवात्तदन्तर्वर्त्तिनां छायाग्राणां

तत्परिधिस्थत्वंस्वल्पान्तरत्वादङ्गीकृत्यभगवताकृपालुनाछायाग्रदर्शनं विनापिछायाग्रस्थानज्ञानमन्यकालिकच्छायाग्रस्थानयोर्दर्शनेनाभीष्टसमये मेघादिनाच्छादितेरवौराश्यादिसूर्यज्ञानोपजीव्याग्राभुजादिज्ञानार्थमुक्तम् । बहुकालान्तरितभाग्रहणे स्थूलम् । अल्पान्तरितेकिञ्चित्सूक्ष्ममितिध्येयम् ॥ ४० ॥

भा० टी०-इष्ट दिनके मध्यमें और पूर्वमें व परमें तीन चिह्न करके मत्स्यद्वयगत रेखाके संयोगस्थानसे तीन चिह्नोंको स्पर्श करके वृत्तकल्पना करनेसे छायाशेष भ्रमणमार्ग निर्णीत होताहै ॥ (वास्तविक सूक्ष्मविचार करके छायाग्र दूसरे मार्गमें भ्रमण करताहै) ॥ ४० ॥

अथकालज्ञानमुक्त्वातदुपजीवकफलादेशाद्युपयुक्तलग्नज्ञानं विवक्षुस्तदुपयुक्तस्वोदयज्ञानार्थंमेषादित्रयाणांलङ्कोदयासुसाधनपूर्वकतन्निबंधनंश्लोकाभ्यामाह-

त्रिभद्युकर्णार्धगुणाः स्वाहोरात्रार्धभाजिताः ॥
क्रमादेकद्वित्रिभज्यास्तच्चापानिपृथक्पृथक् ॥ ४१ ॥
स्वाधोधः परिशोध्याथमेषाल्लङ्कोदयासवः ॥
खागाष्टयोऽर्थगोऽगैकाः शरत्र्यङ्कहिमांशवः ॥ ४२ ॥

एकद्वित्रिभज्याः एकराशिज्याद्विराशिज्यात्रिराशिज्यास्त्रिराशिद्युज्ययागुण्याःक्रमात्स्वक्रान्तिज्यासम्बन्धिद्युज्याभिर्भाज्याः । फलानांधनूंषिभिन्नभिन्नस्थानेस्थाप्यानि । स्थानद्वयेस्थाप्यानीत्यर्थः । अनन्तरंस्वाधोऽधःस्वादधोऽधएकराशिज्यासम्बन्धिफलंयथास्थितं ततःप्रथमफलंद्वितीयफलाद्द्वितीयफलंतृतीयफलात्र्यूनीकृत्य पृथगतुक्तौप्रथमफलंद्वितीयफलान्यूनंकृतंसद्द्वयोः फलयोर्मार्जनात् तृतीयेशोध्यासम्भवः । प्रथमस्यज्ञानासम्भवश्चेतिप्रथमद्वितीययोःपृथक्स्थापनमावश्यकम् । अतएवनत्रिधापृथगित्युक्तम् । मेषात् । मेषमारभ्यराशित्रयाणांलंकोदयासवोभवन्ति । प्रथमफलंमेषस्योदयासवः द्वितीयोनतृतीयफलंमिथुनस्योदयासवइत्यर्थः । नियतत्वात्तन्मानमाह । खागाष्टयइति । मेषमानंसप्ततियुतंषोडशशतं वृषमानंपञ्चोनमष्टादशशतम् । मिथुनमानंपञ्चत्रिंशदधिकमेकोनविंशतिशतमित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । सिद्धान्तशिरोमणौ । "मेषादिजीवाःश्रुतयोऽववृत्तेतद्भूमिजेक्रान्तिगुणाभुजाःस्युः । तत्कोटयः स्वद्युनिशाख्यवृत्तेव्यासार्द्धवृत्तेपरिणाभितानाम् ॥ चापेषुतासामसवस्ततोयेतेऽधोविशुद्धाउदयानिरक्षे ॥" इति । तत्स्वरूपोत्त्यातिज्याकर्णेत्रिराशिद्युज्याकोटिस्तदैकद्वित्रिराशिज्याकर्णेषुकाइत्यनुपातेनकोटयो द्युज्याप्रमाणेनाहोरात्रवृत्तेतदासुकरणार्थेत्रिज्याप्रमाणेनसाध्याइतिद्युज्याप्रमाणेनैतास्तदा त्रिज्याप्रमाणेन काइत्यनुपातेन त्रिज्ययोर्गुणहरयोस्तुल्यत्वेननाशादेकादिराशिज्यास्त्रिराशिद्यु-

ज्ययागुण्याःस्वद्युज्ययाभक्ताइत्युपपन्नाः । आसांधनेष्वेकादिराशीनामुदयासवस्तत्रप्रत्येकराश्युदयासुज्ञानार्थस्वाधोऽधः शोधनमित्युपपन्नंत्रिभद्युकर्णार्धगुणाइत्यादिलंकोदयासवइत्यन्तम् । अत्रलङ्कापदंनिरक्षदेशपरंव्याख्येयम् । सर्व्वनिरक्षदेशेक्षेत्रसंस्थानस्योक्तस्यतुल्यत्वेनोक्तरीत्यान्यनिरक्षदेशे तत्सिद्धौबाधकाभावात् । अन्यथास्वनिरक्षदेशेतत्साधनार्थग्रहवद्देशान्तरसंस्कारकरणापत्तेः । निजोदयकरणार्थस्वनिरक्षदेशीयानांचरसंस्कारस्यसमनन्तरमेवोक्तत्वादितिदिक् । खागाष्टयइत्यादावुक्तप्रकारगणितकर्मैवोपपत्तिः ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

भा०टी०-एक, दो और तीन राशिकी ज्याको क्रमशः त्रिराशिद्युज्या (१३८७) से गुण करके निज २ राशिकी अहोरात्रार्द्धज्यासे भाग करके धनुनिर्णयकरे। पहलेका, द्विराशिके प्रथमका वियोग और त्रिराशिके फलसे द्विराशिफल हीन करनेपर कलामेषादिका लंकोदय प्राण होगा। प्राणसंख्या मेष १६७०, वृष १७९५, मिथुन १९३५ हैं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

अथैभ्यःस्वदेशोदयासून् श्लोकार्धेनाह-

स्वदेशचरखण्डोनाभवन्तीष्टोदयासवः ॥ ४३ ॥

एतेसिद्धाः । स्वकीयैर्देशसम्बन्धेनयान्युत्पन्नानिचरखण्डानिचरानयनप्रकारेणैकादिराशीनांचराण्यानीयोक्तरीत्यास्वाधोऽधः शोधितानिमेषादिमिथुनान्तानांराशीनांचरखण्डानिभवन्ति । तैरूनाःसन्तइष्टोदयासवश्चरखण्डसम्बन्धिदेशेमेषादित्रयाणामुदयासवोभवन्तीत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । "मेषादेर्मिथुनान्तोनाडीभिस्तिथिमिताभिरुद्वृत्ते । लगतिकुजेतदधःस्थेप्रथमंताश्चिरोनाभिः॥" इतिभास्करोक्त्याप्रत्येकोदयासुज्ञानंप्रत्येकचरेणेति । प्रत्येकचरंतुचरखण्डमित्युपपन्नम् ॥ ४३ ॥

भा०टी०-इससे स्वदेशचरखंडवियोग करनेपर इष्टदेशका उदयप्राण होगा। पीछेसे क्रमानुसार लंकोदयप्राणके साथ पश्चात्से चरखंडयोग करनेपर कर्कादिका उदयप्राण होगा ॥ ४३ ॥

अथावशिष्टराशीनामुदयानाह-

व्यस्ताव्यस्तैर्युताःस्वैःस्वैःकर्कटाद्यास्ततस्त्रयः ॥[1]
उत्क्रमेणषडेवैतेभवन्तीष्टास्तुलादयः[2] ॥ ४४ ॥

ततोऽनन्तरमेतेमेषादिलङ्कोदयासवोव्यस्तामिथुनवृषमेषक्रमेणस्थापिताः स्वैःस्वैर्मेषादिचरखण्डकैस्त्रिभिर्व्यस्तैरुदयक्रमेणस्थापितैर्युताः कर्कादयस्त्रयः कन्यान्ताःक्रमेणज्ञावोदयासुमानाभवन्ति । एवंषण्णामुक्त्वावशिष्टानामुदयासुज्ञान-

---

१ कर्कटाद्याःपुनस्त्रय इति पाठान्तरम् । २ भवन्तीष्टोदयासव इति वा पाठः ।

माह। उत्क्रमेणेति । एतदुक्तमेषादयः कन्यान्ताः षट्सङ्ख्याकाउत्क्रमेणकन्यासिंहकर्काद्युत्क्रमेण । एवकारोमेषवृषादिक्रमनिरासार्थकः । तुलादयः षड्राशयइष्टाज्ञातस्वदेशोदयासुमानाभवन्ति । तथाचकन्योदयस्तुलायाः । सिंहोदयोवृश्चिकस्य । कर्कोदयोधनुषः । मिथुनोदयोमकरस्य । वृषोदयः कुम्भस्य । मेषोदयोमीनस्येतिसिद्धम् । अत्रोपपत्तिः । "कन्यान्ताद्धनुषोऽन्तस्तिथिमितनाडीभिरुद्गलये । लगतिकुजेचोर्ध्वस्थेपश्चात्ताभिश्चराढ्याभिः ॥ तद्राहितैः खह्नुताशैः कन्यान्तोवा झषान्तोवा । चरखण्डैरूनाढ्यास्तेननिरक्षोदयाः स्वदेशेस्युः ॥" इतिभास्करोक्त्यासुगमा ॥ ४४ ॥

भा०टी०–मेषादि ६ राशिका उदयप्राण, पीछेसे तुलादिका उदयप्राण होगा ॥ ४४ ॥

अथाभीष्टकालेऽऋणधनलग्नसाधनार्थगतभोग्यासूनाह–

गतभोग्यासवःकार्याभास्करादिष्टकालिकात् ॥
स्वोदयासुहताभुक्तभोग्याभक्ताःखवह्निभिः ॥ ४५ ॥

इष्टकालेचालनेनसञ्जातात्सूर्याद्गतभोग्यासवः । गतासवोभोग्यासवश्च साध्याः। कथंसाध्याइत्यतआह । स्वोदयासुहताइति । भुक्तभोग्याः सूर्याक्रान्तराशेर्येभुक्तभागाः । सूर्यस्यभागाद्यवयवात्मकाएते त्रिंशतः शुद्धाभोग्यभागाः । सूर्याक्रान्तराशेःस्वदेशोदयासुभिर्गुणितास्त्रिंशताभक्तागतासवोभोग्यासवः क्रमेणभवन्ति । अत्रोपपत्तिः। यस्मिन्कालेलग्नंसाध्यंतस्मिन्कालेसूर्यःसाध्योऽन्यथातात्कालिकलग्नसिद्धिर्नस्यात् । अथैतदर्थमूर्याक्रान्तराशेर्भुक्तासवोभोग्यासवश्चसाध्याः सूर्योदयात्तत्कालपर्यन्तं पूर्वाग्रिमकालयोस्तद्राशेर्लग्नत्वात् । अनन्तरं च राश्युदयासुगणनयालग्नज्ञानस्यसुशकत्वाच्च । अतस्त्रिंशद्भागैरुदयासवस्तदाभुक्तभोग्यभागैःकइति भुक्तभोग्यकालासवः अत्रोदयकालासूनां सम्पातावधिराशिग्रहणेनोत्पन्नत्वात्सूर्योऽयनांशसंस्कृतोग्राह्यः । अन्यथासूर्याक्रान्तराशेरुक्तोदयसम्बन्धाभावादसंगततापत्तेः । अतएव। "युक्तायनांशादपमःप्रसाध्यः कालौचखेटात्खलुभुक्तभोग्यौ ॥" इतिभास्कराचार्योक्तंसङ्गच्छते । ननूक्तरीत्यौदयिकार्कादेवभुक्तभोग्यासवः साध्याःसूर्योदयात्तत्कालावधितद्राशेर्लग्नत्वात । नहीष्टकालेतद्राशिर्लग्नंयेनतद्गतभोग्यासवःसाधवः । नापितात्कालिकार्कात्सूर्योदयावधिकास्तेतात्कालिकार्कस्यसूर्योदयकालिकत्वाभावात् । तत्कथंभगवतासर्व्वज्ञेनभास्करादिष्टकालिकादित्युक्तमितिचेत् । उच्यते । उदयानांनाक्षत्रत्वान्नाक्षत्रघटयोग्राह्यास्तास्त्वसिद्धाः । सर्व्वत्रसाधितघटीनांसावनत्वात् । तासांनाक्षत्रीकरणमावश्यकमन्यथातद्गणनानुपपत्तेः । तदर्थंग्रहोदयप्राणहताइत्याद्युक्त्याषष्टिसावनघटीषुगतिकलोत्पन्नासवोऽधिकानाक्षत्रत्वार्थं तदेष्टसावन-

घटीषुकियदधिकमित्यनुपातेनागतफलयुक्ताः सावनाः कार्याः तत्रागतफलस्यक्षेत्रावयवोदयासुभिरष्टादशशतकलास्तदागतासुभिःकाइत्यनुपातसिद्धाष्टादशशतोदयास्वोर्गुणहरयोस्तुल्यत्वेननाशादवशिष्टचालनस्वरूपः सूर्येयोजितः । सावनास्त्वविकृताएवस्थिताः । तथाचेष्टकालिकोऽर्कोयत्कालेलग्नंतत्कालात्पूर्व्वगृहीतसावनघट्योनाक्षत्राएवभवन्तीतिभगवतासम्यगुक्तम् । भास्करादिष्टकालिकादिति । अनेनैवाभिप्रायेणभास्कराचार्य्यैरप्युक्तम्। "लग्नार्थमिष्टघटिकायदिसावनास्तास्तात्कालिकार्ककरणेनभवेयुरार्क्ष्यः । आर्क्ष्योदयेहिसदृशीभ्यइहापनेयास्तात्कालिकत्वमथनक्रियतेयदार्क्ष्यः ॥" इति ॥ ४५ ॥

भा०टी०-उदयमान करके तिसकालके (सायन) रविस्पष्टके गत और भोग्य अंशादि पूरण करके ३० भोग्य करनेपर गत और भोग्य आसव होगा ॥ ४५ ॥

अथाभीष्टघटिकाभ्यऋणधनलग्नसाधनंश्लोकाभ्यामाह-

अभीष्टघटिकासुभ्योभोग्यासून्प्रविशोधयेत् ॥
तद्वत्तदेष्यलग्नासूनेवंयातांस्तथोत्क्रमात् ॥ ४६ ॥
शेषंचेत्त्रिंशताभ्यस्तमशुद्धेनविभाजितम् ॥
भागहीनंचयुक्तंचतल्लग्नंक्षितिजेतदा ॥ ४७ ॥

अभीष्टकालेयाः सूर्योदयघटिकास्तासामसुभ्योभोग्यासून्शोधयेत् । तदनन्तरंतदेष्यलग्नासून् । सूर्याक्रान्तराशेरग्रिमराशय एष्यलग्नानि । तेषामुदयासूनपितद्वत्क्रमेणशोधयेत् । एवमुक्तरीत्याशेषघटिकासुभ्योयातान्भुक्तासून्भुक्तराश्युदयासूंश्चव्यस्तक्रमात्तथाशोधयेत् । योराश्युदयोनशुद्ध्यतिसोऽशुद्धस्तेत्रिंशतागुणितंशेषंभक्तम् । चेदित्यनेनशेषाभावेक्रियानकार्याशून्यफलसिद्धेरितिसूचितम् । फलेनभागादिनाभुक्तसम्बद्धेनहीनंचकारादशुद्धराशिसङ्ख्यामानंभोग्यसम्बद्धभागादिफलेनयुक्तंचकारादन्तिमशुद्धराशिसङ्ख्यामानंतदागतराश्यादिमानसम्बन्धिसम्पातावधिकक्रांतिवृत्तैकप्रदेशरूपंतदाभीष्टकाले क्षितिजोक्षितिजवृत्तपूर्वविभागेलग्नंसममूत्रसम्बन्धेनलग्नस्वरूपोक्त्याभीष्टकालेतल्लग्नं स्यादित्यर्थः । फलादेशार्थंग्रहाणांरेवतीयोगतारासन्नावधितोग्रहात् तत्पंक्तिस्थलग्नस्यापिफलादेशार्थंततएवससुचितं ग्रहणमित्यागतलग्नसम्पातावधिकमयनांशैर्व्यस्तं संस्कुर्यादितिस्वतःसिद्धमिति नोक्तम् । नच पूर्वमेवसूर्यस्यायनांशसंस्कारानुक्त्यालग्नमपियथास्थितमित्ययनांशव्यस्तसंस्कारोऽनुक्तः सङ्गत इतिवाच्यम् । स्थूलत्वाल्लग्नार्थंसूर्येऽयनांशसंस्कारस्तस्पतत्संस्कृताद्ग्रहात्क्रान्तिच्छायाचरदलादिकंमित्यत्रादिपदसंगृहीतत्वाच्च । अथभगवतायनांशव्यस्तसंस्कारः

कण्ठेननोक्तइतिलग्नंसम्पातावधिकमेवफलादेशार्थेगृहीतम् । सूर्यस्पतुलग्नार्थमयनांशसंस्कारस्यावश्यकत्वात् । उदयानांसम्पातावधिकत्वादितिचेन्मैवम् । "भागहीनंचयुक्तंचतल्लग्नंक्षितिजेतदा ॥" इत्यर्धस्यावृत्त्याग्रिमश्लोकादिस्थप्राक्पश्चादित्यस्यावृत्त्याचप्राक्पश्चाचक्रचलनेभागैरयनांशैः क्रमेणहीनंयुक्तंलग्नंस्यादित्यर्थेचभगवतःकण्ठोक्तेःसिद्धत्वाच्च । अत्रोपपत्तिः । अभीष्टघटिकासुभ्यो भोग्यगतासुशोधनेसूर्याक्रान्तराशिर्लग्नंनेतिज्ञातम् । ततोऽग्रिमपश्चाद्राश्युदयशोधनेशुद्धोराशिर्लग्नंनेतिज्ञातम् । ततोयोराश्युदयोनशुध्यतिसएवराशिरभीष्टकालेक्षितिजेलग्नइति । तस्यकोभागोलग्नइतिज्ञानार्थमशुद्धराश्युदयासुभिस्त्रिंशद्भागास्तदाशेषासुभिःकइत्यनुपातेनभुक्तभोग्यक्रमेणलग्नराशेर्भोग्यभुक्तभागादिकंसिद्धम् । तत्रभोग्यभागास्त्रिंशतःशुद्धागताभागालग्नराशेर्भवन्तीत्यशुद्धाराशिसंख्यातोभोग्यभागाशुद्धालग्नंभवति । भुक्तभागाश्चभुक्तराशिसंख्यायांयुक्तालग्नंभवति । अयनांशव्यस्तसंस्कारोग्रहपंक्तिस्थत्वार्थम् । अन्यथाफलादेशार्थग्रहाअयनांशसंस्कृताग्राह्याइतिसर्वंनिरवद्यम् ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

भा० टी०-स्वाभीष्ट घटिकाके प्राणसे भोग्य वियोग करे । फिर क्रमानुसार पीछे २ की राशिके प्राण जबतक वियोग होसके, करे शेषको ३० तीससे गुणा करके, शोध्यराशिकी प्राणसंख्यासे भाग करनेपर जो अंशादि होंगे, सो गतराशिकी संख्यासे मिलानेपर(सायन) लग्न स्पष्ट होगी ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

अथप्रसङ्गान्मध्यलग्नानयनंलग्नानयनविशेषसूचनार्थमाह-

प्राक्पश्चान्नतनाडीभिस्तस्माल्लङ्कोदयासुभिः ॥
भानौक्षयधनेकृत्वामध्यलग्नंतदाभवेत् ॥ ४८ ॥

दिनार्धान्तर्गतदिनगतशेषहीनंदिनार्धं क्रमेणप्राक्पश्चिमंनतंरात्र्यर्धान्तर्गतरात्रिशेषगतयुतंदिनार्धंप्राक्पश्चिमनतंजातकपद्धतौप्रसिद्धम् । नतघटिकाभिस्तस्मात्तात्कालिकसूर्यात् । निरक्षदेशराश्युदयासुभिःपूर्वोक्तप्रकारेणसिद्धराशिभागादिकंप्राक्पश्चिमनतक्रमेणसूर्येक्षयधनेहीनयुतेकृत्वातदाभीष्टकालेमध्यलग्नंदशमलग्नंस्यात् । अयमभिप्रायः । प्रनतेनतघट्यसुभ्यःसूर्याक्रान्तराशेर्निरक्षोदयासुभिर्भुक्तासून्विशोध्य तत्पूर्वराशीनांनिरक्षोदयासूंश्चविशोध्य शेषं त्रिंशद्गुणमशुद्धनिरक्षोदयभक्तंफलेनभागादिनाशोधितग्रहसंख्यातुल्यराशिभिश्चसूर्योहीनोमध्यलग्नम् । एवंपश्चिमनतेनतघट्यसुभ्यःसूर्याक्रान्तराशेर्निरक्षोदयासुभिर्भोग्यासून्विशोध्यतदग्रिमराशीनांनिरक्षोदयासूंश्चविशोध्यशेषंत्रिंशद्गुणमशुद्धनिरक्षोदयभक्तंफलेनभागादिनाशोधितग्रहसंख्यातुल्यराशिभिश्चसूर्योयुतोमध्यलग्नम् । एवंभुक्तभोग्यासुभ्योऽल्पकालेऽपीष्टासवस्त्रिंशद्गुणिताःसूर्याक्रान्तराश्युदयभक्ताःफलेनभागादिनाहीनयुतोऽ

कोंमध्यलग्नंस्यात् । अनेनप्रकारेणलग्नमपिसाध्यम् । अत्रोपपत्तिः । ऊर्ध्वयाम्योत्तरवृत्तेयःक्रान्तिवृत्तप्रदेशोलग्नस्तन्मध्यलग्नम् । तत्साधनार्थमभीष्टकाले याम्योत्तरवृत्ताद्द्युरात्रवृत्तेसूर्योयावताघटीविभागादिना नतःसनतकालः । प्राक्पश्चिमकपालयोःप्राक्पश्चिमसंज्ञः । अर्धरात्रमारभ्यदिनार्धपर्यंतंप्राक्कपालम् । दिनार्धमारभ्यार्धरात्रपर्यंतंपश्चिमकपालम् । तत्रप्राङ्नतेसूर्यस्ययाम्योत्तरवृत्तात्पूर्वस्थत्वेनसूर्यात्पूर्वराशिभागएव याम्योत्तरवृत्तलग्न इति सूर्यादूनमृणलग्नरीत्यानतघटीभिःसाध्यम् । पश्चिमनतेतुसूर्यस्ययाम्योत्तरवृत्तात्पश्चिमस्थत्वेनसूर्याग्रिमराशेर्मध्यलग्नत्वात्सूर्यादधिकक्रमलग्नरीत्यानतघटीभिःसाध्यम् । तत्रोद्वृत्ताद्याम्योत्तरवृत्तस्यपञ्चदशघट्यन्तरेणनियतंसत्त्वान्निरक्षोदयासुभिःसाध्यमिति। शेषक्रियोपपत्तिस्त्वतिस्पष्टतरेतिसंक्षेपः ॥ ४८ ॥

भा०टी०-इसप्रकार प्राक् पश्चान्नतनाडीसे और लंकोदयप्राणखण्ड लेकर रविस्फुटमें ऋणधन करनेसे मध्य वा दशम लग्न होगी ॥ ४८ ॥

अथकालसाधनमाह-

भोग्यासूनूनकस्याथभुक्तासूनधिकस्यच ॥
संपिण्डयान्तरलग्नासूनेवंस्यात्कालसाधनम् ॥ ४९ ॥

अथानन्तरंलग्नार्कयोर्मध्येयोऽत्यन्तमूनस्तस्यभोग्यासूनाधिकस्यभुक्तासूनसम्पिण्डयैकीकृत्यांतरलग्नासून्सूर्यलग्नमध्येयेलग्नराशयस्तेषामुदयासून् । चःसमुच्चये । एकीकृत्यैवमुक्तप्रकारेणकालस्यासिद्धिर्भवति । अत्रोपपत्तिः । ऊनादधिकमग्रएवभवतीत्यूनतुल्यलग्नस्यभोग्यकालोऽन्तरस्थराश्युदययुतोऽधिकतुल्यलग्नस्यभुक्तकालेनयुतस्तल्लग्नयोरन्तरवर्तीकालःसिद्धःस्यात् ॥ ४९ ॥

भा०टी०-लग्न और रवि स्पष्टके मध्यमें न्यूनकी भोग और दूसरेका भुक्त और इन दोनो के मध्यमें स्थित राशियोंकी प्राणसंख्या इकट्ठी करनेसे जो प्राणसंख्या होगी तिस्से काल सिद्ध होगा ॥ ४९ ॥

अथैवंलग्नार्काभ्यांसाधितकालस्यादिनरात्र्यन्तर्गतत्वज्ञानमाह-

सूर्यादूनेनिशाशेषेलग्नेऽर्कादधिकेदिवा ॥
भचक्रार्धयुताद्भानोरधिकेऽस्तमयात्परम् ॥ ५० ॥

सूर्यात्त्रिराश्यन्तर्गतत्वेनन्यूनेलग्नेसति पूर्वप्रकारसिद्धः कालोरात्रिशेषे भवति । सूर्यात्षड्भान्तर्गतत्वेनाधिकेलग्नेपूर्वप्रकारसिद्धःकालोदिनेस्यात् । षड्भायुतात्सूर्यादधिकेलग्नेलग्नसषड्भसूर्याभ्यामानीतः पूर्वरीत्याकालोऽस्तमयात्सूर्यास्तकालात्परमनन्तर रात्रावित्यर्थः । एतेन रात्रावष्टकालेगते सषड्भसूर्याल्लग्नंसाध्यमितिसूचितम् । अत्रोपपत्तिः । सूर्योदयेसूर्यतुल्यलग्नत्वात्सूर्यादूनाधिके

लग्नेक्रमेणरात्रिशेषेदिनेचकालःस्यात् । एवमस्तकालेसषड्भसूर्यस्यलग्नत्वात् तदधिकेलग्नेरात्रावेवकालःसिद्ध्येदित्यादिसुगमतरम् ॥ ५० ॥

भा०टी०-लग्नस्पष्ट, सूर्यस्फुटसे कम होनेपर रात्रिशेष और अधिकहोनेपर दिवामें और ६ राशियुक्त सूर्यसे लग्न अधिक होनेपर सन्ध्याका पर होगा ॥ ५० ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वनिरासार्थमधिकारसमाप्तिंफक्किकयाह-

दिग्देशकालानांप्रतिपादनमिदंपरिपूर्तिमाप्तमित्यर्थः । दिशांसाधनंशिलातलइत्यादिनियतंतत्सम्बन्धेनसमकोणयाम्योत्तरशंकूनांसाधनान्यपिदिगन्तर्गतान्यनियतानि । पलभालम्बाक्षादिसाधनं देशनिरूपणं नियतम् । अग्राचरादिसाधनमनियतम्। कालसाधनंतद्वशाच्छायादिसाधनंचकालनिरूपणमितिविवेकः॥ रङ्गनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे ॥ त्रिप्रश्नस्याधिकारोऽयं पूर्णोगूढप्रकाशके ॥ ॥ इति श्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरङ्गनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशेत्रिप्रश्नाधिकारःपूर्णः ॥

॥ इति त्रिप्रश्नाधिकारः ॥

तीसरा अध्याय समाप्त।

अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

अथ चन्द्रग्रहणाधिकारोव्याख्यायते। तत्रप्रथमंसूर्यचन्द्रयोर्बिम्बयोजनानितत्स्फुटीकरणंचसार्धश्लोकेनाह-

सार्धानिषट्सहस्राणियोजनानिविवस्वतः ॥
विष्कंभोमण्डलस्येन्दोःसहाशीत्याचतुंःशतम् ॥[1]
स्फुटस्वभुक्त्यागुणितौमध्यभुक्त्योद्धृतौस्फुटौ ॥ १ ॥

षट्सहस्राणिसार्धानिसहस्रस्यार्धं पञ्चशतं तत्सहवर्तमानानिपञ्चषष्टिशतंयोजनानिसूर्यस्यमण्डलस्यगोलरूपबिम्बस्यविष्कंभोव्यासः । चन्द्रस्यगोलाकारबिम्बस्याशीत्यामहाशीत्याधिकं चतुःशतंयोजनानि । तौ व्यासौ स्पष्टया निजगत्यागुणितौ निजमध्यगत्याभक्तौ स्फुटौ स्तः । अत्रगणितेव्यासस्यैव

---

१ चतुःशती इति पाठान्तरम्।

बिम्बव्यवहारोऽभियुक्तानाम् । अत्रोपपत्तिः त्रिज्यामितकर्णे मध्यमकक्षायांभ्रमणात्तत्रयद्बिम्बंव्यासात्मकंतन्मध्यमम् । तत्रस्वल्पान्तरेणमध्यगत्यङ्गीकारान्मध्यगत्येदंतदास्फुटगत्याकिमितिस्पष्टंबिम्बंनीचेपृथूच्चेऽणुतरम् । गत्योः परमाधिकन्यूनत्वात् ॥ १ ॥

भा०टी०—सूर्यमण्डलका परिमाण ६५०० योजन और चंद्रमाका परिमाण ४८० योजनहै । निज २ की तात्कालिक गतिसे गुणकरके मध्यगतिसे भाग करनेपर स्फुट व्यास होगा ॥१॥

अथ सूर्यबिम्बंचन्द्रकक्षायांसाधयंस्तयोःकलात्मकबिम्बानयनंसार्धश्लोकेनाहं—

रवेःस्वभगणाभ्यस्तःशशाङ्कभगणोद्धृतः ॥ २ ॥
शशांककक्षागुणितोभाजितोवार्ककक्ष्या[1] ॥
विष्कम्भश्चन्द्रकक्षायांतिथ्याप्तामानुलिप्तिकाः ॥ ३ ॥

सूर्यस्यविष्कंभःप्रागुक्तस्पष्टोव्यासःस्वभगणैःसूर्यभगणैरुक्तैर्गुणितश्चन्द्रभगणैर्भक्तोवाथवाचन्द्रकक्षयावक्ष्यमाणयागुणितः सूर्यकक्षयावक्ष्यमाणयाभक्तश्चन्द्रकक्षायांचन्द्राधिष्ठिताकाशगोलेसूर्यव्यासः स्पष्टोभवति । ततोव्यासयोजनसंङ्ख्यापश्चदशभक्तासूर्यचन्द्रयोर्बिम्बव्यासप्रमाणकलाभवन्ति । अत्रोपपत्तिः । चक्रकलाभिश्चन्द्रकक्षायोजनानितदैककलयाकानीति चन्द्रकक्षास्थितैककलायांपश्चदशयोजनानि । अतश्चन्द्रस्यस्वकक्षायांस्थितत्वात्स्पष्टचन्द्रबिम्बव्यासयोजनानिपश्चदशभक्तानिचन्द्रबिम्बव्यासकलाभवन्ति । एवंसूर्यकक्षायामेकाकलासार्धशतद्वययोजनैरितिस्पष्टसूर्यव्यासस्तैर्भक्तोव्यासकलाभवन्ति । तत्रसूर्यस्य लोकैर्दूरान्तराच्चन्द्राकाशइवदर्शनात्प्रत्यक्षतोविविक्तान्तरेणदर्शनाभावाच्च चन्द्रकक्षाप्रमाणेनसूर्यबिम्बव्यासःसूर्यकक्षयायंतदाचन्द्रकक्षयाकइत्यनुपातेनगणितार्थमवस्तुभूतः साधितः । नतुवस्तुतश्चन्द्रकक्षायांसूर्यमण्डलावस्थान सूर्यग्रहणेचन्द्रस्यच्छादकत्वानुक्तिप्रसङ्गात् । अथसूर्यस्पष्टव्यासश्चन्द्रभगणभक्तस्वकक्षारूपचन्द्रकक्षयागुणितः सूर्यभगणभक्तस्वकक्षारूपसूर्यकक्षयाभक्तइतिस्वकक्षारूपगुणहरयोर्नाशात्सूर्यभगणगुणितश्चन्द्रभगणभक्तइतिपूर्वकक्षयोरनुक्तेरयं प्रकारोमुख्यत्वात्प्रथममुक्तस्ततश्चन्द्रकक्षासिद्धसूर्यबिम्बव्यासःपश्चदशभक्तः सूर्यबिम्बव्यासकलाःसिद्धाइत्युपपन्नमुक्तम् ॥ २ ॥ ३ ॥

भा०टी०—रविस्पष्ट व्यासको रविभगणसे गुण करके चन्द्रभगणसे भाग करनेपर अथवा चन्द्रकक्षासे गुण करके, रविकक्षासे भाग करनेपर चन्द्राधिष्ठित आकाशगोलमें सूर्यव्यास निरूपित होगा अर्थात् चन्द्रमाकी कक्षामें सूर्यके व्यासका परिमाण होगा । उस सूर्यव्यास और चन्द्रव्यासमानको १५ से भाग करनेपर कलादिबिम्बमान होगा ॥ २ ॥ ३ ॥

---

१ भाजितश्चार्ककक्षया इति पाठान्तरम् ।

अथोपयुक्तांभूच्छायांश्लोकाभ्यांसाधयति-

स्फुटेन्दुभुक्तिभूव्यासगुणितामध्ययोद्धृता ॥
लब्धंसूचीमहीव्यासस्फुटार्कश्रवणान्तरम् ॥ ४ ॥
मध्येन्दुव्यासगुणितंमध्यार्कव्यासभाजितम् ॥
विशोध्यलब्धंसूच्यातुतमोलिप्तास्तुपूर्ववत् ॥ ५ ॥

स्पष्टाचन्द्रस्यगतिर्भूव्यासेनगुणितामध्यया चन्द्रगत्याभक्ताफलंसूचीसंज्ञं स्यात् । भूव्यासस्पष्टसूर्यबिम्बव्यासयोरन्तरंमध्येनचन्द्रबिम्बव्यासेनाशीत्यधिकचतुःशतयोजनेनगुणितंमध्येनसूर्यबिम्बव्यासेनपंचषष्टिशतयोजनेनभक्तंफलंसूच्यांप्राक्सिद्धायां न्यूनीकृत्यतुकाराच्छेषंतमः । भूच्छायारूपंयोजनात्मकं भाभावस्तमइतिच्छायायास्तमस्त्वात् । अस्यकलात्मकंमानमाह । लिप्ताइति । त्वन्तस्यपूर्वसम्बंधानुक्तेरुत्तरत्रसम्बन्धस्तुकारेणसुबोधः । अतएवपूर्ववाक्यसमाप्तिस्थंतमः पदमत्रनान्वेति । पूर्ववत्तिथ्याप्तामानलिप्तिकाइतिपूर्वोक्तेनभूच्छायायाः कलाः कार्याः अत्रोपपत्तिः । "भूव्यासहीनंरविबिंबमिंदुकर्णाहतं भास्करकर्णभक्तम् ॥ भूविस्तृतिर्लब्धफलेनहीनाभवेत्कुभाविस्तृतिरिन्दुमार्गे ॥ " इतिसिद्धान्तशिरोमणौसूक्ष्मप्रकारउक्तः । अस्योपपत्तिस्तट्टीकायांव्यक्ता । तत्रभूव्यासोनस्यरविबिम्बस्य ४९०० स्वल्पान्तराङ्गीकारेणस्पष्टगतिभक्तमध्यगतिगुणितचन्द्रमध्ययोजनकर्णरूपस्पष्टेन्दुयोजनकर्णो गुणः । तादृशसूर्यकर्णोहरः । तत्रैतत्खण्डस्यकलाकरणार्थत्रिज्यागुणश्चन्द्रकर्णस्तादृशोहरइति चन्द्रस्पष्टमध्यगत्योस्तुल्यगुणहरत्वेननाशात्त्रिज्यामध्येन्दुयोजनकर्णयोस्त्रिज्यापवर्त्तनेनहरः पंचदशपृथगुक्तः । अग्रेऽवशिष्टौभूव्यासहीनमध्यार्कबिम्बयोजनानांरविस्पष्टगतिगुणहरौ । चन्द्रसूर्ययोर्मध्ययोजनकर्णावपिक्रमेण गुणहरौ । तत्रकर्णस्थानेलाघवात्तयोर्बिम्बयोजनानिगृहीतानि । यद्यपिसूर्य चन्द्रयोर्मध्ययोजनकर्णानुसारित्वाभावाद्बिम्बयोजनग्रहणमनुचितम् ॥ तथाप्यल्पान्तराङ्गीकारेणतददोषः । इन्दुव्यासार्कव्यासयोर्भूगोलाध्यायोक्तकक्षाभूकर्णगुणितामहीमण्डलभाजितातत्कर्णइति । तत्कक्षव्यासार्धत्वेतुसुतराम् । तत्रापिस्पष्टार्कबिम्बयोजनग्रहणेमध्यार्कयोजनबिम्बंसूर्यस्पष्टगतिगुणितंसूर्यमध्यगतिभक्तमितिसिद्धम् । नचोक्तरीत्यासूर्यस्पष्टमध्यगतीगुणहरौ भूव्यासमध्यार्कबिम्बयोजनान्तरस्योत्पन्नौनकेवलं बिम्बस्येति भूव्यासस्तादृशोमहीव्यासइत्यनेनकथंसिद्धइतिवाच्यम् । भगवतास्वल्पान्तरेणमहीव्यासस्ययथास्थितस्यैवाङ्गीकारात् । महीव्यासस्फुटार्कश्रवणान्तरमित्युक्तयामध्यस्थस्फुटपदस्योभयत्रान्वयेनार्कश्रवणसन्निधानेनचसूर्यबिम्बस्फुटरी-

त्यैवमहीव्यासस्यस्फुटत्वसिद्धेश्च । अथैतत्खण्डसिद्धफलंभूव्यासार्द्धीनंभूभायोजनानि । तत्रकलाकरणार्थंभूव्यासस्यापरखण्डस्यत्रिज्यागुणः स्पष्टचन्द्रगतिभक्तमध्यगतिगुणितचन्द्रमध्ययोजनकर्णरूपस्पष्टयोजनकर्णोहरः । तत्रत्रिज्यामध्ययोजनकर्णौगुणहरौ गुणेनावर्त्यहरस्थानेपञ्चदशचन्द्रस्पष्टमध्यगतीगुणहरावितिसूच्युक्तोपपन्ना । भूभायाः सूच्यनुकारत्वात्प्रथमखण्डद्वितीयखण्डेहीनंभूभायोजनात्मिका सापञ्चदशभक्ताकलादिकेत्युक्तमुपपन्नम् । यदि तु भूव्यासहीनंरविबिम्बमित्यादौ मध्यबिम्बानुक्तेः प्रथममेवस्पष्टार्कबिम्बग्रहणं तदामहीव्यासस्यस्पष्टत्वाप्रसिद्ध्या महीव्यासस्फुटार्कश्रवणान्तरमित्येवयथाश्रुतं सम्यक् । परन्तुतदाभूव्यासोनार्कबिम्बस्यसूर्यमध्यस्पटगतीहरगुणाववशिष्टौवाच्यावपिभगवतास्वल्पान्तरत्वादनुक्तौ । नचानुपातेसूर्यचन्द्रयोर्मध्ययोजनकर्णौवेवगृहीतौनस्फुटावितिमध्यस्फुटगतीहरगुणावनुत्पन्नौनोक्तावितिवाच्यम् । चन्द्रस्पष्टयोजनकर्णस्वरूपग्रहणेनोत्पन्नसूच्याअनुक्तत्वापत्तेः । नचचन्द्रकर्णस्यमध्यत्वेनगृहीतेवह्वन्तरमतः स्पष्टत्वेनतस्यग्रहेसूच्युपपन्नासूर्यकर्णस्य मध्यत्वेनगृहीतेत्यल्पान्तरमितिवाच्यम्।मध्यार्कबिम्बयोजनग्रहणेनस्फुटार्कश्रवणानुपपत्तेः । नचोभयत्रागृहीतेप्रत्येकमल्पान्तरमपिवह्वन्तरमतएकत्रसूर्यगतिग्रहणमुचितमितिवाच्यम्।विनिगमनाविरहात्।पूर्वंसूर्यबिम्बस्यैवसूर्यस्पष्टमध्यगतीगुणहरौनमहीव्यासस्यप्रान्त्येतूभयोरितिस्थूलसूक्ष्मविनिगमकेतुप्रान्त्येसूर्यगतिग्रहणस्यौचित्याच्च । अथमहीव्यासस्यप्रथमखण्डस्यचन्द्रगतिग्रहणेनसूच्युक्तावेवद्वितीयखण्डस्यभूव्यासोनस्फुटरविबिम्बस्यार्थात्सूर्यगतिग्रहणंसूचितमितिनक्षतिरितिचेन्न । व्याख्याप्रसङ्गेसूर्यगतिग्रहणे मानाभावादुपपत्तेरप्रसङ्गाच्च । अन्यथात्रापि चन्द्रगतिग्रहणापत्तेरिति । एतेनचन्द्रमध्यगत्याभूव्यासस्तदाचन्द्रस्पष्टगत्याकइति भूव्यासरूपंखण्डंस्पष्टंसूचीसंज्ञंसूर्यबिम्बप्रमाणेनापरंभूव्यासोनस्फुटरविबिम्बखण्डंतदाचन्द्रबिम्बप्रमाणेनकिमितिस्पष्टंद्वितीयंखंडंतयोः स्पष्टयोरन्तरंस्पष्टाभूमेतिसर्वमुपपन्नमितिनिरस्तम् । उक्तानुपाताभ्यांतयोः स्पष्टत्वसिद्धौमानाभावात् । स्पष्टत्वस्याप्रसङ्गाच्च।चन्द्रसूर्ययोर्मध्याबिम्बानुपपत्तेश्च । यत्तुभूव्यासस्यस्पष्टत्वंसूचीरूपमनुपपद्यमानंहृदि ज्ञात्वाभूव्यासएवप्रथमखण्डंभूव्यासोनस्पष्टरविबिम्बस्यमध्यकर्णानुपाताभ्यामल्पान्तरेणाप्रवर्तनान्मध्यबिम्बेगुणहरावुत्पाद्यद्वितीयखण्डमुभयोरङ्गीकरणंचन्द्रमध्यकर्णेनत्रिज्यामिताः कलास्तदाभ्यांकाइत्यनुपातेप्रमाणफलयोः फलावर्त्तनेनप्रमाणस्थानापन्नपञ्चदशहरेणेतितयोरन्तरं भूभेत्युक्तंज्ञानराजदैवज्ञैः सिद्धान्तसुंदरे । "इनावतीव्यासवियोगनिघ्नंशशाङ्कबिम्बंरविबिम्बभक्तम् । फलोनभूव्याससमाकुभासौशेरेन्दुभक्ताकलिकादिकास्यात ॥" इतिग्रन्थेन । अत्रसूर्यव्यासः

स्फुटार्कबिम्बयोजनात्मकोनमध्ययोजतात्मकः । चन्द्रार्कबिम्बेगुणहरौमध्ययोज-नात्मकौनस्फुटबिम्बयोजनात्मकौतट्टीकाकृच्चिन्तामण्यभिमतौ । उपजीव्यसूर्य-सिद्धान्तविरोधात् । तदुक्तंतदुपपत्त्यापितदसिद्धेश्च । अत्रयदपितट्टीकाकृच्चिंताम-ण्युक्तंमध्यमस्यभूभाबिम्बस्यानयनंफलाविशेषेणमध्यकर्णावेवगुणहरौमकल्प्योक्तवि-धिनासिद्धस्यमध्यबिम्बस्ययदिमध्यगत्यन्तरेणेदंस्फुटगत्यन्तरेणकिमित्यनुपातेनस्फु-टत्वंसूलकृदनुक्तमपिकार्यमितितद्गत्यन्तरवशेनभूभायाअनुत्पत्त्या न समञ्जसम् । अन्यथागतिवशेनसाधितार्कचन्द्रबिम्बवद्गत्यन्तरकलाभ्योऽविकृताभ्यएवभूभायाः-साधनापत्तेरिति । तदसत् । "स्फुटेन्दुभुक्तिर्भूव्यासगुणितामध्ययोद्धृता ॥" इतिसूर्यसिद्धान्तोक्तयुक्तिसिद्धसूच्यनुक्त्याभूव्यासस्यैवाविकृतस्य ग्रहणादित्यलं-परदोषगवेषणापल्लवितेन ॥ ४ ॥ ५ ॥

भा०टी०-चन्द्रस्पष्टगतिसे पृथ्वीव्यासको (१६००) गुणकरके चन्द्रमाकी दैनिकभुक्तिसे भाग करनेपर सूची होगी । महीव्यास (१६००) और सूर्यस्फुटव्यासके अन्तरको चन्द्रमध्यव्यास (४८०) से गुणकरके मध्यार्कव्यास (६५००) से भाग करनेपर जो प्राप्त होवै, तिसको सूचीसे वियोग करनेपर तमव्यासयोजन होंगे । पहलेकी अनुसार इसको १५ से भागकरनेपर कलादि होगी ॥ ४ ॥ ५ ॥

अथ ग्रहणद्वयसंभूतिमाह-

भानोर्भार्धेमहीच्छायातत्तुल्येऽर्कसमेऽपिवा ॥
शशांकपातेग्रहणंकियद्भागाधिकोनके ॥ ६ ॥

सूर्यात्सकाशात्षड्भान्तरेभूच्छायामूर्यापरदिक्त्वात् । तत्तुल्येसषड्भार्करूप च्छायाक्षेत्रादिनासमेचन्द्रपाते । अपिवाथवासूर्यतुल्येचन्द्रपातेसूर्यचन्द्रयोःप्र-त्येकंग्रहणम् । ननुसमत्वाभावेऽपिग्रहणमित्यतआह । कियद्भागेत्यादि । सष-ड्भार्कादर्काद्वाकतिपयैर्भागैरधिकऊनेऽपिचन्द्रवातेग्रहणम् । तथाचनक्षतिः । भागाश्चन्द्रग्रहणेद्वादशनिश्चयार्थम् । सूर्यग्रहणेतुनतांशषडंशसंस्कारात्सप्तेत्यापा-ततः । अत्रोपपत्तिः । सषड्भार्ककेवलार्कान्यतरतुल्येचन्द्रपातेशराभावश्चन्द्रस्य तत्तुल्यत्वात् । तदाचन्द्रोभूच्छायायांभवतीतिग्रहणम् । एवंशरसत्वेऽपिमा-नैक्यखण्डादल्पेभूच्छायायांमण्डलैकदेशस्यसत्वेनग्रहणम् । एवंशराभावे मानै-क्यखण्डान्न्यूनशरेचचन्द्रमण्डलंसूर्यमण्डलस्याच्छादकंभवतिपरन्तुतत्रशरोनातिसं-स्कृतोऽतःसम्यगुक्तमुपपन्नम् ॥ ६ ॥

भा०टी०-सूर्यसे ६ राशि दूरपर पृथिवीकी छाया स्थित है । चन्द्रपात छाया या सूर्यकी बराबर राशिमें स्थित हो ग्रहण होगा । थोडी कमताई अधिकाईमेंभी ग्रहण होगा ॥ ६ ॥

ननुतत्कुत्रभवतीत्यतस्तयोर्ग्रहणयोःकालमाह-

तुल्यौराश्यादिभिःस्यातामवावास्यान्तकालिकौ ॥
सूर्येन्दुपौर्णमास्यन्तेभार्धेभागादिकौसमौ ॥ ७ ॥

अमावास्यान्तकालोत्पन्नौसूर्यचन्द्रौराश्याद्यवयवैःसमौभवतः । पौर्णमास्यंतेभागादिकौतुल्यौ सूर्यचन्द्रौषड्भान्तरेस्याताम् । तथाचामान्तेसूर्यचन्द्रयोरेकत्रोर्ध्वाधरान्तरेणसत्त्वात्सूर्यग्रहणम् । पौर्णमास्यन्ते चन्द्रभूभयोरेकत्राव-स्थानाच्चन्द्रग्रहणम् । एतेनपूर्वश्लोकेशशाङ्कपातइत्यत्रचन्द्रपातौद्वौनग्राह्याविितिसूचितम् । एतच्छ्लोकस्यवैयर्थ्यापत्तेः । अत्रोपपत्तिः । अमान्तेसूर्यचन्द्रयोः पूर्वापरान्तराभावेनयोगात्तुल्यौसूर्यचन्द्रौपूर्णिमान्तेभचक्रार्धान्तरत्वात्षड्राश्यन्तरौभागादिसमाविति ॥ ७ ॥

भा०टी०-अमावस्याके अन्तिमकालमें सूर्यकी राश्यादि चंद्रमाकी तुल्यहैं । पूर्णिमाके अन्तमें चन्द्रमा और सूर्यमें ६ राशिका फरक (अन्तर) है ॥ ७ ॥

अथपर्वान्तेसूर्यचन्द्रपातानांसाधनमाह-

गतैष्यपर्वनाडीनांस्वफलेनोनसंयुतौ ॥
समलिप्तौभवेतांतौपातस्तात्कालिकोऽन्यथा ॥ ८ ॥

तौसूर्यचन्द्रौ गतैष्यपर्वनाडीनां यत्कालिकौसूर्यचंद्रौ तत्कालाद्गताएष्यावादर्शान्तपूर्णिमान्तान्यतरघटिकास्तासांस्वफलेनस्वगतिसम्बन्धेनयत्फलम् । "इष्टनाडीगुणाभुक्तिःषष्ट्याभक्ताकलादिकम् ॥" इतिमध्याधिकारोक्तेनानीतम् । तेनगतैष्यक्रमेणोनयुतौतत्रसमकलौस्तः । यद्यपिसमांशाविितिवक्तुंयुक्तंतथाप्यन्यातिथ्यन्तापसाधितौसमकलाविितिद्योतनार्थसमकलाविित्युक्तम् । पातःस्वगत्युत्पन्नफलेनान्यथागतैष्यक्रमेणयुतोनस्तात्कालिकः पर्वान्तकालिकः स्यात् । अत्रोपपत्तिश्चालनश्लोकः । तत्रतिथ्यन्तेभागान्तरत्वेनकलादिसाम्यम् । पातस्यचक्रशोधितत्वेनेतरग्रहवैपरीत्यम् ॥ ८ ॥

भा०टी०-मध्यरात्रिके स्पष्टराश्यादिमें पर्वांतकाल मध्यरात्रिके पूर्व होनेपर तात्कालिक हीन, नहीं तो योगकरनेपर चन्द्रमा और सूर्यकी समकला होगी । पातसंबंधमें तिसकालका संस्कार उलटा करना पड़ता है ॥ ८ ॥

अथप्रागुक्तानांबिम्बानांप्रयोजनमाह-

छादकोभास्करस्येन्दुरधःस्थोघनवद्भवेत् ॥
भूच्छायांप्राङ्मुखश्चन्दोविशत्यस्यभवेदसौ ॥ ९ ॥

सूर्यमण्डलस्याच्छादकश्चन्द्रःस्यात् । नन्वाकाशेद्वयोःसत्वेनसूर्यएवचन्द्र-

स्यच्छादकः कथंनस्यादित्यतआह । अधःस्थ इति । वक्ष्यमाणकक्षाध्याये सूर्यकक्षातोऽधःकक्षास्थत्वाच्चन्द्रस्यैवाच्छादकत्वम् । नन्वूर्ध्वस्थश्छादको येन सूर्यश्चन्द्रस्यच्छादकः । ननु विनैकत्रावस्थानंछादनंनभवत्यतआह । घनवदिति । यथाधःस्थो मेघःसूर्यस्याच्छादकोभवतितथाचन्द्रोभवतात्यर्थः । प्राङ्मुखःपूर्वाभिमुखोगच्छंश्चन्द्रोभूच्छायांप्रतिप्रविशति । अतः कारणादस्यचन्द्रस्यासौभूभाच्छादिकाभवेत् । तथाचसूर्यग्रहणेसूर्यचन्द्रबिम्बयोःप्रयोजनंचन्द्रग्रहणेचन्द्रभूभाविम्बयोःप्रयोजनमितिभावः । अत्रोपपत्तिः । चन्द्रोदर्शान्तेसूर्यादधोभवतीतिचन्द्रःसूर्यस्याच्छादकः । बुधशुक्रयोस्तुमण्डलाल्पत्वान्नाच्छादकत्वम् । चन्द्रस्याधोग्रहाभावात्षड्भान्तरेभूम्याप्रतिबद्धाःसूर्य्यकिरणाश्चन्द्रगोलेनपतान्ति । अतोनिष्प्रभस्यचन्द्रस्यभूभायांप्रवेशइतिचन्द्रस्यभूभाच्छादिका ॥ ९ ॥

भा०टी०-मेघकी समान चंद्रमा नीचे आयकर सूर्यको ढकलेताहै। आगे चलताहुआ चंद्रमा पृथिवीकी छायामें प्रवेशकरे तो ग्रहण होताहै ॥ ९ ॥

अथग्रासानयनमाह-

तात्कालिकेन्दुविक्षेपंछाद्यच्छादकमानयोः ॥
योगार्धात्प्रोज्झ्ययच्छेषंतावच्छन्नंतदुच्यते[1] ॥ १० ॥

यश्छाद्यतेसच्छाद्यः । सूर्यग्रहणेसूर्यश्चंद्रग्रहणेचन्द्रः । यश्छादयतिसच्छादकः । सूर्यचन्द्रग्रहणयोः क्रमेणचन्द्रभूभे । तयोःपूर्वानीतमानकलयोरैक्यस्यार्धात्तात्कालिकचन्द्रात्पूर्वोक्तप्रकारेणसाधितंविक्षेपं कलादिकंविशोध्ययदवशिष्टंतत्प्रमाणकंछन्नंछादकेनच्छाद्यस्ययावान्मण्डलप्रदेशआच्छादितस्तावत्प्रदेशात्मकंग्रासरूपंग्रहणंतत्त्वज्ञैःकथ्यते । अत्रोपपत्तिः । छाद्यच्छादकमण्डलनेमियोगेग्रहणाद्यन्तरूपेमण्डलकेन्द्रयोरन्तरंस्वबिम्बखण्डयोगरूपम् । बिम्बस्यव्यासमानात्मकत्वात् । तच्चसमत्वाल्लाघवाच्चयोगार्धरूपंधृतम् । ततो यथाप्रवेशस्तथाग्रासोभवतीतिपर्वान्तेछाद्यच्छादकयोर्विक्षेपान्तरितत्वात्तदूने विक्षेपेमण्डलयोगस्तदन्तरमितःसएवग्रासः ॥ १० ॥

भा०टी०-तिसकालके चन्द्र-विक्षेपको छाद्य और छादकमानके योगार्द्धसे वियोग करने पर जो बचता है तिसको छन्न कहते हैं ॥ १० ॥

अथसम्पूर्णन्यूनग्रहणज्ञानग्रहणाभावज्ञानंचाह-

यद्ग्राह्यमधिके[2]तस्मिन्सकलंन्यूनमन्यथा ॥
योगार्धादधिकेनस्याद्विक्षेपेग्राससम्भवः ॥ ११ ॥

---

१ यच्छिष्टंतत्तमश्छन्नमुच्यतइतिवा पाठः । २ ग्राह्यमानाधिकइति पाठान्तरम् ।

तास्मिञ्छन्नमानेऽधिके ग्राह्यमानाधिके यद्यस्मात्कारणाद्ग्राह्यमानमस्ति । अ-तःकारणात्सकलंसम्पूर्णं ग्रहणं भवति । अन्यथा । ग्राह्यमानान्न्यूनेग्रासेन्यूनं ग्राह्यमानान्तर्गतंग्रहणं स्यात् । मानैक्यखण्डाद्विक्षेपेऽधिकेसतिग्राससम्भवोग्रहणं नस्यात् । अत्रोपपत्तिः । ग्राह्यमानादधिकेग्रासेसम्पूर्णग्रहणंन्यूनेन्यूनंमानैक्यख-ण्डादधिकेविक्षेपेमण्डलस्पर्शासम्भवाद्ग्रहणाभावः ॥ ११ ॥

भा०टी०-जो ग्राह्य ग्रहबिम्बसे छन्नमान अधिकहो तो संम्पूर्ण ग्रहण किया जायगा अन्यथा होनेसे कम ग्रहण किया जायगा । योगार्द्धसे विक्षेप अधिक होनेपर ग्रासस म्भव नहीं होता ॥ ११ ॥

अथस्थित्यर्धविमर्दार्धेश्लोकाभ्यामाह-

ग्राह्यग्राहकसंयोगवियोगौदलितौपृथक् ॥
विक्षेपवर्गहीनाभ्यांतद्वर्गाभ्यामुभेपदे ॥ १२ ॥
षष्ट्यासंगुण्यसूर्येन्द्वोर्भुक्त्यन्तरविभाजिते ॥
स्यातांस्थितिविमर्दार्धेनाडिकादिफलेतयोः ॥ १३ ॥

ग्राह्यग्राहकमानयोर्योगान्तरेअर्धितेपृथक्स्थानान्तरेस्थाप्ये । अग्रिमक्रिया-याकदाचिदशुद्धत्वसम्भवेपुनःक्रियार्थमेतयोरावश्यकत्वात् । तद्वर्गाभ्यांयोगा-र्द्धान्तरार्धयोर्वर्गाभ्यांविक्षेपवर्गेणवर्जिताभ्यामुभेद्वेमूलेषष्ट्यागुणयित्वासूर्यचन्द्रयोर्ग-त्यन्तरकलाभिर्भक्तेतयोर्योगवियोगयोः स्थानेषष्ट्यादिफलेक्रमेणस्थित्यर्धविमर्दार्धे भवतः । अत्रोपपत्तिः । ग्रहणारंभाद्ग्रहणान्तपर्यन्तं यः कालः सस्थि-तिसंज्ञः । तस्यखण्डएकंग्रहणारंभान्मध्यग्रहणपर्यन्तमपरंमध्यग्रहणाद्ग्रहणान्त-पर्यन्तम् । तत्रबिम्बनेमिस्पर्शकालेमानैक्यखण्डंकर्णःस्पर्शमोक्षकालिकशरो भुजःस्पर्शमोक्षान्यतरकालिकशराग्रमध्यकालिकशराग्रयोरन्तरंपूर्वापरंकोटिरितित-त्खण्डसाधकं क्षेत्रम् । एवंसम्पूर्णग्रहणेसम्मीलनोन्मीलनकालयोरन्तरकालो मर्दस्तत्रमध्यग्रहणात्सम्मीलनोन्मीलनकालावधिखण्डेतत्साधकंछाद्यच्छादकमण्ड-लकेंद्रयोरन्तरंमानार्धान्तरतुल्यं कर्णस्तात्कालिकशरो भुजः शराग्रयोरन्तरंवि-क्षेपवृत्तेपूर्वापरंकोटिरितिक्षेत्रम् । सम्मीलनंछाद्यमण्डलस्याच्छादनसमाप्तिः । उन्मीलनंतुछादकमण्डलादाच्छादितसम्पूर्णच्छाद्यमण्डलस्यनिःसरणारम्भः । तत्रस्पर्शमोक्षसम्मीलनोन्मीलनकालानामज्ञानान्मध्यकालिकविक्षेपग्रहणम् । भु-जकर्णवर्गान्तरपदंकोटिरितिपूर्वश्लोकोक्तमुपपन्नम् । छाद्यच्छादकमण्डलकेंद्रयोःपू-र्वापरान्तराभावेमध्यग्रहणसम्भवाच्छाद्यच्छादकयुतिगत्यन्तरकलाभिः षष्टिघटिका-स्तदानीतकोटिकलाभिःकाइत्यनुपातेनस्थितिमर्दखण्डे । तत्रचन्द्रग्रहणे भूभागतेः सूर्यगत्यनुरोधात्सूर्यगतित्वमित्युपपन्नंद्वितीयश्लोकोक्तम् ॥ १२ ॥ १३ ॥

भा०टी०-पृथक् ग्राह्य ग्राहकमान योगार्द्ध और वियोगार्द्ध वर्ग निर्णयकरे । तिस्से विक्षेप वर्ग हीन करके मूल निर्णयकरे । उन दो मूलको ६० से गुणकरके सूर्येन्दु स्पष्ट भुक्त्यन्तरसे भागकरनेपर स्थूलस्थितार्द्ध और स्थूल विमर्दार्ध दण्डादि होंगे ॥ १२ ॥ १३॥

अथस्थित्यर्धविमर्दार्धेअसकृत्साध्येइतिश्लोकाभ्यामाह-

स्थित्यर्धनाडिकाभ्यस्तागतयःषष्टिभाजिताः ॥
लिप्तादिप्रग्रहेशोध्यंमोक्षेदेयंपुनःपुनः ॥ १४ ॥
तद्विक्षेपैःस्थितिदलंविमर्दार्धंतथासकृत् ॥
संसाध्यमन्यथापातेतल्लिप्तादिफलंस्वकम् ॥ १५ ॥

सूर्यचन्द्रपातानांगतयःस्थित्यर्धघटीभिर्गुणिताःषष्ट्याभक्ताःफलंकलादिप्रग्रहेस्पर्शस्थित्यर्धनिमित्तं सूर्यचन्द्रयोर्हीनमोक्षेमोक्षस्थित्यर्धनिमित्तसूर्यचन्द्रयोर्देयं योज्यम् । चन्द्रपातेतल्लिप्तादिफलंस्थित्यर्धघट्यानीतंकलादिपूर्वफलंस्वकं स्वगत्युत्पन्नमन्यथाविपरीतंप्रग्रहस्थित्यर्धनिमित्तंयोज्यंमोक्षस्थित्यर्धनिमित्तंहीनमित्यर्थः । तद्विक्षेपैस्तात्कालिकचन्द्रपाताभ्यामानीतशरकलाभिः । कलानां बहुत्वाद्विक्षेपैरितिबहुवचनम् । विक्षेपाभ्यामित्यर्थः । पुनःपुनःस्थितिदलं कार्यम् । अत्रैकंपुनःपदंस्पर्शस्थित्यर्थसम्बद्धंद्वितीयंमोक्षस्थित्यर्धसम्बद्धंपुनःपदम् । तेनस्पर्शस्थित्यर्धार्थसाधितचन्द्रपाताभ्यामानीतशरेणप्रागुक्तप्रकारेणस्पर्शस्थित्यर्धंसंसाध्यम्मोक्षस्थित्यर्धार्थसाधितचन्द्रपाताभ्यामानीतशरेणपूर्वोक्तरीत्यामोक्षस्थित्यर्धंसाध्यमित्यर्थः । तच्चोभयमसकृद्वारंवारंस्पर्शस्थित्यर्धानीतचालनेनमध्यकालिकौचन्द्रपातावुक्तरीत्याप्रचाल्यतच्छरेणपूर्वोक्तरीत्यास्पर्शास्थित्यर्धमस्मादप्युक्तरीत्यास्पर्शस्थित्यर्धमेवंयावदविशेषः । एवंमोक्षस्थित्यर्धानीतचालनेनमध्यकालिकौचन्द्रपाताउक्तरीत्याप्रचाल्यतच्छरेणपूर्वोक्तरीत्यामोक्षस्थित्यर्धमस्मादप्युक्तरीत्यामोक्षस्थित्यर्धमेवंयावदविशेषइत्यर्थः । ननुस्थित्यर्धविमर्दार्धयोरेकमित्युक्तेःकथंविमर्दार्धमसकृत्साध्यमितिनोक्तमित्यतआह । विमर्दार्धमिति । तथास्पर्शमोक्षस्थित्यर्धसाधनरीत्यासकृद्यावदविशेषस्तावत्स्पर्शमर्दार्धमोक्षमर्दार्धंचसंसाध्यम् । तथाहि स्थित्यर्धनाडिकाभ्यस्ताइत्यत्रविमर्दार्धनाडिकाग्रहात्स्पर्शमर्दार्धमोक्षमर्दार्द्धेसाध्ये । आभ्यांप्रत्येकमसकृत्स्पर्शमर्दार्धमोक्षमर्दार्धेस्फुटेस्तः । अत्रोपपत्तिः । प्रागुक्तंक्षेत्रं स्पर्शमोक्षसम्मीलनकालिकशरवशादितितदज्ञानान्मध्यकालिकशरग्रहणेनस्थूलं स्थित्यर्धमर्दार्धंचातोमध्यकालात्तदन्तरेणपूर्वाग्रिमकालिकयोस्तेषां सम्भवात्तत्कालचालितचन्द्रपाताभ्यां विक्षेपस्तात्कालिकोभवतिपरंस्थूलः । स्थूलस्थित्यर्धाद्यानीतत्वात् । अतोऽस्मदानीतंस्थित्यर्धादिपूर्वापेक्षयासूक्ष्ममपिस्थूलमित्यसकृत्सूक्ष्मामिति । तत्र सम्मीलनोन्मीलन-

कालयोराकाशस्पर्शमोक्षसम्भवात्स्पर्शमोक्षमर्दार्धमिंतिध्येयम् ॥ १४ ॥ १५ ॥

भा०टी०-स्थित्यर्ध दण्डसे सूर्य चन्द्र और राहुकी गति गुण करके ६० से भागकरने पर जो कलादिहों, सो ग्रहसे स्पर्शहीन (पातस्थानमें योग) और मोक्षमें चंद्रमा व सूर्यमें योग और पातस्थानमें वियोग करना होताहै ॥ १४ ॥ तिस्से तिसकालके विक्षेपद्वारा स्थित्यर्द्ध और विमर्दार्द्ध वारम्वार निर्णय करनेपर सूक्ष्म होताहै ॥ १५ ॥

अथमध्यग्रहणस्पर्शमोक्षकालानाह-

स्फुटतिथ्यवसानेतुमध्यग्रहणमादिशेत् ॥
स्थित्यर्धनाडिकाहीनेग्रासोमोक्षस्तुसंयुते ॥ १६ ॥

स्पष्टतिथ्यन्तकाले । तुकारात्तत्पूर्वापरकालनिरासः । मध्यग्रहणग्रासोपचयसमाप्तिंकथयेत् । मध्यग्रहणसम्बन्धेनमध्यसूर्यचन्द्रानीतमध्यातिथ्यन्तेतत्सम्भवइतिकस्यचिद्भ्रमस्तद्वारणार्थं स्फुटेति । स्थित्यर्धघटिकाभिरूनेतिथ्यन्तकालेग्रासःस्पर्शः । संयुतेस्थित्यर्धघटीभिर्युतेतिथ्यन्तकालेमोक्षः । तुकारःस्पर्शमोक्षस्थित्यर्धाभ्यांस्पर्शमोक्षकालाविति विषयव्यवस्थार्थकः । अत्रोपपत्तिः । तिथ्यन्तकालेछाद्यच्छादकयोः पूर्वापरान्तराभावाद्योगेमण्डलस्पर्शोयावान्भवति ततः पूर्वाग्रिमकालयोर्न्यूनएवातोऽत्रमध्यग्रहणकालः । केचित्तु । "पर्वान्तः किलसाधितोभवलयेसूर्येन्दुचिह्नान्तरात्तस्मिन्बिम्बसमागमोनहि यतश्चन्द्रःशराग्रेस्थितः । तस्मादायनदृष्टिसंस्कृतविरोधानीततिथ्यन्तकेबिम्बैक्यंभवतीतिकिंनविहितंपूर्वैर्नविद्मोवयम् ॥" इत्यनेनात्रमध्यग्रहणंखण्डयन्ति । तन्न । पूर्वापरान्तराभावेयोगसत्त्वेनकदम्बसूत्रस्थयोर्याम्योत्तरान्तरस्यैवसत्त्वेनतत्रमध्यग्रहणस्योचितत्वात् । अन्यथाध्रुवसूत्रेसममूत्रेवायोगाभ्युपगमेविनिगमनाविरहापत्तेः । यथागतग्रहयोःकदम्बमूत्रणैवयोगाभ्युपगमात् । दृष्टिप्रत्ययार्थंदृक्कर्मोक्तेः । ग्रहणद्वयस्यस्वतएवदृग्गोचरत्वात् । ग्रहद्वयादर्शनाच्चेत्यादिसंक्षेपः । मध्यग्रहणकालात्पूर्वस्पर्शस्थित्यर्धघटीभिःस्पर्शः । अग्रिमकालेमोक्षस्थित्यर्धघटीभिर्मोक्षः । स्थित्यर्धयोस्तदन्तररूपत्वेनसिद्धेः ॥ १६ ॥

भा०टी०-स्पष्टतिथिके शेषमें मध्यग्रहण होता है । तिस्से सूक्ष्म स्थित्यर्ध दण्डवियोग करनेपर ग्रास (स्पर्श) काल होताहै और योग करनेसे मोक्षकाल होताहै ॥ १६ ॥

अथसम्पूर्णग्रहणेनिमीलनोन्मीलनकालावप्याह-

तद्वदेवविमर्दार्धनाडिकाहीनसंयुते ॥
निमीलनोन्मीलनाख्येभवेतांसकलग्रहे ॥ १७ ॥

सम्पूर्णग्रहणेतद्वत् । यथास्थित्यर्धोनाधिकेतिथ्यन्तेस्पर्शमोक्षौतथेत्यर्थः । एव-

कारात्तद्भिन्नरीतिर्व्युदासः । स्पर्शविमर्दार्धमोक्षविमर्दार्धघटीभ्यांक्रमेणोनयुते-तिथ्यन्तेक्रमेणनिमीलनोन्मीलनसञ्ज्ञेस्याताम् । अत्रोपपत्तिः । मर्दार्ध-स्यमध्यकालात्तदन्तररूपत्वेनतदूनाधिकेतास्मिन्क्रमेणनिमीलनोन्मीलनेसम्पूर्णग्रह-णएवभवतः । न्यूनग्रहणेतत्स्वरूपव्याघातात्तदभावः ॥ १७ ॥

भा०टी०-सम्पूर्ण ग्रहणमें सूक्ष्म विमर्दार्द्ध घटिका मध्य ग्रहणसमयसे हीन और तिसमें योग करनेसे निमिलिन उन्मीलन काल होगा ॥ १७ ॥

अथेष्टकालइष्टग्रासज्ञानार्थकोटिकलानयनमाह-

इष्टनाडीविहीनेनस्थित्यर्धेनार्कचन्द्रयोः ॥
भुक्त्यन्तरंसमाहन्यात्षष्ट्याताःकोटिलिप्तिकाः ॥ १८ ॥

सूर्यचन्द्रयोर्गत्यन्तरंकलात्मकंग्रहणारम्भाद्याइष्टघटिकाः स्पर्शस्थित्यर्धघट्य-नधिकास्ताभिरूनेनस्पर्शस्थित्यर्धेनगुणयेत् । अस्मात्षष्टिविभक्तप्राप्ताःकोटिक-लाभवन्ति । अत्रोपपत्तिः । इष्टकालेछाद्यच्छादकमण्डलकेन्द्रयोरन्तरंकर्णस्त-त्कालशरोभुजस्तत्कालशराग्रमध्यकालिकशराग्रयोरन्तरंविक्षेपवृत्ते कोटिरितिक्षेत्र-इष्टघट्यूनस्पर्शस्थित्यर्धघटिकानांकलाःकोटिःसिद्धा । पूर्वस्पर्शकालिककोट्याः-स्थित्यर्धघटिकानांसिद्धत्वात् ॥ १८ ॥

भा०टी०-सूर्यचन्द्रकी गतांतरकलाके द्वारा ग्रहणारम्भसे दण्डादिवियुक्त स्थित्यर्द्ध गुण-करके ६० से भागकरनेपर भागफल कोटि कला होगा ॥ १८ ॥

अथात्रसूर्यग्रहणेविशेषमाह-

भानोर्ग्रहेकोटिलिप्तामध्यस्थित्यर्धसंगुणाः ॥
स्फुटस्थित्यर्धसम्भक्ताःस्फुटाःकोटिकलाःस्मृताः ॥ १९ ॥

सूर्यस्यग्रहणेउक्तप्रकारेण याःकोटिकलाः सूर्यग्रहणोक्तस्पष्टस्थित्यर्धानीताम-ध्यस्थित्यर्धेनसूर्यग्रहणोक्तस्पष्टशरानीतस्थित्यर्धेनसंगुणिताः स्फुटस्थित्यर्धेनसू-र्यग्रहणाधिकारोक्तेनभक्ताः सत्यः स्पष्टा कोटिकलाः सूर्यग्रहणतत्त्वज्ञैरुक्ताः । अत्रो-पपत्तिः । सूर्यग्रहणेस्पर्शमोक्षान्यतरमध्यकालयोरन्तरस्यस्थित्यर्धत्वात्तस्यच-स्पष्टशरोद्भूतस्थित्यर्धलम्बनान्तरैक्यसंस्कारमितत्वात्स्पष्टस्थित्यर्धानुरुद्धाउक्तरी-त्यानीताःकोटिकलाः । अपेक्षिताश्चस्पष्टशरोद्भूतस्थित्यर्द्धानुरुद्धाः । एत-त्कोटिसम्बद्धंक्षेत्रम् । स्थित्यर्धक्षेत्रान्तर्गतत्वात् । स्पष्टस्थित्यर्धस्यतूक्तक्षे-त्रोत्पन्नत्वाभावात् । अन्यथास्पष्टशरोद्भतस्थित्यर्धस्यलम्बनान्तरैक्यसंस्कारा-नुक्तिप्रसङ्गः । अतःस्पष्टस्थित्यर्धेनैताआगताःकोटिकलास्तदास्पष्टशरोद्भतक्षेत्र-जमध्यमरूपास्थित्यर्धेनकाइतिस्फुटाःकलाःसिद्धाः ॥ १९ ॥

भा०टी०-सूर्यग्रहणमें कोटिकला मध्यस्थित्यर्धद्वारा गुणकरके स्फुट स्थित्यर्धद्वारा भागक-रनेपर स्फुट कोटिकला होगी ॥ १९ ॥

अथाभ्यइष्टग्रासानयनमाह-

क्षेपोभुजस्तयोर्वर्गयुतेर्मूलंश्रवस्तुतत् ॥
मानयोगार्धतःप्रोज्झ्यग्रासस्तात्कालिकोभवेत् ॥ २० ॥

क्षेपोविक्षेपोभुजः । कोटिभुजयोःकर्णसापेक्षत्वादाह । तयोरिति । कर्णस्तुतयोःकोटिभुजयोर्वर्गयोगान्मूलंसिद्धएव । तत्कर्णवर्गात्मकंमूलंग्राह्यग्राहकमानैक्यार्धाद्विशोध्यशेषंतात्कालिकः कल्पितेष्टकालसंबंधीग्रासोवांतग्रासः स्यात् । अत्रोपपत्तिः । क्षेत्रंपूर्वप्रतिपादितम् । स्पर्शकालेमानैक्यखण्डस्यकर्णत्वात् क्षेत्रयोरुभयोर्मध्यकालावधित्वादिष्टकर्णोनंमानैक्यखण्डमिष्टग्रासएव॥ २० ॥

भा०टी०--विक्षेप (भुज) वर्ग और कोटीफलका वर्ग मिलाकर मूल ग्रहण करनेसे कर्ण होगा। चन्द्रसूर्यमान-योगार्द्धसे कर्णवियोग करनेपर तात्कालिक ग्रास होगा ॥ २० ॥

अथमध्यग्रहणानन्तरमिष्टग्रासानयनमाह०

मध्यग्रहणतश्चोर्ध्वमिष्टनाडीर्विशोधयेत् ॥
स्थित्यर्धान्मौक्षिकाच्छेषंप्राग्वच्छेषंतुमौक्षिके ॥ २१ ॥

मध्यग्रहणकालादूर्ध्वमनन्तरम् । चकारोविशेषार्थकतुकारपरः । इष्टघटिकाःकर्म । मौक्षिकान्मोक्षकालसम्बद्धात्स्थित्यर्धात् । नस्पर्शविशोधयेत् । गणकइतिकर्त्राक्षेपः । शेषंकोटिलिप्तादिग्रासानयनान्तंगणितकर्मप्राग्वद्धुक्तयंतरंसमाहन्यादित्युक्तप्रकारेणकुर्यात् । मौक्षिकेमोक्षस्थित्यर्धान्तर्गतेष्टकाले तुर्विशेषे ग्रासःशेषमुर्वरितोग्रासोऽवान्तरग्रासोभवति । नपूर्ववद्गतः । अत्रोपपत्तिः । पातादिमध्यग्रहणात्पूर्वमिष्टकालस्यग्रहणारंभावधिकस्यस्पर्शस्थित्यर्धसम्बद्धत्वादागतोग्रासउपचयात्मकः । नावशिष्टः । अवशिष्टमण्डलस्यशुद्धत्वेनग्रस्तत्वासम्भवात् । एवंमध्यग्रहणानन्तरमिष्टकालस्यमोक्षस्थित्यर्धान्तर्गतत्वादुक्तरीत्यानीतोग्रासोऽपचयात्मकः । नशुद्धबिम्बदर्शनात्मकः । ग्रस्तत्वाभावात् ॥ २१ ॥

भा०टी०-मध्यग्रहणके पीछे होनेपर मौक्षिकस्थित्यर्द्धसे इष्टनाडी (मोक्षकालविमुक्त इष्टदण्डादि) वियोगकरके कोटीनिर्णय करे ॥ २१ ॥

अथाभीष्टग्रासादिष्टकालानयनंश्लोकाभ्यामाह-

ग्राह्यग्राहकयोगार्धाच्छोध्याःस्वच्छन्नलिप्तिकाः ॥
तद्वर्गात्प्रोज्झ्यतत्कालविक्षेपस्यकृतिंपदम् ॥ २२ ॥
कोटिलिप्तारवेःस्पष्टस्थित्यर्धेनाहताहृताः ॥
मध्येनलिप्तस्तत्राड्यःस्थितिवद्ग्रासनाडिकाः ॥ २३ ॥

छाद्यच्छादकमानैक्यखण्डादभीष्टग्रासकलाः शोध्याः। शेषस्यवर्गादभीष्टग्रासकालिकविक्षेपस्यवर्गंविशोध्य शेषस्यमूलंकोटिकलाः। सूर्यग्रहणेविशेषमाह। रवेरिति। सूर्यस्यग्रहणइतिशेषः। भानोर्ग्रहइतिपूर्वमुक्तेः। उक्तप्रकारेणयाः कलास्तामध्यग्रहणकालस्पर्शमोक्षान्यतरकालयोरन्तररूपेणस्पष्टस्थित्यर्धेनगुण्याः। स्पष्टशरोत्पन्नस्थित्यर्धेनमध्यमेनभक्ताः फलंकोटिकलाभवन्ति। स्थितिवत्स्थित्यर्धसाधनरीत्या। "षष्ट्यासद्गुण्यसूर्येन्द्वोर्भुक्त्यन्तरविभाजिताः॥" इत्युक्तेनतासांकोटिकलानांघटिकायास्ताअभीष्टग्राससम्बन्धिघटिकाः स्पर्शमोक्षान्यतरस्थित्यर्धान्तर्गताः क्रमेण मध्यग्रहणाच्छेषागतावाभवन्ति। अत्रोपपत्तिः। पूर्वोक्तव्यत्यासात्सुगमतरा। परन्तुस्वाभीष्टग्रासकालिकशरज्ञानेसूक्ष्मम्। तच्छराज्ञानेमध्यकालिकशरग्रहणेनस्थूलम्। अतएवभास्कराचार्यैःकालसाधनेतत्कालबाणेनमुहुः स्फुटइत्युक्तमितिविशेषः॥ २२॥ २३॥

भा०टी०-ग्राह्य और ग्राहकके योगार्द्धसे स्वीय आच्छन्न (ग्रास) कला पृथक्करे तिसके वर्गसे तिसकालका विक्षेपवर्ग अलगकरके मूलकरनेसे कोटि होगी ॥ २२ ॥ परन्तु सूर्यग्रहणमें कोटिकला स्पष्ट स्थित्यर्द्धसे गुणकरके मध्यस्थित्यर्द्धसे भागकरनेपर कोटि होगी। तिस्से स्थितिके सिद्ध होनेकी समान ग्रासनाड़ीको स्थिर करना चाहिये ॥ २३ ॥

अथवक्ष्यमाणग्रहणपरिलेखोपयुक्तवलनस्यानयनंश्लोकाभ्यामाह-

नतज्याक्षज्ययाभ्यस्तात्रिज्याप्तातस्यकार्मुकम् ॥
वलनांशाःसौम्ययाम्याः पूर्वापरकपालयोः ॥ २४ ॥
राशित्रययुताद्ग्राह्यात्क्रान्त्यंशैर्दिक्समैर्युताः ॥
भेदेऽन्तराज्ज्यावलनासप्तत्यङ्गुलभाजिताः ॥ २५ ॥

यत्कालिकंवलनंकर्तुमिष्टंतात्कालिकंनतंचन्द्रग्रहणेचन्द्रस्यसूर्यग्रहणेसूर्यस्यसाध्यम्। तद्यथास्वोदयात्स्वास्ताद्गतशेषघटिकाः। स्वदिनार्धान्तर्गताःस्वदिनार्धादूनाः क्रमेण पूर्वापरनतघटिकाभवन्ति। तन्नतंनवतिगुणंस्वदिनार्धभक्तंनतांशास्तेषांज्यानतज्येत्यर्थः। स्वदेशाक्षांशज्ययागुणितात्रिज्ययाभक्ताफलस्यधनुः कलात्मकंषष्टिभक्तंपूर्वापरकपालयोः पूर्वापरनतयोः क्रमेणोत्तरदक्षिणावलनांशाभवन्ति। यत्कालिकं वलनंतात्कालिकाद्ग्राह्याद्राशित्रययुतात्सायनांशाद्ये क्रान्त्यंशास्तैर्दिक्तुल्ययुतास्तेषांज्याभेदेभिन्नदिक्त्वेऽन्तरात्क्रान्त्यंशवलनांशयोरन्तराज्ज्यासप्तत्यङ्गुलैर्भक्ताशेषदिक्का। अङ्गुलात्मकत्वेनहरस्योद्देशाङ्गुलादिकावलनाभवति। अत्रोपपत्तिः। समवृत्तपूर्वापरादिदिग्भ्यः क्रान्तिवृत्तपूर्वापरादिदिशोयावतान्तरेणवलिताउत्तरस्यांदक्षि-

णस्यांवावलनांशाः । तदानयनार्थं प्रथमतः समवृत्तानुरुद्धदिग्भ्योविषुवद्वृत्तदिशो यावतान्तरेणवलितादक्षिणोत्तरयोस्तदाक्षवलनम् । तथाहि । समप्रोतचलवृत्तं ग्रहचिह्नस्थंसमविषुवद्वृत्तयोर्यत्रलग्नंतत्प्रदेशान्नवत्यंशान्तरेस्वस्ववृत्तेप्राच्योरन्तरंवलनं तत्तुल्यमेवेतरादिशामन्तरं पूर्वकपालस्थग्रहे समवृत्तप्राचीतोविषुवद्वृत्तप्राच्याउत्तरत्वादुत्तरम् । पश्चिमकपालस्थेतुसमवृत्तप्राचीतोविषुवद्वृत्तप्राच्यादक्षिणत्वाद्दक्षिणम् । तत्रक्षितिजस्थेग्रहेतदन्तरमक्षांशतुल्यम् । याम्योत्तरवृत्तस्थे ग्रहे तदन्तराभावः । अतस्त्रिज्यातुल्ययानतकालज्ययाक्षज्यातुल्याक्षवलनज्यातदेष्टनतज्ययाकेत्यनुपातागताक्षज्यायाधनुराक्षवलनमुक्तमुपपन्नम् । द्वितीयंतुविषुवद्वृत्तदिग्भ्यः क्रांतिवृत्तदिशोयावतान्तरेणवलितादक्षिणोत्तरयोस्तदायनंवलनम् । तथाहि वप्रोतवृत्तंग्रहचिह्नस्थंविषुवद्वृत्तेयत्रासन्नंलगतितत्स्थानाच्चतुर्थांशान्तरे यत्स्थानं तद्विषुवत्प्राची । तस्याग्रहचिह्नात्त्रिभान्तरितक्रान्तिवृत्तप्राचीयदन्तरेणतदायनंवलनम् । तत्तुल्यमेवेतरदिशामन्तरम् । उत्तरायणस्थेग्रहउत्तरंदक्षिणायनस्थेग्रहेदक्षिणम् । नत्वयनसंधावभावात्मकम् । गोलसन्धौपरमक्रान्तितुल्यमतः सत्रिभक्रान्तितुल्यंसत्रिभग्रहगोलदिक्कमित्युपपन्नंराशित्रययुताद्ग्राह्यात्क्रान्त्यंशैरिति । द्वयोर्वलनयोरेकदिक्त्वेसमवृत्तप्राचीतः क्रान्तिवृत्तप्राचीतद्योगरूपस्फुटवलनान्तरेण वलनदिशिभवति । भिन्नदिक्त्वेतुवलनान्तररूपस्फुटवलनान्तरेणशेषदिशिभवति । तज्ज्यास्फुटवलनज्यात्रिज्यावृत्ते । अग्रेपरिलेख एकोनपञ्चाशन्मितव्यासार्द्धवृत्तेदानार्थं त्रिज्यावृत्तइयंतदैकोनपञ्चाशन्मितंव्यासार्द्धेकेत्यनुपाते प्रमाणेच्छयोरिच्छापवर्तनाद्धरस्थानेऽधोवयवत्यागात्सप्ततिः । अतोदिक्समैर्युताइत्याद्युपपन्नम् ॥२४॥२५॥

भा०टी०--ग्रस्तकी नवी हुई ज्याको, अक्षज्यासे गुणकरके त्रिज्यासे भागकरने पर जो ज्या होगी तिस्से धनुकरनेपर वलनाश होगा। नतके पूर्वापरके अनुसारसे वलन उत्तर दक्षिणमें स्थिर करना चाहिये ॥ २४॥ तीनराशिवाले ग्रस्तग्रहस्फुटकी निर्देश करे । बलनांश और उत्क्रान्ति एकदिशामें होनेसे योग, अन्यथा अन्तर करनेसे स्फुट वलन है। स्फुट वलनज्या ७० से भागकरनेपर भागफल अंगुलादिक वलनग्रस्त ग्रहका होगा ॥ २५॥

अथकलात्मकबिम्बविक्षेपादीनामङ्गुलीकरणमाह-

सोन्नतंदिनमध्यर्धंदिनार्धाप्तंफलेनतु ॥
छिन्द्याद्विक्षेपमानानितान्येषामङ्गुलानितु ॥ २६ ॥

दिनमानमध्यर्धमर्ध इत्यध्यर्धस्वार्धयुक्तमित्यर्थः । अभीष्टकालिकोन्नतघटीभिः सहितंदिनार्धेमभक्तंफलेन । तुकारोयद्ग्रहणंतस्यादिनमानोन्नते ग्राह्येइत्यर्थकः । विक्षेपग्राह्यग्राहकबिम्बमानानि । तानिपूर्वोक्तानिकलात्मकानि । ग्रासादिकमपिध्येयम्

भजेत् । तुकारात्फलमेषांकलात्मकानामङ्गुलानिभवन्ति । अत्रोपपत्तिः । उदयास्तकालेबिम्बंकिरणानांभूमिगोलावरुद्धत्वेनाल्पोर्ध्वस्थकिरणानांनयनप्रतिहननार्हत्वाद्बिम्बंव्यक्तत्वान्महद्भासते । तत्राङ्गुलात्मकंबिम्बकलात्रयात्मकैकाङ्गुलप्रमाणेनभवति । खमध्यस्थेग्रहेतुबिम्बस्यसर्वकिरणावरुद्धत्वान्नयनप्रतिघाताच्चसूक्ष्मंबिम्बंभासतेतत्रांगुलात्मकंबिम्बंकलाचतुष्टयात्मकैकांगुलप्रमाणेनभवति । तत्रोदयास्तकालेशङ्कोरभावात्खमध्येतस्यात्रिज्यातुल्यत्वात्त्रिज्यातुल्यशङ्कावुदयकालिकैकांगुलमानस्य कलात्रयस्यैकांगुलमुपचयोलभ्यतेतदेष्टशङ्कौकइत्यनुपातेनाभीष्टकालेफलंयुक्तम् त्रयमेकांगुलस्यकलात्मकंमानंभवति । अतएवभास्कराचार्यैरुदयास्तकालेसार्द्धद्वयंकलांगुलमानमङ्गीकृत्य "त्रिज्योद्धृतस्तत्समयोत्थशंकुः सार्धद्वियुक्तोऽङ्गुललिप्तिकाः स्युः ॥" इत्युक्तम् । तत्रभगवतालोकानुकम्पयास्वल्पान्तरत्वाच्चमध्याह्नेऽपिकलाचतुष्टयात्मकमेकांगुलमङ्गीकृत्यदिनार्धतुल्यपरमोन्नतकालएकपचयस्तदेष्टोन्नतकालेकइत्यनुपातागतफलयुक्तंत्रयंकलापकांगुलमानमभीष्टकाले । तत्रदिनार्धभक्तोन्नतकालस्यफलरूपत्वात्त्रयाणां सम्च्छेदतयायोजनेत्रिगुणितं दिनार्धसार्धैकगुणदिनमानरूपमुन्नतकालयुक्तंदिनार्धभक्तमितिसिद्धम् । ततएतत्कलाभिरेकांगुलंतदेष्टकलाभिः किमित्यनुपातेनकलात्मकानामङ्गुलीकरणमुक्तमुपपन्नम् ॥ २६ ॥

भा० टी०—दिनमानमें निजके अर्द्ध और उन्नतघटिका योग करके दिनार्द्धसे भागकरनेपर जो फल होगा, तिस्से कलादि विक्षेप बिम्बमान आदिको भागकरनेसे अंगुलादि होंगे ॥ २६ ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वनिरासार्थमधिकारसमाप्तिंफक्किकयाह—

स्पष्टम् । रङ्गनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे । चन्द्रग्रहाधिकारोऽयंपूर्णोगूढप्रकाशके ॥इति श्रीसकलगणकसार्वभौमवल्लालदैवज्ञात्मजरङ्गनाथगणकविरचिते गूढार्थप्रकाशकेचन्द्रग्रहणाधिकारःपूर्णः ॥

इति चन्द्रग्रहणाधिकारः ।

चतुर्थोऽध्यायः समाप्तः ।

अथ पंचमोऽध्यायः ।

अथसूर्यग्रहणाधिकारोव्याख्यायते । तत्रयत्पदार्थविशेषप्रयुक्तश्चन्द्रग्रहणाधिकारातिरिक्तःसूर्यग्रहणाधिकारस्तद्विशेषयोरभावस्थानादेवोत्पत्तिनियमात्तयोरभावस्थानकथनव्याजेनतयोरुद्देशमाह—

मध्यलग्नसमेभानौहरिजस्यनसम्भवः ॥
अक्षोदङ्मध्यभक्रान्तिसाम्येनावनतेरपि ॥ १ ॥

सूर्येऽमावास्यान्तकालिकेमध्यलग्नसमेसतिदिनमध्यस्थानऊर्ध्वयाम्योत्तरवृत्तेलग्नः क्रांतिवृत्तप्रदेशोमध्यलग्नंत्रिप्रश्नाधिकारोक्तम् । तत्तुल्येसतिमध्याह्नइति फलितम् । हरिजस्यलम्बनस्यभूपृष्ठक्षितिजवशाल्लम्बनोत्पत्तेर्लंबनस्यापिक्षितिजवाचकहरिजशब्देनाभिधानात्सम्भवउत्पत्तिर्न । तत्रलम्बनाभावइत्यर्थः । अथमध्याह्नइतिस्फुटोक्त्यपेक्षया मध्यलग्नसमइतिवक्रोक्तिः कृपालोर्भगवतो नोचितेत्यग्रिमग्रन्थार्थतत्त्वविचारणयापिमध्याह्नेतदभावानुपपत्तेःसाम्प्रदायिकव्याख्यामनादृत्यतत्त्वार्थोव्याख्यायते । लग्नयोरुदयक्षितिजास्तक्षितिजप्रदेशयोः संलग्नक्रान्तिवृत्तप्रदेशयोर्मध्यम् । ऊर्ध्वमध्यप्रदेशस्त्रिभोनलग्नमित्यर्थः । प्रयोगस्तुमध्याह्नइतिवत् । तत्तुल्येऽर्कैलम्बनस्याभावइति । दर्शान्तलग्नं प्रथमंविधायनलम्बनंवित्रिभलग्नतुल्ये । रवौतदूनेऽभ्यधिकेचतस्यादेवंधनर्णक्रमशश्चवेद्यम् ॥" इतिभास्कराचार्येणस्फुटमुक्तेश्च । नत्यभावस्थानमाह । अक्षेत्यादि । अक्षांशाउत्तरायेमध्यभस्य मध्यलग्नस्य क्रान्त्यंशाः । अत्रमध्यलग्नशब्देनदशमभावस्त्रिभोनलग्नंवाग्राह्यमुभयपक्षेऽप्यदोषः । अनयोस्तुल्यत्वेऽवनतेर्नतेः । अपिशब्दात्सम्भवोन । अभावइत्यर्थः । नत्वपिशब्दाल्लम्बनस्यापितत्राभावः । उत्तरक्रान्त्यक्षयोस्तुल्यत्वेमध्यलग्नतुल्यार्कत्वाभावेऽपितदभावापत्तेः । अत्रोपपत्तिः । अमावास्यान्तकालेसमौसूर्यचन्द्रौ । तत्रचन्द्रशराभावेभूगर्भान्नीयमानंभूत्रमर्कस्थानावधिचन्द्रंस्पृशत्येवेतिभूगर्भेच्छादकत्वंचन्द्रस्यसूर्यस्यच्छाद्यत्वंसम्भवति । तत्रमनुष्याणामसत्त्वाद्भूपृष्ठेतेषांसत्त्वाच्च भूपृष्ठान्नीयमानमर्कोपरिसूत्रंचन्द्रेनलगत्येव । किन्तुचन्द्राधिष्ठानगोलेचन्द्रचिह्नादूर्ध्वंलगति । तत्रयदाचन्द्रआयातितदाभूपृष्ठेसूर्यस्यचन्द्रश्छादकोभवति । यदातुखमध्येसूर्यस्तदाभूगर्भसूत्रंभूपृष्ठसूत्रंचसूर्योपरिगमेकमेवचन्द्रे लगतीतिभूपृष्ठेऽमान्तकालेचन्द्रश्छादकोभवति । अतएवभूगर्भपृष्ठसू[illegible]न्तरंलम्बनम् । भूपृष्ठसूत्रात्सूर्योपरिगाच्चन्द्राधिष्ठानाकाशगोलेचन्द्रस्यशरसत्त्वेचन्द्रचिह्नस्यवालम्बितत्वात् । अतएवभास्कराचार्यैरुक्तम् 'दृग्गर्भसूत्रयोरैक्यात्खमध्येनास्तिलम्बनम् ॥' इति । अथचन्द्राधिष्ठानगोलेभूपृष्ठसूत्रमर्कोपरिगतंचन्द्रचिह्नादूर्ध्वंचन्द्रदृग्वृत्तेयदंशैर्लगति-तल्लम्बनं दृग्वृत्ताकारक्रान्तिवृत्तेभवति । यदातुदृग्वृत्ताद्भिन्नंक्रान्तिवृत्तंतदाभूपृष्ठसूत्रं चन्द्राधिष्ठानगोलेचन्द्रदृग्वृत्तेचन्द्रादूर्ध्वंयत्रलग्नंतत्रचन्द्रगोलस्थक्रान्तिवृत्तयाम्योत्तररूपकदम्बप्रोतवृत्तमानीयचन्द्रगोलस्थक्रान्तिवृत्तेयत्रलग्नंतच्चन्द्रचिह्नयोरन्तरंक्रांतिवृ-

त्तेपूर्वापरंस्फुटलम्बनकलाःकोटिः । चन्द्रस्यक्रान्तिवृत्तानुसारेणगमनात्प्रोतवृत्तेक्रान्तिवृत्तदृग्वृत्तयोरन्तरंयाम्योत्तरंकलात्मकंनतिर्भुजः । भूगर्भपृष्ठसूत्रान्तरंदृग्वृत्तेकलात्मकंदृग्लम्बनंकर्णः । दृग्वृत्तस्यकदम्बप्रोतवृत्ताकारत्वेक्रान्तिवृत्तेतयोरन्तराभावाल्लम्बनाभावः । याम्योत्तरमन्तरंदृग्लम्बनंनतिरेवोत्पन्ना । दृग्वृत्ताकारक्रान्तिवृत्तेतुदृग्लंबनमेवक्रांतिवृत्तेतयोरन्तरमितिलम्बनमुत्पन्ननंत्यभावश्च । तथाचदृग्वृत्तस्यकदम्बप्रोतवृत्ताकारत्वेत्रिभोनलग्नस्थानेऽर्कोभवति । तद्वृत्तस्य क्रान्तिवृत्तयाम्योत्तरत्वेनोदयास्तलग्नमध्यवर्तित्वेनलग्नस्थानात्त्रिभान्तरितत्वात् । नहिक्रान्तिवृत्ताद्याम्योत्तरान्तरज्ञानार्थसमप्रोतवृत्तमङ्गीकार्यम् । येन दशमभावतुल्यार्केलम्बनाभावउपपन्नःस्यात् । क्रान्तिवृत्तस्यगोलवृत्तत्वेनसमप्रोतवृत्तस्यदेशवृत्तत्वेनसम्बन्धाभावात् । अतएवभगवतासर्वज्ञेननतिसाधनार्थमग्रेदृक्क्षेपःकदम्बप्रोतवृत्तेत्रिभोनलग्नस्यैवसाधितः । दृक्क्षेपाभावेत्रिभोनलग्नस्यखमध्यस्थत्वेनतदातस्यदशमभावतुल्यत्वेनदशमभावनतांशाभावाद्दृक्क्षेपाभावः । तदात्रिभोनलग्नस्यनतांशाभावश्च । नतांशाभावस्त्वक्षांशतुल्योत्तरक्रान्तौसुखार्थ स्थूलांगीकारेतुदशमभावस्यैवनतांशोन्नतज्येदृक्क्षेपदृग्गतीनतिलम्बनयोःसाधनार्थसमनन्तरमेवभगवतोक्तेर्नतुवस्तुरूपे । आयासेनदृक्क्षेपसाधनस्योक्तस्यवैयर्थ्यापत्तेरितिसर्वनिरवद्यम् ॥ १ ॥

भा०टी–सूर्यस्फुट मध्यलग्न सम होनेसे लम्बनका सम्भव नहीं होता। उत्तर-अक्षांश और दशमकी क्रान्तिसाम्यमें अवनतिकीभी सम्भावना नहीं है ॥ १ ॥

अथोद्दिष्टयोरभावस्थानातिरिक्तस्थानेसम्भवात्प्रतिपादनंप्रतिजानीते–

देशकालविशेषेणययावनतिसम्भवः ॥
लम्बनस्यापिपूर्वान्यदिग्वशाच्चतथोच्यते ॥ २ ॥

देशविशेषेणकालविशेषेणावनतिसम्भवोनतिकालोत्पत्तिर्गोलस्थित्यायथाभवति। लम्बनस्यापिसमुच्चयेत्रिभोनलग्नस्थानात् पूर्वापरदिगनुरोधात् चकारात्सम्भवोदेशकालविशेषेणयथाभवतीत्यर्थः । तथातत्तुल्येननतिलम्बने आनयनद्वारामयाकथ्यते ॥ २ ॥

भा०टी०–देशकालके उपरोक्त न होनेसे जो अवनति होती है और मध्यरेखाके पूर्व या पश्चिममें होनेके वशसे जो लम्बन होता है, सो इससमय कहताहूं ॥ २ ॥

तत्रोपयुक्तासुदयाभिदामाह–

लग्नंपर्वान्तनाडीनांकुर्यात्स्वैरुदयासुभिः ॥
तज्ज्यान्त्यापक्रमज्याघ्नीलम्बज्यातोदयाभिधा ॥ ३ ॥

स्वैःस्वदेशीयैरुदयासुभीराश्युदयासुभिःपर्वघटिकानांलग्नंगणकःकुर्यात् । पर्वान्तकालिकंलग्नंसाध्यमित्यर्थः । यद्यपिपूर्वंलग्नसाधनंस्वोदयैरेवोक्तमिति स्वैरुदयासुभिरितिव्यर्थंतथापिसमनन्तरमेवदशमभावसाधनोक्त्याकस्यचिल्लग्नंव्यक्षोदयैरेवात्रसाध्यमितिभ्रमस्यवारणायपुनरुक्तिः । तस्यलग्नस्यायनांशसंस्कृतस्यज्याभुजज्यापरमक्रान्तिज्ययागुण्यास्वदेशीयलम्बज्ययाभक्ताफलमुदयसञ्ज्ञं स्यात् । अत्रोपपत्तिः । लग्नक्रान्तिज्यासाधनार्थलग्नभुजज्यायाः परमक्रान्तिज्यागुणस्त्रिज्याहरस्ततोलम्बज्याकोटीत्रिज्याकर्णस्तदालग्नक्रान्तिज्याकोटौकःकर्णइत्यनुपातेत्रिज्ययोर्नाशाल्लग्नभुजज्यापरमक्रान्तिज्यागुणालम्बज्ययाभक्ताफलंलग्नस्याग्रा । इयंभगवतोदयसञ्ज्ञोक्तालग्नस्योदयसंज्ञत्वात् । उदयसम्बन्धाच्चेत्युक्तमुपपन्नम् ॥ ३ ॥

भा०टी०--स्वदेशीय उदयप्राणसे पर्वान्तकालकी (सायन) लग्न गिने । तिसकी भुजज्याको परमापक्रमज्या (१३९७) से गुणकरके स्वदेशीय लम्बज्यासे भागकरनेपर उदय होगा ॥ ३ ॥

अथोपयुक्तांमध्यज्यांसार्धश्लोकेनाह-

तदालङ्कोदयैर्लग्नंमध्यसञ्ज्ञंयथोदितम् ॥
तत्क्रान्त्यक्षांशसंयोगोदिक्साम्येऽन्तरमन्यथा ॥
शेषंनतांशास्तन्मौर्वीमध्यज्यासाभिधीयते ॥ ४ ॥

तदापर्वान्तकालेलङ्कोदयैर्व्यक्षदेशीयराश्युदयैर्यथोदितंपूर्वोक्तप्रकारेणजातकपद्धत्युक्तनतघटीभिर्धनमृणंयथायोग्यंमध्यसञ्ज्ञंलग्नंदशमभावात्मकंसाध्यम् । अत्रलग्नसम्बन्धेनस्वदेशराश्युदयासुग्रहणशङ्कावारणायलंकोदयैरित्युक्तम् । तस्यदशमभावस्यायनांशसंस्कृतस्यक्रान्तिःस्वदेशाक्षांशाः । अनयोर्योगएकदिक्त्वेकार्यः । अन्यथाभिन्नदिक्त्वेऽन्तरंतयोरेवशेषंसंस्कारजदिक्नतांशास्तेषांज्याकार्या सामध्यलग्ननतांशज्यामध्यज्योच्यतेतत्सम्बन्धात् । अत्रोपपत्तिःस्पष्टा ॥ ४ ॥

भा०टी०-तदुपरान्त लङ्कोदयप्राणसे (सायन) मध्यलग्न (दशम) साधन करै । मध्यलग्नकी क्रान्ति और अक्षांश एक ओर होनेसे योग ओर अन्यथा वियोग करनेसे शेषनतांश होता है, तिसकी ज्या करनेसे मध्यज्या होती है ॥ ४ ॥

अथाभ्यामुपयुक्तंदृक्क्षेपंलम्बनोपयुक्तांदृग्गतिंचसार्धश्लोकेनाह-

मध्योदयज्ययाभ्यस्तात्रिज्याप्तावर्गितंफलम् ॥ ५ ॥
मध्यज्यावर्गविश्लिष्टंदृक्क्षेपःशेषतःपदम् ॥
तात्रिज्यावर्गविश्लेषान्मूलंशङ्कुःसदृग्गतिः ॥ ६ ॥

पूर्वोक्तमध्यज्यापूर्वानीतोदयाभिधयोदयज्यया । अस्याज्यारूपत्वाज्ज्ययेत्युक्तम् । गुणितात्रिज्ययाभक्तफलंवर्गितंवर्गःसञ्जातोयस्यतत् । फलस्यवर्गःकार्यइत्यर्थः । मध्यज्यायावर्गेविश्लिष्टंहीनंवर्गितंफलंकार्यम् । शेषान्मूलं दृक्क्षेपःस्यात् । दृक्क्षेपत्रिज्ययोर्यौवर्गौतयोरन्तरान्मूलंशङ्कुःसआनीतःशंकुर्दिग्गतिसञ्ज्ञोभवति । नतुशंकुमात्रम् । अत्रोपपत्तिः । त्रिभोनलग्नस्यदृग्ज्यानयनार्थक्षेत्रम् । मध्यलग्नदृग्ज्याकर्णस्त्रिभोनलग्नस्ययाम्योत्तरवृत्तात्प्रागपरस्थितत्वेन तत्खस्वस्तिकान्तरस्थिततदीयदृग्वृत्तेप्रदेशांशज्याकोटिः । मध्यलग्नत्रिभोनलग्नान्तरांशज्याक्रान्तिवृत्तस्थोभुजः । अत्र भुजानयनंचोदयलग्नस्थक्रान्तिवृत्तप्रदेशः । प्राक्स्वस्तिकात्तदग्रान्तरेणोत्तरदक्षिणोभवति । एवमस्तलग्नप्रदेशःपरस्वस्तिकाद्दक्षिणोत्तरः । तदनुरोधेनच त्रिभोनलग्नप्रदेशक्रांतिवृत्तीययाम्योत्तरवृत्तरूपतद्दृग्वृत्तंक्षितिजेयाम्योत्तरवृत्तक्षितिजसम्पातात्तदाग्रान्तरेणलग्नमवश्यंभवति । अतस्त्रिज्यातुल्यमध्यलग्नदृग्ज्ययालग्नाग्रातुल्योभुजस्तदाभीष्टतदृग्ज्ययाकइत्यनुपातेनसफलसञ्ज्ञः । तद्वर्गोनान्मध्यलग्नदृग्ज्यावर्गान्मूलंत्रिभोनलग्नस्यदृग्ज्यादृक्क्षेपाख्या । एतद्वर्गोनात्त्रिज्यावर्गान्मूलंत्रिभोनलग्नशंकुर्दृग्गतिसञ्ज्ञः । अत्रेदमवधेयम् । त्रिप्रश्नाधिकारोक्तप्रकारेणत्रिभोनलग्नस्यशंकुदृग्ज्येदृग्गतिदृक्क्षेपतुल्येनभवतः । किन्तुदृग्गतिदृक्क्षेपाभ्यां क्रमेणन्यूनाधिकेभवतः सर्वदाधूलीकर्मणानुभवात् । अतआनीतोऽयंदृक्क्षेपस्त्रिभोनलग्नदृङ्मण्डलस्थितोऽपिनत्रिज्यानुरुद्धः । किन्तु फलवर्गोनत्रिज्यावर्गपदरूपविलक्षणवृत्तव्यासार्द्धप्रमाणेनसिद्धइतिगम्यते । अतो दृग्ज्यायास्त्रिज्यानुरुद्धत्वेनत्रिज्यावृत्तपरिणतोदृक्क्षेपस्त्रिभोनलग्नस्यदृग्ज्यास्फुटदृक्क्षेपरूपा । अस्यास्तत्रिज्यावर्गेत्यादिनादृग्गतिःस्फुटात्रिभोनलग्नशंकुरूपा । एतदनुक्तिःस्वल्पान्तरत्वाद्गणितसुखार्थंकृपालुनाकृता । त्रिप्रश्नक्रियागौरवभियैतन्मार्गान्तरंलाघवादुक्तमितिदिक् ॥ ५ ॥ ६ ॥

भा०टी०-मध्यज्याको पहली कही हुई उदयज्यासे गुण करके त्रिज्यासे भागकरके वर्ग करता हुआ मध्यज्यावर्गसे वियोग करके मूल करनेसे दृक्क्षेप होगा,दृक्क्षेपवर्ग और त्रिज्यावर्गका अन्तर शंकुवर्ग है; तिसके मूलको दृक्गति कहते हैं ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथलाघवाद्दृक्क्षेपदृग्गतीगणितसुखार्थंश्लोकार्धेनाह-

नतांशबाहुकोटिज्येस्फुटेदृक्क्षेपदृग्गती ॥

दशमभावनतांशानां भुजकोट्योर्नतांशतदूननवतिरूपयोरनयोर्ज्येक्रमेणदृक्क्षेपदृग्गतीअस्फुटेस्थूले । यद्वास्फुटेप्रागुक्तेदृक्क्षेपदृग्गतीविहायगणितलाघवार्थंदशमभावनतांशभुजकोट्योर्ज्येतत्स्थानापन्नेग्राह्ये । यत्तूदयज्याभावेनतांशबाहुकोटिज्येदृक्क्षेपदृग्गतीस्फुटेइति । तन्न । उक्तप्रकारेणैतत्सिद्धेस्तत्कथन-

स्यन्यर्थत्वात् । अत्रोपपत्तिः । त्रिभोनलग्नस्यदशमभावासन्नत्वेनदशमभावस्य याम्योत्तरवृत्तस्थत्वेनलाघवार्थंदशमभावमेवत्रिभोनलग्नं प्रकल्प्यतन्नतांशज्याम-ध्यज्यारूपात्रिभोनलग्नदृक्क्षेपः । उन्नतज्याशंकुर्दृग्गतिः । इदमतिस्थूलम् । यैस्तु-भगवतोक्तंमध्यलग्नंदशमभावपरतयाव्याख्यातंतेषांमतएतदुक्तमितिसूक्ष्मम् । प्रयाससाधितदृक्क्षेपदृग्गतीप्रागुक्तेसूक्ष्मेअप्यतिस्थूलेइतिध्येयम् । भास्कराचा-र्यैस्तु । "त्रिभोनलग्नस्यदिनार्धजातेननतोन्नतज्येयदिवासुखार्थम् ॥" इतियदुक्तंत-दस्मात्सूक्ष्ममितिध्येयम् ॥

भा०टी०–स्थूलपक्षमें दशम लग्नके नतांशकी बाहु और कोठिज्याको दृक्क्षेप और दृग्गति समझा जाता है ॥

अथलम्बनोपयुक्तच्छेदकथनपूर्व्वकंलम्बनानयनंसार्द्धश्लोकेनाह–

एकज्यावर्गतश्छेदोलब्धंदृग्गतिजीवया॥ ७ ॥
मध्यलग्नार्कविश्लेषज्याछेदेनविभाजिता ॥
रवीन्द्वोर्लम्बनंज्ञेयंप्राक्पश्चाद्घटिकादिकम्[१] ॥ ८ ॥

एकराशिज्यायावर्गाद्दृग्गतिजीवयाप्रागुक्तदृग्गत्या । दृग्गतेस्त्रिशंकुरूपत्वेन-ज्यारूपत्वाज्जीवयेतिस्वरूपप्रतिपादनम् । भागहरणेनलब्धंछेदसंज्ञंस्यात् । अथ-मध्यलग्नंत्रिभोनलग्नंदर्शान्तकालिकं नतुदशमभावः तात्कालिकःसूर्यःअनयोरन्त-रस्यत्रिभानधिकस्यज्याछेदेनप्राक्साधितेनभक्ताफलंघटिकादिकंप्राक्पश्चात्त्रिभोन-लग्नरूपमध्यलग्नस्थानात्पूर्वापरविभागयोःसूर्यचन्द्रयोस्तुल्यंलम्बनंज्ञेयम् । अत्रोपप त्तिः ।"त्रिभोनलग्नार्कविशेषशिञ्जिनीकृताहताव्यासदलेनभाजिता । हतात्फलाद्धि-त्रिभलग्नशंकुनात्रिजीवयाप्तंघटिकादिलम्बनम् ॥" इतिसिद्धांतशिरोमणौसूक्ष्मंल-म्बनानयनमुक्तम् । तस्योपपत्तिस्तट्टीकायांसुप्रसिद्धा । मध्यलग्नस्यत्रिभोनपर-त्वेनव्याख्यानान्मध्यलग्नार्कविश्लेषज्यात्रिभोनलग्नार्कविश्लेषशिञ्जिनीरूपाजाता । इयंचतुर्गुणात्रिभोनलग्नशंकुरूपदृग्गत्याचगुण्यात्रिज्यावर्गेणभाज्येतिलम्बनानयन-प्रकारेण सिद्धम् । तत्रचतुस्त्रिज्यावर्गयोर्गुणहरयोर्गुणापवर्त्तनेनहरस्थानएकोरा-शिज्यावर्गःसिद्धः । अत्रापिदृग्गत्येकराशिज्यावर्गौगुणहरौगुणेनापवर्त्यहरस्थान-एकज्यावर्गइत्यादिनाछेदउपपन्नः । हरस्यच्छेदाभिधानात् । अतोमध्यलग्ना-र्केत्याद्युक्तमुपपन्नम् । लम्बनघटीभिरुभयोश्चालनंवक्ष्यमाणगणितआवश्य-कमितिसूचनार्थंरवीन्द्वोर्लम्बनमित्युक्तम् । अन्यथादर्शान्तकालेसूर्यगतभूपृष्ठसूत्रा-च्चन्द्रकक्षायांचन्द्रचिह्नस्यतद्घटीभिर्लम्बितत्वाद्द्वयोरुक्त्यनुपपत्तिः । त्रिभोनलग्नस-मेऽर्केलम्बनाभावात्पूर्वापरविभागे सूर्येसतिलम्बनंभवतीतिप्राक्पश्चादित्युक्तम् ।

१ प्राक्पश्चाद्घटिकादितत्इतिवापाठः ।

अत्रेदमवधेयम् । लम्बनानयने मध्यलग्नस्यत्रिभोनलग्नेत्यर्थेछेदः पूर्वसाधितसूक्ष्मदृग्गत्यासूक्ष्मोमतांशेत्यादिगृहीतस्थूलदृग्गत्यास्थूलइति । एवंमध्यलग्नेत्यस्यदशमभावार्थेतुविपरीतामिति।एतेनमध्यलग्नेत्यस्यदशमभावार्थः । तत्रप्रयाससाधितसूक्ष्मदृग्गत्यासूक्ष्मंलम्बनम् । नतांशेत्याद्युक्तस्थूलदृग्गत्यास्थूललम्बनमिति साम्प्रदायिकोक्तंनिरस्तम् । युक्तयभावात् । नचात्रमध्यलग्नरूपदशमभावगृहेऽपिगोलयुक्त्याप्रतिपादनस्यसत्त्वात्कथमादित्योक्तंमध्यलग्नमितिपदंसार्वजनीनदशमभावप्रत्यायकंत्रिभोनलग्नपरतयाहठाद्व्याख्यातुंयुक्तम् ॥ "नतांशबाहुकोटिज्येस्फुटेदृक्क्षेपदृग्गती ॥" इत्यत्रस्फुटेइत्यनेनभगवतस्तदाशयस्यव्यक्तीकृतत्वादितिवाच्यम् । तथापिगौरवसाधितदृक्क्षेपोक्तिर्भगवदाशयस्थितत्रिभोनलग्नग्रहणंव्यनक्ति । अन्यथाप्रयाससाधितदृक्क्षेपस्य वैयर्थ्यापत्तेरिति सुधियावलोक्यमित्यलं विस्तरेण ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥

भा०टी०-एकराशिज्यावर्गको दृग्गति (ज्या) द्वारा भागकरनेसे छेद होगा । मध्यलग्न और तिसकालका सूर्यका अन्तर करके ज्या करे, तिसको छेदसे भागकरनेपर मध्यलग्नसे पूर्वापर विचार करके रविसे चंद्रमाके लम्बन दण्डादि स्थिर होंगे ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथमध्यग्रहणकालज्ञानार्थ तिथौलम्बनसंस्कारंतदसकृत्साध्यमितिचाह—

मध्यलग्नाधिकेभानौतिथ्यन्तात्प्रविशोधयेत् ॥
धनमूनेऽसकृत्कर्मयावत्सर्वंस्थिरीभवेत् ॥ ९ ॥

सूर्येमध्यलग्नंत्रिभोनलग्नंतस्मादधिकेसतितिथ्यन्तादशतिथ्यन्तकालादागतं लम्बनंशोधयेत् । सूर्येत्रिभोनलग्नान्यूनेसतितिथ्यन्तकालेलम्बनं धनं युतं कार्यम् । एवंकर्मगणितमसकृन्मुहुःकार्यम् । अयमर्थः । तिथ्यन्तकालिकः सूर्योलम्बनघटीभिः क्रमेणपूर्वाग्रिमकालेचाल्पोलम्बनसंस्कृततिथ्यन्तेऽर्कोभवति।तस्माल्लम्बनसंस्कृततिथ्यन्तकालेलग्नदशमभावौ प्रसाध्यपूर्वोक्तरीत्यालम्बनं साध्यम्। इदमपिकेवलतिथ्यन्ते संस्कार्योक्तरीत्यालम्बनं केवलं तिथ्यन्तेसंस्कार्यम् । अस्मादपिलम्बनं तिथ्यन्ते संस्कार्यमित्यसकृदिति । गणितावधिमाह । यावदिति । सर्वंगणितंलम्बनादियावद्यत्परिवर्तावधिस्थिरीभवेत् । अविलक्षणं यावदविशेषइत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । त्रिभोनलग्नादूनेरवौक्रान्तिवृत्तेपूर्वापरान्तराभावनैकसूत्रस्थितत्वरूपयुतिर्दर्शान्तकालाल्लम्बनकालेनाग्रेभवति । दर्शान्तकालेरविगतभूपृष्ठसूत्राच्चन्द्रस्याधोलम्बितत्वेन शीघ्रगचन्द्रस्यमन्दगरवितःपृष्ठेस्थितत्वात् । अधिकेरवौचन्द्रस्यपुरःस्थितत्वेनदर्शान्तकालाल्लम्बनकालेनपूर्वंयुतिर्भवति । अतोदर्शान्तकालोलम्बनसंस्कृतोमध्यग्रहणकालःस्यात् । युतिकालस्यमध्यग्रहणकालत्वात् । परन्तुतावतालम्बनकालेनसूर्यस्यापिक्रान्तिवृत्ते चलनाल्लम्बनसंस्कृतदर्शान्तकाले रविगतभूपृष्ठसू-

त्राच्चन्द्रस्यलम्बितत्वंस्यादेवेतिमध्यग्रहणकालस्त्वसिद्धः । नाहिसूर्योधनलम्बन-ऋणलम्बनेचन्द्रश्चलम्बनकालेऽस्थिरोयेनतयोर्युतिःसङ्गतास्यात् । अतस्ताद्दशकालात्पुनस्तात्कालिकंलम्बनंप्रसाध्यदर्शान्तेपुनःसंस्कार्यम् । मध्यकालः स्यात् । एवंताद्दशलम्बनसंस्कृतदर्शान्तेऽपितयोर्भूपृष्ठसूत्रस्थत्वाभावात्पुनर्लम्बनंसाध्यम् । तत्संस्कृतोदर्शान्तोमध्यग्रहइत्यसकृद्विधिनायदालम्बनंपूर्वलम्बनतुल्यंसिध्यतितदावश्यं ताद्दशलम्बनसंस्कृतदर्शान्तरूपमध्यग्रहणकालेभूपृष्ठसूत्रेतयोःसन्निवेशः । यतस्तदासूर्यगतभूपृष्ठसूत्रचन्द्रयोरन्तराभावेनपूर्वागतलम्बनतुल्यलम्बनस्यपुनःसिद्धेः । अन्यथातुल्यलम्बनानुपपत्तेः । तस्मान्मध्यकालोऽसकृद्यावदविशेषःसाध्यइत्युपपन्नंमध्यलग्नेत्यादि ॥ ९ ॥

भा० टी० -मध्यलग्नसे सूर्य अधिकहो तो तिथ्यन्तसे काल-लम्बन अलग करे, नहीं हो अन्यथा योग करे । प्राप्त समयके ऊपर फिर लम्बन साधन करके तिथ्यन्तमें संस्कार करे । जबतक स्थिर नही तबतक ऐसाही करे ॥ ९ ॥

अथनतिसाधनमाह-

> दृक्क्षेपःशीततिग्मांशोर्मध्यभुक्त्यन्तराहतः ॥
> तिथिघ्नत्रिज्ययाभक्तोलब्धंसावनतिर्भवेत् ॥ १० ॥

दृक्क्षेपःप्रागानीतःशीततिग्मांशोश्चन्द्रार्कयोर्मध्यगतीकलात्मकेतयोरन्तरेणगुणितयात्रिज्ययाभक्तः फलंसादेशकालविशेषाभ्यांयागोलेसिद्धाभवति सैवात्रगणिते नतिर्भवेत् । अत्रोपपत्तिः । यदाक्रान्तिवृत्तंदृग्वृत्ताकारंतदानत्यभावइति प्रागुक्तम् । तत्रत्रिभोनलग्नस्यखमध्यस्थत्वेनदृक्क्षेपाभावः । यत्र च षष्टचक्षांशास्तत्रदेशेत्रिभोनलग्नस्याक्षितिजस्थत्वेनपरमानतिः । परमास्तुनतिकलाभूगर्भक्षितिजाद्भूपृष्ठक्षितिजस्यभूव्यासार्धान्तरेणोच्छ्रितत्वाद्गतियोजनैर्गत्यन्तरकलालभ्यन्तेतदाभूव्यासार्धयोजनैःका इत्यनुपातेन तत्रमध्यगतियोजनानांभूव्यासार्धस्यचनियतत्वाद्भूव्यासार्धेनापवर्तःकृतः । तेनमध्यगत्यन्तरकलानांस्वल्पान्तरेणपञ्चदशांशःपरमानतिकलाः । अतएवषष्टिघटिकानांपञ्चदशांशोघटिकाचतुष्टयंपरमंलम्बनंसिद्धम् । आभिस्त्रिज्यातुल्यदृक्क्षेपेसूर्यगतभूपृष्ठसूत्राच्चन्द्रस्यदक्षिणोत्तरेणावलम्बनंभवति । अतस्त्रिज्यातुल्यदृक्क्षेपेणमध्यगत्यन्तरपञ्चदशांशोनतिस्तदेष्टदृक्क्षेपेणकत्यनुपातेनगत्यन्तरगुणोदृक्क्षेपोहरघातेनपञ्चदशगुणितात्रिज्यात्मकेनभक्तोनतिकलाइत्युपपन्नम् ॥ १० ॥

भा०टी०-दृक्क्षेपको रविचन्द्रमध्यभुक्त्यन्तरसे गुणकरके १५ गुणित-त्रिज्यासे भाग करनेपर अवनति स्थिर होगी ॥ १० ॥

अथप्रकारान्तराभ्यांनतिसाधनंलाघवादाह-

दृक्क्षेपात्सततिहृताद्ववेद्वावनतिःफलम् ॥
अथवात्रिज्ययाभक्तात्सप्तसप्तकसङ्गुणात् ॥ ११ ॥

सप्तत्याभक्ताद्दृक्क्षेपात्फलंकलादिकानतिःप्रकारान्तरेण भवेत् । अथवा-प्रकारान्तरेणसप्तसप्तकसङ्गुणात्सप्तानां सप्तकंसप्तवारमावृत्तिर्वर्गएकोनपञ्चाशदित्यर्थः । तेनगुणिताद्दृक्क्षेपात्त्रिज्ययाभक्तात्फलंकलादिकानतिः । अत्रोपपत्तिः । दृक्क्षेपस्यगत्यन्तरकलामित ७३ । २७ गुणकपञ्चदशगुणितत्रिज्यामितहरौ ५१५७० प्रथमप्रकारेगत्यन्तरापवर्त्तितौहरस्थानेसप्ततिः । द्वितीयप्रकारेपञ्चदशभिरपवर्त्यगुणस्थानेस्वल्पान्तरादेकोनपञ्चाशद्धरस्थानेत्रिज्येत्युपपन्नम् ॥ ११ ॥

भा०टी०-अथवा दृक्क्षेपको ७० से भाग करनेपर वही होगा; या ४९ से गुणकरके त्रिज्यासे भाग करनेपरभी होजायगा ॥ ११ ॥

अथनतेर्दिग्ज्ञानंस्पष्टविक्षेपंचाह-

मध्यज्यादिग्वशात्साचविज्ञेयादक्षिणोत्तरा ॥
सेन्दुविक्षेपदिक्साम्येयुक्ताविश्लेषितान्यथा ॥ १२ ॥

सावनतिर्मध्यज्यायादिगनुरोधाद्दक्षिणोत्तरामध्यज्याचेद्दक्षिणातदानतिरपि दक्षिणाचेदुत्तरातदोत्तराज्ञेया । चःसमुच्चये । तेनमध्यज्यानतांशदिक्केति । सादक्षिणोत्तरानतिश्चन्द्रविक्षेपदिक्समत्वे । तयोरेकदिक्त्वेइत्यर्थः । युक्ताविक्षेपेणयुतेत्यर्थः । अन्यथातयोर्भिन्नदिक्त्वेविक्षेपेणान्तरिताशेषदिक्काविक्षेपसंस्कृतानतिःस्पष्टशररूपास्यात् । अत्रचन्द्रविक्षेपोमध्यग्रहणकालिकइतिध्येयम् । अत्रोपपत्तिः । नतांशदिक्कमध्यज्यावशाद्दृक्क्षेपस्योत्पन्नत्वात्तदुत्पन्ननतेस्तद्दिक्त्वंयुक्तमेव । अथरविगतभूपृष्ठसूत्राच्चन्द्राकाशगोलेक्रान्तिवृत्तावधियाम्योत्तरान्तरस्यनतित्वात्क्रान्तिमण्डलाच्चन्द्राबिम्बावधिविक्षेपत्वाद्रविगतभूपृष्ठसूत्राच्चन्द्रबिम्बावधियाम्योत्तरान्तरस्यसूर्य ग्रहणोपयुक्तनतिसंस्कृतविक्षेपरूपस्पष्टविक्षेपत्वाद्द्वयोरेकदिशियोगोभिन्नदिश्यन्तरमित्युपपन्नम् ॥ १२ ॥

भा०टी०-मध्यज्यादिकके अनुसार अवनति दक्षिणोत्तरा होगी, दिक्साम्यमें चन्द्रविक्षेपके सहित योग नहीं तो वियोग करनेसे स्पष्ट विक्षेप होगा ॥ १२ ॥

अथचन्द्रग्रहणाधिकारोक्तमत्रातिदिशति-

तयास्थितिविमर्दार्धग्रासाद्यंतुयथोदितम् ॥
प्रमाणंवलनाभीष्टग्रासादिहिमरश्मिवत् ॥ १३ ॥

तयाविक्षेपसंस्कृतयानत्यास्पष्टविक्षेपरूपयेत्यर्थः । स्थित्यर्धविमर्दार्धग्रासाः ।

आद्यशब्दात्स्पर्शमोक्षसम्मीलनोन्मीलनंयथोदितंचन्द्रग्रहणेयथोक्तंतथा । तुकारस्तदतिरिक्तरीतिव्यवच्छेदार्थकैवकारपरः । प्रमाणंमतमित्यर्थः । अवशिष्टमप्याह वलनेत्यादि । वलनाभीष्टग्रासः । आदिशब्दादिष्टग्रासादिष्टकालानयनम् । हिमरश्मिवच्चन्द्रग्रहणोक्तरीत्याकार्यमित्यर्थः । अत्रोपपत्तिरविशेषएव ॥ १३ ॥

भा०टी०-अवनति संस्कृतविक्षेपसे स्थित्यर्द्ध, विमर्दार्द्ध, ग्रास, प्रमाण, वलन, अभीष्ट ग्रासादि चंद्रग्रहणकी समान निर्णय करने चाहिये ॥ १३ ॥

अथस्थित्यर्धविमर्दार्धेचविशेषंश्लोकचतुष्टयेनाह-

स्थित्यर्धोनाधिकात्प्राग्वत्तिथ्यन्ताल्लम्बनंपुनः ॥
ग्रासमोक्षोद्भवंसाध्यंतन्मध्यहरिजान्तरम् ॥ १४ ॥
प्राक्कपालेऽधिकंमध्याद्भवेत्प्राग्ग्रहणंयदि ॥
मौक्षिकंलम्बनंहीनंपश्चार्द्धेतुविपर्ययः ॥ १५ ॥
तदामोक्षस्थितिदलेदेयंप्रग्रहणेतथा ॥
हरिजान्तरकंशोध्यंयत्रैतत्स्याद्विपर्ययः ॥ १६ ॥
एतदुक्तंकपालैक्येतद्भेदेलम्बनैकता ॥
स्वेस्वेस्थितिदलेयोज्याविमर्दार्धेऽपिचोक्तवत् ॥ १७ ॥

चन्द्रग्रहणाधिकारोक्तप्रकारेणासकृत्साधितंस्पर्शस्थित्यर्धंमोक्षस्थित्यर्धंच । तद्यथा । मध्यग्रहणकालिकस्पष्टशरादुक्तरीत्यास्थित्यर्धघटिकास्ताभिस्तिथ्यन्तकालिकाग्रहाः । स्पर्शस्थित्यर्धनिमित्तंपूर्वंचाल्याः । मोक्षस्थित्यर्धनिमित्तमग्रेचाल्याः । तत्कालयोःप्रत्येकंनातिशरौप्रसाध्यस्पष्टशरःसाध्यः । ततःप्रथमकालिकस्पष्टशरात्स्थित्यर्धमनेनपूर्वंतिथ्यन्तकालिकग्रहान्प्रचाल्योक्तरीत्यास्पष्टशरंप्रसाध्यस्थित्यर्धंसाध्यम् । एवमसकृत्स्पर्शस्थित्यर्धम् । एवमेवद्वितीयकालिकस्पष्टशरात्स्थित्यर्धमनेनाग्रेतिथ्यन्तकालिकग्रहान्प्रचाल्योक्तरीत्यास्पष्टशरंप्रसाध्यस्थित्यर्धंसाध्यम् । एवमसकृन्मोक्षस्थित्यर्धमिति । अथाभ्यांस्पर्शमोक्षस्थित्यर्धाभ्यांक्रमेहीनयुतादर्शान्तकालात्तुप्राग्वदुक्तरीत्यालम्बनंपुनरसकृद्ग्रासमोक्षोद्भवंस्पर्शमोक्षकालिकंकार्यम् । तथाहि । स्पर्शस्थित्यर्धहीनात्तिथ्यन्तात्तात्कालिकसूर्याल्लग्नदशमभावौप्रसाध्योक्तरीत्यास्माल्लम्बनं साध्यम् । तेनस्पर्शस्थित्यर्धोनतिथ्यन्तंसंस्कृत्यास्माल्लम्बनमनेनापिस्पर्शस्थित्यर्धोनातिथ्यन्तं संस्कृत्यास्माल्लम्बनमेवमसकृत्स्पर्शकालिकंलम्बनम् । एवमेवमोक्षस्थित्यर्धयुतात्तात्कालिकसूर्याल्लग्नदशमभावौप्रसाध्योक्त रीत्यालम्बनंसाध्यम् ।तेनमोक्षस्थित्यर्धयुततिथ्यन्तंसंस्कृत्यास्माल्लम्बनमननेनापिमो-

क्षस्थित्यर्धयुततिथ्यन्तंसंस्कृत्यास्माल्लम्बनमेवमसकृन्मोक्षकालिकंलम्बनमिति । प्राक्कपालेत्रिभोनलग्नात्पूर्वभागेत्रिभोनलग्नाधिकेरवौमध्यान्मध्यकालिकात् । अग्रोक्तलम्बनस्यविभक्तिविपरिणामादन्वयेनलम्बनात्प्राग्रहणं प्रग्रहणंस्पर्शःस्पर्शकालिकम् । अत्रापिलम्बनमित्यस्यान्वयः । लम्बनंचेदधिकंस्यात् । मौक्षिकंमोक्षकालसम्बन्धिलम्बनंन्यूनंस्यात् । पश्चार्द्धेत्रिभोनलग्नात्पश्चिमभागेत्रिभोनलग्नाद्धीनेरवौ । तुकारःसमुच्चयार्थकचकारपरः। विपर्ययउक्तवैपरीत्यम् । मध्यकालिकलम्बनात्स्पर्शकालिकंलम्बनंन्यूनंमोक्षकालिकंलम्बनमधिकमित्यर्थः।तदातर्हितन्मध्यहरिजान्तरम् । तयोः स्पर्शमोक्षकालिकलम्बनेनप्रत्येकमन्तरंमोक्षस्थित्यर्धेयोज्यम्।प्राग्रहणेस्पर्शस्थित्यर्धेतथादेयम् । मोक्षमध्यकालिकलम्बनयोरन्तरंमोक्षस्थित्यर्धेयोज्यम्। स्पर्शमध्यकालिकलम्बनयोरन्तरंस्पर्शास्थित्यर्धेयोज्यमित्यर्थः।यत्रयस्मिन्कालेविपर्यय उक्तवैपरीत्यंप्राक्कपालेमध्यकालिकलम्बनात्स्पर्शकालिकलम्बनंन्यूनं मोक्षकालिकलंबनमधिकंपश्चिमकपालेतुमध्यकालिकलम्बनात्स्पर्शकालिकलम्बनमधिकंमोक्षकालिकलम्बनंन्यूनंभवतीत्यर्थः । तत्रैतन्मोक्षस्पर्शमध्यकालिकंहरिजान्तरकंलम्बनान्तरंमोक्षस्थित्यर्धेमध्यमोक्षकालिकलम्बनयोरन्तरंस्पर्शस्थित्यर्धेमध्यस्पर्शकालिकलम्बनयोरन्तरमित्यर्थः । शोध्यंहीनंकुर्यात । एतल्लम्बनान्तरंयोज्यंशोध्यंवाकपालैक्येद्वयोः स्पर्शमध्ययोर्मध्यमोक्षयोर्वैककपालेस्वस्वकालिकत्रिभोनलग्नात्स्वस्वकालिकसूर्यउभयत्राधिकेन्यूनेवेत्यर्थः । उक्तंकथितम् । तद्भेदेतयोःस्पर्शमध्ययोर्मध्यमोक्षयोश्चभेदेकपालभेदेस्पर्श कालिकत्रिभोनलग्नात्तात्कालिकसूर्यस्याधिक्ये मध्यकालिकत्रिभोनलग्नात्तात्कालिकार्कस्यन्यूनत्वेमध्यकालिकत्रिभोनलग्नात्तात्कालिकार्कस्याधिकत्वेमोक्षकालिकत्रिभोनलग्नात्तात्कालिकार्कस्यन्यूनत्वइत्यर्थः । लम्बनैकतालम्बनैक्यम् । स्पर्शमध्ययोर्भेदेतात्कालिकलम्बनयोर्योगः । मध्यमोक्षयोर्भेदात्तात्कालिकलम्बनयोर्योगइत्यर्थः । स्वकीयेस्वर्कायेस्थित्यर्द्धेसंयुक्ताकार्या । स्पर्शस्थित्यर्द्धेस्पर्शमध्यकालिकलम्बनयोर्योगोयोज्यः । मोक्षस्थित्यर्द्धेमोक्षमध्यकालिकलम्बनयोर्योगोयोज्यइत्यर्थः । स्पर्शस्थित्यर्धमोक्षस्थित्यर्धंचस्फुटंभवति । आभ्यां चन्द्रग्रहणोक्तदिशामध्यग्रहणकालात्पूर्वमपरत्रक्रमेणस्पर्शमोक्षकालौस्तइत्यर्थसिद्धम् अथोक्तरीत्याविमर्दार्धेपिस्पष्टत्वमातिदिशति । विमर्दार्धइति।स्पर्शमर्द्धेमोक्षमर्दार्धेचन्द्रग्रहणाधिकारोक्तरीत्यास्पष्टशरेणसकृत्साधितेउक्तवत्।स्थित्यर्धेनाधिकात्प्राग्वत्तिथ्यंतालंबनंपुनः । इत्याद्युक्तरीत्यास्थित्यर्धस्थानेमर्दार्धग्रहणेनग्रासमोक्षोद्भवमित्यत्रसंमीलनोन्मीलनोद्भवमिति ग्रहणेनप्राग्ग्रहणमित्यत्रसंमीलनग्रहणेनमौक्षिकमित्य-

त्रोन्मीलनग्रहणेनस्फुटेसाध्ये । अपिःसमुच्चये। चकारात्ताभ्यांसम्मीलनोन्मीलनका लौमध्यग्रहणकालापूर्ववत्साध्याविस्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । स्थित्यर्धोनयुतोमध्यग्र हणकालःस्पर्शमोक्षकालः।मध्यकालिकलम्बनसंस्कारात् ।स्पर्शमोक्षकालिकलम्बनसं स्कारस्यापेक्षितत्वाच्च।नहियःकालोलम्बनसंस्कृतः स्फुटः सत्वभिन्नकालिकलम्बनसं-स्कृतःस्फुटः स्यात्सम्बन्धाभावात्। पूर्वस्पर्शमोक्षकालयोरज्ञानात्।तात्कालिकलम्बन ज्ञानाभावाच्च । अतोमध्यकालज्ञानार्थं यथातिथ्यन्तादसकृल्लम्बनं प्रसाध्यतिथ्य न्ते संस्कृत्यमध्यकालस्तथास्पर्शमोक्षास्थित्यर्धहीनयुक्तातिथ्यन्तकालाभ्यांस्पर्शमोक्ष-तिथ्यन्तरूपाभ्यांप्रत्येकं लम्बनमसकृत्प्रसाध्यस्वस्वातिथ्यन्ते संस्कृत्यस्पर्शमोक्षका-लौस्फुटौतन्मध्यकालयोरन्तरं स्फुटंस्थित्यर्धम् । तत्रर्णलम्बनेनस्पर्शमध्यमोक्षोत्पत्तौ यदामध्यलम्बनादधिकं स्पर्शलम्बनं मोक्षलम्बनं चन्यूनं तदास्पर्शस्थित्यर्धोनातिथ्य-न्तस्याधिकलम्बनोनितस्यस्पर्शकालत्वान्न्यूनलम्बनोनितस्यातिथ्यन्तस्यमध्यकालत्वा त्तयोरन्तरेतिथेःसमत्वेन नाशात्स्पर्शस्थित्यर्धस्पर्शकालिकलम्बनेनयुतं मध्यकालिक लम्बनेनहीनमिति लम्बनयोरन्तरं तत्रधनं योज्यम् । एवं मोक्षस्थित्यर्धयुतातिथ्यन्त-स्यन्यूनलम्बनोनितस्यमोक्षकालत्वान्मध्यमोक्षकालयोरन्तरेपूर्वरीत्यामध्यमोक्षका-लिकयोर्लम्बनयोरन्तरंधनंमोक्षस्थित्यर्धेयोज्यम् । यदातुमध्यलम्बनाद्धीनंस्पर्श लंबनंमोक्षलंबनंचाधिकंतदान्यूनलम्बनहीनस्यस्पर्शकालत्वादधिकंलंबनम् ।हीनस्य-मध्यकालत्वादुक्तरीत्यातदन्तरेस्पर्शस्थित्यर्धेलंबनान्तरंहीनम् । एवमधिकलं-बनहीनस्यमोक्षकालत्वान्मध्यमोक्षयोरन्तरंमोक्षस्थित्यर्धेलंबनान्तरंहीनम् । धनलं-बनेनस्पर्शमध्यमोक्षोत्पत्तौतुयदामध्यलंबनान्न्यूनंस्पर्शलंबनंमोक्षलंबनंचाधिकंतदा स्पर्शस्थित्यर्धोनातिथ्यन्तस्य न्यूनलंबनाधिकस्य स्पर्शकालत्वादधिकलंबनाधिक-स्यतिथ्यन्तस्यमध्यकालत्वात्तयोरन्तरे लंबनान्तरं स्पर्शस्थित्यर्धेयोज्यम् । एवंमो-क्षस्थित्यर्धयुतातिथ्यन्तस्याधिकलंबनाधिकस्यमोक्षकालत्वान्मध्यमोक्षयोरन्तरेलंब-नान्तरंमोक्षस्थित्यर्धेपूर्वरीत्यायोज्यम् । यदातुमध्यलंबनादधिकंस्पर्शलंबनंमोक्षलं बनंचन्यूनंतदाअप्यधिकलंबनाधिकस्यस्पर्शकालत्वाद्धीनलंबनाधिकस्यमध्यकाल-त्वात्तयोरन्तरउक्तरीत्यास्पर्शस्थित्यर्धेलंबनान्तरंहीनम् । एवंन्यूनलंबनाधिकस्यमो-क्षकालत्वात्तन्मध्यकालान्तरेमोक्षस्थित्यर्धेलंबनान्तरंहीनमितिसिद्धम् ।नन्वयंलंबना न्तरहीनपक्षो नसंगतः । बाधात् । तथाहि । ऋणलंबनस्यक्रमेणापचयात्स्पर्शम-ध्यमोक्षकालानांयथोत्तरंसम्भवाच्चमध्यकालिकलंबनात्स्पर्शमोक्षकालिकलंबनयोःक्र मेणन्यूनाधिकत्वमसिद्धम् । एवंधनलंबनस्यक्रमेणोपचयान्मध्यलंबनात् । स्पर्शमोक्षकालिकलंबनयोःक्रमेणाधिकन्यूनत्वमसिद्धम् । नहिकदाचिन्मध्य-

कालात्स्पर्शमोक्षकालक्रमेणाग्रिमपूर्वकालयोःसम्भवतोयेनोक्तंयुक्तम् । बाधात् । तथाचलम्बनान्तरंयोज्यमित्यस्यैवोपपन्नत्वेमहतैतावताप्रपंचेन । "हरिजान्तरकं शोध्यंयत्रैतत्स्याद्विपर्ययः ॥" इतिसर्वज्ञभगवदुक्तंकथंनिर्वहतीतिचेत् । मैवम् लम्बनसंस्कृतस्पर्शमोक्षकालयोःस्फुटयोर्वस्तुभूतयोःसर्वदामध्यकालात्क्रमेणपूर्वोत्तरा वश्यंभावित्वेऽपिलम्बनासंस्कृतयोः स्थित्यर्धोनयुतातिथ्यन्तरूपस्पर्शमोक्षकालयोः पारिभाषिकत्वेनावास्तवयोः कदाचिन्मध्यकालर्णधनलम्बनाभ्यांस्पर्शस्थित्यर्धमो क्षस्थित्यर्धयोः क्रमेणन्यूनत्वेमध्यकालादग्रिमपूर्वकालयोः क्रमेणसम्भवात्स्फुटो निर्वाहः । परन्त्वृणलम्बनेधनलंबनेचमध्यलंबनात्क्रमेणमोक्षस्पर्शलंबनयोराधिक-त्वासम्भवः । मध्यकालात्पूर्वाग्रिमकालयोर्मोक्षस्पर्शयोः पारिभाषिकयोःक्रमे-णासम्भवात् । अतः साक्षात्कण्ठोक्तेरभावाद्विपर्ययइत्यनेनविपर्ययविशेषस्यैवविवक्षितत्वम् । पूर्वंतुसाधारण्याच्छब्दस्यसाधारण्येनव्याख्यानंकृतमित्यदोषः । ननु तथाप्यसकृल्लम्बनसाधनेलम्बनस्यस्पष्टस्पर्शमोक्षकालाभ्यां सिद्धत्वेनर्णलम्बनात्स्प र्शलम्बनंन्यूनंभवत्येव । धनलम्बनेमोक्षलम्बनंन्यूनंनभवत्येव । मध्यकालाद्वास्तव-स्पर्शमोक्षकालयोः क्रमेणाग्रिमपूर्वकालयोरसम्भवनिर्णयात् । अन्यथास्थिरलम्ब-नासम्भवात् । किञ्चासकृल्लम्बनसाधनेनयत्कालात्स्थिरलम्बनंसिद्धंतत्कालस्यसू-क्ष्मस्पर्शमोक्षकालत्वात्स्फुटस्थित्यर्धसाधनंव्यर्थम् । तस्यतज्ज्ञानार्थमेवावश्य-कत्वात् । नचचन्द्रग्रहणरीत्यास्पर्शमोक्षकालयोर्ज्ञानार्थस्फुटस्थित्याद्योक्तिरितिवा-च्यम् गौरवाद्यर्थत्वाद्धरिजान्तरकंशोध्यमित्यस्यानुपपत्तेश्चेतिचेन्न । लम्बनयोरस-कृत्साधनस्यानंगीकारात् । सकृत्साधितलम्बनस्यसान्तरत्वेऽपिभगवतास्वल्पान्त रेणांगीकाराच्च । अतएवलम्बनंपुनरित्यत्रपुनरित्यस्यव्याख्यानमसकृदितिपूर्वमु-क्तंनयुक्तम् । किन्तुमध्यकालार्थलम्बनस्यसाधनात्स्पर्शमोक्षकालार्थमपिद्वितीय-वारंलम्बनंसाध्यमितिव्याख्यानम् । पुनरितिवाक्यालङ्करणंवायुक्ततरमिति । अथ यदास्थूलस्पर्शकालर्णलम्बनेधनलम्बनेचमध्यकालस्तदास्पर्शास्थित्यर्धोनातिथ्यन्तस्य-लम्बनहीनस्यस्पर्शकालत्वाल्लम्बनाधिकातिथेर्मध्यकालत्वात्तदन्तरेस्पर्शास्थित्यर्धता-त्कालिकलम्बनयोर्योगेनयुक्तामित्युक्तरीत्योपपद्यते । एवंयदामध्यकालर्णलम्बने स्थूलमोक्षकालश्चधनलम्बनेतदालम्बनहीनातिथ्यन्तस्यमध्यकालत्वान्मोक्षस्थित्यर्ध-युततिथ्यन्तस्यलम्बनाधिकस्यमोक्षकालत्वात्तदन्तरेमोक्षास्थित्यर्धलम्बनयोगयुक्तामि-त्युपपन्नम् । नचासकृल्लम्बनसाधनेनसूक्ष्मस्पर्शमोक्षयोः सिद्धौसकृल्लम्बनांगीकारे णोक्तरीतेः सान्तरत्वात्कथंभगवतःसर्वज्ञस्यास्यांरीत्यामभिनिवेशइतिवाच्यम् । असकृल्लम्बनसाधनेप्रयासाधिक्यभयाद्भगवतासर्वज्ञेनस्वल्पान्तरांगीकाराल्लाघवाच्च-चन्द्रग्रहणोक्तरीत्यानुगमार्थस्फुटस्थित्यर्धसाधनस्यैवोक्तेरितिदिक् । वस्तुतस्तुसूर्यो-

दयाद्यत्रप्राक्स्पर्शोऽनन्तरंमध्यकालस्तदामध्यलम्बनात्स्पर्शलम्बनंसत्रिभलग्नचतुर्थ-भवासाधितंकदाचिन्न्यूनंभवति । यत्रचोदयात्पूर्वं मध्यः परतोमोक्षस्तत्रकदाचि-त्सत्रिभलग्नचतुर्भावानीतमध्यकाललम्बनान्मोक्षकाललम्बनमधिकंभवति । यत्र-चास्मात्पूर्वंस्पर्शःपरतोमध्यस्तदामध्यकाललम्बनाद्रात्रिसम्बन्धात्स्पर्शकाललम्बनं कदाचिदधिकंभवति । यत्रचास्तात्पूर्वंमध्यकालः परतोमोक्षस्तदापिमध्यकाल-लम्बनान्मोक्षकाललंबनंरात्रिसम्बद्धंन्यूनंनभवति । कदाचिदिति । ग्रस्तो-दयग्रस्तास्तयोः कदाचिद्विपर्ययसम्भवाद्धरिजान्तरकंशोध्यमित्यस्यनाप्रसिद्धिः । एतेनलम्बनमसकृन्नसाध्यंविपर्य्ययइतिविपर्य्ययविशेषइतिचोक्तंसमाधानंनिरस्तमि-तितत्त्वम् । विमर्दार्धेऽप्युक्तरीतिस्तुल्येतिसर्व्वमुपपन्नम् । भास्कराचार्यैस्तु । "तिथ्यन्ताद्गणितागतात्स्थितिदलेनोनाधिकाल्लम्बनंतत्कालोत्थनतीषुसंस्कृतिभव-स्थित्यर्धहीनाधिके । दर्शान्तेगणितागतेधनमृणंयद्वाविधायासकृज्ज्ञेयौप्रग्रह-मोक्षसञ्ज्ञसमयावेवंक्रमात्प्रस्फुटौ ॥ तन्मध्यकालान्तरयोः समानेस्पष्टेभवेतांस्थि-तिखण्डकेच । दर्शान्ततोमर्ददलोनयुक्तात्सम्मीलनोन्मीलनकालएवम् ॥" इत्य नेनभगवदुक्तादतिसूक्ष्ममुक्तमित्यलंपल्लवितेन ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

भा०टी०-तिथ्यन्तमें स्थित्यर्द्धहीन या योगकरके असकृत कर्मके द्वारा स्पर्श और मोक्षकालके लम्बनसाधन करे । मध्यलग्नके पूर्वमें रवि होनेपर स्पर्शकालीन लम्बन, मध्यकालीनकी अपेक्षा और वह मोक्षकी अपेक्षा अधिक होगा। पश्चिम दिशामें होनेसे उलटा होता है ।तिसकाल मध्यलग्नके पूर्व होनेसे मोक्षलम्बन और मध्यलम्बनके अन्तर मोक्षस्थित्यर्द्ध योग और स्पर्शलम्बन और मध्यलम्बनके अन्तर स्पर्शस्थित्यर्द्ध योग, अन्यथा विपरीत करनेसे स्पष्टस्थित्यर्द्ध होगा। स्पर्श और मध्य या मध्य और मोक्ष यदि मोक्षरेखाके दोनों ओर हों, तो लम्बनयोग करना चाहिये और स्थितिदलमें योग करना होगा । इसप्रकार विमर्द्दार्द्ध स्थिरकरे ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वनिरासार्थमधिकारसमाप्तिंफक्किकयाह । इति सूर्य-ग्रहणाधिकारः । इतिस्पष्टम् । रंगनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे । सूर्यग्रहा-धिकारोऽयंपूर्णोगूढप्रकाशके ॥

इतिश्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरंगनाथगणकाविरचिते गूढार्थप्र-काशकेसूर्यग्रहणाधिकारःसम्पूर्णः ॥

इति पंचमोऽध्यायः समाप्तः ।

पांचवा अध्याय समाप्त ॥

षष्ठोऽध्यायः ।

अथपरिलेखाधिकारोव्याख्यायते । तत्रतंसप्रयोजनंप्रतिजानीते-

नच्छेद्यकमृतेयस्माद्भेदाग्रहणयोःस्फुटाः ॥

ज्ञायन्तेतत्प्रवक्ष्यामिच्छेद्यकज्ञानमुत्तमम् ॥ १॥

यस्मात्कारणाद्ग्रहणयोश्चन्द्रसूर्यग्रहणयोः । द्विवचनेनग्रहणत्वेनपूर्वाधिकारयोरेकाधिकारत्वंनिरस्तम् । भेदाःकस्यांदिशिस्पर्शमोक्षौसम्मीलनोन्मीलनेग्रस्तोंऽशःकियानित्यादिभेदाः । स्फुटागोलस्थितिसिद्धावास्तवाः । छेद्यकंगोलस्थितिप्रदर्शकःकल्पितःप्रकारश्छेद्यकपदवाच्यस्तम् । ऋतेविना । छेद्यकव्यतिरेकेणेत्यर्थः । नज्ञायन्ते । तत्तस्मात्कारणात् । ग्रहणभेदज्ञानार्थमित्यर्थः । उत्तमंसूक्ष्मंतद्भेदज्ञानसाधकंछेद्यकज्ञानम् । ज्ञायतेऽनेनेतिज्ञानंपरिलेखसाधकग्रन्थंसूर्यांशपुरुषोऽहंप्रवक्ष्यामि कथयामि ॥ १ ॥

भा०टी०छेदकके विना दोनों ग्रहणोंकी स्पर्शमोक्षदिक या परिमाणभेद स्पष्ट नहीं होता इस्से इससमय छेदकज्ञान कहताहूं ॥ १ ॥

तत्रप्रथमंवलवृत्तंलिखेदित्याह-

सुसाधितायामवनौबिन्दुंकृत्वाततोलिखेत् ॥

सप्तवर्गाङ्गुलेनादौमण्डलंवलनाश्रितम् ॥ २ ॥

आदौप्रथमंसुसाधितायाजलवत्समीकृतायामवनौपृथिव्यामभीष्टस्थाने बिन्दुं वृत्तमध्यज्ञापकचिह्नंकृत्वाततश्चिह्नात्सप्तवर्गाङ्गुलेनैकोनपञ्चाशदङ्गुलमितेन व्यासार्धेनमण्डलंवृत्तंवलनाश्रितंप्रागुक्तस्फुटवलनमाश्रितं यत्रवलनाश्रयीभूतं वलनदानार्थवृत्तमित्यर्थः । लिखेद्ग्रहणभेदज्ञानेच्छुर्गणकउल्लिखेत् । अत्रोपपत्तिः प्रागुक्ता ॥ २ ॥

भा०टी०-साधितसमतल भूमिमें बिन्दुचिह्न करके ४९ अंगुली व्यासार्द्ध परिमित वलनाश्रयके लिये वृत्त रचना करे ॥ २ ॥

अथद्वितीयतृतीयवृत्तेआह-

ग्राह्यग्राहकयोगार्धसम्मितेनद्वितीयकम् ॥

मण्डलंतत्समासाख्यंग्राह्यार्धेनतृतीयकम् ॥ ३ ॥

ग्राह्यग्राहकबिम्बमानाङ्गुलयोर्योगार्धमितेनाङ्गुलात्मकव्यासार्धेनद्वितीयमेवाद्वितीयकंद्वितीयवृत्तंलिखेत् । तद्वृत्तंसमाससञ्ज्ञंयोगोत्पन्नत्वात् । तृतीयकंवृत्तंग्राह्यबिम्बाङ्गुलार्धमितेनव्यासार्धेनलिखेत् । अत्रोपपत्तिः । ग्रहणेशर

स्यमानैक्यखण्डन्यूनत्वाद्विक्षेपोमानैक्यखण्डवृत्तइति । विक्षेपदानार्थमानैक्यखण्डवृत्तलेखनम् । तत्परिधिकेन्द्रग्राहकार्धव्यासार्धवृत्तेनग्राह्यवृत्तेऽवश्यंयोगात्समाससञ्ज्ञम् । ग्राह्यवृत्तंतुग्रहणभेदज्ञानार्थमत्युपयुक्तंनहितद्वृत्तंविनातद्भेदज्ञानंसंभवति ॥ ३ ॥

भा०टी०-ग्राह्यग्राहक बिम्बमानांगुलीका योगार्द्धपरिमित व्यासार्द्ध लेकर द्वितीय वृत्त समासवृत्त) और ग्राह्यग्रहमानार्द्ध लेकर तीसरा वृत्त बनावै ॥ ३ ॥

अथतद्वृत्तेषुदिक्साधनातिदेशंस्पर्शमोक्षबलनदानार्थंस्पर्शमोक्षादिङ्नियमंचाह-

याम्योत्तराप्राच्यपरासाधनंपूर्व्ववद्दिशाम् ॥
प्रागिन्दोर्ग्रहणंपश्चान्मोक्षोऽर्कस्याविपर्ययात् ॥ ४ ॥

दिशामष्टदिशांमध्येयाम्योत्तराप्राच्यपरासाधनंपूर्ववत् । शिलातलेऽम्बुसंशुद्ध-इत्यादित्रिप्रश्नाधिकारोक्तरीत्याकार्यम् । तथाहि । द्वादशाङ्गुलशङ्कोर्मध्यकेन्द्रस्थापितस्याद्यवृत्तेपूर्वाह्णेछायाप्रवेशोऽपराह्णेछायानिर्गमस्तच्चिह्नाभ्यांमत्स्यमुत्पाद्यरेखायाम्योत्तरासावृत्तबाह्येऽधिकासम्मार्जनीया । तदितरभागेवृत्तमध्यपूरणीयावृत्तेयाम्योत्तरारेखाभवति । तदग्रमत्स्यात्पूर्वापरारेखासोभयतोवृत्तबाह्येसम्मार्जनीया । सावृत्तेपूर्वापरारेखाभवतीति । चन्द्रस्यपूर्वदिशिग्रहणंग्रहणारंभःस्पर्शइतियावत् । पश्चिमदिशिमोक्षोग्रहणान्तः । अर्कस्याविपर्ययात्स्पर्शमुक्तीज्ञेयं । ग्रहणादिरूपस्पर्शःपश्चिमायांग्रहणान्तरूपमोक्षःप्राच्यामित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । वृत्तेदिक्साधनेनादिशःसममण्डलीयाङ्किताः । एतच्चिह्नाद्वलनान्तरेणक्रान्तिवृत्तदिशांसत्त्वात् । तत्रस्पर्शमोक्षदिङ्नियमार्थंक्रान्तिवृत्तप्राच्यपरानुसारेणचन्द्रसूर्ययोःस्पर्शमोक्षौनिर्णयौ । ग्रहभोगस्यतद्वृत्तानुसारित्वात् । शीघ्रगचन्द्रःसूर्यषड्भान्तरितभूच्छायांसूर्यगत्यनुरुद्धगमनांप्रतिपश्चादागत्यमेलनारम्भंकरोत्यतश्चन्द्रबिम्बस्यपूर्वभागेस्पर्शः । भूभामतिक्रम्याग्रेचन्द्रोयदागच्छातितदाचन्द्रस्यपश्चाद्भागेभूभावियोगोऽतःपश्चान्मोक्षः । सूर्यंचन्द्रःपश्चादागत्याच्छादयत्यतःसूर्यस्यपश्चिमभागेस्पर्शःपूर्वभागेमोक्षइति ॥ ४ ॥

भा०टी०-पूर्ववत् दक्षिण उत्तर पूर्व पश्चिम चारों दिशामें गई रेखाको साधन करे। चन्द्रग्रहण पूर्वमें स्पर्श और पश्चिममें मोक्ष होती है। परन्तु सूर्यग्रहणमें इससे विपरीत होता है ॥४॥

अथवलनवृत्तेवलनदानमाह-

यथादिशंप्राग्रहणंवलनंहिमदीधितेः ॥
मौक्षिकंतुविपर्यस्तंविपरीतमिदंरवेः ॥ ५ ॥

चंद्रस्यग्राह्यस्यस्पार्शिकंवलनंपूर्वचिह्नाद्यथादिशंदाक्षिणंचेद्दक्षिणाभिमुखमुत्तरं

चेदुत्तराभिमुखंपूर्वापरसूत्रादर्धज्यावद्वलनाश्रितवृत्तेदेयम् । अतएवतद्वृत्तंवलनाश्रितसञ्ज्ञम् । मौक्षिकंमोक्षकालिकं तुकाराच्चन्द्रस्यवलनम् । विपर्यस्तविपरीतंपश्चिमचिह्नात्पूर्वापरसूत्रादर्धज्यावद्दक्षिणंचेदुत्तरादिगभिमुखमुत्तरंचेद्दक्षिणदिगभिमुखंदेयमित्यर्थः । सूर्यग्रहणेविशेषमाह । विपरीतमिति । सूर्यस्यग्राह्यस्येदंस्पार्शिकंमौक्षिकंवलनंविपरीतंव्यस्तम् । मौक्षिकंवलनंपूर्व्वचिह्नात्पूर्वापरसूत्रादर्धज्यावद्दक्षिणंचेद्दक्षिणदिगभिमुखमुत्तरंचेदुत्तरादिगभिमुखंस्पार्शिकंवलनंपश्चिमचिह्नात्पूर्व्वापरसूत्रादर्धज्यावद्दक्षिणंचेदुत्तरादिगभिमुखमुत्तरंचेद्दक्षिणदिगभिमुखंदेयमित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । चन्द्रस्यपूर्व्वभागेस्पर्शइतिसममण्डलपूर्वाचिह्नाद्वलनान्तरेणस्पर्शइतितद्वृत्तेयथाशंस्पार्शिकंवलनंदेयम् । पश्चिमोत्तराभिमुखस्यदक्षिणत्वाद्दक्षिणाभिमुखस्योत्तरत्वान्मौक्षिकंवलनंपश्चिमाचिह्नाद्विपरीतंदेयम् । सूर्यस्यतुपश्चिमभागेस्पर्शात्पश्चिमचिह्नात्स्पार्शिकंवलनंव्यस्तंदेयम् । पूर्व्वभागेमोक्षइतिमौक्षिकंवलनंपूर्व्वचिह्नाद्यथाशंदेयमिति ॥ ५ ॥

भा० टी०-वलनाश्रयवृत्तके पूर्वभागमें चन्द्रग्रहणके स्थलमें स्पर्श वलनदिक्‌के अनुसार ज्यारूपमें वलनकी रचना करे । परन्तु मोक्षकालमें वलनदिशाकी विपरीत दिशामें वृत्तके पश्चिमार्द्धमें ज्याकी रचना करे । सूर्यग्रहणमें इससे उलटा होगा ॥ ५ ॥

अथद्वितीयवृत्तेस्पार्शिकमौक्षिकविक्षेपयोर्दानमाह—

वलनाग्रान्नयेन्मध्यंसूत्रंयद्यत्रसंस्पृशेत् ॥
तत्समासेततोदेयौविक्षेपौग्रासमौक्षिकौ ॥ ६ ॥

प्रथमवृत्तेयत्रस्पार्शिकवलनाग्रंयत्रचमौक्षिकवलनाग्रंज्ञातंतस्माद्यत्प्रत्येकंसूत्रं रेखामित्यर्थः । मध्यंवृत्तमध्यविन्दुंकेन्द्ररूपंप्रतिनयेत् । तद्रेखात्मकंसूत्रंसमासेसमासाख्यद्वितीयवृत्तपरिधौयत्रयस्मिन्प्रदेशेसंस्पृशेत् स्पर्शंकुर्यात्ततस्तत्सूत्रादवधिरूपात्समासवृत्तेऽर्धज्यावद्यथादिशंस्पार्शिकमौक्षिकौ विक्षेपौयथायोग्यंदेयौ । अत्रोपपत्तिः । वलनाग्रसूत्रंमानैक्यखण्डवृत्तेयत्रलग्नंतत्रक्रान्तिवृत्तप्राच्यपरावा ततःसूर्याच्चन्द्रस्यविक्षेपान्तरेणसत्त्वात्समासवृक्षेवलनाग्रसूत्राद्विक्षेपोदेयोग्राहकबिम्बकेन्द्रज्ञानार्थम् । परंसूर्यग्रहणे । चन्द्रग्रहणेतुचन्द्रस्यविक्षेपवृत्तत्वात्तदानतिवलनदानादवगतवलनाग्ररेखामानैक्यखण्डवृत्तंयत्रलग्नात्तत्र क्रान्तिवृत्तानुसृतप्राच्यपराविक्षेपमण्डलेतत्स्थानेछाद्याच्चन्द्राच्छादकः सूर्योविक्षेपान्तरेणविक्षेपादिग्विपरीतदिशिभवतीतिवलनाग्रसूत्रात्समासवृत्तेऽर्धज्यावच्छरोव्यस्तोदेयइतिसिद्धम् ॥ अतएवविपरीताःशशाङ्कस्येत्यग्रउक्तम् ॥ ६ ॥

भा०टी०-वलनाग्रसे मध्यबिन्दुतक सूत्र रचना करे । इस सूत्रनें समास-वृत्तको जहांपर स्पर्श किया है उसी सूत्रके ऊपर समास वृत्तमें स्पर्श और मोक्ष विक्षेपके परिमाणकी ज्यानिर्माण करे ॥ ६ ॥

अथग्राह्यवृत्तेस्पर्शमोक्षस्थानज्ञानमाह—

विक्षेपाग्रात्पुनःसूत्रंमध्यबिन्दुंप्रवेशयेत् ॥
तद्ग्राह्यबिन्दुसंस्पर्शाद्ग्रासमोक्षौविनिर्दिशेत् ॥ ७ ॥

विक्षेपाग्रसमावृत्तेयत्रलग्नंतस्मात्सूत्रंरेखामित्यर्थः । अत्ररेखासरलानायातीति-शङ्कयाप्रथमतोऽवधिद्वयान्तंसूत्रंधृत्वातदनुसारेणरेखाकार्येतिसूचनार्थंसूत्रोक्तिःसर्व-त्रेतिध्येयम् । पुनर्द्वितीयवारंपूर्ववलनाग्राद्रेखायामध्यकेन्द्रावधिकायाः कृतत्वात्त-थैवविक्षेपाग्राद्रेखामित्यर्थः । वृत्तमध्यरूपकेन्द्रबिन्दुंप्रतिगणकःप्रवेशयेत्प्रविष्टंकु र्यादित्यर्थः । तद्रेखाग्राह्यबिम्बवृत्तपरिध्योःसंयोगाद्ग्रासमोक्षौस्पर्शमोक्षौगणकोवि-निर्दिशेत्कथयेत् । स्पार्शिकशराग्रसूत्रंग्राह्यवृत्तेयत्रलग्नंतत्रस्पर्शः । मौक्षिकशराग्र-सूत्रंग्राह्यवृत्तेयत्रलग्नंतत्रमोक्षइत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । मानैकखण्डवृत्तेयत्रग्राहक-बिम्बकेन्द्रंतस्माद्ग्राहकार्धेनवृत्तंग्राहकवृत्तंग्राह्यवृत्तेयत्रलग्नंतत्रस्पर्शमोक्षौभवतः । तत्रवृत्ताकरणलाघवाद्ग्राहककेन्द्राद्ग्राह्यकेन्द्रंयावत्सूत्रंमानैक्यखण्डमितंग्राह्यवृत्तेयत्र-लग्नंतत्रपरिध्योःस्पर्शमोक्षौ स्वस्वव्यासार्धयोगात् ॥ ७ ॥

भा० टी०-समासवृत्तवाले विक्षेपाग्रसे मध्यबिन्दुगत सूत्रमें जहांपर ग्राह्यवृत्तको स्पर्श किया है, वही दोनों स्थान स्पर्श और मोक्षके स्थान हैं ॥ ७ ॥

अथग्रहणेविक्षेपस्यदिग्व्यवस्थांमध्यग्रहणज्ञानार्थमध्यकालिकवलनदानंचश्लो-काभ्यामाह-

नित्यशोऽर्कस्यविक्षेपाः परिलेखेयथादिशम् ॥
विपरीताःशशांकस्यतद्वशादथमध्यमम् ॥ ८ ॥
वलनंप्राङ्मुखंदेयंतद्विक्षेपैकतायदि ॥
भेदेपश्चान्मुखंदेयमिन्दोर्भानोर्विपर्ययात् ॥ ९ ॥

अर्कस्यग्रहणेचन्द्रविक्षेपाः परिलेखेग्रहणभेददर्शनप्रकारेणयथादिशंयथास्थितं-दिशंनित्यशोनित्यंज्ञेयाः । चन्द्रस्यग्रहणेचन्द्रविक्षेपाविपरीतादक्षिणाश्चेदुत्तरा उत्तराश्चेद्दक्षिणा । एतदनुरोधेनैवस्पार्शिकमौक्षिकविक्षेपौदेयौ । नयथागत-दिशावितिज्ञेयम् । अथानन्तरंतद्वशान्मध्यग्रहणकालिकविक्षेपदिशःसकाशा-त्सूर्यग्रहणे मध्यग्रहणकालिकस्पष्टविक्षेपदिक्चिह्नाच्चन्द्रग्रहणेमध्यकालिकविक्षेप-दिग्विपरीतदिक्चिह्नादित्यर्थः । यदियर्हीत्यर्थः । तद्विक्षेपैकतातद्वलनंवि-क्षेपोमध्यग्रहणकालिकविक्षेपः । अनयोरेकतैक्यंदिक्सम्बन्धेनेतिशेषः । एक-दिशीत्यर्थः । अत्रचन्द्रविक्षेपदिग्यथास्थितैवचविपरीतदिगितिध्येयम् । प्रा-ङ्मुखंपूर्वंविहितम्मुखम् । वलनाश्रितवृत्तेऽर्धज्यावच्चन्द्रस्यमध्यमंवलनंमध्यग्रहण

कालिकंस्फुटंवलनंदेयम् । भेदेवलनविक्षेपेदिशोर्भिन्नत्वेपश्चान्मुखम् । वलनाश्रित-वृत्तेऽर्धज्यावन्मध्यग्रहणकालिकंचन्द्रस्यवलनंपाश्चिमचिह्नसम्मुखंदेयम् । सूर्यग्रहणे विशेषमाह । भानोरिति । सूर्यग्रहणेसूर्यस्यवलनंविपर्ययादुक्तवैपरीत्यात् । एकदिशिपाश्चिमचिह्नसम्मुखंभिन्नदिशिपूर्वचिह्नसम्मुखंदेयमित्यर्थः । फलितार्थस्तु चन्द्रग्रहणेमध्यकालवलनदिक्तत्कालविक्षेपयथागतादिशोर्दक्षिणत्व उत्तरचिह्नाद्वल-नाश्रितवृत्तेऽर्धज्यावन्मध्यवलनंपूर्वचिह्नाभिमुखंदेयम् । तयोरुत्तरत्वेदक्षिणचिह्ना-त्पूर्वाभिमुखंवलनंदेयम् । यदिदक्षिणवलनमुत्तराविक्षेपस्तदादक्षिणदिक्चिह्नादर्ध-ज्यावत्पाश्चिमचिह्नाभिमुखंवलनंदेयम् । यद्युत्तरंवलनंदक्षिणविक्षेपस्तदावलनाश्रि-तवृत्तउत्तरचिह्नात्पाश्चिमचिह्नाभिमुखंवलनमर्धज्यावद्देयम् । सूर्यग्रहणेतुद्वयोर्दक्षि-णत्वेवलनाश्रितवृत्तेदक्षिणचिह्नात्पाश्चिमचिह्नाभिमुखंवलनंदेयम् । उत्तरत्वउत्तर-चिह्नात्पाश्चिमाभिमुखंदेयम् । यदिदक्षिणंवलनमुत्तरविक्षेपस्तदोत्तरचिह्नात्पूर्वाभि-मुखम् । यद्युत्तरंवलनंदक्षिणविक्षेपस्तदादक्षिणचिह्नात्पूर्वाभिमुखंदेयमिति । भा-स्कराचार्यैस्त्वेतदुक्तफलितंलाघवेनदक्षिणोत्तरवलनंक्रमेणसव्यापसव्यंदेयमित्युक्तम्। अत्रोपपत्तिः । प्रथमश्लोकोपपत्तिःस्पार्शिकमौक्षिकशरदानोपपत्तावुक्ता । ग्राह्य-बिम्बकेन्द्राद्विक्षेपान्तरेण ग्राहकबिंबकेन्द्रंभवति । शरस्य कदम्बाभिमुखत्वेन केन्द्रात्कदम्बाभिमुखशरदानार्थकदम्बज्ञानंवलनाश्रितवृत्तआवश्यकमतोवलनान्तरे-णस्वदिग्भ्यः क्रान्तिवृत्तादिशांसत्वादुत्तरदक्षिणदिग्भ्यांमध्यवलनान्तरेणक्रांतिवृ-त्तयाम्योत्तररूपकदंबौदक्षिणोत्तरतइतिपूर्वपाश्चिमानुरोधेनैतद्दानंयुक्ततरम् । यद्य-पिचन्द्रग्रहणेशरस्यविपरीतादिक्त्वात्तच्छरदिग्ग्रहणेनसूर्यचन्द्रयोर्मध्यवलनदानमे-कदिक्त्वेपाश्चिमचिह्नाभिमुखंभिन्नदिक्त्वेपूर्वाभिमुखमित्येकोक्तिलाघवंतथापिसूर्य-चन्द्रयोर्ग्रहणभेदादेकोक्तौमन्दबुद्धीनां भ्रमसम्भवस्तद्वारणार्थंपृथागेवोक्तिःकृता । स्वतन्त्रेच्छस्यनियोगानर्हत्वाच्च ॥ ८ ॥ ९ ॥

भा०टी०-सूर्यग्रहणमेंभी ऐसाही करे कि उन दोनोंमत्स्योंके मुखसे व पूंछसे निकली हुई दो रेखाओंको फैलाकर जो चन्द्रविक्षेप यथायोग्य दिशामें होगा । चन्द्रग्रहणके लिये विप-रीत दिशामें ग्रहण करना चाहिये । मध्यग्रहणमेंभी विक्षेपका ऐसाही व्यवहार होता है॥ ८ ॥ मध्य चन्द्रग्रहणमें वलन और विक्षेप एक दिशामें हो तो वलनका पूर्वमुखमें होना और दिशाभेद होनेसे पश्चिममुखमें होना कहा जायगा । विक्षेपके अनुसार उत्तर या दक्षिणमें होगा । परन्तु सूर्यग्रहणमें अदल बदल होजाताहै ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथमध्यग्रहणंश्लोकाभ्यांपरिलेखेदर्शयति-

वलनाग्रात्पुनः सूत्रंमध्यबिन्दुंप्रवेशयेत् ॥
मध्यसूत्रेणविक्षेपंवलनाभिमुखंनयेत् ॥ १० ॥

विक्षेपाग्राल्लिखेद्वृत्तंग्राहकार्धेनतेनयत् ॥
ग्राह्यवृत्तंसमाक्रान्तंतद्ग्रस्तंतमसाभवेत् ॥ ११ ॥

वलनाग्रान्मध्यकालिकवलनाग्रात्पूर्वश्लोकोक्तात्सूत्रंरेखां मध्यबिन्दुंवृत्तमध्यचिह्नंप्रतिपुनर्वारान्तरंपूर्वस्पार्शिकमौक्षिकवलनाग्राभ्यांसूत्ररचनातथैवेत्यर्थः । प्रवेशयेत् गणकःप्रतिष्ठांकुर्यात् । मध्यसूत्रेणानेनमध्यकालिकविक्षेपंमध्यवलनाग्राभिमुखंनयेत् । वृत्तमध्यबिन्दोरित्यर्थसिद्धम् । तथाचवृत्तमध्यान्मध्यवलनाग्रसूत्रेविक्षेपांगुलानिगणयित्वातदग्रेविक्षेपाग्रेचिह्नंकुर्यादित्यर्थः । अस्माद्विक्षेपाग्राद्ग्राहकबिम्बमानार्धेनवृत्तंगणकोलिखेत् । तेनवृत्तेनयद्यन्मितं ग्राह्यवृत्तंसमाक्रान्तं व्याप्तम् । यद्ग्राह्यवृत्तविभागरूपंतमसान्धकाररूपेणच्छादकेनग्रस्तमाच्छादितं स्यात्तन्मितंविभागंमण्यादिनालिप्तंकुर्यादित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । वृत्तेमध्यसूत्रं कदंबाभिमुखंतत्रग्राह्यकेन्द्राच्छरान्तरेणग्राहककेन्द्रंतस्माद्ग्राहकार्धेनवृत्तंग्राहकबिम्बवृत्तंतेनग्राह्यवृत्तंयावदाक्रान्तंतावन्मध्यकालेग्रस्तमितितद्भागस्यकृत्स्नत्वेनाकाशे दर्शनात्तमसाग्रस्तमित्युक्तम् ॥ १० ॥ ११ ॥

भा० टी०-वलनाग्रसे मध्यबिन्दुतक सूत्र करे। इस सूत्रमें मध्यबिन्दुसे वलनाभिमुखमें विक्षेपका चिह्न (निशान) करे ग्राहकमानार्द्धपरिमित व्यासार्द्धके साथ विक्षेपाग्रके चारों ओर वृत्तकल्पना करनेसे जो वृत्त होगा वह वृत्त ग्राह्यवृत्तमें जितना व्याप्तहो वही अन्धकारावृत है ॥ १० ॥ ११ ॥

ननुपूर्वकपालेग्रहणयोःसम्भवेसर्वमुक्तमुपपन्नम् । पश्चिमकपालेग्रहणसम्भवेपरिलेखोक्तंवैपरीत्येनभवति । तथाहि । यस्यांदिशिपरिलेखेस्पर्शोमोक्षोवा परकपालेतस्यपश्चिमाभिमुखत्वेनदर्शनोदिग्वैपरीत्यंप्रत्यक्षमित्यतआह-

छेद्यकंलिखताभूमौफलकेवाविपश्चिता ॥
विपर्ययोदिशांकार्यः पूर्वापरकपालयोः ॥ १२ ॥

भूमौफलकेकाष्ठपट्टिकायामित्यर्थः । वाविकल्पे भूमौलिखितस्येतस्ततोनयनासम्भवात्फलकइत्युक्तिः । छेद्यकंप्रागुक्तंलिखितागणकेनविपश्चितातत्त्वज्ञेनादिशांपूर्वादिदिशांपूर्वापरकपालयोर्विपर्ययोव्यत्यासःकार्यः । यथापूर्वकपाले सव्यक्रमेणपूर्वादिलेखनंतथापरकपालेसव्यक्रमेणपूर्वादिलेखनंनकार्यम् । किन्तु पश्चिमस्थानेपूर्वापूर्वस्थानेपश्चिमा । उत्तरदक्षिणदिग्भागेक्रमेणोत्तरदक्षिणे लेख्ये इत्यर्थः । तेनपश्चिमकपालेग्रहणसम्भवेऽपिपरिलेखोक्तंसम्भवत्येवेतिभावः । अत्रोपपत्तिः । दिग्वैपरीत्यंभवतीतिपूर्वमेववैपरीत्येनादिशालेखनेपरिलेखोयथास्थितोभवतीत्युक्तम् । भास्कराचार्यैस्तुनैतदुक्तम् । परिलेखेनामुष्यांदिश्यमुकं भवतीति ज्ञानस्यावश्यकत्वेनतस्यतत्राबाधात् । नहियथाकाशेतथादर्शनम-

पेक्षितम् । भूमौफलकेवाकाशादीनांवास्तवानामभावात् । अतएवकिञ्चिन्न्यूनसादृश्येनादृष्टान्तत्वमितिध्येयम् ॥ १२ ॥

भा०टी०-समतलभूमिमें या फलको छेदक लिखकर पूर्वापर कपालको वृत्तका (अर्द्धांश) अदल बदल करे ॥ १२ ॥

अथानादेश्यग्रहणमाह-

स्वच्छत्वाद्द्वादशांशोऽपिग्रस्तश्चन्द्रस्यदृश्यते ॥
लिप्तात्रयमपिग्रस्तंतीक्ष्णत्वान्नविवस्वतः ॥ १३ ॥

चन्द्रबिम्बस्यद्वादशांशोग्रस्तआच्छादितः । अपिशब्दादाच्छादनेनतेजोहीनतयादृश्यतासम्भावनायामित्यर्थः । नदृश्यते । हेतुमाह । स्वच्छत्वादिति । तदतिरिक्तसम्पूर्णदृश्यभागस्यस्वच्छत्वाज्ज्योत्स्नावत्वात् । तथाचतज्ज्योत्स्नाधिक्येनग्रस्तोऽप्यल्पोंऽशःस्वाकारेणनदृश्यतेज्योत्स्नावत्त्वेनदूरतयाभासते।सूर्यस्यलिप्तात्रयंग्रस्तमपिनदृश्यते । अत्रहेतुमाह । तीक्ष्णत्वादिति । सूर्यस्यतेजस्तैक्ष्ण्याल्लोकनयनप्रतिघातार्हत्वाच्चेत्यर्थः । वृद्धवसिष्ठेनतु "ग्रस्तंशशाङ्कस्यकलाद्वयंचेत्कलात्रयंभानुमतोनलक्ष्यम् । तत्किञ्चिदूनंत्वुदयास्तकालेलक्ष्यंयतस्तौकरगुल्फहीनौ ॥" इत्युक्तम् । अतउदयास्तकालेउत्तमदृश्यंदृश्यमितिध्येयम् ॥ १३ ॥

भा०टी०-चंद्रमाकी स्वच्छताईके कारण द्वादशभागग्रहणभी दीख जाता है । सूर्यकिरणोंकी तेजीके मारे तीनकलाका ग्रहणभी नहीं दिखाई देता ॥ १३ ॥

अथेष्टग्रासपरिलेखार्थंग्राहकमार्गज्ञानंश्लोकत्रयेणाह-

स्वसञ्ज्ञितास्त्रयः कार्याविक्षेपाग्रेषुबिन्दवः ॥
तत्रप्राङ्मध्ययोर्मध्येतथामौक्षिकमध्ययोः ॥ १४ ॥
लिखेन्मत्स्योतयोर्मध्यान्मुखपुच्छविनिःसृतम् ॥
प्रसार्यसूत्रद्वितयंतयोर्यत्रयुतिर्भवेत् ॥ १५ ॥
तत्रसूत्रेणविलिखेच्चापंबिन्दुत्रयस्पृशा ॥
सपन्थाग्राहकस्योक्तोयेनासौसम्प्रयास्यति ॥ १६ ॥

विक्षेपाग्रेषुस्पार्शिकमौक्षिकमाध्यविक्षेपाणां पूर्वस्वस्वस्थाने स्पर्शमोक्षमध्यग्रहणज्ञानार्थं दत्तानामग्रिमभागेषुस्वसंज्ञयासङ्केतिताबिन्दवस्त्रयः कार्याः स्पर्शशराग्रे स्पर्शचिह्नाङ्कितो बिन्दुर्मोक्षशराग्रेमोक्षचिह्नाङ्कितोबिन्दुर्मध्यशराग्रे मध्यचिह्नाङ्कितोबिन्दुरितित्रयो बिन्दवोगणकेनस्थाप्याः । तत्रोपस्थितबिंदुत्रयम-

---

१ तेन इति पाठान्तरम् ।

ध्येप्राङ्मध्ययोः स्पर्शमध्यबिन्द्वार्मध्येऽन्तराले मौक्षिकमध्ययोस्तत्संज्ञयोर्बिन्द्वोस्त-थान्तरालेप्रत्येकंमत्स्यंलिखेदित्यन्यतरद्वयेगणकोमत्स्यौलिखेत् । तयोर्मत्स्ययोर्म-ध्याद्गर्भान्मुखपुच्छाभ्यां विनिःसृतंनिष्कासितंप्रत्येकंसूत्रमितिसूत्राद्वितयम् । प्रसार्याग्रेऽपिस्वमार्गेणनिःसार्य्यतयोः स्वस्वमार्गप्रसारितसूत्रयोर्यत्रप्रदेशेयुतिर्योगः स्यात्तत्रप्रदेशेकेन्द्रंप्रकल्प्यसूत्रेणबिन्दुत्रयस्य स्पृशाप्रकल्पितकेन्द्रबिन्दुत्रयान्यतम-बिन्द्वन्तरसूत्रेणव्यासार्धरूपेणेत्यर्थः । चापंवृत्तैकदेशरूपंधनुर्बिन्दुत्रयस्पृष्टंलिखेत् । गणकः कुर्यादित्यर्थः । सचापात्मकोवृत्तैकदेशोग्राहकस्यपन्थामार्गःकथितः । येनमार्गेणासौग्राहकःसम्प्रयास्यतिग्रास्यबिम्बच्छादनार्थंगमिष्यति । परिलेखस्यग्र-हणकालपूर्वकालावश्यम्भावित्वात् । अत्रोपपत्तिः । इष्टेऽह्निमध्येप्राक्पश्चादिति त्रिप्रश्नाधिकारान्तर्गतश्लोकोपपत्तिः प्राक्प्रतिपादिता ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

भा० टी०–स्पर्श मध्य और मोक्षगतविक्षेपाग्रमें (शराग्रमें) तीन चिह्नित बिन्दु लिखे । स्पर्श और मध्यबिंदुके द्वारा और मोक्ष व मध्यबिन्दुकेद्वारा दो मत्स्य अंकित बिन्दुमें संयुत होंगे तिसको केन्द्र करके पहले कहे हुए तीन बिन्दुको छूताहुआ एक धनुष बनावै । वह धनुही ग्राहकका मार्ग है; तिसको अवलम्ब करके गमन करताहै ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥

अथेष्टग्रासपरिलेखंश्लोकत्रयेणाह–

ग्राह्यग्राहकयोगार्धात्प्रोज्झ्येष्टग्रासमागतम् ॥
अवशिष्टांगुलसमांशलाकांमध्यबिन्दुतः ॥ १७ ॥
तयोर्मार्गोन्मुखोदद्याद्ग्रासतःप्राग्ग्रहाश्रिताम् ॥
विमुञ्चतोमोक्षदिशिग्राहकाध्वनमेवसा ॥ १८ ॥
स्पृशेद्यत्रततोवृत्तंग्राहकार्धेनसंलिखेत् ॥
तेनग्राह्याद्यदाक्रान्तंतत्तमोग्रस्तमादिशेत् ॥ १९ ॥

मानैक्यखण्डादिष्टकालिकाभीष्टग्रासमागतंचन्द्रग्रहणाधिकारोक्तप्रकारावगतंत्य-क्त्वावशिष्टयान्यंगुलानितत्प्रमाणांशलाकांयष्टिंमध्यबिन्दुतोवृत्तत्रयमध्यकेन्द्रबिन्दोः सकाशात्तयोः स्पर्शमोक्षविक्षेपाग्रयोर्मार्गोन्मुखसंबद्धमार्गचापरेखाभिमुखींमार्गरे-खासक्तांदद्यात् । कथमित्यतआह । ग्रासतइति । मध्यग्रासतःप्राक्पूर्वकालेग्रहाश्रि-तांग्रहस्पर्शस्तच्छराग्रसम्बन्धिमार्गचापरेखासक्तांशलाकाम् । विमुञ्चतोमुच्यमाना-न्तर्गताभीष्टग्रासस्यशलाकाम् । मोक्षदिशि । मोक्षविक्षेपाग्रसम्बन्धिमार्गचापरे-खायांसक्तांदद्यात् । साशलाकाग्राहकाध्वाजांग्राहकमार्गचापरेखांयत्रयस्मिन्भागे स्पृशेत्संलग्नास्यात् । ततःस्थानात् । एवकारस्तदतिरिक्तव्यवच्छेदार्थः ।

१ तदा इति पाठान्तरम् ।

ग्राहकमानार्धेनव्यासार्धेनवृत्तंसंलिखेत् । सम्यक्प्रकारेणकुर्यात् । तेनवृत्तेनग्राह्याद्ग्राह्यवृत्ताद्यन्मितमेकदेशरूपंवृत्तमाक्रान्तंव्याप्तम् । तत्तन्मितग्राह्यवृत्तांशंतमोग्रस्तंछादकाच्छादितमभीष्टकाल आदिशेत्कथयेत्। अत्रोपपत्तिः । इष्टग्रासोनंमानैक्यखण्डंकर्णः । सतुग्राह्यग्राहककेन्द्रान्तररूपः। अतोऽयंग्राह्यकेन्द्रात्पूर्वज्ञातग्राहकमार्गरेखायांयत्रलग्नस्तत्राभीष्टसमयेग्राहककेन्द्रम्। तस्माद्ग्राहकवृत्तेनग्राह्यवृत्तंयदाक्रान्तंतत्कालेग्रासइतिसुगमा ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

भा०टी०-ग्राह्य और ग्राहकमानके योगार्द्धसे इष्टग्रास वियोग करके जो बचै उस परिमाण-मध्यबिन्दुसे रेखा उसी मार्गके सामनेको खेंचे। मध्यग्रहणके पूर्व होनेपर स्पर्शदिशामें और पर होनेपर मोक्षाभिमुखमें रेखाको उतारले। रेखान्त बिन्दुकेन्द्र करके ग्राहकमानार्द्धअनुसार वृत्तरचना करे। वह वृत्त और ग्राह्यवृत्त दोनोंके अधिकृत अंशही तात्कालीन आच्छादित अंशहैं ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथश्लोकाभ्यांनिमीलनपरिलेखमाह-

मानांतरार्धेनमितांशलाकांग्रासदिङ्मुखीम्॥
निमीलनाख्यांदद्यात्सातन्मार्गेयत्रसंस्पृशेत् ॥ २० ॥
ततोग्राहकखण्डेनप्राग्वन्मण्डलमालिखेत् ॥
तद्ग्राह्यमण्डलयुतिर्यत्रतत्रनिमीलनम् ॥ २१ ॥

ग्राह्यग्राहकबिम्बमानयोरन्तरस्यार्धंतेनपरिमितांशलाकांनिमीलनसंज्ञां ग्रासदिङ्मुखींस्पार्शिकशराग्रविभागाभिमुखींमध्यबिन्दोःसकाशाद्दद्यात् । सानिमीलनसंज्ञाशलाकातन्मार्गेस्पार्शिकग्राहकमार्गचापरेखाकारेयस्मिन्प्रदेशे संलग्नास्यात्तत्स्थानाद्ग्राहकमानार्धेनप्राग्वन्मध्याभीष्टग्रासज्ञानार्थंयथातद्वृत्तंकृतं तथेत्यर्थः। वृत्तं कुर्यात् । तद्ग्राह्यमण्डलयुतिर्लिखितवृत्तग्राह्यवृत्तयोःसंयोगो यत्रयस्यांदिशितत्रतस्यांदिशिनिमीलनंग्राह्यबिम्बस्यानिमज्जनंस्यात् । अत्रोपपत्तिः । सम्मीलनकाले ग्राह्यग्राहककेन्द्रान्तरंमानार्धान्तरमितकर्णः । अन्यथातदनुपपत्तेः । सग्राह्यकेन्द्रात्स्पर्शमार्गेयत्रलग्नस्तत्रग्राहककेन्द्रम् । तस्माद्ग्राहकवृत्तंग्राह्यमण्डलंयत्रस्पृशति तत्रनिमीलनंस्पष्टम् ॥ २० ॥ २१ ॥

भा०टी०-ग्राह्यग्राहकमानद्वयान्तरार्द्ध परिमित शलाका ग्रासदिशामें उस मार्गपर स्थापन करे और तिसके अग्रभागको केन्द्र करके ग्राहक मानके अनुसार मंडल लिखनेसे जहांपर वह मण्डलको स्पर्श करे तिसी दिशामें निर्मीलन आरम्भ होगा ॥ २० ॥ २१ ॥

अथोन्मीलनपरिलेखमाह-

एवमुन्मीलनेमोक्षदिङ्मुखींसम्प्रसारयेत् ॥
विलिखेन्मण्डलंप्राग्वदुन्मीलनमथोक्तवत् ॥ २२ ॥

उन्मीलनेउन्मीलनज्ञानार्थमित्यर्थः । एवंबिंबमानान्तरार्धमितांशलाकांमोक्ष-दिङ्मुखींमौक्षिकशराग्रविभागाभिमुखींमध्यबिन्दोः सकाशात्संप्रसारयेदद्याादित्य-र्थः । प्राग्वत्संमीलनार्थदत्तशलाकास्पार्शिकमार्गयोगस्थानाद्ग्राहकार्धेनवृत्तंकृतंतथे-त्यर्थः । मौक्षिकमार्गदत्तशलाकायोगस्थानाद्ग्राहकवृत्तंकुर्यात् । अथानन्तरमुक्तव-द्ग्राहकग्राह्यवृत्तयोगोयस्यांतस्यांदिशीत्यर्थः । उन्मीलनंग्राह्यबिम्बस्योन्मज्जनंस्यात् । अत्रोपपत्तिः । उन्मीलनेऽपिग्राह्यग्राहककेन्द्रान्तरंमानार्धान्तर्मितंकर्णः । परमपर-मोक्षदिशीतियुक्तिस्तुल्या ॥ २२ ॥

भा०टी०-इसप्रकारसे मोक्षदिशामें शलाका स्थापन करके जहांपर पूर्ववत मण्डल स्पर्श करे सोही उन्मीलनदिक् होगी ॥ २२ ॥

अथग्रहणेचन्द्रस्यवर्णानाह-

अर्धादूनेसधूम्रंस्यात्कृष्णमर्धाधिकंभवेत् ॥
विमुञ्चतःकृष्णताम्रंकपिलंसकलग्रहे ॥ २३ ॥

अर्धादर्धबिम्बादूनेन्यूनेग्रस्तेसतिसधूम्रंग्रासीयबिम्बंधूम्रवर्णंस्यात् । अर्धाधिकं ग्रस्तबिम्बंकृष्णंस्यात् । विमुञ्चतएतदनन्तरंग्रस्तमधिकमपिमुक्त्युन्मुखमिति मोक्षा-रंभोन्मुखस्यपादोनाबिम्बाधिकग्रस्तस्यासम्पूर्णस्येत्यर्थः । कृष्णताम्रंश्यामरक्तमिश्र-वर्णः । संपूर्णग्रहणेकपिलंपिशङ्गवर्णबिंबंस्यात् । अत्रभूभायास्तेजोऽभावतयाचन्द्रा-च्छादकत्वादेतेवर्णाःसंभवन्ति । सूर्यस्यतुचन्द्रोजलगोलरूपआच्छादकःसदर्शान्त-दिवसेऽस्मद्दृश्यार्धेसदाकृष्णएवेतिकृष्णएवसूर्यस्यग्रस्तोंऽशःसर्वदा । अतएवाविकृत-त्वाद्भगवतावर्णोनोक्तः ॥ २३ ॥

भा०टी०-चन्द्रग्रहण आधेसे कमहोनेपर धूम्रवर्ण, अधिक होनेसे कृष्ण वर्ण है । पादोनार्द्ध होनेपर ताम्र, कृष्ण और सम्पूर्ण होनेसे कपिल रंगका होता है (सूर्यका ग्रस्तांश सदा काले रंगका रहता है) ॥ २३ ॥

अथोक्तच्छेद्यकस्यगोप्यत्वमाह-

रहस्यमेतद्देवानांनदेयंयस्यकस्यचित् ॥
सुपरीक्षिताशिष्यायदेयंवत्सरवासिने ॥ २४ ॥

एतद्ग्रहणच्छेद्यकंदेवतानांगोप्यंवस्तु । यस्यकस्यचिद्यस्मैकस्मैचिदपरीक्षितायन देयम् । कस्मैचिद्देयमित्यर्थागतंविवृणोति । सुपरीक्षितशिष्यायेति । सुपरीक्षित-मित्यत्रहेतुगर्भविशेषणमाह । वत्सरवासिनइति । वर्षपर्यन्तंतत्सङ्गत्या तस्यतत्त्व-तयाज्ञानंभवत्येवेतिभावः ॥ २४ ॥

भा०टी०-यह तत्त्व देवताओंके लियेभी रहस्य है। जिस तिसको यह नहीं देना चाहिये । एक वर्षतक भली भांतिसे जिसकी परीक्षा लेली है, उस शिष्यकोही केवल यह बताना चाहिये ॥ २४ ॥

१ दातव्यं ज्ञानमुत्तमम् इति पाठान्तरम् ।

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वनिरासार्थमधिकारसमाप्तिफक्किकयाह-

ग्रहणभेदज्ञापकपरिलेखप्रतिपादनंपरिपूर्त्तिमाप्तामित्यर्थः । इदंदशभेदग्रहगणितमित्युत्तयागणितक्रियाभावाद्ग्रहणाधिकारान्तर्गतंनाऽधिकारान्तरम् । अतएवाधिकार इत्युपेक्षाध्यायइत्युक्तम् ॥

रङ्गनाथेनरचितेसूर्य्यसिद्धान्तटिप्पणे ॥ छेद्यकंग्रहणान्तंतुपूर्णंगूढप्रकाशके ॥ इतिश्रीसकलगणकसार्वभौमवल्लालदैवज्ञात्मजरङ्गनाथगणकविरचिते गूढार्थप्रकाशके छेदकाध्यायःसम्पूणः ॥

इतिच्छेदकाध्यायः ॥

छठवाँ अध्याय समाप्त ॥

अथ सप्तमोऽध्यायः ।

अथयुत्याभासग्रहणनिरूपणेनसंस्मृततयारब्धोग्रहयुत्यधिकारोव्याख्यायते । तत्रयुतिभेदानाह-

तारग्रहाणामन्योन्यंस्यातांयुद्धसमागमौ ॥
समागमःशशाङ्केनसूर्येणास्तमनंसह ॥ १ ॥

ताराग्रहाणांभौमादिपञ्चग्रहाणांपरस्परंयोगेयुद्धसमागमौ वक्ष्यमाणलक्षणभिन्नौस्तः । चन्द्रेणसहपञ्चतारान्यतमस्ययोगःसमागमसंज्ञः । सूर्येणसहपंचताराणामन्यतमस्यचंद्रस्यवायोगस्तदस्तमनंपूर्णास्तङ्गतत्वम् । नत्वस्तमात्रम् । युत्यभावेप्रागपरकालेतस्यसत्वात् ॥ १ ॥

भा०टी०-ग्रहोंके परस्पर योगका नाम युद्ध या समागम है। चंद्रमाके सहित ग्रहोंके योगका नाम समागम है, । सूर्यके साथ योगका नाम अस्तमन है ॥ १ ॥

अथयुतेर्गतैष्यत्वंसार्धश्लोकेनाह-

शीघ्रेमन्दाधिकेऽतीतःसंयोगोभवितान्यथा ॥
द्वयोःप्राग्यायिनोरेवंवक्रिणोस्तुविपर्ययात् ॥
प्राग्यायिन्यधिकेऽतीतोवक्रिण्येष्यःसमागमः ॥ २ ॥

ययोर्ग्रहयोर्योगोऽभिमतस्तयोर्गहयोर्मध्येयः शीघ्रगतिर्ग्रहस्तस्मिन्मन्दाधिकेमन्दगतिग्रहादधिकेसतितयोःसंयोगोयुतिसंज्ञोगतःपूर्वजातइत्यर्थः । अन्यथामन्दगतिग्रहेशीघ्रगतिग्रहादधिकेसतीत्यर्थः । तयोर्योगोभविताएष्यः । एवमुक्तंगतैष्यत्वम् । द्वयोर्ग्रहयोःप्राग्यायिनोःपूर्वगतिकयोर्भवति । वक्रिणोर्वक्रगतिग्रहयोर्वि-

पर्ययादुक्तवैपरीत्यात् । तुकाराद्गतैष्योयोगोभवति । शीघ्रगतिग्रहेमन्दगतिग्रहादधिकएष्यःसंयोगोमन्दगतिग्रहेशीघ्रगतिग्रहादाधिकेगतःसंयोगइत्यर्थः । अथैकस्यवक्रत्वआह । प्राग्यायिनीति । द्वयोर्मध्यएकतरस्मिन्वक्रिणिसतितदावक्रगतिग्रहात्पूर्वगतिग्रहेऽधिकेसतिगतोयोगः । यदातुपूर्वगतिग्रहाद्वक्रगतिग्रहेऽधिकेसतिसमागमोयोगएष्यःस्यात् । अत्रोपपत्तिः । पूर्वगत्योर्ग्रहयोर्मध्येशीघ्रगत्याधिकत्वेऽग्रेयोगासम्भवात्पूर्वयोगोजातः । मन्दगस्याधिकत्वेशीघ्रगस्य न्यूनत्वादग्रेयोगोभविष्यति । वक्रिणोस्तुशीघ्रगत्याधिकत्वेऽग्रेतन्न्यूनत्वेनयोगसम्भवादेष्योयोगोमन्दगस्याधिकत्वेशीघ्रगस्योत्तरोत्तरंन्यूनत्वसम्भवेनाग्रेयोगासंभवाद्गतोयोगः । अथवक्रगतिग्रहात्पूर्वगतिग्रहेऽधिकउत्तरोत्तरंयोगासम्भवाद्गतोयोगः । पूर्वगतिग्रहाद्वक्रगतिग्रहेऽधिकेवक्रगतिग्रहस्यन्यूनत्वेनाग्रेयोगसम्भवादेष्यःसंयोगइति ॥ २ ॥

भा०टी०–शीघ्रगामी ग्रहस्पष्ट मन्दगामीकी अपेक्षा अधिक होनेपर समागम अतीत होगया है अन्यथा भाव्य होता है। दोनोंके वक्री होनेसे विपर्यय होता है । एकको वक्रगति होनेसे, सरलगति ग्रहस्पष्ट अधिक होनेपर योगगत और वक्रगति ग्रहस्पष्ट अधिक होनेसे योग पीछे होगा ॥ २ ॥

अथयुतिकालेतुल्यग्रहयोरानयनंयुतिकालस्यगतैष्यदिनाद्यानयनं च सार्धश्लोकत्रयेणाह–

ग्रहांतरकलाःस्वस्वभुक्तिलिप्तासमाहताः ॥ ३ ॥
भुक्त्युत्तरेणविभजेदनुलोमविलोमयोः ॥
द्वयोर्वक्रिण्यथैकस्मिन्भुक्तियोगेनभाजयेत् ॥ ४ ॥
लब्धंलिप्तादिकंशोध्यंगतेदेयंभविष्यति ॥
विपर्ययाद्वक्रगत्योरेकस्मिंस्तुधनव्ययौ ॥ ५ ॥
समलिप्तौभवेतांतौग्रहौभगणसंस्थितौ ॥
विवरंतद्वदुद्धृत्यदिनादिफलमिष्यते ॥ ६ ॥

युतिसम्बन्धिनोर्ग्रहयोरभीष्टैककालिकयोरन्तरस्यकलाः पृथक्स्वस्वगतिकलाभिर्गुणिताःकर्मद्वयोर्ग्रहयोरनुलोमविलोमयोर्मार्गगयोर्वक्रगयोर्वेत्यर्थः । स्फुटगत्यन्तरेणगणकोभजेत् । विशेषमाह । वक्रिणीति । अथानन्तरंद्वयोर्मध्यएकतरे वक्रिणिसतितयोर्गतियोगेनभजेत् । फलंकलादिस्वंस्वंगतेयोगेसतिग्रहयोर्मार्गगयोः शोध्यंभविष्यति । एष्येयोगेसतितयोर्देयंयोज्यम् । द्वयोर्वक्रगत्योःस्वंस्वंफलंविपर्ययादुक्तवैपरीत्यात्कार्यम् । गतेयोगेयोज्यम् । एष्ययोगेहीनमित्यर्थः । द्वयोर्मध्य एकतरेतुकाराद्वक्रिणिसतितयोर्ग्रहयोर्वक्रमार्गगयोःस्वस्वकलात्मकफलाङ्कौधनव्ययौ

युतहीनौकार्यौ । यथाहि । गतयोगेमार्गगग्रहेस्वफलंहीनंवक्रिणिग्रहेयोज्यम् । एष्ययोगेवक्रग्रहेशोध्यम् । मार्गगग्रहेयोज्यमिति । एवंकृतेतौयुतिसम्बन्धिनौग्रहौभगणसंस्थौभगणेराश्यधिष्ठितचक्रेसंस्थितिर्ययोस्तौराश्याद्यात्मकौसमलिप्तौसमकलौस्तः । लिप्तापदस्यभगणावयवोपलक्षणत्वेनसमौस्तइत्यर्थः । अथयुतिकालज्ञानमाह । विवरमिति । अभीष्टकालिकयोर्युतिसम्बन्धिनोर्ग्रहयोरन्तरंकलात्मकंतद्वत्समकलोपयुक्तफलज्ञानार्थंयथागतिगुणितमन्तरंगतियोगेनगत्यन्तरेणभक्तंतथेत्यथः । तेनहरेणभक्त्वाफलंदिनादिकंगतैष्ययुतिवशादभीष्टकालाद्गतैष्यमुच्यते । तत्समयेतद्युतिकालेतौग्रहौसमौस्तइत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । गत्यन्तरेणगतिकलास्तदाग्रहान्तरकलाभिः काइतिफलेगतयुतौग्रहयोः शोध्ये । एष्ययुतौयोज्ये । द्वयोर्वक्रत्वेगत्यन्तरभक्तफलेगतयुतौग्रहयोर्योज्ये । एष्ययुतौशोध्ये । वक्रग्रहस्योत्तरोत्तरंन्यूनत्वात् । अथैकोवक्रीतदातयोरन्तरंप्रत्यहंगतियोगेनोपचितम् । अतोगतियोगहरेणागतंफलंगतयोगेमार्गगग्रहेहीनंपूर्वतस्यन्यूनत्वात् वक्रग्रहेयोज्यम् । पूर्वतस्याधिकत्वात् । एष्ययोगमार्गगग्रहेयोज्यम् उत्तरोत्तरमधिकत्वात् । वक्रग्रहेशोध्यम् तस्याग्रेन्यूनत्वात् । गतियोगेनगत्यन्तरेणवादिनमेकंलभ्यतेतदान्तरकलाभिः किमित्यनुपातेनगतैष्यदिनाद्यम् ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

भा०टी०-दो ग्रहके अन्तरकी कला करके अलग २ तिन २ की गतिसे गुणकरके दोनोंके सरल या वक्री होनेपर गतियोगसे भागकरनेपर जो कलादिहो वह समागममें हो तो ग्रहसे दोनोंका समगतिमें वियोग, और वक्रमें योग करे। भावी होनेसे वह स्पष्ट योग या वियोग करे ।एकही वक्रगति हो तो गतमें वक्र योग और गम्यमें वियोग करना चाहिये । तो दोनों ग्रहकी भगणस्थित समकला होगी, समय जाननाहो तो अन्तरकलाको पूर्वोक्त हारकद्वारा भागकरनेसे जो दिनादि होंगे वही समकलाकालसे इष्ट समयके अन्तर दिनादि हैं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथदृक्कर्मार्थमुपकरणानिसाध्यानीत्याह-

कृत्वादिनक्षपामानंतथाविक्षेपलिप्तिकाः ॥
नतोन्नतंसाधयित्वास्वकाल्लग्नवशात्तयोः ॥ ७ ॥

तयोःसमयोर्ग्रहयोर्दिनक्षपामानंप्रत्येकंदिनमानंरात्रिमानंप्रसाध्यविक्षेपकलाः । तथाप्रसाध्येत्यर्थः । अत्रभगवताविक्षेपकलाःप्रसाध्येत्यस्यदिनरात्रिमानंप्रसाध्येत्येतदनन्तरमुक्तेर्दिनरात्रिमानंस्पष्टक्रान्तिजचरेणसाध्यम् । किन्तुसमग्रहीयशरासंस्कृतकेवलक्रान्तिजचरेणसाध्यमितिसूचितम् । समग्रहयोःप्रत्येकंनतकालमुन्नतकालंप्रसाध्य । अत्रसमुच्चयार्थकंतथेत्यन्वेति । एतदर्थमेवदिनरात्रिमानं प्रसाध्येतिपूर्वमुक्तम् । समनन्तरोक्तंदृक्कर्मकार्यमितिवाक्यशेषः । ननुनतोन्नतंकथंसाध्यंग्रहोदयाज्ञानात्तदवधिकालमानज्ञानाभावात् । नहिग्रहस्य दिनरात्रि-

गतकालज्ञानंविनापिकेवलंदिनरात्रिमानाभ्यांतात्सद्धिरतआह । स्वकाल्लग्नवशादिति । यस्मिन्कालेसमौग्रहौजातौतात्कालिकलग्नंपूर्वोक्तप्रकारावगतंतद्वशात्तद्ग्रहणादित्यर्थः । स्वकात्समग्रहात्प्रत्येकमुन्नतनतकालौसाध्यावित्यर्थः । एतदुक्तं भवति ।[1] युतिकालिकलग्नमधिकसञ्ज्ञंप्रकल्प्यसमग्रहंन्यूनसञ्ज्ञंप्रकल्प्य । "भोग्यासूनूनकस्याथभुक्तासूनधिकस्यच । सम्पीड्यान्तरलग्नासूनेवंस्यात्कालसाधनम् ॥" इतित्रिप्रश्नाधिकारोक्त्याग्रहस्यदिनगतंरात्रिगतंप्रसाध्यदिनेदिनगतशेषयोरात्रौरात्रिगतशेषयोर्यदल्पंतदुन्नतम् । तेनोनं दिनार्धरात्र्यर्धंवाग्रहस्यनतम् । दिनक्षपामानंनतोन्नतमित्येकवचनेनसमग्रहयोरभिन्नंदिनमानंरात्रिमानंनतमुन्नतंचेतिसूचनादपिनोदयलग्नलग्नाभ्यामन्तरकालःप्रत्येकंभिन्नःसाध्यः । नवास्पष्टक्रान्तिजचरेणदिनरात्रिमानेप्रत्येकंपूर्वमुदयलग्नस्यैवासिद्धेरितिस्फुटीकृतम् । अत्रोपपत्तिः । तात्कालिकार्कलग्नाभ्यांयथा सूर्यस्योदयगतकालस्तथातात्कालिकग्रहलग्नाभ्यांग्रहोदयगतकालःसिद्ध्यति यद्यपिसूर्यस्यक्रान्तिवृत्तस्थत्वात्सूर्यस्ययुक्तःकालः । ग्रहस्यतुक्रान्तिवृत्तस्थत्वानियमादुक्तरीत्यागतकालस्यक्रान्तिवृत्तस्थग्रहचिह्नीयत्वेऽपिग्रहबिम्बीयत्वाभावादयुक्तत्वमतएववक्ष्यमाणदृक्कर्मसंस्कृतगृहादानीतकालोग्रहबिम्बीयस्तथापि वक्ष्यमाणदृक्कर्मार्थं ग्रहचिह्नीयस्यैवापेक्षितत्वान्नक्षतिः ॥ ७ ॥

भा०टी०-समकलाकालीन तिनका दिनरात्रिमान साधन करे। तिसकी तात्कालिक विक्षेपकला निर्णय करके ग्रहस्थानगत लग्नसे नतोन्नत साधन करे ॥ ७ ॥

अथाक्षदृक्कर्मतत्संस्कारंचग्रहस्यश्लोकाभ्यामाह-

विषुवच्छाययाभ्यस्ताद्विक्षेपाद्द्वादशोद्धृतात् ॥
फलंस्वनतनाडीघ्नंस्वदिनार्धविभाजितम् ॥ ८ ॥
लब्धंप्राच्यामृणंसौम्याद्विक्षेपात्पाश्चिमेधनम् ॥
दक्षिणेप्राक्कपालेस्वंपाश्चिमेतुतथाक्षयः ॥ ९ ॥

अक्षभयागुणिताद्ग्रहविक्षेपादानी ताद्द्वादशभक्ताद्यल्लब्धंतत्स्वनतनाडीघ्नंविक्षेपसम्बन्धिग्रहस्यनतघटीभिर्गुणितंतस्यैवदिनार्धेनभक्तंरात्रौरात्र्यर्धेनेत्यर्थसिद्धम् । अत्रसमग्रहयोःपूर्वोक्तप्रकारेण दिनमाननतयोरभिन्नत्वात्स्वशब्दउभयत्रानावश्यकोऽपियुतिव्यतिरिक्तदृग्ग्रहाणांप्रयोजनतयासाधनवैय धिकरण्यावृत्त्यर्थंस्वपदं भगवतादत्तम् । वस्तुतस्तुदृग्ग्रहयोस्तुल्यत्वेभगवताग्रेयुतेरुक्तत्वात्तात्कालिक-

१ जिस अंशमें ग्रह स्थित है, तिसके उदय (लग्न) का समय स्थिर करके तिससे ग्रहका मध्योदयकाल, ग्रहका दिनार्द्धमान मिलातेही प्राप्त होजाताहै। मध्योदयकाल नियत होजानेपर इष्टदण्डकी पृथक्ताके द्वारा नतोन्नत सहजसे जाना जाता है।

योः स्पष्टयोस्तुल्यत्वेनदृक्कर्मसाधनार्थनतादिनमानयोस्तयोर्भिन्नत्वेनस्वपदंयुक्तं प्रयुक्तम् । नतुस्पष्टक्रांतिजचरोत्पन्नादिनमानयोर्भेदान्नतभेदाच्चस्वमित्युक्तम् । तत्साधनस्यवैयधिकरण्येनाप्रसक्तेरितिध्येयम् । उक्तरीत्योत्तराद्विक्षेपाल्लब्धतत्कलात्मकंप्राच्यांप्राक्कपालेग्रहस्यहीनम् । पश्चिमकपालेयोज्यम् । दक्षिणेतथाविक्षेपे । तुकारात्तदुत्पन्नंफलंप्राक्कपालेयोज्यंपश्चिमकपालेहीनंकार्यम् ॥ ८ ॥ ९ ॥

भा०टी०-विक्षेपको विषुवच्छायासे गुणकरके १२ से० भाग करनेपर जो हो, तिसको स्वीय नतदण्डसे गुणकरके स्वीयदिनार्द्धसे भाग करनेपर अक्षदृक् कर्म होता है। उत्तर विक्षेप होनेसे मध्योदयके पूर्वमें अक्षदृक् ग्रहस्पष्टसे वियोग और परे योग करना चाहिये । विक्षेप दक्षिणमें हो तो मध्योदयके पूर्वमें योग और पीछे वियोग करना पड़ता है ॥ ९ ॥

अथायनदृक्कर्माह-

सत्रिभग्रहजक्रान्तिभागघ्नाःक्षेपलिप्तिकाः ॥
विकलाः स्वमृणंक्रान्तिक्षेपयोर्भिन्नतुल्ययोः ॥ १० ॥

विक्षेपकलाःपूर्वसाधिताराशित्रययुतग्रहोत्पन्नक्रान्त्यंशैर्गुणिताविकलाभवन्तितता अक्षदृक्कर्मसंस्कृतग्रहेविकलास्थानेक्रान्तिक्षेपयोः सत्रिभग्रहस्यक्रान्तिर्ग्रहस्यविक्षेपः । अनयोर्भिन्नतुल्ययोर्भिन्नैकदिक्कयोःसतोः क्रमेणस्वमृणंकार्यं । अत्रोपपत्तिः । विक्षेपवृत्तस्यग्रहबिम्बोपरिध्रुवप्रोतश्लथवृत्तंस्पृष्टाक्रान्तिवृत्तेग्रहासन्नेयत्रलगतितस्यग्रहचिह्नस्यान्तरेयाः क्रान्तिवृत्तेकलास्ताआयनकलास्तदानयनार्थक्षेत्रंग्रहशरः कदम्बाभिमुखःकर्णः । तत्सम्बद्धद्युरात्रवृत्तप्रदेशध्रुवप्रोतश्लथवृत्तसम्पातयोरन्तरेद्युरात्रवृत्तेभुजः । ध्रुवप्रोतवृत्तेस्पष्टशरोग्रहाबिम्बतत्संपातान्तरेकोटिः । अतस्त्रिज्याकर्णेऽयनवलनज्याभुजस्तदाशरकर्णेकइत्यनुपातेनद्युरात्रवृत्तेद्युज्याप्रमाणेनभुजकलाः । नतुग्रहचिह्नतद्वृत्तसम्पातान्तरेक्रान्तिवृत्तेभुजकलाःक्रान्तिवृत्तस्य तिर्यक्त्वेनतादृशक्रान्तिवृत्तप्रदेशस्यातिर्यक्त्वाद्भुजत्वासम्भवात् । अयनवलनज्याभुजस्त्रिज्याकर्णो यष्टिः कोटिस्तद्वर्गान्तरपदरूपंतिक्षेत्रंगोलेप्रत्यक्षम् । अतोऽनुपातेनक्षतिः । तत्रभगवतालोकानुकम्पयागणितसुखार्थंद्युरात्रवृत्तस्यभुजकलाः क्रान्तिवृत्तस्थाअङ्गीकृता स्वल्पान्तरत्वात् । अतोऽयनवलनज्याशरकलाभिर्गुण्यात्रिज्ययाभाज्येतिप्राप्तेभगवतायनवलनस्यसत्रिभग्रहक्रान्तिभागत्वेनाङ्गीकारात्तद्भागाअष्टपञ्चाशतागुणनीयाज्याभवति । यतःपरमाश्चतुर्विंशत्यंशाअष्टपञ्चाशतागुणिताः पंचोनापरमक्रान्तिज्याजाता । इयंशरगुणात्रिज्याभक्तायनकलास्तत्रविकलात्मकफलार्थं षष्टिर्गुणइतिसत्रिभग्रहक्रान्तिभागगुणितोग्रहविक्षेपोऽष्टपञ्चाशत्षष्टिघातेनविंशत्यूनेनपञ्चत्रिंशच्छतेनगुण्यस्त्रिज्याभक्तइतिसिद्धम् । अत्रापिलाघवाद्गुणस्यात्रिज्या-

मितत्वेनस्वल्पान्तरत्वादङ्गीकारादुणहरयोर्नाशइत्युपन्नंसत्रिभेत्यादि विकलाइत्यन्तम् । भास्कराचार्यैस्तु "आयनंवलनमस्फुटेषुणासंगुणंद्युगुणभाजितंहतम् ॥ पूर्णपूर्णधृतिभिर्ग्रहाश्रितव्यक्षभोदयहृदायनाःकलाः ॥ "इतिसूक्ष्ममस्मादुक्तम् । धनर्णोपपत्तिस्तुमकराद्युत्तरायणेदक्षिणध्रुवाद्दक्षिणकदम्बोऽधः । उत्तरध्रुवादुत्तरकदम्बऊर्ध्वम् । तत्रशरोयदातूत्तरस्तदाग्रहबिम्बस्योत्तरकदम्बोन्मुखत्वेनोत्तरध्रुवादुन्नतत्वात्क्रान्तिवृत्तस्यग्रहचिह्नात्क्रान्तिवृत्तध्रुवप्रोतश्लथवृत्तसम्पातअयानग्रहचिह्नरूपः क्रान्तिवृत्तेपश्चाद्भवत्यतआयनाविकलाः स्पष्टग्रहऋणंकृताश्चेदायनग्रहभोगोज्ञातः स्यात् । एवंदक्षिणशेरग्रहबिम्बस्यदक्षिणकदम्बोन्मुखत्वेनध्रुवोन्नतत्वात्क्रान्तिवृत्ते ग्रहचिह्नादायनग्रहचिह्नमग्रएवभवतीतिधनमायनाविकलाः । कर्कादिदक्षिणायने तुदक्षिणध्रुवाद्दक्षिणकदम्बऊर्ध्वमुत्तरध्रुवादुत्तरकदम्बोऽधः । तत्रयदिग्रहशरोदक्षिणस्तथाग्रहबिम्बस्यदक्षिणध्रुवादुन्नतत्वात्क्रान्तिवृत्तेग्रहचिह्नादाननग्रहचिह्नंपश्चादतऋणमायनम् । यद्युत्तरशरस्तदाग्रहबिम्बस्योत्तरध्रुवान्नतत्वाद्ग्रहचिह्नादायनग्रहचिह्नमग्रे क्रान्तिवृत्तेभवतीत्यायनंधनमितिगोलस्थित्यायनशरदिगैक्यऋणमयनशरदिग्भेदेधनमितिसिद्धम् । तत्रग्रहायनदिशःसत्रिभग्रहगोलदिक्तुल्यत्वात्सत्रिभग्रहक्रान्तिग्रहशरयोरेकदिक्त्वेऋणंभिन्नदिक्त्वेधनमित्युपपन्नम् । अथाक्षदृक्कर्मोपपत्तिः । भूगर्भक्षितिजयाम्योत्तरवृत्तसम्पातरूपसमप्रोतचलवृत्तेग्रहबिम्बसक्तेक्रान्तिमण्डलस्यग्रहासन्नोयत्र सम्पातस्तत्राक्षदृक्कलासंस्कृतो ग्रहस्तस्यायनग्रहस्यचान्तरंक्रान्तिवृत्तप्रदेशआक्षदृक्कलास्ताः । क्षितिजस्थग्रहबिम्बोपरमान्तरत्वात्परमायाम्योत्तरवृत्तस्थे ग्रहेऽयनग्रहचिह्नमेवाक्षदृक्कलासंस्कृतग्रहचिह्नंभवतीतितदभावः । अतःक्षितिजस्येग्रहबिम्बे चलवृत्तंयाम्योत्तरक्षितिजसम्पातप्रोतक्षितिजवृत्ताद्भिन्नंतत्रग्रहबिम्बसक्तं ध्रुवप्रोतचलवृत्तक्रान्तिवृत्तसम्पातोऽयनग्रहचिह्नरूपः क्षितिजस्थक्रान्तिवृत्तप्रदेशादूर्ध्वमधोवा याभिःकलाभिरन्तरितस्ताअक्षदृक्कलाः । आसांज्ञानार्थंतदन्तरप्रदेशीयद्युरात्रवृत्तखण्डप्रदेशस्थासवोऽक्षजाःसाधिताः । तथाहि । ध्रुवद्वयप्रोतग्रहबिम्बगत चलवृत्तेविषुद्वृत्तग्रहबिम्बान्तरेस्फुटाक्रान्तिः । विषुवद्वृत्तक्रान्तिवृत्तस्यायनग्रहचिह्नान्तरेमध्यमाक्रान्तिरयनग्रहस्यायनग्रहचिह्नग्रहबिम्बान्तरे स्फुटशरः । द्वयोःक्रान्त्योरेकदिक्त्वेस्फुटक्रान्तिराधिका । तत्रोत्तरगोलेऽयनग्रहचिह्नक्षितिजादधःस्वद्युरात्रवृत्तेक्रान्त्योश्चरान्तरासुभिर्भवति । यतोऽयनग्रहचिह्नद्युरात्रवृतस्थोन्मण्डलक्षितिजान्तररूपचराग्रहबिम्बीयचरस्याधिकत्वेनमध्यमचरसम्बद्धक्षितिजवृत्तप्रदेशादध्रुवाभिमुखसूत्रंग्रहबिम्बीयचरसम्बद्धद्युरात्रवृत्तप्रदेशेयत्रलग्नंतत्क्षितिजान्तरालेचरान्तरस्यसत्त्वेनस्पष्टशरचरान्तराभ्यांकोटिभुजाभ्यामायत-

चतुरस्रक्षेत्रस्यतद्द्युरात्रवृत्तद्वयमध्येस्फुटदर्शनम् । एवंदक्षिणगोलेऽयनग्रहचिह्नस्यद्युरात्रवृत्तेक्षितिजादूर्ध्वंक्रान्त्योश्चरान्तरासुभिरिति । क्रान्त्योर्भिन्नदिक्त्वेतु क्षितिजादयनग्रहचिह्नस्वद्युरात्रवृत्तेक्रान्त्योश्चरतोस्तुल्यासुभिरधऊर्ध्वम् । मध्यक्रान्तिद्युरात्रवृत्तसुन्मण्डलात्स्पष्टक्रांतिचरतुल्यान्तरेणदक्षिणोत्तरगोलयोरधऊर्ध्वमयनग्रहचिह्नस्यसत्त्वात् । क्षितिंजाच्चरान्तरेणोंद्वृत्तस्यतत्त्वाच्चेति । भास्कराचार्यैः । "स्फुटास्फुटक्रांतिजयोश्चराधयोःसामान्यदिक्त्वेऽन्तरयोगजासवः पलोद्भवाख्याअनभःसदाम् ॥" इतिसूक्ष्ममाक्षंदृगसुज्ञानमुक्तम् । भगवतातुपूर्वोक्तरीत्यास्फुटास्फुटक्रान्तिसंस्कारोत्पन्नस्फुटशररूपक्रांतिखण्डस्यस्वल्पान्तरेणयथागतशरतुल्यस्यचरमाक्षदृगसवइत्यंगीकृत्यद्वादशकोटौपलभाभुजस्तदाविक्षेपरूपक्रांतिकोटौ कईत्यनुपाताद्विक्षेपज्याफलधनुषोस्त्यागात्स्वल्पान्तरेणकुज्याचरज्ययोरभिन्नत्वेनांगीकाराच्चरासवआक्षासवएताएवकलाधृताःस्वल्पांतरत्वात्।क्षितिजातिरिक्तस्थग्रहबिम्बेत्वेताःकलाअभीष्टनतकालपरिणताभवन्तीतिविषुवच्छाययेत्यादिस्वदिनार्धविभाजितमित्यन्तम् । अत्रग्रहेआयनंदृक्कर्मसंस्कार्यं तस्माद्दिनरात्रिमानादिनतंसाधयित्वाक्षदृक्कर्मक्रियतेतदाकिञ्चित्सूक्ष्ममितिसत्रिभग्रहज्येत्यादिश्लोकः सप्तमोयत्पुस्तकेतत्रतूक्तंस्वतःसिद्धम् । नतानुपातेस्वपदव्यर्थप्रयोगशंकानवकाशश्चसमग्रहयोरायनदृक्कर्मसंस्कारेणभिन्नत्वसम्भवात्तयोर्दिनमाननतयोरपिभिन्नत्वसिद्धेरित्यवधेयम् । धनर्णोपपत्तिस्तुसमप्रोतचलवृत्तंग्रहबिम्बोपरिगंयत्रक्रान्तिवृत्तेलगतिसराश्यादिभोगआक्षदृक्कर्मसंस्कृतइतिप्रागुक्तम् । तत्रपूर्वकपालेतस्माद्ग्रहादायनग्रहचिह्नंक्रान्तिवृत्तउत्तरशरेऽग्रिमभागेभवति दक्षिणशरेपश्चाद्भवतीतिक्रमेणर्णधनमुक्तम् । पश्चिमकपालेतूत्तरशरेपश्चाद्दक्षिणशरेऽग्रिमभागइतिक्रमेणायनग्रहेधनर्णदृक्कर्मद्वयसंस्कृतोग्रहःसिद्धोभवतीत्युपपन्नंसर्वम् ॥ १० ॥

भा० टी०-त्रिराशियुत ग्रहस्पष्टके अनुसार लाए हुए क्रान्त्यंश करके विक्षेपकलाको गुणाकरनेसे अयनदृक्कर्मविकला होगी । पूर्वोक्त क्रान्ति और विक्षेप भिन्नदिक्स्थ होनेपर ग्रहमें योग और नहीं तो वियोग करे ॥ १० ॥

अथप्रसंगाद्दृक्कर्मसंस्कारस्थलान्याह-

नक्षत्रग्रहयोगेषुग्रहास्तोदयसाधने ॥
शृङ्गोन्नतौतुचन्द्रस्यदृक्कर्मादाविदंस्मृतम् ॥ ११ ॥

अत्रनिमित्तसप्तमी । ग्रहनक्षत्राणांबहुत्वाद्बहुवचनम् । नक्षत्रग्रहयोर्युत्यर्थं नक्षत्रग्रहयोरिदंद्वयंदृक्कर्मस्मृतंप्रागुक्तम् । आदौप्रथमंकार्यम् । ताभ्यामनन्तरंक्रियाकार्येत्यर्थः । अत्रनक्षत्रध्रुवकाणामायनदृक्कर्मसंस्कृतानामेवोक्तत्वादायनंदृक्कर्मनकार्यमितिध्येयम् । ग्रहाणामस्तोदयौनित्यास्तोदयौसूर्यसान्निध्यजनितास्तो-

दयौच । ग्रहाणामुपलक्षणत्वान्नक्षत्राणामपि । तयोःसाधननिमित्तंग्रहस्यनक्षत्रस्यवादेयम् । अत्राक्षदृक्कर्मार्थंकेवलंशरःसाध्यः । नतुदिनमानरात्रिमानननतोन्नतेसाध्ये । क्षितिजसम्बन्धेनदृग्ग्रहरूपोदयास्तलग्नस्यावश्यकत्वेनक्षितिजातिरिक्तनतपरिणामस्यव्यर्थत्वात । युतौतुसमप्रोतचलवृत्तेयुगपद्दर्शनार्थतत्परिणामस्यावश्यकत्वात् । शृंगोन्नतिनिमितंचन्द्रस्य । तुकारःसंमुच्चयार्थकचकारपरः । अत्रापिश्लोकेपूर्वार्धोक्तमासदृक्कर्मसंस्कारमितिध्येयम् ॥ ११ ॥

भा०टी०-नक्षत्रग्रहयोगमें, ग्रहके उदयास्त निरूपणमें, चंद्रमाकी शृंगोन्नतिमें पहलेही ऐसा दृक्कर्म साधन करे ॥ ११ ॥

अथदृक्कर्मसंस्कृतग्रहयोर्युतिकालंतात्कालिकतद्विक्षेपाभ्यां ग्रहयोर्याम्योत्तरान्तरंचाह-

तात्कालिकौपुनःकार्यौविक्षेपौचतयोस्ततः ॥
दिक्तुल्येत्वन्तरंभेदेयोगःशिष्टंग्रहान्तरम् ॥ १२ ॥

पुनर्द्वितीयवारंतादृशग्रहाभ्यांशीघ्रेमन्दाधिकेऽतीतइत्यादिनायुतेर्गतैष्यत्वं ज्ञात्वा ग्रहान्तरकलाइत्यादिनादृक्कर्मसंस्कृतौसमौस्वयुतिसमयेभवतः । विवरंतद्वदुद्धृत्येत्यादिनासमस्पष्टग्रहकालादृक्कर्मसंस्कृतसमग्रहकालोयुत्याख्योज्ञेयः । तस्मिन्कालेसाधितौतौग्रहौस्फुटावसमौतात्कालिकौमध्यस्पष्टादिक्रिययाकार्यौ । तयोः साधितग्रहयोर्विक्षेपौ । चःसमुच्चये । कार्यौएतौग्रहौदृक्कर्मसंस्कृतौसमौभवतइतिप्रतीतिः । नोचेत्तस्मादप्युक्तरीत्यामुहुःकालंस्थिरंकृत्वाप्रतीतिर्द्रष्टव्या । ततः सूक्ष्मयुतिसमयेग्रहयोर्विक्षेपसाधनानन्तरम् । दिक्तुल्यएकदिक्त्वेतुकाराद्विक्षेपयोरन्तरंकार्यम् । भेदेभिन्नदिक्त्वेविक्षेपयोर्योगः । शिष्टंसंस्कारोत्पन्नंग्रहान्तरम् । युतिसम्बन्धिनोर्ग्रहबिम्बकेन्द्रयोरन्तरालंयाम्योत्तरंभवति । अत्रोपपत्तिः । दृक्कर्मसंस्कृतग्रहयोःपूर्वापरान्तराभावःसमप्रोतचलवृत्तइतितयोःसमत्वम् । विक्षेपाग्रेग्रहबिम्बकेन्द्रत्वादेकदिशिविक्षेपयोरन्तरंग्रहबिम्बकेन्द्रयोर्याम्योत्तरमन्तरंसमप्रोतचलवृत्ते भिन्नदिशिशरयोर्योगएवग्रहबिम्बकेन्द्रयोर्याम्योत्तरमन्तरंतद्वृत्तेभास्कराचार्यैस्तु "एवंलब्धैर्ग्रहयुतिदिनैश्चालितौतौसमौस्तस्ताभ्यांसूर्यग्रहणवदिषूसंस्कृतौस्वस्वनत्या । तौचस्पष्टौतदनुविशिखौपूर्ववत्संविधेयौदिक्साम्येयाविवियुतिरनयोःसंयुतिर्भिन्नदिक्त्वे ॥ " इत्यनेनसूक्ष्ममुक्तम् । भगवताकृपालुनातदुपेक्षितम् । स्वल्पान्तरत्वात् ॥ १२ ॥

भा०टी०-तिससे फिर समकला और कालनिर्णय करे । और जबतक समकला स्थिर न होवै तबतक वारम्वार साधन करे, स्थिरहो जानेपर दोनों ग्रहोंका विक्षेप निर्णय करे । एक दिशामें होनेसे वियोग और भिन्नदिशामें होनेसे योग करनेपर ग्रहान्तर सिद्ध होगा ॥ १२ ॥

अथपञ्चताराणांविम्बमानकलानयनंश्लोकाभ्यामाह-

कुजार्किज्ञामरेज्यानांत्रिंशदर्धार्धवर्धिताः ॥
विष्कंभाश्चन्द्रकक्षायांभृगोः षष्टिरुदाहृताः ॥ १३ ॥
त्रिचतुष्कर्णयुक्त्याप्तास्तेद्विघ्नास्त्रिज्ययाहताः ॥
स्फुटाःस्वकर्णास्तिथ्याप्ताभवेयुर्मानलिप्तिकाः ॥ १४ ॥

त्रिंशदर्धार्धवर्धितास्त्रिंशतोऽर्धपंचदशतदर्धसार्धसप्ततैरुत्तरोत्तरंयुक्तास्त्रिंशत्क्रमेण भौमशनिबुधबृहस्पतीनांचन्द्रकक्षायां चन्द्राकाशगोलेचन्द्रकक्षाप्रमाणेनस्वकक्षाप्रमाणेनेत्यर्थः । विष्कम्भाविम्बव्यासायोजनात्मकाउक्ताः । भौमस्य त्रिंशत् । शनेःसार्धसप्तत्रिंशत् । बुधस्यपञ्चचत्वारिंशत । गुरोःसार्द्धद्विपञ्चाशत । अनेनैवक्रमेणशुक्रस्यषष्टिः । भृगोःषष्टिरित्यनेनार्धार्धेत्यस्यप्रत्येकमर्धयुक्ताइत्यर्थोनिरस्तःस्वाभिमतार्थोव्यक्तीकृतश्च । तेउक्ताविष्कम्भाद्विगुणास्त्रिज्ययागुणितास्त्रिचतुष्कर्णयुक्त्याप्ताः । तृतीयकर्मणिचतुर्थकर्मणिचयौकर्णौमन्दकर्णशीघ्रकर्णौतयोर्योगेनभक्तातिसाम्प्रदायिकव्याख्यानम् । नव्यास्तुतृतीयकर्मणिकर्णानुपातानुक्तेस्तृतीयकर्णस्यमन्दकर्णस्याप्रसिद्धेरुपपत्तिविरोधाच्चपूर्व्वव्याख्यामुपेक्ष्यत्रिशब्देनत्रिज्याचतुष्कर्णश्चतुर्थकर्मणिशीघ्रकर्णस्तयोर्योगेन भक्ताइत्यर्थं कुर्वन्ति । स्पष्टाःस्वकर्णाःस्वबिम्बव्यासाभवन्ति । पञ्चदशभक्ताविम्बमानकलाभवेयुः । अत्रोपपत्तिः। स्वस्वकक्षायांस्थिताःपञ्चताराग्रहादूरत्वाल्लोकैश्चन्द्राकाशस्थिताइवदृश्यन्ते । अतस्तेषांवास्तवबिम्बव्यासयोजनानिस्वयंज्ञातानियथासूर्यबिम्बव्यासयोजनान्युक्तानिचन्द्रग्रहणाधिकारेरवेःस्वभगणाभ्यस्तइत्यादिनाचन्द्रकक्षायांसाधितानि तथा स्वभगणानुसारेणोक्तप्रकारेणचन्द्रकक्षायांसाधितानि । तथाचशाकल्यसंहितायाम् । "अन्तरुन्नतवृक्षाश्चवनप्रांतेस्थिताइव । दूरत्वाच्चन्द्रकक्षायांदृश्यन्तेसकलाग्रहाः ॥ व्यर्धाष्टवर्धितास्त्रिंशद्विष्कम्भाःशास्त्रदृष्टतः ।" इत्येतानित्रिज्यातुल्यशीघ्रकर्णउक्तानि । अतःशीघ्रकर्णेऽधिकेन्यूनं विम्बग्रहस्योच्चासन्नत्वादल्पेतुनीचासन्नत्वादधिकंविम्बमितित्रिज्ययोक्ताविम्बानितदेष्टशीघ्रकर्णेनकानीतिव्यस्तानुपातेनयुक्तमपिभगवतोपलब्धात्रिज्यातोऽधिकन्यूनकर्णयोःक्रमेणव्यस्तानुपातागतादधिकंन्यूनंचबिम्बंदृष्टमतःकर्णएवत्रिज्याशीघ्रकर्णयोगार्धमितःक्रमेणन्यूनाधिकोगृहीतः । अत्रच्छेदंलवंचपरिवर्त्यहरस्येत्यादिनाद्विघ्नास्त्रिज्यागुणिताविष्कंभास्त्रिज्याशीघ्रकर्णयोगभक्ताइत्युपपन्नम् ॥ "त्रिचतुष्कर्णयोगार्धस्फुटकर्णोऽयमस्तके । त्रिज्याघ्नाःस्फुटकर्णाप्ताविष्कम्भास्तेस्फुटाःस्मृताः ॥" इतिशाकल्योक्तेश्च । अतएवबिम्बस्यद्राङ्नीचोच्चमण्डलस्थत्वेनशीघ्रकर्णस्यैवभूगर्भाद्बिंबेसम्बन्धान्मन्दकर्ण-

सम्बन्धस्त्वयुक्तः । नहिछेद्यकेमन्दकर्णार्धाच्छीघ्रकर्णार्धेग्रहविम्बमस्तीतिप्रतिपादितम् । येनमन्दशीघ्रकर्णयोर्योगार्धकर्णःसूपपन्नः । शीघ्रफलानयनेतथाङ्गीकारापत्तेः । भास्कराचार्यैस्तु । "व्यङ्ग्रीषवःसचरणाङ्कतवस्त्रिभागयुक्ताद्रयोनवचसत्रिलवेषवश्च । स्युर्मध्यमास्तनुकलाःक्षितिजादिकानांत्रिज्यासुकर्णविवरेणपृथग्विनिघ्नाः ॥ त्रिघ्न्यानिजान्त्यफलमौर्विकयाविभक्ताःलब्धेर्नयुक्तरहिताःक्रमशः पृथक्स्थाः । ऊनाधिके त्रिभगुणाच्छ्रवणेस्फुटाःस्युः ॥" इत्युपलब्ध्योक्तम् । भास्कारनुवर्तिनस्तुत्रिचतुष्कर्णयुक्त्याप्ताइत्यस्यत्रिज्याशीघ्रकर्णयोर्योगार्धेनभक्ताइत्यर्थवदंति ॥ १३ ॥ १४ ॥

भा० टी०—चन्द्रकक्षामें मंगलके ३०, शनि ३७ $\frac{1}{2}$ बुध ४५, बृहस्पति ५२ $\frac{1}{2}$ शुक्रके ६० बिम्ब व्यास हैं । इन बिम्बव्यासोंको द्विगुणित त्रिज्यासे गुणकरके त्रिज्या और चतुर्थकर्मगत (स्पष्टानयनमें) कर्णके योगफलसे भाग करनेपर स्पष्ट बिम्बव्यास होगा । स्पष्टव्यासको १५ से भाग करनेपर कलादिमान होगा ॥ १३ ॥ १४ ॥

अथयुतिसंबन्धिनौग्रहौयुतिसमयेदर्शनीयावित्याह—

छायाभूमौविपर्यस्तेस्वच्छायाग्रेतुदर्शयेत् ॥
ग्रहःस्वदर्पणान्तस्थः शङ्क्वग्रेसम्प्रदृश्यते ॥ १५ ॥

छायाभूमौछायादानार्थयोग्यायांजलवत्समीकृतायांपृथिव्याम् । विपर्ययस्तेवैपरीत्येनदत्तेस्वच्छायाग्रेग्रहच्छायाग्रस्थाने । तुकारोऽन्ययोगव्यवच्छेदार्थैवकारपरः । स्वदर्पणान्तस्थःस्वस्ययोदर्पणआदर्शस्तत्रस्थापितस्तन्मध्यस्थितोग्रहो ग्रहप्रतिबिम्बःस्यात् । तद्गणकःशिष्यायदर्शयेत् । एतदुक्तंभवति । समभूमौदिक्साधनं कृत्वादिक्सम्पातस्थानाद्युतिकालिकच्छायांगुलानि पूर्वापरसूत्राद्भुजंविपरीतदिशि भुजान्तरेणग्रहाधिष्ठितपूर्वापरेकपालदिशिदत्त्वातत्रादर्शःस्थाप्यस्तत्रप्रतिबिम्बंग्रहस्यदिक्संपातस्थोगणकःशिष्यायदर्शयेदिति । अत्रोपपत्तिः । ग्रहबिम्बादवलम्बसूत्रंमहाशङ्कुरूपंयत्रभूमौपतितितत्रग्रहबिम्बप्रतिबिम्बोभवति । तज्ज्ञानंतुसमध्याद्ग्रहबिम्बपर्यन्तंनतांशाआकाशेतथाभूमौदिक्सम्पातस्थानान्महाशङ्कुकोटौदृग्ज्याभुजस्तदाद्वादशाङ्गुलशङ्कुकोटौकौ भुजइत्यनुपातानीतच्छायामितान्तरेग्रहाधिष्ठितकपालेभवति । यथादृक्सम्पातस्थद्वादशांगुलशङ्कोश्छायाग्रहाधिष्ठितकपालेभवति । तथाग्रहप्रतिबिम्बस्थानस्थद्वादशांगुलशङ्कोश्छायादिक्सम्पातेभवति । अतोदिक्सम्पातस्थानाच्छायाग्रहाधिष्ठितकपालेदत्तातदग्रेग्रहप्रतिबिम्बस्थानंज्ञातं भवतीत्युपपन्नं छायाभूमावित्यादिस्वदर्पणान्तस्थइत्यन्तम् । अथग्रहाधिष्ठितकपालान्यकपालेछायासद्भावनियमाद्ग्रहाधिष्ठितकपालेकथंछायादानंयुक्तंव्याघातादिति मन्दाशङ्कास्वरसादाह । शङ्क्वग्रइति । दिक्सम्पातस्थापितशङ्कोरग्रेमस्तकआकाशे ग्रहोदृश्यते गणकेनेतिशेषः ॥ १५ ॥

भा०टी०-बराबर करी हुई भूमिमें शंकु स्थापन करके दूसरी दिशामें ग्रहकी दृग्ज्यासे छायाग्र निर्देश करे। छायाग्रमें दर्पणरखनेसे दर्पणान्तरास्थितग्रह और शङ्क्वग्र समसूत्रमें दिखाई देगा ॥ १५ ॥

ननुकथंदृश्यतइत्यतः प्रकृतग्रहयोर्युतिसम्बन्धिनोर्दर्शनप्रकारंसार्धश्लोकाभ्यामाह—

पञ्चहस्तोच्छ्रितौशङ्कूयथादिग्भ्रमसंस्थितौ ॥
ग्रहान्तरेणविक्षिप्तावधोहस्तनिखातगौ ॥ १६ ॥
छायाकर्णौततोदद्याच्छायाग्राच्छङ्कुमूर्धगौ ॥
छायाकर्णाग्रसंयोगेसंस्थितस्यप्रदर्शयेत् ॥
स्वशङ्कुमूर्धगौव्योम्निग्रहौदृक्तुल्यतामितौ ॥ १७ ॥

ग्रहयुतिसम्बन्धिनोर्ग्रहयोरायनदृक्कलाश्लोकपूर्वार्धोक्ताक्षदृक्कलाभ्यां संस्कृतयोस्तुल्येऽल्पान्तरेणासन्नेवोदयलग्नेस्तः । षड्भयुतयोर्ग्रहयोरायनाक्षदृक्कलासंस्कृतयोस्तुल्येस्वल्पान्तरेणासन्नेवास्तलग्नेभवतः। यस्मिन्कालेग्रहौद्रष्टुमभिमतौतात्कालिकलग्नाद्रात्रौयदुदयास्तलग्नेक्रमेणन्यूनाधिके यदिभवतस्तौसूर्यसान्निध्यजनितास्ताभावेदर्शनयोग्यौ। तदापञ्चहस्तोच्छ्रितौ। चतुर्विंशत्यङ्गुलोहस्तः। एवंपञ्चहस्तप्रमाणदीर्घौशङ्कूकाष्ठघटितसरलदण्डौयथादिग्भ्रमसंस्थितौयुतिकालेग्रहयोर्यादृशंदिग्भ्रमणम् । ग्रहौप्रवहभ्रमेणपूर्वकपालेपश्चिमकपालेवायत्रसंस्थितौस्वाधिष्ठितस्थानाद्ग्रहाधिष्ठितकपालदिशिस्थाप्यौ न ग्रहानधिष्ठितकपालदिशि । ग्रहान्तरेणदिक्तुल्येत्वन्तरंभेदेयोगइत्यादिनाज्ञातयाम्योत्तरग्रहान्तरेणकलात्मकेनविक्षिप्तौयाम्योत्तरान्तरितौस्थाप्यौ । अत्रसोन्नतमित्यादिनाग्रहविक्षेपावङ्गुलात्मकौकृत्वादिक्तुल्येत्वन्तरमित्यादिनाग्रहान्तरं ज्ञेयम्। अधोभूमेरन्तः । हस्तनिखातगौहस्तवेधप्रमाणायागर्तातत्रस्थितौभूम्यांशङ्कोर्हस्तमात्रंरोपयित्वाभूमेरूर्ध्वशङ्कूचतुर्हस्तप्रमाणदीर्घौस्यातामित्यर्थः। ततःशंकुमूलाभ्यांप्रत्येकंयच्छायाग्रंग्रहानधिष्ठितकपालदिशितस्मात्प्रत्येकमित्यर्थः। छायाकर्णौस्वकीयौशंकुमूर्धगौनिजशङ्क्वग्ररूपमस्तकप्रापिणौ गणकोदद्यात्। एतदुक्तंभवति । युतिसमयेलग्नंकृत्वातात्कालिकोदयलग्नेष्टलग्नाभ्यांपूर्ववदन्तरकालोग्रंहोदयाद्गतकालःसावनः। एवंग्रहयोर्यतिसमये स्वदिनगतात्त्रिप्रश्नाधिकारोक्तविधिनास्पष्टक्रान्त्याछायासाध्या । ततोयोग्रहोदक्षिणोत्तरयोर्मध्येयदिशितच्छायातदिक्स्थाशङ्कोर्मूलाद्ग्रहानधिष्ठितकपालदिशिपूर्वापरसूत्राद्भुजान्तरेण भुजदिशिदेया । परमानीतच्छायाद्वादशाङ्गुलशङ्कोरितिचतुर्हस्तशंकुप्रमाणेनप्रसाध्यरेखातन्मितासमशंकुमूलात्कार्या । रेखाग्रेछायाग्रेज्ञापकंचिह्नंकार्यम् । तत्रकीलादिनासूत्रंबद्ध्वाशङ्क्वग्रसक्तंप्रसार्यमिति। छायाकर्णाग्रसंयोगेछायाग्रंकर्णस्यमूल-

रूपमग्रंतयोःसम्पातेसंस्थितस्य छायाग्रस्थानकृतगर्तोपविष्टशिष्यस्यगणकोग्रहावाकाशे स्वशङ्कुमूर्धगौनिजशङ्कग्ररूपमस्तकसमसूत्रस्थितौदृकुल्यतांदृष्टिगोचरतामितौप्रसौप्रदर्शयेत्सन्दर्शयेत्। अत्रोपपत्तिः। उच्चतयादर्शनार्थपञ्चहस्तप्रमाणौशङ्कूकृतौ । तत्रैकहस्तस्यभूमिगुप्तत्त्वंशङ्कुदृढत्वार्थकृतम्। बहिःपुरुषप्रमाणौचतुर्मितहस्तावशिष्टौशङ्कोःपुरुषपर्यायेणाभिधानाच्च । शंकुसूत्रस्यग्रहबिम्बसक्तत्वाद्यथादिगभ्रमसंस्थितावित्युक्तम् । शङ्कग्रसमसूत्रेणग्रहबिम्बावस्थाननियमाद्ग्रहान्तरेणयाम्योत्तरान्तरितौस्थापितौ। अत्रयद्यपिस्वस्वस्पष्टक्रान्त्यग्रांप्रसाध्यततःकर्णाग्रांप्रसाध्योक्तदिशापलभासंस्कारेणस्वस्वभुजंप्रसाध्यताभ्याम् । "दिक्तुल्येत्वन्तरंभेदेयोगःशिष्टंग्रहान्तरम् ॥" इत्युक्तरीत्याग्रहान्तरंशङ्कोरन्तरं युक्तंतथापिभगवतास्वल्पान्तरेणगणितश्रमापनोदार्थमाकाशस्थितदृष्टान्तरमेवधृतम् । शङ्कोश्छायाग्राच्छायाकर्णसूत्रंग्रहबिम्बदर्शनसूत्रमतःकर्णमूलदृशापुरुषेणग्रहबिम्बंद्रष्टव्यमेवेतिदिक् ॥ १६ ॥ १७ ॥

भा०टी०-पांच हाथके पारमाणवाले यथादिक् दो शंकु याम्योत्तर रेखामें अंगुलात्मक अन्तरमें स्थापन करके एकहाथके परिमाणमें प्रोथित करे। छायाग्रसे शंकु ऊर्द्ध्वाग्रतक दो छायाकर्णनिर्णय करे। छायाकर्णाग्र रेखामें स्थित मनुष्यको ग्रहदर्शन करावे, वहभी शंकुके आगेसें ग्रह देखेगा ॥ १६ ॥ १७ ॥

अथश्लोकाभ्यांपञ्चताराणांप्राक्प्रतिज्ञातौयुद्धसमागमावाह-

> उल्लेखंतारकास्पर्शाद्भेदेभेदःप्रकीर्त्यते ॥ १८ ॥
> युद्धमंशुविमर्दाख्यमंशुयोगेपरस्परम् ॥
> अंशादूनेऽपसव्याख्यंयुद्धमेकोऽत्रचेदणुः ॥
> समागमोंऽशादधिकेभवतश्चेद्बलान्वितौ ॥ १९ ॥

भौमादिपञ्चताराणांमध्येद्वयोर्युतौतारकास्पर्शाद्बिम्बनेम्योःस्पर्शमात्रादुल्लेखसंज्ञंयुद्धंवदंतीयतिभेदज्ञाः । इदंतुद्वयोर्मानैक्यखण्डतुल्ययाम्योत्तरान्तरेभेदेमण्डलभेदेभेदोभेदसंज्ञोयुद्धावान्तरभेदोयुद्धभेदतत्त्वज्ञैःकथ्यते । अयंभेदोमानैक्यखण्डादूनेद्वयोर्याम्योत्तरान्तरे। अत्रभास्कराचार्यैस्तु । "मानैक्यार्धाद्द्युचरविवरेऽल्पेभवेद्भेदयोगः कार्यं सूर्यग्रहवदखिलंलम्बनाद्यंस्फुटार्थम् । कल्प्योऽधःस्थःसुधांशुस्तदुपरिगइनोलंबमानाप्रसिद्धचै किंत्वर्कादिवलग्नंग्रहयुतिसमयेकल्पिताकान्नसाध्यम् ॥ प्राग्वल्लंबनेनग्रहयुतिसमयःसंस्कृतःप्रस्फुटःस्वातखेटौतौदृष्टियोग्यौग्रहयुतिसमयेकार्यमेवंतदैव । याम्योदक्स्थद्युचरविवरंभेदयोगेसबाणोज्ञेयःसूर्याद्भवतिचयतःशीतगुःसाशराशा ॥ मंदाक्रान्तोऽनृजुरपि तदाधःस्थितःस्यात्तदैन्द्यांस्पर्शोमोक्षोऽप-

शादाशतदापारलब्ध्यऽवगम्यः ॥" इतिविशेषोऽभिहितः । भगवतातुसूक्ष्मबिम्बयोराकाशेदूरतोविविक्तदर्शनासम्भवाद्यर्थप्रयासादुपेक्षितमितिध्येयम् । युतावन्योन्यंकिरणयोगसत्यंशुमर्दाख्यंकिरणसङ्घट्टनसंज्ञंयुद्धंस्यात् । द्वयोर्याम्योत्तरान्तरेंऽशात्षष्टिकलात्मकैकभागादूनेऽनाधिकेसत्यपसव्यसंज्ञंयुद्धंभवति । अत्रविशेषमाह । एकइति । अत्रापसव्ययुद्धएकोद्वयोरन्यतरोऽणुरणुबिम्बश्चेत्स्यात्तदाऽपसव्यंयुद्धंव्यक्तंस्यादन्यथात्वव्यक्तंयुद्धंस्यात् । एषांचतुर्णांफलम् । "अपसव्येविग्रहंब्रूयात्संग्रामंरश्मिसंकुले । लेखनेऽमात्यपीडास्याद्भेदनेतुधनक्षयः ॥" इतिभार्गवीयोक्तं ज्ञेयम् । युद्धभेदानुक्त्वासमागममाह । समागमइति । द्वयोर्याम्योत्तरान्तरेषष्टिकलात्मकैकभागादभ्याधिकेसतिसमागमोयोयोगोभवति। अत्रापिविशेषमाह।भवतइति । युतिविषयकौग्रहौबलान्वितौबलेन । "स्थानादिबलचिन्तात्रव्यर्था केनापिनस्मृता ॥ प्रश्नत्रयेऽथवाप्यस्मिन्स्थौल्यसौक्ष्म्यबलेस्मृतम् ॥" इतिब्रह्मसिद्धान्तवचनात् । स्थूलमण्डलतयान्वितौयुक्तौस्थूलबिम्बौसमावित्यर्थः चेत्तस्तदासमागमस्तयोर्व्यक्तःस्यात् । अन्यथात्वव्यक्तःसमागमः "द्वावपिमयूखयुक्तौविपुलौस्निग्धौसमागमेभवतः । अत्रान्योऽन्यंप्रीतिर्विपरीतावात्मपक्षघ्नौ ॥ युद्धंसमागमोवायद्यव्यक्तौतुलक्षणैर्भवतः । भुविभूभृतामपि तथाफलमव्यक्तंविनिर्दिष्टम् ॥" इत्युक्तेः । "भेदोल्लेखांशुसम्मर्दाअपसव्यस्तथापरः । ततोयोगोभवेदेषामेकांशकसमापनात् ॥" इतिकाश्यपोक्तेश्चसर्वंनिरवद्यम् ॥ १८ ॥ १९ ॥

भा०टी०--ताराओंके परस्पर स्पर्शको उल्लेख कहते हैं, बिम्बभेद होजाय तो भेद युद्ध कहते हैं । परस्परकी किरण मिल जानेसे अंशुविमर्द नाम होता है । एक अंशका अनधिक पार्थक्य होवै तो अपसव्य युद्ध होताहै, तिनमें एकतारा छोटा हो तो प्रकाश युद्ध होता है, ऐसा नहो अर्थात् दोनों एकसेहों तो अप्रकाश युद्ध होताहै । एकांशमें अधिक पृथक्ता होनेसे दोनों ग्रहोंके बलवान् होनेपर समागम कहा जाता है ॥ १८ ॥ १९ ॥

अथयुद्धेपराजितस्यग्रहस्यलक्षणमाह–

अपसव्येजितोयुद्धेपिहितोऽणुरदीप्तिमान् ॥
रूक्षोविवर्णोविध्वस्तोविजितोदक्षिणाश्रितः ॥ २० ॥

द्वयोर्मध्येयस्तादितरेणविध्वस्तोहतःसविजितःपराजितोज्ञेयः । हतस्यलक्षणमाह । अपसव्यइति । अपसव्येयुद्धेयोजितोजयलक्षणैर्विवर्जितः । एतेनोल्लेखादित्रयेसंज्ञाफलं नपराजितस्यफलमितिसूचितम् । पिहितआच्छादितोऽव्यक्तइतियावत् । अणुरितरग्रहबिम्बादल्पबिम्बः । अदीप्तिमान्प्रभारहितः । रूक्षोऽस्निग्धः । विवर्णःवर्णेनस्ववर्णेनस्वाभाविकेनरहितइत्यर्थः ।

दक्षिणाश्रितइतरग्रहापेक्षयादक्षिणदिशिस्थितः । "श्यामोवा व्यपगतरश्मिमण्डलो वारुक्षोवाव्यपगतरश्मिवान्कृशोवा । आक्रान्तोविनिपतितःकृतापसव्योविज्ञेयोहतइतिसग्रहोग्रहेण ॥" इतिभार्गवीयोक्तेः ॥ २० ॥

भा०टी०-अपसव्य युद्धमें थोडी प्रभावाला, ढकाहुआ छोटे बिम्बवाला ग्रहही हार जाता है। यह रूखा, विरूप, और दक्षिणस्थ होता है ॥ २० ॥

अथश्लोकार्धेनजयिनोग्रहस्यलक्षणमाह-

उदक्स्थोदीप्तिमान्स्थूलोजयीयाम्येऽपियोबली ॥ २१ ॥

इतरग्रहापेक्षयोत्तरदिक्स्थः । दीप्तिमान्प्रभायुक्तः । स्थूलइतरग्रहबिम्बापेक्षयापृथुबिम्बः । जयीजययुक्तःस्यात् । अथोत्तरदक्षिणदिक्स्थत्वक्रमेण जयपराजयौनस्तइत्याह । याम्यइति । दक्षिणदिशियोग्रहोबलीदीप्तिमान् पृथुबिम्बोभवतिस जयी । अपिशब्दउत्तरदिशासमुच्चयार्थकः तथाच जयपराजयलक्षणयोर्दिग्दानमनुपयुक्तमितिभावः ॥ २१ ॥

भा०टी०-दीप्तिमान् ग्रह उत्तर दिशामें स्थित, स्थूलबिम्ब और जयी होता है । दक्षिणमें रहकरभी बली होनेसे जयी होता है ॥ २१ ॥

अथयुद्धेविशेषमाह-

आसन्नावप्युभौदीप्तौभवतश्चेत्समागमः ॥
स्वल्पौद्वावपिविध्वस्तौभवेतांकूटविग्रहौ ॥ २२ ॥

उभौद्वौ । आसन्नावेकभागान्तरगतान्तरितौ । अपिशब्दाद्युद्धलक्षणाक्रान्तौ । दीप्तौप्रभायुक्तौचेत्स्यातांतदाबलान्वितावितिसमागमलक्षणैकदेशसद्भावात्समागमाख्यंयुद्धम् । द्वावपिग्रहौस्वल्पौ सूक्ष्मबिम्बौविध्वस्तौ । द्वावपिपराजयलक्षणाक्रान्तौस्यातांतदाक्रमेणकूटविग्रहसंज्ञकौयुद्धभेदौस्याताम् ॥ २२ ॥

भा०टी०-दोनोंहीं ग्रह दीप्तिमान् होकर निकट आजांय तो समागम होता है । जो दोनों ही स्वल्पदीप्ति और विध्वस्तहों तो कूटविग्रह कहा जाता है ॥ २२ ॥

अथोत्सर्गतः शुक्रस्यजयलक्षणाक्रान्तत्वमस्तीतिवदन्समागमःशशांकेनेतिप्राक्प्रतिज्ञानसमागमउक्तप्रकारमतिदिशति-

उदक्स्थोदक्षिणस्थोवाभार्गवःप्रायशोजयी ॥
शशाङ्केनैवमेतेषांकुर्यात्संयोगसाधनम् ॥ २३ ॥

इतरग्रहापेक्षयोदक्स्थोदक्षिणदिक्स्थोवोभयदिशीत्यर्थः । शुक्रःप्रायशउत्सर्गतोजयलक्षणाक्रान्तत्वेनजयी । कदाचित्पराजयलक्षणाक्रान्तोभवतीतितात्पर्यार्थः । एतेषांभौमादिपञ्चताराणांचन्द्रेणसहसंयोगसाधनंयुतिसाधनमेषामुक्तरीत्यागणकःकुर्यात् । अत्रविशेषार्थकम् ॥"अवनत्यास्फुटोज्ञेयोविक्षेपः

शीतगोर्युतौ ॥'' इत्यर्धंक्वचित्पुस्तकेदृश्यतेनसर्वत्रेतिक्षिप्तंमत्त्वोपेक्षितम् । अधिकारस्यापूर्णश्लोकत्वापत्तेश्च । एतदुक्त्यान्ययोगेनतिसंस्कारनिषेधस्यासिद्धेस्तस्यायुक्तत्वमितितदनुक्तौसूर्यग्रहणोक्तरीत्यासाधारण्येनसर्वत्रतद्विशेषोक्तिरर्थसिद्धेरितिध्येयम् ॥ २३ ॥

भा०टी०-उत्तरमेंहो या दक्षिणमें हो बहुधा शुक्र जयही पाताहै । पूर्वनियमके द्वारा ग्रहोंके साथ चंद्रमाका संयोगकाल निर्णयकरे ॥ २३ ॥

नन्वेषांग्रहाणांदूरान्तरेणसदोर्ध्वाधरान्तरसद्भावात्परस्परंयोगासम्भवेनकथंयुतिः सङ्गतेत्यतआह-

भावाभावायलोकानांकल्पनेयंप्रदर्शिता ॥
स्वमार्गगाःप्रयान्त्येतेदूरमन्योन्यमाश्रिताः ॥ २४ ॥

एतेग्रहाःस्वमार्गगाःस्वस्वकक्षास्थाअन्योन्यमाश्रितायुतिकालऊर्ध्वाधरान्तराभावेनसंयुक्ताःसन्तःप्रयांतिगच्छंति । इतिदूरंदूरान्तरेणदर्शनादियंग्रहयुतिकल्पनाकल्पनात्मिकावास्तवाप्रदर्शिता पूर्वोक्तग्रन्थेनकथिता । नन्वस्तुभूताकिमर्थमुक्तेत्यतःप्रयोजनमाह । भावाभावायेति । लोकानांभूस्थप्राणिनांभावःशुभफलमभावोऽशुभफलंतस्मैशुभाशुभफलादेशायावस्तुभूतापियुतिरुक्तेतिभावः ॥ २४ ॥

भा०टी०-ग्रहगण परस्पर, दूरस्थित अपनी २ कक्षामें चलते हैं । इकट्ठे दिखाई देनेके कारण मनुष्यके शुभाशुभ फलके लिये युत्यादि कहा जाता है ॥ २४ ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वनिरासार्थमधिकारसमाप्तिफक्किकयाह-

स्पष्टम् । रङ्गनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे । ग्रहयुत्यधिकारोऽयंपूर्णोगूढप्रकाशके ॥ ॥ इतिश्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरङ्गनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशकेग्रहयुत्यधिकारःसम्पूर्णः ।

इति ग्रहयुत्यधिकारः ।

सातवां अध्याय समाप्त ।

अष्टमोऽध्यायः ।

अथप्रसङ्गादारब्धोनक्षत्रग्रहयुत्यधिकारोव्याख्यायते । तत्रप्रथमंनक्षत्राणांध्रुवज्ञानमाह-

प्रोच्यन्तेलिप्तिकाभानांस्वभोगोऽथदशाहतः ॥
भवन्त्यतीतधिष्ण्यानांभोगलिप्तायुताध्रुवाः ॥ १ ॥

भानामश्विन्यादिनक्षत्राणामुत्तराषाढाभिजिच्छ्रवणधनिष्ठावर्जितानांलिप्तिका-भोगसञ्ज्ञाःकलाःप्रोच्यन्तेसमनन्तरमेवकथ्यन्ते । अथानन्तरंस्वभोगः स्वाभीष्ट-नक्षत्रभोगःकलात्मकोवक्ष्यमाणोदशभिर्गुणितःकार्यः । तत्रस्वाभीष्टनक्षत्रगतन-क्षत्राणामश्विन्यादीनांभोगलिप्ताः । भभोगोऽष्टशतीलिप्ताइत्युक्ताष्टशतकलाःप्रत्ये-कंयुताः । अश्विन्याद्यतीतनक्षत्रसङ्ख्यागुणितकलाष्टशतंयुतामित्यर्थः । ध्रुवा-नक्षत्राणांभवन्ति ॥ १ ॥

भा० टी०—नक्षत्रोंके स्वभोगको १० से गुणकरके गतनक्षत्रकी भोगकला (प्रत्येककी ८०० करके) योग करनेसे नक्षत्रोंका ध्रुव होगा ॥ १ ॥

अथप्रतिज्ञातानक्षत्रभोगलिप्ताउत्तराषाडाभिजिच्छ्रणधनिष्ठाव्यतिरिक्तानांते-षांध्रुवकान्नक्षत्रशरांश्चाष्टश्लोकैराह-

अष्टार्णवाःशून्यकृताःपञ्चषष्टिर्नगेषवः ॥
अष्टार्थाअब्धयोऽष्टांगाअङ्गागामनवस्तथा ॥ २ ॥
कृतेषवोयुगरसाःशून्यबाणावियद्रसाः ॥
खवेदाःसागरनगागजागाःसागरर्तवः ॥ ३ ॥
मनवोऽथरसावेदावैश्वमाप्याधंभोगगम् ॥
आप्यस्यैवाभिजित्प्रान्तेवैश्वान्तेश्रवणस्थितिः ॥ ४ ॥
त्रिचतुःपादयोःसन्धौश्रविष्ठाश्रवणस्यतु ॥
स्वभोगतोवियन्नागाःषट्कृतिर्यमलाश्विनः ॥ ५ ॥
रंध्राद्रयःक्रमादेषांविक्षेपाःस्वापदक्रमात् ॥
दिङ्मासविषयाःसौम्येयाम्येपञ्चादिशोनव ॥ ६ ॥
सौम्येरसाःखंयाम्येगाःसौम्येखार्कास्त्रयोदश ॥
दक्षिणेरुद्रयमलाःसप्तत्रिंशदथोत्तरे ॥ ७ ॥
याम्येऽध्यर्धत्रिककृतानवसार्धशरेषवः ॥
उत्तरस्यांतथाषष्टिस्त्रिंशत्षट्त्रिंशदेवहि ॥ ८ ॥
दक्षिणेत्वर्धभागस्तुचतुर्विंशतिरुत्तरे ॥
भागाःषड्विंशतिःखंचदस्रादीनांयथाक्रमम् ॥ ९ ॥

अश्विन्यादिनक्षत्राणांक्रमाद्भोगाएते । तत्राश्विन्याम् अष्टचत्वारिंशत्कलाःभर-ण्याश्चत्वारिंशत् । कृत्तिकायाःकलाःपञ्चषष्टिः । रोहिण्याःसप्तपञ्चाशत्कलाः ।

मृगशिरसोऽष्टपञ्चाशत् । आर्द्रायाश्चत्वारः । अत्राऽध्ययइत्यत्रगोऽध्ययोगोम्नयइति वापाठस्त्वयुक्तः । शाकल्यसंहिताविरोधात् । एतेन सौरोक्तरुद्रभस्यांशारूपद्वयोऽगाऽध्ययःकलाः इतिनार्मदोक्तंदशकलोनपञ्चदशभागामिथुने सर्वजनाभिमतध्रुवकोदशकलायुतत्रयोदशभागाःपर्वताभिमतध्रुवकश्चनिरस्तः । पुनर्वसोरष्टसप्ततिः । पुष्यस्यपट्सप्ततिः । आश्लेषायाश्चतुर्दश । तथेतिछन्दःपूरणार्थम् । मघायाश्चतुःपञ्चाशत् । पूर्वाफाल्गुन्याश्चतुःषष्टिः । उत्तराफाल्गुन्याःपञ्चाशत् । हस्तस्यषष्टिः । चित्रायाश्चत्वारिंशत् । स्वात्याश्चचतुःसप्ततिः । विशाखायाअष्टसप्ततिः । अनुराधायाश्चतुःषष्टिः । ज्येष्ठायाश्चतुर्दश । अनन्तरंमूलस्यपट् । पूर्वाषाढायाश्चत्वारः । उत्तराषाढायाध्रुवकमाह । वैश्वमिति । उत्तराषाढायोगतारानक्षत्रम् । आप्यार्धभोगगम् । आप्यस्यपूर्वाषाढानक्षत्रस्यार्धभोगः । धनूराशेर्विंशतिभागस्तत्रस्थितंज्ञेयम् । अष्टौराशयोविंशतिभागाउत्तराषाढायाध्रुवइत्यर्थः । एतेनपूर्वाषाढायोगताराया: सकाशादुत्तराषाढायोगताराविंशतिकलोनसप्तभागान्तरिता । तेनपूर्वाषाढाध्रुवकोऽष्टराशयश्चतुर्दशभागाविंशतिकलोनसप्तभागैर्युतउत्तराषाढायाध्रुवश्चत्वारिंशत्कलाधिकोक्तध्रुवइतिपर्वतोक्तमपास्तम् । ब्रह्मसिद्धांतविरोधात् । अभिजिद्ध्रुवकमाह । आप्यस्येति । पूर्वाषाढायाअवसानेधनुराशेर्विंशतिकलोनसप्तविंशतिभागेऽभिजिद्योगताराज्ञेया । चत्वारिंशत्कलाधिकषड्विंशतिभागाधिकाअष्टौराशयोऽभिजितोध्रुवइत्यर्थः । एवकारोऽन्ययोगव्यवच्छेदार्थः । तेसंहितासम्मतंश्रवणपञ्चदशांशस्थानंविंशतिविकलायुतत्रयोदशकलायुतचतुर्दशभागादिकनवराशयोनिरस्तम् । श्रवणस्यध्रुवकमाह । वैश्वान्तइति । उत्तराषाढायाअवसानेश्रवणयोगताराया: स्थानंज्ञेयम् । नवराशयोदशभागाः श्रवणध्रुवकइत्यर्थः । धनिष्ठायाध्रुवकमाह । त्रिचतुःपादयोरिति । श्रवणस्यतृतीयचतुर्थचरणयोःक्रमेणान्तादिसन्धौमकरराशेर्विंशतिभागेश्रविष्ठाधनिष्ठाज्ञेया । नवराशयोविंशतिभागाधनिष्ठाध्रुवइत्यर्थः । तुकारात्क्षेत्रान्तर्गतधनिष्ठास्थानंकुम्भस्यविंशतिकलोनसप्तभागानिरस्तम् । शततारायाभोगमाह । स्वभोगतइति । धनिष्ठाभोगात्कुम्भस्यविंशतिकलोनसप्तभागावधेरित्यर्थः । शततारायाअशीतिर्भोगः । अतःप्राग्वद्ध्रुवाइतिज्ञापनार्थस्वभोगतइत्युक्तम् । शततारायाःस्थानंशततारकाध्रुवइतिपर्यवसन्नम् । अवशिष्टनक्षत्राणांभोगानाह । षट्कृतिरिति । पूर्वाभाद्रपदायाःषट्त्रिंशत्कलाभोगः । उत्तराभाद्रपदायाद्वाविंशतिः । रेवत्याएकोनाशीतिः । अथध्रुवकानयनंयथा । अश्विन्याभोगः । ४८ । दशगुणितः । ४८० । अतीतनक्षत्राभावाद्भोगयोजनाभावः । अतोऽश्विन्याः कलात्मकोध्रुवः । ४८० । राश्याद्यस्तु । ८ । भरण्याभोगः । ४० । दशा

हतः । ४०० । अतीतनक्षत्रस्यैकत्वादष्टशतयुतोभरण्याः परिभाषयाराश्याद्यो-ध्रुवः । ० । २० । एवमार्द्राभोगः । ४ । दशहतः । ४० । अतीतनक्ष-त्राणांपञ्चतयापञ्चगुणिताष्टशतेन । ४००० । चतुःसहस्रात्मकेनयुतःकलाद्यो-ध्रुवः । ४०४० । राश्याद्यस्तु । २ । ७ । २० । एवं पूर्वाषाढायादशगुणि-तोभोगः । ४० । एकोनविंशतिगुणिताष्टशतेन । १५२०० । युतःपरिभाषया-राश्याद्योध्रुवः । ८ । १४ । शततारायादशगुणितोभोगः । ८०० ।त्रयो-विंशतिगुणिताष्टशतेन । १८४०० । युतश्चतुर्विंशतिगुणिताष्टशतरूपो । १९ २०० । जातोध्रुवोराश्याद्यः । १० । २० । पूर्वाभाद्रपदायादशगुणितोभोगः । ३६० । चतुर्विंशतिगुणिताष्टशतेन । १९२०० । युतो । १९५६० । जातो-ध्रुवोराश्याद्यः । १० । २६ । उत्तराषाढाभिजिच्छ्रवणधनिष्ठानां स्वभोगस्था-नात्पश्चात्स्थितत्वेनोक्तरीत्यसम्भवाद्भिन्नरीत्याध्रुवकाउक्ताः स्वादिस्थानाद्योगतारा-यदन्तरकलाभिस्थितास्ता लाघवादशापवर्तिताभोगसंज्ञाउक्ताः । तथाचब्रह्म-सिद्धान्ते । "अष्टौविंशतिरर्धोनगजाग्निर्व्यर्धखेषवः । त्रितर्काःसत्रिभागाद्रिर-सारूयङ्काश्चषट्दशतम् ॥ नवांशानवसूर्याश्चवेदेन्द्राःशरबाणभूः । खात्यष्टिः ख-धृतिर्गोगतिधृतिर्विश्वाश्विनस्तथा ॥ वेदाकृतिर्गोदग्धस्ताःकब्धिहस्तायुगार्थदृक् ॥ खोत्कृतिरूयंशहीनाश्वरसहस्ताःखहस्तिदृक् ॥ खगोऽश्विनःखदन्ताःषडद-न्ताःशैलगुणाग्नयः । मेषाद्यश्व्यादिमध्यांशाःषडंशोनाःखषड्गुणाः ॥" इति । अथनक्षत्राणांविक्षेपभागानाह । एषामिति । उक्तध्रुवकसम्बन्धिनाम-श्विन्यादिनक्षत्राणांयथाक्रमंक्रमादित्यर्थः । स्वात्स्वकीयापक्रमात्क्रान्त्यग्रात्क्रा-न्तिवृत्तस्थध्रुवकस्थानादित्यर्थः । विक्षेपाविक्षेपभागादक्षिणाउत्तरावाभवन्ति तत्रो-त्तरदिश्यश्विन्यादित्रयाणांदिङ्मासविषयाःक्रमेणदशद्वादशपञ्चेत्यर्थः दक्षिणदिशि-रोहिण्यादित्रयाणांपञ्चदशनवउत्तरस्यांपुनर्वसोः षड्भागाः । पुष्यस्य खंविक्षेपाभा-वः । अत्रपञ्चमाक्षरस्यगुरुत्वेनछन्दोभङ्गआर्षत्वान्नदोषः । दक्षिणस्यामाश्लेषायाः सप्त । उत्तरस्यांमघादित्रयाणांशून्यंद्वादशत्रयोदश । दक्षिणस्यांहस्तचित्रयोरेकादश द्वौ । अनन्तरंस्वात्याउत्तरदिशिसप्तत्रिंशत् । दक्षिणस्यांविशाखादीनांषण्णांसार्धैकः त्रयंचत्वारः । नवसार्द्धपञ्चपञ्चक्रमेणउत्तरादिशितथाविक्षेपभागाअभिजितःषष्टिः । श्रवणस्यत्रिंशत् । धनिष्ठायाःषट्त्रिंशत् । एवकारोन्यूनाधिकव्यवच्छेदार्थः । चकारः पूरणार्थः । दक्षिणस्यांतुकारस्तथा । अर्धभागःशततारायाः । तुकारस्तथा । उत्तरस्यांपूर्वाभाद्रपदायाश्चतुर्विंशतिः । तस्यामेवदिशिभागाविक्षेपभागाउत्तराभा-द्रपदायाः षड्विंशतिः । रेवत्याविक्षेपाभावः । चकारःपूरणार्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

भा०टी०--दूसरे श्लोकसे लेकर नवे श्लोक तकका अर्थ सारिणीकी भांति लिखा गया ॥२॥ ॥३॥४॥५॥६॥७॥८॥९॥

नक्षत्र	स्वभोग	ध्रुव	विक्षेपांश
अश्विनी	४८	०।८	१० ३
भरणी	४०	०।२०	१२ ३
कृत्तिका	६५	१।७।३०	५ ३
रोहिणी	५७	१।१९।३०	५ ६
मृगशीरा	५८	२।३	१० ६
आर्द्रा	४	२।७।२०	९ ३
पुनर्वसु	७८	३।३	६ ३
पुष्य	७६	३।१६	०
आश्लेषा	१४	३।१९	७ ६
मघा	५४	४।९	०
पूर्वाफल्गुनी	६४	४।२४	१२ ३
उत्तराफल्गुनी	५०	५।५	१३ ३
हस्त	६०	५।२०	११ ६
चित्रा	४०	६।०	२ ६
स्वाती	७४	६।१९	३७ ३
विशाखा	७८	७।३	१ १/२ ६
अनुराधा	६४	७।१४	३ ६
ज्येष्ठा	१४	७।१९	४ ६
मूल	६	८।१	९ ६
पूर्वाषाढा	४	८।१४	५ १/२ ६
उत्तराषाढा पू-आमध्य		८।२०	५ ६
अभिजित	पू-आशेष— ।	८।२६।४०	६० ३
श्रवणा	३ आशेष	९।१०।०	३० ६
धनिष्ठा श्रवणकी त्रिचतुंष्पदसन्धिमें		९।२०	३६ ३
शतभिषा	८०	१०।२०	१/२ ६
पूर्व भाद्रपद	३६	१०।२६	२४ ३
उत्तर भाद्रपद	२२	११।७	२६ ३
रेवती	७९	११।२९।५०	०

अथागस्त्यलुब्धकवह्निब्रह्महृदयताराणांध्रुवकाविक्षेपांस्तदुपपत्तिंश्लोकत्रयेणाह—

अशीतिभागैर्याम्यायामगस्त्योमिथुनान्तगः ॥
विंशेचमिथुनस्यांशेमृगव्याधोव्यवस्थितः ॥ १० ॥
विक्षेपोदक्षिणेभागैःखार्णवैःस्वादपक्रमात् ॥
हुतभुग्ब्रह्महृदयौवृषेद्राविंशभागगौ ॥ ११ ॥

अष्टाभिस्त्रिंशताचैवविक्षिप्तावुत्तरेणतौ ॥
गोलंबध्वापरीक्षेतविक्षेपंध्रुवकंस्फुटम् ॥ १२ ॥

स्वकीयात्क्रान्तिविभागस्थानाद्दक्षिणस्यामशीत्यंशैस्तारात्मकोऽगस्त्योमिथुनान्तगः कर्कादिभागेस्थितः । अगस्त्यनक्षत्रस्यराशित्रयंध्रुवकाः । दाक्षिणाविक्षेपोऽशीतिरित्यर्थः । मृगव्याधोलुब्धकोमिथुनराशौविंशतिभागेस्थितः । चकारःसमुच्चये । लुब्धकनक्षत्रस्यराशिद्वयं विंशतिभागाध्रुवकइत्यर्थः । दक्षिणस्यांचत्वारिंशताभागैः परिमितस्तस्यचक्रान्तिवृत्तस्थानाद्विक्षेपः । वृषराशौवह्निब्रह्महृदयौद्वाविंशभागास्थितौवह्निब्रह्महृदयनक्षत्रयोर्द्वाविंशतिभागाधिकैकराशिध्रुवकः । तौवह्निब्रह्महृदयौ । अष्टाभिस्त्रिंशता । चकारः क्रमार्थे । एवकारोन्यूनाधिकव्यवच्छेदार्थः । उत्तरेणोत्तरस्यामित्यर्थः । विक्षिप्तौविक्षेपवन्तौ । वह्नेर्विक्षेपोऽष्टभागउत्तरः । ब्रह्महृदयस्योत्तरोविक्षेपास्त्रिंशदित्यर्थः । नन्वेतेध्रुवाविक्षेपाश्चकालक्रमेणनियताअनियतावेत्यतआह । गोलमिति । गोलंवक्ष्यमाणंवध्वावंशशलाकादिभिर्निबध्यस्फुटंविक्षेपं क्रान्तिसंस्कारयोग्यंध्रुवाभिमुखंध्रुवकंस्फुटमायनदृक्कर्मसंस्कृतंपरीक्षेत । स्वस्वकालेदृग्गोचरसिद्धमङ्गीकुरुत । तथाचक्रान्तिसंस्कारयोग्यविक्षेपायनसंस्कृतध्रुवकयोरयनांशवशादस्थिरत्वादपिमयेदानींतनसमयानुरोधेनलाघवार्थमायनदृक्कर्मसंस्कृताध्रुवाः क्रांतिसंस्कारयोग्यविक्षेपाश्चनियताउक्ताः । कालान्तरेगोलयन्त्रेणवेधसिद्धाज्ञेयाः । नैतइतिभावः । गोलयन्त्रेणवेधस्तुगोलबन्धोक्तविधिनागोलयन्त्रंकार्यम् । तत्रखगोलस्योपरिभगोलमाधारवृत्तस्योपरिविषुवद्वृत्तम् । तत्रयथोक्तंक्रान्तिवृत्तंभगणांशाङ्कितंचबद्धाध्रुवयष्टिकीलयोःप्रोतमन्यच्चलंभवेधवलयम् । तच्चभगणांशाङ्कितंकार्यम् । ततस्तद्गोलयन्त्रंसम्यग्ध्रुवाभिमुखयष्टिकंजलसमाक्षितिजवलयंचयथाभवतितथास्थिरंकृत्वारात्रौगोलमध्यच्छिद्रगतयादृष्ट्यारेवतीतारां विलोक्यक्रान्तिवृत्तेमीनान्ताद्दशकलान्तरितपश्चाद्भागेरेवतीतारायां निवेश्यमध्यगतयैवदृष्ट्याश्विन्यादेर्नक्षत्रस्ययोगतारांविलोक्यतस्याउपरितद्वेधवलयं निवेश्यम् । एवं कृतेसतिवेधवलयस्यक्रान्तिवृत्तस्यचयःसम्पातःसमीनान्तादग्रतो यावद्भिरंशैस्तावन्तस्तस्यनक्षत्रस्यध्रुवांशाज्ञेयाः । वेधवलयेतस्यैवसम्पातस्य योगतारायाश्चयावन्तोऽन्तरेंऽशास्तावन्तस्तस्यविक्षेपांशादक्षिणा उत्तरावावेद्याः। अथकदम्बप्रोतवेधवलयेनवेधे तुसदास्थिराध्रुवका आयनदृक्कर्मसंस्कृताः परन्तु कदम्बतारयोरभावादशक्यमिति यथोक्तवैधैनैवायन दृक्कर्म संस्कृताध्रुवा शराश्च ध्रुवाभिमुखाः स्फुटाः सिद्धाभवन्तीतिदिक् ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

भा०टी०–अगस्त्यका ध्रुव ३।० विक्षेपांश ८०द । मृगव्याध ध्रुव २ । २० वि ४० । ६ अग्नि ध्रुव १।२२ वि० ८उ ब्रह्महृदय ध्रुव १ । २२ वि ३०उ । गोल बनानेमें स्पष्टविक्षेप और समस्त ध्रुवोंकी परीक्षा करे ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

अथरोहिणीशकटभेदमाह-

वृषेसप्तदशेभागेयस्ययाम्योऽशकद्वयात् ॥
विक्षेपोऽभ्यधिकोभिन्द्याद्रोहिण्याःशकटंतुसः ॥ १३ ॥

वृषराशौसप्तदशेंऽशेयस्यग्रहस्यभागद्वयाधिकोविक्षेपोदक्षिणः सग्रहोरोहिण्याःशकटंशकटाकारसन्निवेशंभिन्द्यात् । तन्मध्यगतोभवेदित्यर्थः । तुकाराद्ग्रहविक्षेपोरोहिणीविक्षेपादल्पइतिविशेषार्थकः । विक्षेपस्यदक्षिणस्यरोहिणीविक्षेपादधिकत्वेशकटाद्बहिर्दक्षिणभागेग्रहस्यस्थितत्वेनतद्भेदकत्वाभावात् । अत्रशकटाग्रिमनक्षत्रस्यध्रुवएकराशिःसप्तदशांशाः । दक्षिणःशरोभागद्वयमितिवेधसिद्धास्पष्टायुक्तिः ॥ १३ ॥ ॥

भा०टी०-रोहिणीका शकटभेदकारी ग्रह वृषके १७ अशमें, और दो अंश दक्षिण विक्षेप स्थित हैं ॥ १३ ॥

अथभग्रहयोगसाधनार्थयोगसाधनरीतिमाह-

ग्रहवद्द्युनिशेभानांकुर्याद्दक्कर्मपूर्ववत् ॥
ग्रहमेलकवच्छेषंग्रहभुक्त्यादिनानिच ॥ १४ ॥

ग्रहवद्द्युनिशेग्रहाणांयथादिनरात्रिमानेआक्षदृक्कर्मार्थंकृते तथादिनमानरात्रिमानेभानांनक्षत्रध्रुवकाणामाक्षदृक्कर्मार्थंगणकःकुर्यात् । तदनन्तरंपूर्ववन्नक्षत्रनित्योदयास्तौसाधयित्वाभीष्टकालेदिनगतशेषाभ्यांनतंकृत्वाविषुवच्छाययाभ्यस्तावित्यादिनेत्यर्थः । दृक्कर्मंकुर्यात् । अत्रनक्षत्रध्रुवकेपर्वतेनायनदृक्कर्माप्युदाहरणेकृतंतदयुक्तम् । तस्यध्रुवकेस्वतःसिद्धत्वात् । तदनन्तरंशेषंनक्षत्रग्रहयुतिसाधनंग्रहध्रुवतुल्यतारूपंग्रहमेलकवद्ग्रहयोगसाधनरीत्याग्रहानन्तरकला इत्यादिनाकार्यम् । ननु तत्र । ग्रहान्तरकलाःस्वस्वभुक्तिलिप्तासमाहताः । भुक्त्यन्तरेणविभजेदित्युक्तेर्नक्षत्रस्यकागतिर्ग्राह्येत्यतआह । ग्रहभुक्त्येति । केवलयाग्रहगत्याग्रहस्यफलंग्रहध्रुवान्तररूपग्रहेसंस्कार्यंध्रुवसमोग्रहोभवति । नक्षत्रस्यपूर्वगत्यभावाद्ध्रुवोयथास्थितइत्यर्थः । तनुतयापिग्रहनक्षत्रयुतिकालसाधनंभुक्त्यन्तरासम्भवात्कथंकार्यमितिमन्दाशङ्केत्यतआह । दिनानीति । अभीष्टसमयाद्दिवरमित्यादिनाकेवलयाग्रहगत्याग्रहनक्षत्रयुतिदिनानिसाध्यानि । चःसमुच्चये । नक्षत्राणांगत्यभावात् ॥ १४ ॥

भा०टी०-ग्रहकी समान नक्षत्रोंके दिवारात्रिमानानुयायी दृक्कर्म साधन करे । और समस्तग्रह युति समानकरे । भुक्त्यन्तरके स्थानमें ग्रहभुक्तिके ग्रहण करनेसे सब ठीक हो जायगा ॥ १४ ॥

अथाभीष्टकालाद्ग्रहनक्षत्रयुतिकालस्यगतैष्यत्वमसम्भ्रमार्थंपुनराह-

एष्योहीनेग्रहेयोगोध्रुवकादधिकेगतः ॥
विपर्य्ययाद्वक्रगते[1] ग्रहेज्ञेयःसमागमः ॥ १५ ॥

नक्षत्रध्रुवादुक्ताद्ग्रहआयनदृक्कर्मसंस्कृतग्रहआक्षदृक्कर्मसंस्कृतनक्षत्रध्रुवकात् । दृक्कर्मद्वयसंस्कृतग्रहइतिविवेकार्थः । न्यूनेसतियोगोनक्षत्रग्रहयोगःस्वाभीष्टसमयाद्भावी । अधिकेसतिपूर्वंजातः वक्रगतेग्रहेविपर्ययादुक्तवैपरीत्यात्समागमोनक्षत्रग्रहयोगोज्ञेयः । हीनेग्रहेगतोऽधिकेग्रहएष्योयोगः । अत्रोपपत्तिर्नक्षत्रस्यगत्यभावेन सदास्थिरत्वाद्ग्रहगमनेनैवयोगसम्भवादितिसुगमतरा ॥ १५॥

भा०टी०-नक्षत्र ध्रुवसे संस्कृत ग्रहन्यून होनेसे योग पीछे होगा, अधिक होनेसे पहले होगया है। वक्रगति ग्रहका यह समागम विपरीत होता है ॥ १५ ॥

अथाश्विन्यादिनक्षत्रस्यबहुतारात्मकत्वात्कस्यास्तारायाएतेध्रुवकाइत्यस्ययोगतारायाध्रुवंकिमित्युत्तरंमनसिधृत्वाऽश्विन्यादिनक्षत्राणांयोगतारांविवक्षुः प्रथममेषांनक्षत्राणांयोगतारामाह-

फाल्गुन्योर्भाद्रपदयोस्तथैवाषाढयोर्द्वयोः ॥
विशाखाश्विनिसौम्यानांयोगतारोत्तरास्मृता ॥ १६ ॥

एषामुक्तनक्षत्राणां प्रत्येकं स्वतारासु योत्तरदिक्स्था तारा सा योगतारागोलतत्त्वज्ञैरुक्ता ॥ १६ ॥

भा० टी०-दोनों फाल्गुनी, दोनों भाद्रपद, और पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, विशाखा, अश्विनी और मृगशिर, इनके उत्तर स्थित ताराओंको योगतारा कहते हैं ॥ १६ ॥

अथान्ययोरनयोराह-

पश्चिमोत्तरतारायाद्वितीयापश्चिमेस्थिता ॥
हस्तस्ययोगतारासाश्रविष्ठायाश्चपश्चिमा ॥ १७ ॥

हस्तनक्षत्रंपञ्चतारात्मकंहस्तपञ्चाङ्गुलिसन्निवेशाकारम् । तत्रनैर्ऋत्यादिगाश्रितपश्चिमावस्थिततारायाउत्तरदिगवस्थिततारायाद्वितीयापूर्वोक्तातिरिक्तापश्चिमेवायव्याश्रितेस्थितासाहस्तस्ययोगताराज्ञेया । उत्तरतारासन्नापश्चिमाश्रितातारा हस्तस्ययोगतारेतिफलितार्थः । धनिष्ठायायोगतारामाह । श्रविष्ठायाइति । धनिष्ठायास्तारासुयापश्चिमदिक्स्थासातस्यायोगतारा । चःसमुच्चये ॥ १७ ॥

भा०टी०-पंचतारात्मक हस्तनक्षत्रके पश्चिमोत्तर तारेके पश्चिममें स्थित हुआ तारा हस्तका योग ताराहै और धनिष्ठाके पश्चिम स्थिततारा धनिष्ठाका योगतारा है ॥ १७ ॥

---

[1] विपर्य्ययाद्वक्रगतौ इति वा पाठः ।

अथान्येषामेषामाह-

ज्येष्ठाश्रवणमैत्राणांबार्हस्पत्यस्यमध्यमा ॥
भरण्याग्नेयपित्र्याणां रेवत्याश्चैवदक्षिणा ॥ १८ ॥

ज्येष्ठाश्रवणानुराधानांपुष्यस्यचप्रत्येकंताराात्रयात्मकत्वान्मध्यतारायोगतारास्यात् । भरणीकृत्तिकामघानांरेवत्याः । चःसमुच्चये । प्रत्येकंस्वतारासुयादक्षिणदिक्स्थासायोगतारा ॥ १८ ॥

भा०टी०-ज्येष्ठा, श्रवण, अनुराधा, और पुष्यका मध्यतारा, भरणी, कृत्तिका, मघा और रेवतीके, दक्षिणस्थित तारेही योगतारेहैं ॥ १८ ॥

अथान्येषामेषामवशिष्टानांचाह-

रोहिण्यादित्यमूलानांप्राचीसार्पस्यचैवहि ॥
यथाप्रत्यवशेषाणांस्थूलास्याद्योगतारका ॥ १९ ॥

रोहिणीपुनर्वसुमूलानामाश्लेषायाश्चप्रत्येकंस्वतारासुपूर्वदिक्स्थासैवयोगतारेत्येवह्यर्थः । प्रत्यवशेषाणामवशिष्टनक्षत्राणामार्द्राचित्रास्वात्यभिजिच्छततारणां स्वतारासुयात्यन्तंस्थूलामहतीसायोगतारास्यात् ॥ १९ ॥

भा०टी०-रोहिणी, पुनर्वसु, मूल व श्लेषाके पूर्वस्थितसारे और बाकी नक्षत्रोंके स्थूल (उज्ज्वल) ताराही योगतारा है ॥ १९ ॥

अथब्रह्मसंज्ञकनक्षत्रावस्थानमाह-

पूर्वस्यांब्रह्महृदयादंशकैःपञ्चभिःस्थितः ॥
प्रजापतिर्वृषान्तेऽसौसौम्येऽष्टत्रिंशदंशकैः ॥ २० ॥

ब्रह्महृदयस्थानात्पूर्वभागेपञ्चभिरंशैः प्रजापतिस्तारात्मकोब्रह्माक्रान्तिवृत्ते स्थितः । कुत्रेत्यतआह । वृषान्तइति । वृषान्तनिकटे । एकराशिःसप्तविंशत्यंशाब्रह्मध्रुवकइत्यर्थः । अस्यविक्षेपमाह । असाविति । ब्रह्मा । उत्तरस्यामष्टत्रिंशद्भागैः स्थितः । अष्टत्रिंशद्भागाअस्यविक्षेपइत्यर्थः ॥ २० ॥

भा० टी०-प्रजापति ब्रह्महृदयके ५ अंश पूर्वमें स्थित हैं । इसका ध्रुव वृषान्तमें अर्थात् १ । २७ और विक्षेप ३ । ८३ ॥ २० ॥

अथापांवत्सापयोस्तारयोरवस्थानमाह-

अपांवत्सस्तुचित्रायामुत्तरेंऽशैस्तुपञ्चभिः ॥
बृहत्किञ्चिदतोभागैरापःषड्भिस्तथोत्तरे ॥ २१ ॥

चित्रायाःसकाशादपांवत्ससंज्ञकस्तारात्मकः पञ्चभिर्भागैरुत्तरस्यांस्थितः । प्रथमतुकारश्चित्राध्रुवतुल्यध्रुवकार्थकः । द्वितीयतुकारश्चित्राविक्षेपस्यदक्षिणभागद्वया-

त्मकत्वादपांवत्सविक्षेपउरस्त्रिभागइतिस्फुटार्थकः । अतोऽपांवत्सात्किञ्चिदल्पान्तरेणबृहत्स्थूलतारात्मकआपसंज्ञकः । तथापांवत्सात्षड्भिरंशैरुत्तरस्यांस्थितांश्चित्राध्रुवकएवापस्यध्रुवकोविक्षेपउत्तरोनवांशाइत्यर्थः ॥ २१ ॥

भा०टी०-चित्राके ५ अंश उत्तरमें अपांवत्स अवस्थित, अप तिसकी अपेक्षा कुछ बड़ा है, सो अपांवत्सके ६ अंश उत्तरमें स्थित हैं ॥ २१ ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वनिरासार्थमधिकारसमाप्तिंफक्किकयाह-

स्पष्टम् । रङ्गनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे । ग्रहर्क्षैक्याधिकारोऽयंपूर्णोगूढप्रकाशके ॥ इति श्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरङ्गनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशकेनक्षत्रग्रहयुत्याधिकारःसंपूर्णः ॥

इति नक्षत्रग्रहयुत्यधिकारः ॥

आठवां अध्याय समाप्त ।

नवमोऽध्यायः ।

अथोदयास्ताधिकारोव्याख्यायते । ननुसूर्येणास्तमनंसहेतिप्रागुक्तेर्ग्रहयुत्यधिकारानन्तरंनक्षत्रग्रहयुत्यधिकारात्प्रागेवोदयास्ताधिकारोनिरूपणीयइत्यतोऽत्रतत्सङ्गतिप्रदर्शनार्थमादौतदधिकारंप्रतिजानीते-

अथोदयास्तमययोःपरिज्ञानंप्रकीर्त्यते ॥
दिवाकरकराक्रान्तमूर्तीनामल्पतेजसाम् ॥ १ ॥

अथनक्षत्रग्रहयुत्यधिकारानन्तरंसूर्यकिरणाभिभूतामूर्तिर्बिंबंयेषांतेषांचन्द्रादिषड्ग्रहाणांनक्षत्राणांच । अतएवाल्पतेजसांन्यूनप्रभावतामुदयास्तमययोः।अग्रिमकाले सूर्यादधिकासन्निहितसन्निहितत्वसम्भावनयाक्रमेणोदयास्तयोः सूर्यान्निसृतस्ययस्मिन्कालेयदन्तरेणप्रथमदर्शनंसम्भावितंसउदयः । सूर्याद्दूरस्थितस्ययस्मिन्कालेयदन्तरेणप्रथमादर्शनंसम्भावितंसोऽस्तः । अनेनानित्योदयास्तव्यवच्छेदस्तयोरित्यर्थः । परिज्ञानंसूक्ष्मज्ञानप्रकारःप्रकीर्त्यते । अतिसूक्ष्मत्वेनमयोच्यतइत्यर्थः । तथाचग्रहइत्युद्देशेऽस्तमनमुद्दिष्टमपितस्यपूर्वमेवसूर्यासमत्वएवसम्भवात्तद्विलक्षणतयाग्रहयुतिप्रसङ्गेनोक्तम् । नक्षत्रग्रहयुतिस्तुग्रहयुतिवदितितदनन्तरमुक्ता । अतःप्रतिबन्धकजिज्ञासापगमेऽवश्यवक्तव्यत्वादस्यावसरसङ्गतित्वात् । तत्सङ्गत्यानक्षत्रग्रहयुत्यधिकारानन्तरंप्रागुद्दिष्टमस्तमनंतत्प्रसङ्गादुदयश्चप्रतिपाद्यतइतिभावः ॥ १ ॥

भा०टी०-अब उदयास्तपरिज्ञान कहा जाता है। अल्प (थोड़े) तेजवाले ग्रह सूर्यकी किरणोंसे आक्रान्त होकर अस्तमन होजाते हैं ॥ १ ॥

तत्रप्रथमंपञ्चताराणांपश्चिमास्तपूर्वोदयावाह-

सूर्यादभ्यधिकाःपश्चादस्तंजीवकुजार्कजाः ॥
ऊनाःप्रागुदयंयान्तिशुक्रज्ञौवक्रिणौतथा ॥ २ ॥

वक्रगतीशुक्रबुधौ तथा सूर्यादधिकौपश्चिमास्तंगच्छतः सूर्यादल्पौपूर्वोदयं प्राप्नुतः। शेषंस्पष्टम् ॥ २ ॥

भा०टी०-सूर्य स्पष्टकी बनिस्बत ग्रहस्पष्ट अधिक होनेसे बृहस्पति, मंगल और शनि पश्चिममें अस्त होते हैं। तिनके स्फुट सूर्यकी अपेक्षा कम होनेसे पूर्वमें उदय होते हैं । वक्री शुक्र और बुधभी तैसाही है ॥ २ ॥

अथचंद्रबुधशुक्राणांपूर्वास्तपश्चिमोदयावाह-

ऊनाविवस्वतःप्राच्यामस्तंचन्द्रज्ञभार्गवाः ॥
व्रजन्त्यभ्यधिकाःपश्चादुदयंशीघ्रयायिनः ॥ ३ ॥

शीघ्रयायिनःसूर्यगत्यधिकगतयइत्यर्थः । एतेबुधशुक्रावर्कगत्यल्पगतीसूर्यादल्पौपूर्वास्तमधिकौचपश्चिमोदयंनप्राप्नुतइत्युक्तम् । शेषंस्पष्टम् । अत्रोपपत्तिः । रविगतितोऽल्पगतिर्ग्रहोऽर्कादूनश्चेत्प्राच्यां दर्शनयोग्योभवितुमर्हति । यतःसूर्यस्याधिकत्वेनबहुगतित्वाच्चोत्तरोत्तरमधिकविप्रकर्षात्प्रवहवशेनन्यूनस्यपूर्वमुदयादधिकस्यानन्तरमुदयनियमाद्ग्रहबिम्बस्यप्राक् क्षितिजसंलग्नताकालानन्तरंयावत्सूर्यस्यतादृशःकालस्तावत्पर्यन्तंविप्रकर्षेदर्शनसम्भवात् । एवं यदाल्पगतिःसूर्यादधिकस्तदाप्रवहवशेनार्कस्यपूर्वमुदयादनन्तरमुदितग्रहस्यदर्शनासम्भवात्प्रवहवशेनादौ न्यूनार्कस्यास्तसम्भवादनन्तरमधिकग्रहस्यास्तसम्भवात्सूर्यास्तानन्तरंपश्चिमभागेग्रहदर्शनसम्भवेऽप्यधिकगतिसूर्यस्यपृष्ठस्थितत्वेनोत्तरोत्तरमाधिकसन्निकर्षात्पश्चिमायामदर्शनंसम्भवत्येव । तेतुभौमगुरुशनयः । वक्रत्वेन्यूनगतित्वाद्बुधशुक्रौचेति । अथार्कगतितोऽधिकगतिग्रहःसूर्यादूनस्तदोक्तरीत्योत्तरोत्तरमधिकसान्निकर्षात् पूर्वस्मिन्नदर्शनंयातियदासूर्यादधिकस्तदोक्तरीत्योत्तरोत्तरमधिकविप्रकर्षात्पश्चिमायामुदयः । तेतुशीघ्राश्चन्द्रबुधशुक्राइत्युपपन्नमुक्तम् ॥ ३ ॥

भा०टी०-चन्द्र, बुध और शुक्र यह शीघ्रयायी तीनग्रह सूर्यकी अपेक्षा कम स्थानमें स्थित हो तो पूर्वमें अस्त और अधिक होनेसे पश्चिममें उदय होताहै ॥ ३ ॥

अथाभीष्टदिनआसन्नेसूर्योदयास्तकालिकौसूर्यदृग्ग्रहौतत्कालज्ञानार्थंकार्याविित्याह-

सूर्यास्तकालिकौपश्चात्प्राच्यामुदयकालिकौ ॥
दिवाचार्कग्रहौकुर्याद्दृक्कर्माथग्रहस्यतु ॥ ४ ॥

पश्चात्पश्चिमास्तोदयसाधनेभीष्टदिनआसन्नेसूर्यग्रहौसूर्यास्तकालिकौकुर्याद्गणकः । पूर्वास्तोदयसाधनेसूर्योदयकालिकौकुर्यात् । दिनेभीष्टकालेकुर्यात् । चकारोविकल्पार्थकः । अनन्तरंग्रहस्यदृक्कर्म । आयनाक्षदृक्कर्मद्वयंकुर्यात् । तुकारआक्षदृक्कर्मश्लोकपूर्वार्धोक्तमितिविशेषार्थकः । अत्रोपपत्तिः । पश्चादस्तोदयसाधनेपश्चिमायांतद्दर्शनमितिसूर्यास्तकालिकौसूर्यग्रहाविष्टकालांशसाधनार्थंसूक्ष्मौ । पूर्वोदयास्तसाधनेपूर्वदिशितद्दर्शनमितिसूर्योदयकालिकौसूर्यग्रहाविष्टकालांशसाधनार्थंसूक्ष्मावन्यकालेतुकिञ्चित्स्थूलावपिकृतौदृक्कर्मसंस्कृतग्रहस्यसूर्यवत्क्षितिजसंलग्नतायोग्यत्वाद्दृक्कर्मसंस्कृतोग्रहःकार्यइति ॥ ४ ॥

भा०टी०–पश्चिममें होनेसे सूर्यास्तकालका और पूर्वमें होनेसे सूर्योदयकालका ग्रह और सूर्यस्पष्ट निर्णय करना चाहिये । तदुपरान्त ग्रहका दृक्कर्म साधन करे ॥ ४ ॥

अथेष्टकालांशानयनमाह--

ततोलग्नान्तरप्राणाःकालांशाःषष्टिभाजिताः ॥
प्रतीच्यांषड्भयुतयोस्तद्वल्लग्नान्तरासवः ॥ ५ ॥

ततस्ताभ्यांसूर्यदृग्ग्रहाभ्यांलग्नान्तरप्राणाः । भोग्यासुनूनकस्याथेत्युक्तप्रकारेणान्तरकालासवःषष्टिभक्ताइष्टाःकालांशाभवन्ति । प्रागुदयास्तसाधनेप्रतीच्यांपश्चिमोदयास्तसाधनेषड्भयुतयोः षड्राशियुतयोःसूर्यदृग्ग्रहयोर्लग्नान्तरासवः । अन्तरासवस्तद्वत्षष्टिभक्ताइष्टकालांशाभवन्तीत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । दृग्ग्रहसूर्याभ्यामन्तरकालोग्रहस्यसूर्योदयकालेदिनगतंपूर्वोदयास्तनिमित्तमुपयुक्तम् । एवंपश्चिमोदयास्तनिमित्तंसूर्यदृग्ग्रहाभ्यामस्तकालासुभिरन्तरकालःसूर्यास्तकालेग्रहस्यदिनशेषकालउपयुक्तः । तत्रास्तकालानामनुक्तेरुदयासुभिःसाधनार्थंसषड्भौसूर्यदृग्ग्रहौकृतौ सकालोऽस्वात्मकः । अहोरात्रासुभिश्चक्रकलातुल्यैश्चक्रांशालभ्यन्तेतदेष्टासुभिःकइत्यनुपातेप्रमाणफलयोःफलापवर्त्ततेनहरस्थानेषष्टिः । अतोऽस्वात्मकान्तरकालःषष्टिभक्तइष्टकालांशाइत्युपपन्नमुक्तम् । अत्रेदमवधेयम् । सूर्योदयकालिकाभ्यामर्कदृग्ग्रहाभ्यामानीतेनदिनगतेनपूर्वचाल्योदृग्ग्रहः । सूर्यास्तकालिकाभ्यांसषड्भाभ्यामर्कदृग्ग्रहाभ्यामानीतेनदिनशेषेणाग्रेचाल्यः सषड्भोदृग्ग्रहः । क्रमेणग्रहोदयास्तकालेप्राक्पश्चिमदृग्ग्रहौभवतः । ताभ्यांसूर्यसषड्भसूर्याभ्यांच क्रमेणपूर्वरीत्यान्तरकालोग्रहस्यसूर्योदयास्तकाले क्रमेणदिनगतशेषौनाक्षत्रोषष्टिभक्तौकालांशाविष्टौसूक्ष्मौ । अथेष्टकालिकायामानीतकालेन

१ द्वयोर्लग्नान्तरप्राणाः इति वा पाठः ।

पूर्ववच्चालिताभ्यांप्राक्पश्चिमदृग्ग्रहाभ्यांसूर्यसषड्भसूर्याभ्यांचानीतकालोनाक्षत्रोऽपि-सूक्ष्मासन्नः। सूर्योदयास्तसम्बन्धाभावात्तदुत्पन्नाः कालांशाअपितथा । अथसूर्यो-दयास्तकालिकाभ्यामानीतैकवारंकालात्कालांशाः स्थूलाइष्टकालिकाभ्यामानीतै-कवारकालात्कालांशाअतिस्थूलाउभयत्रकालस्यसावनत्वात् । नहिसावनषष्टिघटी-भिश्चक्रपरिपूर्तिर्येनसूक्ष्माः सिध्यन्तीति ॥ ५ ॥

भा०टी०-प्राक्कालमें सूर्य और ग्रहके स्फुटसे लग्नान्तर प्राण निर्णय करके ६० से भाग करनेपर कालांश होगा । पश्चिमकालमें ६ राशियुक्त दो स्पष्टके लग्नान्तर प्राणनि-र्णय करे ॥ ५ ॥

अथयैःकालांशैरुदयोऽस्तोवाभवति तान्विवक्षुःप्रथमंगुरुशनिभौमानांकालांशा-नाह-

एकादशामरेज्यस्यातिथिसङ्ख्यार्कजस्यच ॥
अस्तांशाभूमिपुत्रस्यदशसप्ताधिकास्ततः ॥ ६ ॥

ततइष्टकालांशावगमानन्तरमस्तांशाः । अस्तोयैरंशैर्भवतितेंऽशाअस्तोप-लक्षणादुदयांशाज्ञेयाः । अमरेज्यस्यगुरोरेकादशकालांशाः । शनेःपंचद-शसङ्ख्याःकालांशाः । चःसमुच्चये । भौमस्यसप्ताधिकादश सप्तदशकालां-शाइत्यर्थः ॥ ६ ॥

भा०टी०-बृहस्पति ११ शनि १५ मंगल १७, यही तिनके अस्तांश (कालांश) हैं ॥ ६ ॥

अथशुक्रस्याह-

पश्चादस्तमयोऽष्टाभिरुदयःप्राङ्महत्तया ॥
प्रागस्तमुदयःपश्चादल्पत्वाद्दशभिर्भृगोः ॥ ७ ॥

शुक्रस्यमहत्तयावक्रत्वेननीचासन्नत्वात्स्थूलबिम्बतयापश्चिमायामस्तोऽष्टाभिःका-लांशैःप्राच्यामुदयश्चतैः । नाधिकैः । प्राच्यांशुक्रस्याल्पत्वादणुबिम्बत्वाद्दशभिः-कालांशैरस्तंगणकःकुर्यात् । नाल्पैः । पश्चिमायामुदयस्तस्याणुबिम्बस्यद्दशभिः कालांशैरेवज्ञेयः ॥ ७ ॥

भा०टी०-स्थूलताके हेतुसे शुक्रका पश्चादस्त ८ कालांश में होताहै और पूर्वोदय होता है। किन्तु प्रागस्त और पश्चादुदयमें बिम्बके छोटे होनेसे १० अंश लेने पड़ते हैं ॥ ७ ॥

अथबुधस्याह-

एवंबुधोद्वादशभिश्चतुर्दशाभिरंशकैः ॥
वक्रीशीघ्रगतिश्चार्कात्करोत्यस्तमयोदयौ ॥ ८ ॥

---

१ वक्रशीघ्रगतिश्चार्कात् इति वा पाठान्तरम् ।

वक्रीशीघ्रगतिः । चःसमुच्चये । बुधःसूर्याद्द्वादशभिश्चतुर्दशभिश्चकालांशैर-स्तोदयौ । एवंशुक्ररीत्याकरोति । पश्चादस्तंप्रागुदयंचद्वादशभिःकालांशैर्महाविम्बतयाबुधःकरोति । प्रागस्तंपश्चादुदयंचचतुर्दशभिःकालांशैरणुविम्बत्वाद्बुधःकरोतीत्यर्थः ॥ ८ ॥

भा०टी०–इसप्रकारसे बुध वक्री होनेपर सूर्यसे १२ अंश और शीघ्रगति होनेपर १४ कालांशमें उदयास्त लाभ करता है ॥ ८ ॥

अथप्रोक्तेष्टकालांशाभ्यामस्तस्योदयस्यवागतैष्यत्वज्ञानमाह–

एभ्योऽधिकैःकालभागैर्दृश्यान्यूनैरदर्शनाः ॥
भवन्तिलोकेखचराभानुभाग्रस्तमूर्त्तयः ॥ ९ ॥

एभ्यएकादशामरेज्यस्येतिश्लोकत्रयोक्तेभ्योऽधिकैरिष्टकालांशैर्दृश्यादर्शनयोग्याअभीष्टकालेग्रहाभवन्ति । तथाचास्तसाधनेदृश्यत्वेअस्तएष्यः । उदयसाधनेदृश्यत्वउदयोगतइतिभावः । अल्पैरिष्टकालांशैर्ग्रहालोकेभूलोकेअदर्शना नाविद्यतेदर्शनं दृष्टिगोचरतायेषांते । अदृश्याअभीष्टकालेभवन्ति । नन्वदृश्याःकुतोभवन्तीत्यतआह । भानुभाग्रस्तमूर्तयइति । सूर्यासन्नत्वेनसूर्यकिरणदीप्त्याग्रस्ताअभिभूतासूर्यकिरणप्रतिहतलोकनयाविषयामूर्तिर्बिंबस्वरूपंयेषांतइत्यर्थः । तयाचास्तसाधनअदृश्यत्वेऽस्तोगतः । उदयसाधनेऽदृश्यत्वउदय एष्यइतिभावः । अतएव । "उक्तेभ्यऊनाभ्यधिकायदीष्टाःखेटोदयोगम्यगतस्तदास्यात् । अतोऽन्यथाचास्तमयोऽवगम्यः ॥" इतिभास्कराचार्योक्तंसङ्गच्छते । अत्रोपपत्तिः । उक्तकालांशेयत्कालेग्रहौसाधितौतत्कालएवग्रहस्योदयोऽस्तोवार्कक्रतः । उक्तकालांशानांसूर्यसान्निध्यजनिताद्यन्तग्रहादर्शनेहेतुत्वप्रतिपादनात् । तथाचेष्टकालांशाउक्तेभ्योऽल्पास्तदाग्रहस्यास्तङ्गतत्वमेवेत्युदयसाधनइष्टकालांशाउक्तेभ्योऽल्पास्तदेष्टकालादग्रेग्रहस्योदयः । यदीष्टकालांशाउक्तेभ्योऽधिकास्तदेष्टकालाद्ग्रहस्योदयः पूर्वंजातः । एवमस्तसाधनइष्टकालांशाअधिकास्तदेष्टकालादग्रेग्रहास्तः । यदीष्टकालांशान्यूनास्तदेष्टकालात्पूर्वंग्रहास्तोजातइत्युपपन्नमुक्तम् ॥ ९ ॥

भा०टी–सूर्यसे उत्तर कहे हुए कालांशकी अपेक्षा अधिकदूरमें स्थित होनेपर दृश्य होता है, कम होनेपर जब सूर्यके तेजसे बिम्ब घिरजाता है तब लोगोंको ग्रह दिखाई नहीं देते ॥ ९ ॥

अथोदयास्तयोर्गतैष्यदिनाद्यानयनमाह–

तत्कालांशान्तरकलाभुक्त्यन्तरविभाजिताः ॥
दिनादितत्फलंलब्धभुक्तियोगेनवक्रिणः ॥ १० ॥

उत्क्रेष्टकालांशयोरन्तरस्यकलाः सूर्यग्रहयोर्गत्योः कलात्मकान्तरेणभक्ताः। दिनादिकमुदयास्तयोः फलमुदयास्तयोर्गतैष्यदिनाद्यंभवतीत्यर्थः। वक्रगतिग्रहस्य विशेषमाह। लब्धमिति। वक्रिणोवक्रग्रहस्यभुक्तियोगेनसूर्यग्रहयोः कलात्मगतियोगेनभक्ताः फलंगतैष्यदिनाद्यंज्ञेयम्। अत्रोपपत्तिः। सूर्यग्रहयोर्गत्यन्तरकलाभिरेकंदिनंतदेष्टप्रोक्तकलांशयोरन्तरकलाभिः किमित्यनुपातेनोदयास्तयोरभीष्टकालाद्गतैष्यदिनाद्यवगमः। वक्रग्रहेतुसूर्यग्रहयोर्गतियोगेनप्रत्यहमन्तरवृद्धेर्गति योगादनुपातउपपन्नइत्युपपन्नमुक्तम्॥ १०॥

भा०टी०-अपने २ कालांशसे इष्टकालांश अलग करके कला बनाय भुक्त्यन्तरसे भागकरनेपर दिनादि फल होंगे वक्री होनेपर भुक्तियोग ग्रहण करना चाहिये॥ १०॥

अथग्रहगतिकलयोः क्रान्तिवृत्तस्थत्वात्कालांशान्तरस्याहोरात्रवृत्तस्थत्वाच्चानुपातःप्रमाणेच्छयोर्वैजात्येनायुक्तइतिमनसिधृत्वातयोरेकजातित्वसम्पादनार्थं ग्रहगत्योरिच्छाजातीयत्वंवदंस्तदन्तरेणानुपातस्तुयुक्तएवेत्याह-

तल्लग्नासुहतेभुक्तीअष्टादशशतोद्धृते॥
स्यातांकालगतीताभ्यांदिनादिगतगम्ययोः॥ ११॥

भुक्ती रविग्रहयोर्गतीकलात्मकेतल्लग्नासुहतेकालसाधनार्थं ग्रहस्ययोराश्युदयोगृहीतस्तेनास्वात्मकोदयेनगुणितअष्टादशशतेनभक्तेफलेसूर्यग्रहयोः कालांशवत्काल गतीस्याताम्। ताभ्यांगतिभ्यांगतगम्ययोरुदयास्तयोर्दिनादिपूर्वोक्तप्रकारेण साध्यम्। नतुपूर्वोक्तप्रकारेणयथास्थित गतिभ्यां स्थूलत्वापत्तेः। अत्रोपपत्तिः। एकराशिकलाभीराश्युदयासवस्तदागतिकलाभिः कइत्यनुपातेनाहोरात्रवृत्तेगत्यसवःकलासमाइत्युपपन्नमुक्तम्॥ ११॥

भा०टी०-दो भुक्तियोंको उस लग्नप्राणसे गुणकरके १८०० से भाग करनेपर काल गति होगी। तिस्से (१० श्लोकोक्त) गत और गम्यदिनादिनिर्णय करे॥ ११॥

अथनक्षत्राणांसूर्यसान्निध्यवशादस्तोदयज्ञानार्थं कालांशान् विवक्षुः प्रथममेषामाह-

स्वात्यगस्त्यमृगव्याधचित्राज्येष्ठाःपुनर्वसुः॥
अभिजिद्ब्रह्महृदयंत्रयोदशभिरंशकैः॥ १२॥

मृगव्याधोलुब्धकः। त्रयोदशभिः कालांशैर्दृश्यानिनक्षत्राणि भवन्ति। शेषंस्पष्टम्॥ १२॥

भा० टी०-स्वाती, अगस्त्य, मृगव्याध, चित्रा, ज्येष्ठा, पुनर्वसु, अभिजित्, ब्रह्महृदय, इनका कालांश १३ अंश हैं॥ १२॥

अथान्येषामेषामाह-

हस्तश्रवणफाल्गुन्यःश्रविष्ठारोहिणीमघाः ॥
चतुर्दशांशकैर्दृश्याविशाखाश्विनिदैवतम् ॥ १३ ॥

फाल्गुनीपूर्वोत्तराफाल्गुनी द्वयम् । अश्विनीदैवतमश्विनीकुमारोदैवतंस्वामी यस्येत्यश्विनीनक्षत्रम् । दृश्याउपलक्षणाददृश्याअपि । लिङ्गपरिणामश्चयथायोग्यंबोध्यः । शेषंस्पष्टम् । १३ ॥

भा०टी०-हस्त, श्रवण, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाफाल्गुनी, धनिष्ठा, रोहिणी, मघा, विशाखा और अश्विनी, इनका कालांश १४ अंश हैं ॥ १३ ॥

अथान्येषामेषामाह-

कृत्तिकामैत्रमूलानिसार्पंरौद्रर्क्षमेवच ॥
दृश्यन्तेपञ्चदशभिराषाढाद्वितयंतथा ॥ १४ ॥

कृत्तिकानुराधामूलनक्षत्राणिपञ्चदशभिः कालांशैर्दृश्यन्ते । उपलक्षणान्नदृश्यन्तेऽपि । एवंकारोन्यूनाधिकव्यवच्छेदार्थः । आश्लेषार्द्रा । चःसमुच्चये । आषाढाद्वितयंपूर्वोत्तराषाढाद्वयं तथापञ्चदशकालांशैर्दृश्यन्तइत्यर्थः ॥ १४ ॥

भा०टी०-कृत्तिका, अनुराधा, मूल, आश्लेषा, आर्द्रा, और पूर्वाषाढ़ व उत्तराषाढ़ इनके १५ अंश हैं ॥ १४ ॥

अथान्येषामवशिष्टानांचाह-

भरणीतिष्यसौम्यानिसौक्ष्म्यात्त्रिःसप्तकांशकैः॥
शेषाणिसप्तदशभिर्दृश्यादृश्यानिभानितु ॥ १५ ॥

तिष्यःपुष्यःसोमदैवतंमृगशिरोनक्षत्रमेतानिनक्षत्राणिसौक्ष्म्यादणुविम्बत्वात् त्रिःसप्तकांशकैरेकविंशतिकालांशैर्दृश्यादृश्यानि । उदितान्यस्तङ्गतानिचभवन्तीत्यर्थः । शेषाणि पूर्वाधिकारोक्तनक्षत्रेषूक्तातिरिक्तानिशततारापूर्वोत्तराभाद्रपदारेवतीसञ्ज्ञानि । वह्निब्रह्मापांवत्सापसञ्ज्ञानिचसप्तदशभिः कालांशैर्दृश्यादृश्यानिभवन्ति । तुकारोदृश्यादृश्यानीत्यत्रसमुच्चयार्थकः ॥ १५ ॥

भा०टी०-भरणी, पुष्य, और मृगशिरा इनके सूक्ष्म होनेसे २१ अंशमें, त और सब नक्षत्र १७ अंशमें दिखाई देते हैं ॥ १५ ॥

अथदिनाद्यानयनार्थमिच्छायाएवप्रमाणजातीयकरणत्वमाह-

अष्टादशशताभ्यस्तादृश्यांशाःस्वोदयासुभिः ॥
विभज्यलब्धाःक्षेत्रांशास्तैर्दृश्यादृश्यताथवा ॥ १६ ॥

दृश्यांशाः कालांशाअष्टादशशतगुणितास्तान्स्वोदयासुभिर्ग्रहराश्युदयाभिर्भक्त्वालब्धाः क्षेत्रांशाः क्रान्तिवृत्तस्थांशास्तैरंशैर्दृश्यादृश्यता । उदयास्तौप्रकारा-

न्तरेणोक्तरीत्याज्ञेयौ । कलांशाभ्यांक्षेत्रांशावानीयतदन्तरकलायथास्थितगत्यो-रंतरेणयोगेनवाभक्ताःफलमुदयास्तयोर्गतैष्यदिनाद्यंपूर्वागतमेवस्यादित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । राश्युदयासुभिरेकराशिकलास्तदाकालांशकलातुल्यासुभिःका इतिक्रान्तिवृत्तेकालास्ताः षष्टिभक्ताअंशाइतिपूर्वमेवेच्छास्थानेकलांशाएवधृतालाघवात् ।इत्युक्तमुपपन्नम् ॥ १६ ॥

भा०टी०-कालांशको १८०० से गुणकरके लग्नमाणसे भागकरनेपर क्रान्तिवृत्तका क्षेत्रांश होता है। तिस्से उदयास्तनिर्णय करे ॥ १६ ॥

ननुग्रहाणाममुकदिश्यस्तोऽमुकदिश्युदयइत्युक्तम् । तथानक्षत्राणांनोक्तम् । गत्याभावाद्वियोगयोगासम्भवेनगतैष्यदिनाद्यानयनासम्भवश्चेत्यतआह-

प्रागेषामुदयःपश्चादस्ताद्दक्कर्मपूर्ववत् ॥
गतैष्यदिवसप्राप्तिर्भानुभुक्त्यासदैवहि ॥ १७ ॥

एषांनक्षत्राणांप्राच्यामुदयःप्रतीच्यामस्तोगत्यभावादल्पगतिग्रहवत् । एषां नक्षत्राणांदृक्कर्माक्षदृक्कर्मपूर्ववत्पूर्वप्रकारेणकार्यम् । परन्तुश्लोकपूर्वार्धोक्तमितिध्येयम् । सदानित्यम् । एवकारात्कदाचिदप्यन्यथानेत्यर्थः । हिनिश्चयेन । रविगत्यागतैष्यदिवसानांलब्धिःस्यात् । नक्षत्रगत्यसम्भवात् । योगेग्रहगतिवत् ॥ १७ ॥

भा०टी०-नक्षत्रोंका उदय पूर्वदिशामें और अस्त पश्चिममें होता है । पूर्वानुसार अक्षदृक्कर्म-संस्कार करके सदा रविगति (१० श्लोकमें) से दिवसादिनिर्णय करे॥ १७ ॥

अथकतिपयानांनक्षत्राणांसूर्यसान्निध्यवशादस्तोनास्तीत्याह-

अभिजिद्ब्रह्महृदयंस्वातीवैष्णववासवाः ॥
अहिर्बुध्न्यमुदक्स्थत्वान्नलुप्यन्तेऽर्करश्मिभिः ॥ १८ ॥

अभिजित् । ब्रह्महृदयम् । अनेनैकदेशस्यब्रह्मणोऽपिग्रहणम् । स्वातीश्रवणधनिष्ठाः । अहिर्बुध्न्यमुत्तराभाद्रपदा । एतानिनक्षत्राण्युत्तरदिक्स्थत्वादुत्तरविक्षेपाधिक्यादित्यर्थः । सूर्यकिरणैर्नलुप्यन्ते । अस्तंनयांतीत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । "यस्योदयार्कादधिकोऽस्तभानुःप्रजायतेसौम्यशरातिदैर्घ्यात् । तिग्मांशुसान्निध्यवशेननास्तिधिष्ण्यस्यतस्यास्तमयःकथञ्चित् ॥" इतिभास्कराचार्योक्ता । परमिदमुक्तमष्टाक्षभायाम् । अन्यथापूर्वाभाद्रपदायाअपितथात्वापत्तेरितिदिक् ॥ १८ ॥

भा०टी०-अभिजित, ब्रह्महृदय, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तरभाद्रपदा, यह अधिक उत्तरमें स्थिति होनेके कारण सूर्यकिरणसे कभी लुप्त नहीं होते ॥ १८ ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वनिरासार्थमधिकारासमाप्तिंफक्किकयाह-

नक्षत्रग्रहयोरस्तोदयनिरूपणात्साधारण्येनोदयास्ताधिकारइत्युक्तम् । रङ्गनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे । उदयास्ताधिकारोयंपूर्णोगूढप्रकाशके ॥ इतिश्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरङ्गनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशकेउदयास्ताधिकारःपूर्णः ॥ ॥

इत्युदयास्ताधिकारः ॥

नवम अध्याय समाप्त ॥

दशमोऽध्यायः ।

अथभौमादीनांसूर्यसान्निध्योदयास्तासन्नेदीप्त्यासकलबिम्बदर्शनंतथाचन्द्रस्य स्वोदयास्तकालेसकलबिम्बदर्शनंशुक्लत्वेननभवति । किन्तुबिम्बैकदेशएवशुक्लत्वेन नदृश्यतइतिभौमादिविसदृशत्वं चन्द्रस्यकुतइत्याशङ्कायाःपूर्वाधिकारेसमुपास्थितेस्तदुत्तरभूतशृंगोन्नमनाधिकारोऽवश्यमुपास्थितआरब्धोव्याख्यायते । तत्रशृङ्गोन्नतेरुदयकालात्पूर्वकालेऽस्तकालानन्तरकालेचासन्नकतिपयदिवसेषुदर्शनात्पूर्वाधिकारे चन्द्रस्यकालांशानुक्त्यातदुदयास्तानुक्तेश्चप्रथमसमुपस्थितचन्द्रोदयास्तयोःसाधनमतिदिशति-

उदयास्तविधिःप्राग्वत्कर्त्तव्यःशीतगोरपि ॥
भागैर्द्वादशभिःपश्चाद्दृश्यःप्राग्यात्यदृश्यताम् ॥ १ ॥

चन्द्रस्यअपिशब्दःपूर्वाधिकारोक्तैर्ग्रहनक्षत्रैःसमुच्चयार्थकः । उदयास्तविधिरुदयास्तयोःसाधनप्रकारः प्राग्वत्पूर्वाधिकारोक्तरीत्यागणकेनकार्यः । ननुकालांशानां पूर्वमनुक्तेःकथंतत्सिद्धिरतआह । भागैरिति । द्वादशभिरंशैश्चंद्रः पश्चिमायांदृश्यउदितोभवति । प्राच्यामदृश्यतामस्तंप्राप्नोति । अत्रपश्चात्प्रागितिपुनरुक्तमपि पूर्वंबुधशुक्रयोःसाहचर्येणचन्द्रोदयास्तादिगुक्त्यातत्साहचर्येणचन्द्रस्यपश्चिमास्तपूर्वोदयो वर्तते इतिकस्यचिन्मन्दबुद्धिर्भ्रमस्यवारणायेतिध्येयम् ॥ १ ॥

भा०टी०-चन्द्रमाकाभी पहले कही रीतिके अनुसार उदयास्तसाधन करना चाहिये १२ अंश दूर होनेसे पश्चिममें दिखाताहै और पूर्वमें १२ अंश होनेपर अदृश्य होता है ॥ १ ॥

अथोदयास्तप्रसङ्गेनस्मृतयोश्चन्द्रनित्यास्तोदययोः साधनंविवक्षुः प्रथमंश्लोकत्रयेणेन्दोर्नित्यास्तसाधनमाह-

रवीन्द्वोःषड्भयुतयोःप्राग्वल्लग्नान्तरासवः ॥
एकराशौरवीन्द्वोश्चकार्याविवरलिप्तिकाः ॥ २ ॥

तन्नाडिकाहतेभुक्तीरवीन्द्वोःषष्टिभाजिते ॥
तत्फलान्वितयोर्भूयःकर्त्तव्याविवरासवः ॥ ३ ॥
एवंयावत्स्थिरीभूतारवीन्द्वोरन्तरासवः ॥
तैःप्राणैरस्तमेतीन्दुःशुक्लेऽर्कास्तमयात्परम् ॥ ४ ॥

शुक्लेशुक्लपक्षाभीष्टदिनेसूर्यास्तकालेस्पष्टौसूर्यचन्द्रौसाध्यौ । चन्द्रस्यदृक्कर्मद्वयंसंस्कार्यम् । तत्राक्षदृक्कर्मश्लोकपूर्वार्धोक्तमेव । तयोःसूर्यचंद्रयोःषड्राशियुतयोर्लग्नान्तरासवोऽन्तरकालासवः प्राग्वद्भोग्यासूनूनकस्येत्यादिनासाध्याः । तौ सषड्भार्कचन्द्रावेकराशावभिन्नराशौचेत्स्तस्तदासषड्भयोस्तयोः सूर्यचन्द्रयोरन्तरकलाःकार्याः । चकारोविषयव्यवस्थार्थकः । तयोरसुकलयोर्घटिकाभिरसवः षष्ट्यधिकशतत्रयेणभाज्याः । घटिकाःकलाउदयासुगुणिताएकराशिकलाभिर्भक्ताअसवस्तेषष्ट्यधिकशतत्रयेणभाज्याः । घटिकाः । आभिः सूर्येन्द्वोर्गतीकलात्मकेगुण्येषष्टिभक्तेतत्फलान्वितयोः स्वस्वफलयुक्तयोः सषड्भसूर्यचन्द्रयोर्भूयः पुनर्विवरासवोऽन्तरप्राणाः पूर्वरीत्याकर्त्तव्याः । एवंतद्घटिकाभिः सूर्यास्तकालिकौसषड्भसूर्य्यदृक्कर्मसंस्कृतचन्द्रौ प्रचाल्यतयोर्विवरासवइतियावत्स्थिरीभूताअभिन्नास्तावत्साध्याः । तैरभिन्नैरसुभिः सूर्यास्तादनन्तरंचन्द्रोऽस्तं प्राप्नोति । अत्रोपपत्तिः । सूर्यास्तकालेसषड्भार्कोलग्नंदृक्कर्मसंस्कृतश्चन्द्रः षड्भयुतश्चन्द्रास्तकालेलग्नम् । परन्तुसूर्यास्तकालिकंनस्वास्तकालिकम् । पश्चिमदृग्ग्रहःसूर्यास्तकालिकइतितत्त्वम् । तदन्तरासवः सावनाश्चन्द्रस्यसुक्ष्मादिनशेषाः । परन्तुपरिभाषयानाक्षत्रज्ञानसम्भवान्नाक्षत्राः साध्याइतिचन्द्रस्ताभिश्चाल्यः स्वास्तकालेसषड्भोलग्नमस्मात्सूर्यास्तकालिकसषड्भसूर्याच्चान्तरासवो नाक्षत्राः सूक्ष्माअपिभगवतैकरीतिप्रदर्शनार्थभिन्नकालिकाभ्यांसूर्यचन्द्राभ्यां कथंसूक्ष्मसमयसिद्धिरितिमन्दाशङ्कापनोदार्थंचसषड्भः सूर्योऽपिसाधितश्चन्द्रास्तकाले । ताभ्यामन्तरासवोनाक्षत्राअपिसूर्यास्तकालिकलग्नाग्रहादसूक्ष्मा इत्यसकृत्सूक्ष्माइत्युक्तमुपपन्नम् । वस्तुतस्तुसावनाभ्युपगमे । "रवीन्द्वोः षड्भयुतयोःप्राग्वल्लग्नान्तरासवः । तैःप्राणैरस्तमेतीन्दुःशुक्लेऽर्कास्तमनात्परम् ॥" इत्येकएवसूर्यसिद्धान्तेश्लोकः । श्लोकमध्यएकराशावित्यादिरवीन्द्वोरित्यन्तरासवइत्यन्तंश्लोकद्वयंकेनचिन्मन्दमतिनासमयोऽसकृदेवसाध्यइतिशिष्यधीवृद्धिदतन्त्रोक्तसुबुद्धिमन्येनायुक्तमपियुक्तियुक्तंमत्वानिक्षिप्तम् । कथमन्यथाभगवतःसर्वज्ञस्यशुद्धसावनघटीज्ञानानन्तरमसकृत्साधनोक्तिः सङ्गच्छते । किंच । 'एकराशौरवीन्द्वोश्चकार्याविवरलिप्तिकाः ॥' इत्यर्धस्यत्रिप्रश्नाधिकारेभोग्यासूनूनकस्येत्यादिश्लोकाभिपेक्षितत्वेनात्रानपेक्षितत्वम् । प्राग्वल्लग्ना-

न्तरासवइत्यनेनैवात्रतत्सिद्धेरिति । अथनाक्षत्राभ्युपगमेतुचन्द्रस्यसावनघटीभिश्चालनंस्वास्तकालिकसिद्ध्यर्थमावश्यकंनतुसूर्यस्यप्रयोजनाभावात् । नहिचन्द्रास्तकालसाधितसषड्भसूर्यः सूर्यास्तकालिकंलग्नंयेनसूर्यचालनंयुक्तम् । अपिच । एकस्यचन्द्रस्यचालनेनपुनरेकवारेणैवसूक्ष्मनाक्षत्रकालसिद्धौद्वयोश्चालनोक्त्यानाक्षत्रस्यासकृत्क्रियानयनमतत्त्वंगौरवंसर्वज्ञेनकथमुक्तम् । असकृत्साधनेनसूक्ष्मनाक्षत्रासिद्धौयुक्त्यभावश्च । अतएव । " ज्ञातुंयदाभाभिमताग्रहस्यतत्कालखेटोदयलग्नलग्ने । साध्येनयोरन्तरनाडिकायास्ताः सावनाः स्युर्द्युगताग्रहस्य ॥" इतिभास्कराचार्योक्तंसङ्गच्छतइतितत्त्वम् ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

भा०टी०-शुक्लपक्षमें सन्ध्याकालको दृक्कर्मसंस्कृत चन्द्रमें और सूर्यमें ६ राशि मिलाकर पूर्वानुसार लग्नान्तर प्राणस्थिर करे ; सूर्यास्तके पीछे उक्त-प्राणसंख्यक कालके गत होनेपर चंद्रमा अस्त होगा ॥ २ ॥ रविस्पष्टमें ६ राशि मिलाकर चन्द्रसे अन्तरप्रमाणको निर्णय करे । वही सूर्यास्तके पीछे कृष्णपक्षमें ६ चन्द्रोदयका काल है ॥ ३ ॥ एकदिशामें होनेपर सूर्य और चंद्रमाकी क्रान्तिज्या अनन्तर (दूर) करके अन्यथा योग करे। प्राप्तफल सूर्यसे चंद्रमाकी संस्थानदिक्के अनुसार दक्षिण और उत्तरा संज्ञा होगी ॥ ४ ॥

अथोदयसाधनमाह-

भगणार्धंरवेर्दत्त्वाकार्यास्तद्विवरासवः ॥
तैः प्राणैःकृष्णपक्षेतुशीतांशुरुदयंव्रजेत् ॥ ५ ॥

कृष्णपक्षेभगणार्धसषड्राशीन्सूर्यस्यदत्त्वासंयोज्य । तुकाराच्चन्द्रस्यादत्त्वेत्यर्थः । तद्विवरासवस्तयोर्दृक्कर्मसंस्कृतचन्द्रसषड्भसूर्य योरन्तरासवः प्रागुक्तप्रकारेणसाध्याः । तैःसाधितैरसुभिश्चन्द्रःसूर्यास्तानन्तरमुदयंगच्छेत् । अत्रोपपत्तिः । सूर्यास्तकालेसषड्भार्कस्यलग्नत्वात्सूर्येषड्राशियोजनमुदयसाधनार्थम् । प्राग्दृग्ग्रहस्यापेक्षितत्वाच्चन्द्रोदृक्कर्मसंस्कृतोयथास्थितो नषड्राशियुक्तः । तद्विवरासुभिश्चन्द्रस्यसुर्यास्तानन्तरमुदयः सावनैस्तच्चालितचन्द्रात्सूर्यास्तकालिकसषड्भार्काच्चविवरासवोनाक्षत्राइति शृङ्गोन्नतिसाधनार्थंदृश्यकालेसूर्यचन्द्रौसाध्याविितिज्ञापनार्थंचन्द्रस्यानित्योदयास्तावुक्तावन्येषां ग्रहनक्षत्रादीनांप्रयोजनाभावादनुक्तौचंद्रोपलक्षणाद्वुक्तौवातत्रशुक्लकृष्णपक्षविवेको नेतिध्येयम् ॥ ५ ॥

भा०टी०-तिसकालकी स्वमत्स्यरेखागत-चन्द्रच्छाया कर्णको ऊपर कहेहुए फलसे गुणा करे । गुणनफल दक्षिण होनेपर द्वादशगुणित अक्षज्यामें योग और उत्तर होनेपर वियोग करना चाहिये ॥ ५ ॥

अथप्रकृतंविवक्षुः प्रथमंतदुपयुक्तभुजकोटिकर्णात्मकंक्षेत्रंश्लोकत्रयेणाह-

अर्केन्द्वोःकान्तिविश्लेषोदिक्साम्येयुतिरन्यथा ॥
तज्ज्येन्दुरर्कावत्रासौविज्ञेयादक्षिणोत्तरा ॥ ६ ॥
मध्याह्नेंदुप्रभाकर्णसङ्गुणायदिसोत्तरा ॥
तदार्कघ्नाक्षजीवायांशोध्यायोज्याचदक्षिणा ॥ ७ ॥
शेषंलम्बज्ययाभक्तंलब्धोबाहुःस्वदिङ्मुखः ॥
कोटिःशंकुस्तयोर्वर्गयुतेर्मूलंश्रुतिर्भवेत् ॥ ८ ॥

सूर्यचन्द्रयोःस्पष्टक्रान्त्योर्दिगैक्येऽन्तरम् । अन्यथादिग्भेदेयोगः । अत्रक्रान्तिशब्दःक्रान्तिज्यापरोज्ञेयः । उपपत्त्यविरोधात् । तज्ज्यासाचासौज्याचसंस्कारसिद्धाङ्कमिताज्येत्यर्थः । अर्काच्चन्द्रोयत्रयस्यांदिशितद्दिक्कादक्षिणोत्तरावासौज्या ज्ञेया । एकदिशिरविक्रान्तितश्चन्द्रक्रान्तेरधिकत्वेसूर्याच्चन्द्रस्यक्रान्तिदिक्स्थत्वेन ज्याक्रान्तिदिक् । ऊनत्वेऽर्कात्क्रान्तिदिग्विपरीतदिक्स्थत्वेनक्रान्तिभिन्नदिक् । भिन्नदिशिचन्द्रक्रान्तिदिग्ज्याज्ञेयेत्यर्थः । साज्यामध्याह्नेंदुप्रभाकर्णसंगुणायत्कालेचन्द्रशृंगोन्नत्यर्थंसाधितस्तत्काले मध्याह्नच्छायाकर्णवच्छायाकर्णश्चन्द्रस्यसाध्यः । सत्वक्षांशचन्द्रस्पष्टक्रान्त्योरुत्तरदिशिवियोगोदक्षिणदिशियोगस्तदूननवत्यंशज्ययाभक्ताद्वादशगुणितात्रिज्येति । उपपत्त्यनुरोधेनतुमध्याह्नपदन्तत्कालपरम् । यत्कालेचन्द्रस्तत्कालेचन्द्रस्यद्युगतंदिनशेषंवाप्रसाध्यत्रिप्रश्नाधिकारविधिनाशंकुप्रसाध्यच्छायाकर्णःसाध्यः । अह्नोऽहोरात्रस्यमध्यंसूर्यास्तरतत्कालिकः चन्द्रस्यच्छायाकर्णोवायमेवभगवदभिप्रेतः । कथमन्यथाचन्द्रस्यशृंगोन्नतौदृक्कर्मद्वयसंस्कारःशृंगोन्नतौशशाङ्कस्येतिप्रागुक्तःसङ्गच्छते । दिनार्धातिरिक्तच्छाया साधनार्थमेवदृक्कर्मणोरुपयोगादन्यत्रशृंगोन्नतिगणितउपयोगाभावात् । स्पष्टक्रान्त्यैवच्छायाकर्णसिद्धेः । अत्रापिश्लोकपूर्वार्धोक्तमेवाक्षदृक्कर्मसंस्कार्यम् । तेन च्छायाकर्णेनगुणितेत्यर्थः । सातादृशीज्यायद्युत्तरा तदाद्वादशगुणितायामक्षज्यायांशोध्यान्तरिता । तेनद्वादशगुणिताक्षज्याधिकातादृशीज्या । तदापिविपरीतशोधनेनक्षतिः । यदिदक्षिणातदातस्यामेवयुक्ताकार्या । चोव्यवस्थार्थकः । शेषंसंस्कारजंस्वदेशलम्बज्ययाभक्तंफलं भुजःप्राप्तः । स्वदिङ्मुखःस्वशब्देनसंस्कारस्तस्यदिक्तस्यांमुखमग्रंयस्यासौ । संस्कारादिक्कइत्यर्थः । भुजस्यकोटिकर्णसापेक्षत्वात्तावाह । कोटिरिति । शंकुर्द्वादशांगुलःकोटिः । तयोर्भुजकोट्योर्वर्गयोर्योगात्पदंकर्णःस्यात् । अत्रोपपत्तिः । "स्वाग्रास्वशंकुतलयोःसमभिन्नदिक्त्वे योगोन्तरंभवतिदोरिनचन्द्रदोष्णोः । तुल्यांशयोर्विवरमन्यदिशोस्तुयोगः स्पष्टो भुजोभवतिचन्द्रभुजांशइन्दोः शुद्धेभुजेरविभुजाद्विपरीतदिक्कः ॥" इतिसूक्ष्मभुज-

साधनंभास्कराचार्येणसिद्धान्तशिरोमणावुक्तम् । तदुपपत्तिस्तुतट्टीकायांव्यक्ता । अनयारीत्याभुजसाधनार्थंक्रांतिज्ययोरग्रेसाध्ये । लम्बज्याकोटौत्रिज्याकर्णस्तदाक्रांतिज्याकोटौकः कर्णइत्यनुपातेन । तत्स्वरूपंतुप्रत्येकंसूर्यचन्द्रयोः सूर्यक्रांतिज्यात्रिज्यागुणालम्बज्याभक्ता { सू. क्रां. ज्या. त्रि १ / लं १ } चन्द्रस्पष्टक्रान्तिज्यात्रिज्यागुणालंबयाभक्ता { चं. क्रां. ज्या. त्रि. १ / लं. १ } अनयोः स्वंस्वंशंकुतलंसंस्कार्यम् । तत्रशृङ्गोन्नत्यर्थं सूर्येणभगवतासूर्योदयास्तकालिकगणितस्यैवाभ्युपगमात् । तत्रसूर्यशंकोर भावात्तच्छंकुतलाभावाच्चसूर्याग्रैवसूर्यभुजः सिद्धः । चन्द्रस्यतुतदाशंकोः सद्भावाच्छंकुतलमुत्पद्यतेतत्तुलम्बज्याकोटावक्षज्याभुजस्तदाशंकुकोटौकोभुजइत्यनुपातेनतात्कालिकचन्द्रोन्नतोन्नतकालसाधितत्रिप्रश्नाधिकारोक्तचन्द्रमहाशंकुगुणिताक्षज्यालम्बज्याभक्तेतिदक्षिणमेवशंकुतलस्वरूपम् { अक्षज्या. चं. शं. १ / लं. १ } इदं चन्द्रदक्षिणाग्रायांयोज्यम् । चन्द्रस्यदक्षिणोभुजः । चन्द्रोत्तराग्रायांतुहीनचन्द्रस्योत्तरोभुजः । चन्द्रोत्तराग्रयाहीनामिदंचन्द्रस्यदक्षिणोभुजः । यथादक्षिणोभुजः { चं. क्रां. ज्यां त्रि. अक्षज्या. चं. शं १ / लं १ } वा { चं. क्रां. ज्या. त्रि. १ अक्षज्या. चं. शं १ / लं १ } उत्तरोभुजः { चं. क्रां. ज्या. त्रि. १ अक्षज्या. चं. शं १ / लं १ } अयंचन्द्रभुजः सूर्याग्रयैकदिश्यंतरितोभिन्नदिशियुक्तः स्पष्टः शृंगोन्नत्युपयुक्तोभुजः । यथासूर्यस्यदक्षिणगोले { सू. क्रां. ज्या. त्रि. १ चं. क्रां. ज्या. त्रि. १ अक्षज्या. चं. शं. १ / लं. १ } { सू. क्रां. ज्या. त्रि. १ चं. क्रां. ज्या. त्रि. १ अक्षज्या. चं. शं. १ / लं. १ } इदंभुजद्वयंस्पष्टोभुजोभवतिचन्द्रभुजांशइत्युक्तेर्दक्षिणम् । सूर्यभुजस्यन्यूनत्वेनशोध्यात् । सूर्यभुजस्याधिकत्वेतु { सू. क्रां. ज्या. त्रि. १ चं. क्रां. ज्या. त्रि. १ अक्षज्या. चं. शं. १ / लं १ } { सू. क्रां. ज्या. त्रि. १ चं. क्रां. ज्या. त्रि. १ अक्षज्या. चं, शं १ / लं. १ } इदंभुजद्वयमुत्तरम् । इन्दोः शुद्धेभुजेरविभुजाद्विपरीतदिक्कइत्युक्तेः । योगेतूत्तरोभुजः { सू. क्रां. ज्या. त्रि. १ चं. क्रां. ज्या. त्रि. १. अक्षज्या. चं.

शं१/लं१ {सूर्योत्तरगोलेऽपि} सू.क्रां.ज्या.त्रि. १चं.क्रां.ज्या.त्रि१अक्षज्या,चं.शं १/लं१ } {सू-

क्रां.ज्या.त्रि.१चं.क्रां.ज्या.त्रि१अक्षज्या.चं.शं १/लं१ } इदंभुजद्वयंदक्षिणम् । अन्तरेतु सू-

र्यभुजस्यन्यूनत्वउत्तरोभुजः } सू.क्रां.ज्या.त्रि. १चं. क्रां.ज्या. त्रि.१अक्षज्या.चं.शं १/लं १ }

सूर्यभुजस्याधिकत्वेतु { सूर्यक्रां.ज्या.त्रि१.चं.क्रां.ज्या. त्रि. १ अक्षज्या. चं. शं. १/लं १ }

दक्षिणोऽयंभुजः । इन्दोःशुद्धेभुजइत्युक्तत्वात् । अत्रनवसुपक्षेषुप्रथमपक्षेसूर्यचन्द्रक्रान्तिज्ययोरेकदिशयोरन्तरंत्रिज्यागुणितंतत्सूर्यक्रान्तिसम्बद्धंचेत्तेनोनाक्षज्येन्दुशंकुघातोलम्बज्याभक्तइति । चंद्रक्रान्तिसम्बद्धंचेत्तेनयुतस्तद्घातोलम्वज्याभक्तइतिसिद्धम् । तत्राक्षांशानांदाक्षिणत्वेनैकदिशियोगार्थचन्द्रशेषेदशिणत्वंसूर्यशेषेउत्तरत्वंभिन्नदिशिवियोगार्थकल्पितम् । युक्तंचैतत् । सूर्यक्रान्त्यधिकत्वेसूर्याच्चन्द्रस्योत्तरत्वात् । शृङ्गोन्नतौचन्द्रस्यैवप्राधान्याच्च । द्वितीयपक्षेक्रान्तिज्ययोर्भिन्नदिशयोर्योगेनताद्दशेनतद्धातमूनंकृत्वालम्बज्ययाभजेदित्यत्रापियोगस्याग्रेऽन्तरार्थमुत्तरदिक्त्वंचन्द्रक्रान्तेरुत्तरत्वेनदक्षिणस्थसूर्याच्चन्द्रस्यसुतरामुत्तरत्वाच्च । तृतीयपक्षेक्रान्तिज्ययोरेकदिशयोरन्तरेसूर्यसंबद्धएवताद्दशेतद्धधऊनइति वियोगार्थमन्तरस्योत्तरदिक्त्वम् । द्वयोर्दक्षिणगोलस्थत्वेऽप्यधिकसूर्यान्न्यूनचन्द्रस्योत्तरत्वात् । चतुर्थपक्षेभिन्नदिशयोःक्रान्तिज्ययोर्योगेताद्दशेतद्धधऊनइतिवियोगार्थयोगस्योत्तरदिक्त्वम् । चन्द्रस्योत्तरदिक्स्थत्वात् । पञ्चमपक्षेतुचतुर्थपक्षोक्तंतुल्यत्वात् । षष्ठपक्षेक्रान्तिज्ययोर्भिन्नदिशयोर्योगोदक्षिणस्तद्धधेयोगार्थचन्द्रस्यदक्षिणगोलस्थत्वात् । सप्तमपक्षेक्रान्तिज्ययोरेकदिशयोरन्तरंसूर्यसम्बद्धंतदातद्धधेयोज्यमित्यन्तरंदक्षिणम् । द्वयोरुत्तरगोलस्थत्वेऽपिचन्द्रस्यन्यूनत्वेनार्कादक्षिणस्थत्वात् । अधिकत्वेतूत्तरंतद्धधेहीनमिति । अष्टमपक्षेक्रान्तिज्ययोरेकदिशयोरन्तरेचन्द्रसम्बद्धउत्तरेतद्धधऊनः । चन्द्रस्याधिकत्वेनोत्तरस्थत्वात् । अन्त्यपक्षेतुसमदिशयोःक्रांतिज्ययोरन्तरंसूर्यसम्बद्धंतद्धधेयोज्यमितिदक्षिणम् । चन्द्रस्यन्यूनत्वेनदक्षिणस्थत्वादित्युपपन्नंप्रथमश्लोकोक्तम् । अत्रकेनचित्क्रान्तिशब्देनचापात्मकक्रान्तीगृहीत्वातत्संस्कारःकृतस्तस्यज्याकार्येतिव्याख्यातम् । तदुपपत्तिविरुद्धम् । नहिभुजसाधनेचापात्मकक्रान्तीप्रयोजकत्वेनोपपन्ने । येनव्याख्योक्तायुक्ता । नवाक्रांतिज्यायोगवियोगाभ्यां चापात्मकक्रान्तियोगवियोगयोर्ज्येतुल्येयेनोक्तं सङ्गतंस्यात् । अन्यथाक्षांशक्रान्त्यंशसंस्कारांशज्यांविनापिक्रान्तिज्याक्षज्ययोःसंस्कारेणनतांशज्यायाःसाधनापत्तेरितिदिक् । अथायंभुजस्त्रिज्यावृत्तइति

लाघवात्तात्कालिकेचन्द्रच्छायाकर्णमितवृत्तेस्वेच्छयासाधितस्त्रिज्यावृत्तेऽयंभुजस्तदा चन्द्रच्छायाकर्णवृत्तेकइत्यनुपातेतेनक्रान्तिज्ययोः संस्कारमितमाद्यंखण्डंचन्द्रच्छायाकर्णगुणमितिसिद्धम् । त्रिज्यामितपूर्व्वगुणस्येदानीन्तनात्रिज्यामितहरस्यतुल्यत्वेनद्वयोर्नाशाच्च । अथापरखण्डंचन्द्रशङ्क्वक्षज्याघातात्मकंचन्द्रच्छायाकर्णगुणं त्रिज्याभक्तंकार्य्यम् । तत्रत्रिज्याद्वादशघातस्यचन्द्रशंकुभक्तस्यच्छायाकर्णत्वाच्छङ्कुत्रिज्यामितयोर्गुणहरयोः प्रत्येकंनाशादक्षज्याद्वादशगुणेत्यपरंखण्डंसिद्धम् । द्वयोरेकदिशियोगोभिन्नदिश्यन्तरमितिसंस्कारोलम्बज्याभक्तोभुजःसंस्कारदिक्कःसिद्धः । शंकुःकोटिरितिचन्द्रच्छायाकर्णवृत्तेभुजसाधनात् । तद्वृत्तेकोटिरपिसाध्या । सातुनियताद्वादश । नियतकोट्यर्थमेवभुजश्चन्द्रच्छायाकर्णवृत्तेसाधितःसूर्योदयास्तयोःसूर्य्यशङ्कोरभावात्सूर्य्यशङ्कुसंस्काराभावः । तदितरकालउक्तक्रियया‌ननिर्वाहः । कोटिभुजयोर्वर्गयोगान्मूलंकर्णइत्युपपन्नंमध्याह्नेत्यादिश्लोकद्वयोक्तम् ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

भा०टी०-यह शेषलब्धफल लम्बज्यासे भाग करनेपर स्वदिग्सूचक बाहु होगा । चंद्रमाके शंकुको कोटिज्ञानकरके दोनोंका वर्गयोग करके मूल करनेसे कर्ण होगा ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथशुक्लानयनमाह-

सूर्योनशीतगोर्लिप्ताःशुक्लंनवशतोद्धृताः ॥
चन्द्रबिम्बाङ्गुलाभ्यस्तद्धृतंद्वादशभिःस्फुटम् ॥ ९ ॥

सूर्योनितचन्द्रस्यकलानवशतभक्ताःफलंशुक्लम् । तच्चन्द्रग्रहणाधिकारोक्तप्रकारेणागतचन्द्रबिम्बाङ्गुलैर्गुणितंद्वादशभिर्भक्तंफलंस्फुटंशुक्लंस्यात् । अत्रोपपत्तिःदर्शान्ते सूर्यचन्द्रयोरन्तराभावादस्मद्दृश्यार्धे चन्द्रगोलेसूर्यकिरणप्रतिफलनाभावाच्छौक्ल्याभावः । ततोयथायथार्काच्चन्द्रःपूर्व्वतोऽन्तरितस्तथातथाचन्द्रगोलास्मद्दृश्यार्धेचन्द्रपश्चिमभागक्रमेणशौक्ल्यवृद्धिः । एवंषड्राश्यन्तरेपौर्णमास्यन्तेचन्द्रगोलास्मद्दृश्यार्धं सम्पूर्णंश्वेतंभवति । इतःषड्राशिकलाभिःखखाष्टदिग्भिर्द्वादशाङ्गुलव्यासबिम्बंश्वेतं तदेष्टेनसूर्योनचन्द्रकलागणेनकिमित्यनुपातेप्रमाणफलयोः फलापवर्त्तनेनप्रमाणस्थानेनवशतम् । अतःसूर्य्योनचन्द्रस्यकलानवशतभक्ताःशौक्ल्यमिदंद्वादशांगुलव्यासप्रमाणेनसिद्धम् । अतोद्वादशांगुलप्रमाणेनेदंतदाभिमतचन्द्रबिम्बांगुलव्यासप्रमाणेन किमित्यनुपातेनोक्तमुपपन्नम् । अनेनप्रकारेणत्रिभान्तरेचन्द्रगोलास्मद्दृश्यार्धमर्धं श्वेतंभवतीतिसिद्धम् । भास्कराचार्यैस्तु । "कक्षाचतुर्थस्तरणेर्हिचन्द्रःकर्णान्तरे तिर्यगिनोयतोऽब्जात् । पादोनषट्काष्टलवान्तरेऽतोदलंनृदृश्यंदलमस्यशुक्लम् ॥" इतिश्रृंगोन्नतिवासनायामुक्तम् । श्रृङ्गोन्नत्यधिकारे । "चन्द्रस्ययो-

जनमयश्रवणेननिघ्नोऽर्यर्केन्दुदोर्गुणइनश्रवणेनभक्तः । तत्कार्मुकेणसाहितः खलुशुक्लपक्षेकृष्णोऽमुनाविरहितः शशभृद्धिधेयः ॥ " इति तदभिमतश्वेतानयनोपयुक्तश्चन्द्रः साधितइत्यलम् ॥ ९ ॥

भा०टी०-चंद्रमासे सूर्यको अलग करके कला करता हुआ ९०० से भाग करनेपर शुक्लांश होगा। चन्द्रबिम्बांगुलीसे गुणकरके १२ से भाग करनेपर स्फुटं शुक्ल होगा ॥ ९ ॥

अथश्लोकचतुष्टयेनशृङ्गोन्नतिपरिलेखमाह-

दत्त्वार्कसञ्ज्ञितंबिन्दुंततोबाहुंस्वदिङ्मुखम् ॥
ततःपश्चान्मुखींकोटिंकर्णकोट्यग्रमध्यगम् ॥ १० ॥
कोटिकर्णयुताद्बिन्दोर्बिम्बंतात्कालिकंलिखेत् ॥
कर्णसूत्रेणदिक्सिद्धिंप्रथमंपरिकल्पयेत् ॥ ११ ॥ ॥
शुक्लंकर्णेनतद्बिम्बयोगादन्तर्मुखंनयेत् ॥
शुक्लाग्रयाम्योत्तरयोर्मध्येमत्स्यौप्रसाधयेत् ॥ १२ ॥
तन्मध्यसूत्रसंयोगाद्बिन्दुत्रिस्पृग्लिखेद्धनुः ॥
प्राग्बिम्बंयादृगेवस्यात्तादृक्तत्रदिनेशशी ॥ १३ ॥

समभूमावभीष्टस्थानेदिक्साधनं कृत्वापूर्वापरादक्षिणोत्तराच रेखाकार्या । तत्र दिक्सम्पातेऽर्कसञ्ज्ञितमर्कसञ्ज्ञासञ्जातायस्येत्येतादृशमर्कसञ्ज्ञंबिन्दुं चिह्नंदत्त्वाकृत्वेत्यर्थः । ततोबिन्दोः सकाशाद्भुजंपूर्वसाधितंस्वदिङ्मुखंस्वदिशा दक्षिणोत्तरान्यतरातदभिमुखंदत्त्वाभुजाङ्गुलानिगणयित्वाचिह्नंकृत्वाततोभुजाग्रचिह्नात्पश्चान्मुखीं पश्चिमदिक्समसूत्राभिमुखाग्रांकोटिंद्वादशाङ्गुलात्मिकां दत्त्वा कर्णपूर्वसाधितंकोट्यग्रमध्यगकोट्यग्रचिह्नंमध्यंसूर्यसञ्ज्ञचिह्नं तयोर्गतंस्पृष्टम् । तदन्तरालेकर्णाङ्गुलानिदत्त्वेत्यर्थः । कोटिकर्णरेखासंयोगेमध्यंप्रकल्प्यतात्कालिकं सूर्यास्तोदयकालिकं चन्द्रस्यसाधितं मण्डलं लिखेत् । तत्रलिखितचन्द्रबिम्बे कर्णसूत्रेणकर्णरेखयाप्रथममादौ दिक्सिद्धिंदिशानिष्पत्तिंपरिकल्पयेत् कुर्यात् । चन्द्रमण्डलंकर्णरेखायांयत्रलग्नं तंत्रचन्द्रवृत्तेपूर्वा । कर्णरेखां स्वमार्गेणाग्रेनिःसार्यचन्द्रवृत्तपरिधौ यत्रकर्णरेखापरभागेलग्नातत्रपश्चिमा । तन्मत्स्याभ्यांरेखादक्षिणोत्तराचन्द्रवृत्तेयत्रलग्नातत्रदक्षिणोत्तरेति फलितार्थः । शुक्लंपूर्वसाधितंकर्णेनकर्णरेखामार्गेणतद्बिम्बयोगात्कर्णरेखाचन्द्रमण्डल परिध्योःसम्पातादपूर्वात् । अन्तर्मुखंचन्द्रवृत्तकेन्द्राभिमुखंनयेत् । शुक्लाग्रचिह्नंकुर्यात् । चन्द्रवृत्तान्तः कर्णरेखायां पश्चिमचिह्नाच्छुक्लाङ्गुलानिगणयित्वा चिह्नं

कुर्यादित्यर्थः। शुक्लाग्रयाम्योत्तरयोश्चन्द्रवृत्तान्तर्यत्रशुक्लाग्रचिह्नंयत्रचचन्द्रवृत्तपरिधौ-दक्षिणोत्तरयोश्चिह्नंतयोरित्यर्थः। मध्येऽन्तरालेमत्स्यौप्रत्येकंसाधयेत्। शुक्लाग्रदक्षिण-चिह्नाभ्यां मत्स्यशुक्लाग्रोत्तरचिह्नाभ्यांमत्स्यश्चेतिपूर्वोक्तरीत्यामत्स्यौकुर्यादित्यर्थः। तन्मध्यसूत्रसंयोगात्। तयोर्मत्स्ययोर्मध्यसूत्रंमुखपुच्छस्पृग्गर्भसूत्रंप्रत्येकंतयोर्यत्रच-न्द्रमण्डलान्तस्तद्वहिर्वाकेंद्रशुक्लाग्रस्यपश्चिमत्वेपूर्वभागेसंयोगः। पूर्वत्वेपश्चिमभागे-संयोगः। स्वस्वमार्गेणप्रसारितयोस्तयोःसम्पातस्तस्मात्स्थानात्। बिन्दुत्रिस्पृक् शुक्लाग्रबिन्दुर्याम्योत्तरयोश्चिह्नबिन्दुरितिबिन्दुत्रितयस्पर्शिधनुर्वृत्तैकदेशात्मकंलिखेत्। सूत्रसम्पातशुक्लाग्रबिन्द्वन्तरालांगुलव्यासार्धेनसम्पातस्थानाद्बिन्दुत्रयस्पष्टवृत्तपरि-ध्येकदेशात्मकंचन्द्रमण्डलान्तश्चापंकुर्यादित्यर्थः। प्राक्पूर्वकाले लिखितंचन्द्रबि-म्बम्। यादृक्। लिखितचापच्छेदेनयादृशंपश्चिमभागेभवति तादृशः। एवकारस्तद्भि-न्ननिरासार्थकः। तास्मिन्दिने। शृंगोन्नतिगणिताश्रयीभूतसन्ध्यासमयेचन्द्रआ-काशस्थोभवति। अत्रोपपत्तिः। भुजस्तुसूर्याच्चन्द्रेयावतान्तरेणतद्रूपइतिसूर्य स्थानंप्रकल्प्यतस्माद्यथादिग्भुजोदेयस्तल्माच्छुक्लपक्षेपश्चिमदिक्स्थस्यचन्द्रस्यशृंगो-न्नतिर्भवतीतिसूर्य्यचन्द्रयोरूर्ध्वाधरान्तरंकोटिर्दत्ता। सूर्यचन्द्रयोरन्तरंतिर्यक्कर्ण इतिकोट्यग्रसूर्यबिम्बान्तरालेकर्णोदत्तः। कर्णदानंकोटेःसरलत्वसिद्ध्यर्थम्। तत्र कोटिकर्णयोगेचन्द्रावस्थानाच्चन्द्रवृत्तंतन्मध्यत्वेनलिखितम्। कर्णमार्गेणशुक्लदर्शना-च्चन्द्रबिम्बेकर्णसूत्रानुरुद्धापूर्वापरातदनुरुद्धादाक्षिणोत्तराच। शुक्लपक्षेचन्द्रपश्चिम-भागेऽर्काभिमुखत्वेनशौक्ल्यात्पश्चिमस्थानात्कर्णरेखायां चन्द्रवृत्तान्तःश्वेतंदत्तम्। तत्रचन्द्रमण्डलेयाम्योत्तरचिह्नावधिकवृत्तैकदेशरूपंधनुः शुक्लाग्रबिन्दुस्पृष्टंचन्द्राकृ-तिदर्शनार्थंकार्यम्। अतोबिन्दुत्रयस्पृग्वृत्तस्यकेन्द्रज्ञानार्थंप्रागुक्तरीत्याबिन्दुत्रये-भ्योमत्स्यौप्रसाध्यतत्सूत्रयुतिः केन्द्रमस्माच्चापंतथैवभवतीतिचन्द्राकृतिःप्रत्यक्षा ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥

भा०टी०—अर्कसंज्ञक बिन्दु अंकित करके अपनी दिशाके अनुसार बाहुपरिमाणकी रेखा खेंचे। रेखाके अग्रभागमें पश्चिम मुखगामी कोटीके परिमाणस रेखा खेंचे। कोटिके अग्रसे मध्यबिन्दुतककी रेखाही कर्ण होगी। जिस बिन्दुमें कोटि और कर्ण लगा है तिसके चारों ओर बिम्बके अनुसार वृत्तखेंचे। कर्णसूत्र जिस दिशामें हो, वह दिशाही पूर्व समझले। जहां बिम्बवृत्त और कर्णरेखाका संयोग है, उस स्थानसे बिम्बमध्या-भिमुखमें कर्णरेखाके ऊपर शुक्लपरिमित दूरपर बिन्दुस्थापन करे। वह बिन्दु और बिम्बोत्तर बिन्दु और वह बिन्दु और बिम्ब दक्षिण बिन्दुमध्यमें दो मत्स्य बनाकर तिनके मुख व पूछसे निकली हुई रेखाके संयोगको केन्द्रकरता हुआ त्रिबिन्दु स्पृक् धनु रचना करे। पूर्वकालमें चन्द्रबिम्ब जैसाहो उसदिन वैसाही चंद्रमा दिखाई देगा ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥

ननुयदर्थमयमुद्योगस्तस्याःशृङ्गोन्नतेर्ज्ञानंनोक्तमतआह-

कोटयादिक्साधनात्तिर्यक्सूत्रान्तेशृङ्गमुन्नतम् ॥
दर्शयेदुन्नतांकोटिंकृत्वाचन्द्रस्यसाकृतिः ॥ १४ ॥

कोट्याकोटिरेखयाचन्द्रवृत्तेकर्णरेखाबद्दिक्साधनात्परिलेखे शुक्लधनुषःकोटिमग्रभागात्मिकमुन्नतामुच्चांकृत्वादृष्ट्वा । तिर्यक्सूत्रान्ते । दक्षिणोत्तररेखायाअन्ते अवसाने । उन्नतमुच्चंशृङ्गंदर्शयेत् । सापरिलेखसिद्धा । आकृतिःस्वरूपम् । चन्द्रस्य आकाशस्थचन्द्रस्य भवति परिलेखसिद्धरूपमाकाशस्थचन्द्रप्रत्यक्षमित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । यथाचन्द्रवृत्तेकर्णरेखयाचन्द्रादिशस्तथाकोटिरेखयाचन्द्रवृत्तेसूर्यदिशस्तयोरन्तरंभुजचन्द्रवृत्तपरिणतः । अथचन्द्रदक्षिणोत्तरयोर्धनुष्यकोटयोःसंलग्नत्वात्सूर्यदक्षिणोत्तराभ्यांकोटिरूपशृङ्गेणनतोन्नतेभवतस्तत्रभुजदिक्कंशृङ्गंनतम् । तदितरदिक्कंशृङ्गमुन्नतम् । अतएवभास्कराचार्यैरुक्तम् । स्यात्तुङ्गशृंगं वलनान्यदिक्स्थम् इति ॥ १४ ॥

भा०टी०-कोटीसे दिक्साधन करके दक्षिणोत्तर तिर्यक्सूत्रके शेषभागमें चन्द्रमाका ऊंचा शृंग दिखावै । सोही आकाशके चन्द्रमाका आकार है ॥ १४ ॥

ननुसूर्योनचन्द्रस्यषड्भादिकत्वउक्तप्रकारेणचन्द्रविम्वाभ्यधिकंशुक्लमायातितत्कथंयुक्तंव्याघातादित्यतस्तदुत्तरंविशेषंचाह-

कृष्णेषड्भयुतंसूर्यंविशोध्येन्दोस्तथासितम् ॥
दद्याद्वामंभुजंतत्रपश्चिमंमण्डलंविधोः ॥ १५ ॥

कृष्णपक्षेषड्राशिभिःसहितमर्कंचन्द्राद्विशोध्य । तथालिप्तानवशतभक्ताइतिपूर्वप्रकारेण असितंश्याममानेयम् । तथाचपूर्वोक्तंशुक्लानयनंशुक्लपक्षएवचन्द्रशौक्ल्यवृद्धिज्ञानार्थम् । कृष्णपक्षेतुशौक्ल्यह्रासात्कृष्णतावृद्धेःकृष्णानयनंयुक्तंनशुक्लानयनम् । अतएवदर्शान्तमासस्यशुक्लकृष्णौद्वौपक्षावितिभावः । अथकृष्णपरिलेखार्थपूर्वोक्तिविशेषमाह । दद्यादिति । तत्रकृष्णपरिलेखविषयेवामंविपरीतंभुजंप्रागुक्तंदद्यात् । अर्कचिह्नादुत्तरंभुजंदक्षिणतोदक्षिणंभुजमुत्तरतोगणकोदद्यात् । चन्द्रस्य मण्डलंपश्चिमंदर्शयेत् । यथाशुक्लपक्षेचन्द्रमण्डलस्यपाश्चिमभागेशौक्ल्यंतथाकृष्णपक्षे चन्द्रमण्डलस्यपश्चिमभागेकृष्णाभिवृद्धिंदर्शयेदित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । कृष्णपक्षारम्भेसूर्यचन्द्रयोःषड्राश्यन्तरम् । ततःषड्राशिपर्यन्तंकृष्णाभिवृद्धिः । अतः षड्राशियुतसूर्येणवर्जितचन्द्रात्पूर्वप्रकारेणकृष्णानयनंयुक्तम् । अथशुक्लशृङ्गंयत्रनतंतत्रकृष्णशृंगमुन्नतंयत्रचोन्नतं तत्रनतम् । अतःकृष्णपरिलेखार्थंभुजोविपरीतोदेयः । तदपिकृष्णंपश्चिमभागादेवाभिवृद्धम् । अतःकर्णरेखायांचन्द्रविम्बान्तःपश्चिमस्थानाद्देयम् । ततःप्राग्वत्कृष्णशृङ्गोन्नतिरिति ॥ १५ ॥

भा०टी०-कृष्णपक्षमें चन्द्रस्पष्टसे ६ राशियुक्त सूर्य अलग करके शुक्रकी नाईं असित निर्णय करे राहुकी दिशाको बदलकर चन्द्रमण्डलकी पश्चिम ओर असित दिखावै ॥ १५ ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वनिरासार्थमधिकारसमाप्तिफक्किकयाह-

चन्द्रोदयास्तयोःशृङ्गोन्नतिविषयत्वेनोक्तत्वादस्यामेवान्तर्भावोनस्वतन्त्राधिकारत्वमन्यथाग्रहोदयास्ताधिकारेतदुक्त्यापत्तेः । एतेनचन्द्रोदयास्तयोःपौर्णमास्यधिकारत्वंपर्वतोक्तंनिरस्तम् । तत्संज्ञायांप्रमाणाभावादन्यथामावास्याधिकारत्वस्यैवस्तुवचत्वापत्तेरितिध्येयम् ॥ रंगनाथेनरचितेसूर्यसिद्धांतटिप्पणे ॥ शृङ्गोन्नत्यधिकारोऽयंपूर्णोगूढप्रकाशके ॥ इति श्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरंगनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशकेशृङ्गोन्नत्यधिकारःसंपूर्णः ॥ १० ॥

इतिशृङ्गोन्नत्यधिकारः ॥

दशवां अध्याय समाप्त ।

एकादशोऽध्यायः ।

अथपाताध्यायोव्याख्यायते । तत्रभेदद्वयात्मकपातस्यसम्भवंविवक्षुःप्रथमंवैधृतसंज्ञापातस्यसम्भवमाह-

एकायनगतौस्यातांसूर्याचन्द्रमसौयदा ॥
तद्युतौमण्डलेक्रान्त्योस्तुल्यत्वेवैधृताभिधः ॥ १ ॥

सूर्यचन्द्रौ । सूर्याचन्द्रमसौधातायथापूर्वमकल्पयदितिश्रुत्युक्तप्रयोगः । एकायनगतौ । अभिन्नदक्षिणोत्तरान्यतरायनस्थौभवतस्तत्रयदायस्मिनकालेतद्युतौसूर्यचन्द्रयोर्भाद्योर्योगेमण्डलेद्वादशराशिमितेसतितदातयोः क्रान्त्योःसमत्वेमहापातरूपे वैधृतसंज्ञःपातोभवति ॥ १ ॥

भा०टी०-सूर्य और चन्द्रमा जब एक अयनमें होते हैं और दोनोंका स्पष्ट योग १२ राशिके प्रमाणका होता है और क्रान्तिकी समता होती है, तब वैधृतिपात होता है ॥ १ ॥

अथव्यतीपातसंज्ञपातस्यसम्भवमाह-

विपरीतायनगतौचन्द्रार्कौक्रान्तिलिप्तिकाः ॥
समास्तदाव्यतीपातोभगणार्धेतयोर्युतौ ॥ २ ॥

चन्द्रार्कौविपरीतायनगतौभिन्नायनस्थौभवतस्तत्रयदातयोः सूर्यचन्द्रयोर्भाद्योर्योगेभगणार्धेराशिषट्केसति तयोःक्रान्तिकलास्तुल्याभवन्तितदातस्मिन्काले व्यतीपातसंज्ञकः पातोभवति । अत्रोपपत्तिः । समक्रान्तिकालोमहापातकालः ।

तत्रस्पष्टक्रान्त्योरतिवैलक्षण्योपचयापचययोर्नियमाभावाच्चसमकालोदुर्लक्ष्यइतिमध्यमक्रान्त्योः समत्वकालात्पूर्वमपरत्रवाशरवशेनशरसंस्कृतक्रान्तिसमत्वंभवतीतिनिश्चित्यवस्तुभूततत्कालज्ञानार्थंप्रथमंतदासन्नकालस्थमध्यमक्रान्तितुल्यत्वज्ञानमावश्यकंतत्तुसूर्यचन्द्रयोःक्रान्तिसमत्वंभुजतुल्यत्वेसम्भवतिभुजोत्पन्नत्वात्। भुजसमत्वंसूर्यचन्द्रयोःषड्राशिमितियोगेद्वादशराशिमितयोगेवाषड्राशिमितान्तरेऽन्तराभावेवाकुतएवमितिचेच्छृणु। तत्रान्तराभावेद्वयोस्तुल्यत्वेनभुजसाम्येविवादाभावः। एवंषड्भान्तरेऽपीतरयोर्विषमपदस्थयोःसमपदस्थयोर्वाक्रमेणपदगतैष्ययोस्तुल्ययोर्भुजत्वमित्यविवादः। षड्द्वादशराशियोगेतुतयोर्विषमसमपदस्थत्वात्क्रमेणतुल्यगतैष्यत्वेनभुजतुल्यत्वम्। रविगोलायनसन्धिस्थयोस्तुक्रान्तिपरमभावत्वइतितत्रापि तदन्तरयोगयोःषड्द्वादशराश्योर्यथायोग्यसत्त्वात्क्रान्तिसाम्यंसहजतएव। अतएकायनस्थयोर्भिन्नगोलस्थयोर्द्वादशराशियोगएकगोलायनस्थयोरन्तराभावेक्रान्तिसाम्यम्। एवंभिन्नायनस्थयोरेकगोलस्थयोः षड्राशियोगेगोलभेदस्थयोः षड्राश्यन्तरेक्रान्तिसाम्यमितियुताविस्युपलक्षणादन्तरइत्यपिज्ञेयम्। नतुतद्युतौमण्डले भगणार्धेतयोर्युतावित्युक्तेनक्रमेणगोलभेदैक्ययोरन्तरनिरासार्थकोक्तिस्तत्रापिक्रान्ति साम्यत्वेनानिवार्यत्वात्। अत्रैकायनगताविितिविपरीतायनगतावितिचस्वरूपोक्तिरनावश्यकीतिध्येयम्। वस्तुतस्तुसूर्यचन्द्रयोर्द्वादशमितेयोगेऽन्तरेवावैधृताख्यक्रान्तिसाम्यम्। षड्राशिमितेतयोर्योगेऽन्तरेवाव्यतीपाताख्यंक्रान्तिसाम्यमितितात्पर्योक्तिः। अतएवाग्रेभास्करेन्द्वोरित्याद्युक्तंयुक्तमितितत्त्वम् ॥ २ ॥

भा०टी०--विपरीत अयनमें गई हुई चन्द्रमा और सूर्यकी क्रांतिकला समान होनेपर और तिनका स्पष्ट योग ६ राशिके प्रमाणका होनेपर व्यतीपात पात होता है ॥ २ ॥

ननुक्रान्त्योःसाम्येकथंपातोभवतीत्यतआह--

तुल्यांशुजालसंपर्कात्तयोस्तुप्रवहावृतः ॥
तद्दृक्क्रोधभवोवह्निर्लोकाभावायजायते ॥ ३ ॥

तयोश्चन्द्रसूर्य्ययोः। तुकारात्क्रान्तिसाम्यकालिकयोः तुल्यांशुजालसम्पर्कात्समकिरणानांजालंसमूहस्तयोरन्योन्याभिमुखयोःसम्पर्कात्। एकीभावापन्नत्वात्। ताद्दृक्क्रोधभवःसूर्यचन्द्रयोरन्योन्याभिमुखयोर्दृक्क्रोधोबिम्बकेन्द्रयोर्दृग्रूपयोःक्रोधः परस्पराभिमुखेनदीप्त्याधिक्यंतदुत्पन्नोऽग्निःप्रवहावृतःप्रवहवायुप्रज्वलितः। लोकाभावायजनानामशुभफलायजायते ॥ ३ ॥

भा०टी०-दोनोंकी किरणों मिलनेसे दृग्रूप क्रोधसे उत्पन्न अग्नि प्रवह वायुद्वारा प्रज्वलित होकर मनुष्योंको अशुभ फल देता है ॥ ३ ॥

अथायंवह्निर्व्यतीपाताख्योवैधृताख्योवेत्यतआह-

विनाशयतिपातोऽस्मिँल्लोकानामसकृद्यतः ॥
व्यतीपातःप्रसिद्धोऽयंसंज्ञाभेदेनवैधृतिः ॥ ४ ॥

अस्मिन्क्रान्तिसाम्यकाले । प्रसिद्धःपूर्वश्लोकोक्तस्वरूपः । पातोवह्निः । यतः कारणात् । असकृत्स्वसम्भवेनवारंवारम् । लोकानांविनाशयति नाशंकरोति । अतः कारणादयंवह्निर्व्यतीपातसंज्ञोऽयमेवाग्निःसंज्ञाभेदेननामान्तरेणवैधृतिसंज्ञः तथाचोभयत्रपाताख्योवह्निर्भवतीतिभावः ॥ ४ ॥

भा०टी०-क्रान्ति साम्यकालमें सदा पातवह्नि (अग्नि) लोगोंका नाश करती है इसकारण तिसको व्यतीपात कहते हैं, अथवा वैधति संज्ञा होती है ॥ ४ ॥

अथतत्स्वरूपमाह-

सकृष्णोदारुणवपुर्लोहिताक्षोमहोदरः ॥
सर्वानिष्टकरोरौद्रोभयोभूयःप्रजायते ॥ ५ ॥

सक्रान्तिसाम्यकालोत्पन्नउभयसंज्ञकःपाताख्योऽग्निपुरुषः कृष्णःश्यामः । दारुणवपुःकठिनशरीरःलोहिताक्षआरक्तनेत्रः । महोदरःपृथूदरः । अतएवसर्वानिष्टकरः सर्वलोकानामशुभकारकः । रौद्रःक्षयकारकः । भूयोभूयोऽनेकवारम् । प्रजायते । प्रत्येकंक्रांतिसाम्यकालउत्पन्नोभवतीत्यर्थः ॥ ५ ॥

भा०टी०-पीत, कृष्णवर्ण, कठिन शरीर, लाल नेत्र, महोदर, सब लोगोंका अशुभ करनेवाला, क्षयकारी और अनेकवार होता है ॥ ५ ॥

अथस्पष्टकालज्ञानंविवक्षुःप्रथमंतादृशयोः सूर्यचन्द्रयोः सायनांशयोः क्रान्ति साध्येइत्याह-

भास्करेन्द्वोर्भचक्रान्तश्चक्रार्धावधिसंस्थयोः ॥
दृक्तुल्यसाधितांशादियुक्तयोःस्वावपक्रमौ ॥ ६ ॥

सूर्यचन्द्रयोर्दृक्तुल्यसाधितांशादियुक्तयोः प्राक्चक्रंचलितंहीनेछायार्कात्करणागते इत्यादिना दृग्गोचरीभूतंसाधितमंशादिकंतेनसंस्कृतयोरित्यर्थः । एतेनपूर्वसाधारणोक्तिरपिस्पष्टीकृताक्रान्त्योःसायनोत्पन्नत्वात् । भचक्रान्तर्भचक्रंद्वादशराशयस्तन्मध्ये । संस्थयोःस्थितयोःययोर्योगोद्वादशराशयस्तयोरित्यर्थः । चक्रार्धावधिसंस्थयोः । चक्रार्धराशिषट्कंतदवधितदन्तःस्थितयोर्ययोर्योगोराशिषट्कंतयोरित्यर्थः । स्वौस्वकीयौ । अपक्रमौसाध्यौ । सूर्यस्यक्रान्तिः साध्याचन्द्रस्यविक्षेपसंस्कृताक्रान्तिःसाध्येत्यर्थः ॥ ६ ॥

भा० टी०-दृक् तुल्य साधित अंशादि-संस्कृत (अयनांश-संस्कृत) चंद्र सूर्यका स्पष्ट योग जिस समयमें १२ में या ६ राशिके निकट होगा, तिस समयके अपक्रम (क्रान्ति) को निर्णय करना चाहिये ॥ ६ ॥

अथसाधितक्रान्तिभ्यांस्वकालात्स्पष्टपातकालस्यगतैष्यत्वं विशेषंचश्लोकाभ्यामाह-

अथौजपदगस्येन्दोःक्रान्तिर्विक्षेपसंस्कृता ॥
यदिस्यादधिकाभानोःक्रान्तेःपातोगतस्तदा ॥ ७ ॥
ऊनाचेत्स्यात्तदाभावीवामंयुग्मपदस्यच ॥
पदान्यत्वंविधोःक्रान्तिर्विक्षेपाच्चेद्विशुद्ध्यति ॥ ८ ॥

अथसूर्यचन्द्रयोःक्रान्तिसाधनानन्तरम् । चन्द्रस्यविषमपदस्थस्य । विक्षेपसंस्कृताक्रान्तिः । स्पष्टक्रान्तिरित्यर्थः । यदियर्हि । सूर्यस्यविषमसमान्यतरपदस्थस्य साधितक्रान्तेःसकाशादधिकास्यात् । तदातर्हि । पातःस्पष्टक्रान्तिसाम्यात्मकः । गतः । साधितक्रान्तिकालात्पूर्वकालेजातइत्यर्थः । चेद्यर्हि । सूर्यक्रान्तेर्विषमपदस्थचन्द्रस्पष्टक्रान्तिर्न्यूनाभवतितदातर्हिस्पष्टक्रान्तिसाम्यरूपपातः । भावी । साधितक्रान्तिकालादुत्तरकालेभवतीत्यर्थः । ननुविषमपदेचन्द्रोनभवतितदागतैष्यत्वज्ञानंकथंस्यादतआह । वाममिति । युग्मपदस्य । समपदस्थचन्द्रस्येत्यर्थः । चकारात्स्पष्टक्रान्तिःसूर्यक्रान्तेःसकाशादधिकोनावास्यात्तर्हीत्यर्थः । वामम् । उक्तगतैष्यक्रमेणवैपरीत्यम् । एष्यगतत्वंपातस्यभवतीत्यर्थः । अथचन्द्रस्यविशेषमाह । पदान्यत्वमिति । चन्द्रस्यस्पष्टक्रान्तिक्रियायाम् । चेद्यर्हि । चन्द्रस्यविक्षेपसंस्कृतकेवलक्रान्तिर्विक्षेपाद्भिन्नदिक्काद्विशुध्यतिर्हिनाभवति । क्रान्तिवर्जितविक्षेपरूपास्पष्टक्रान्तिर्यदिस्यात्तदेत्यर्थः । पदान्यत्वंराश्यादिचन्द्राधिष्ठितपदभिन्नपदस्थत्वंचन्द्रस्यज्ञेयम् । सायनराश्यादिनासमपदस्थस्यचन्द्रस्यविषमपदस्थत्वम् । सायनराश्यादिनाविषमपदस्थस्यचन्द्रस्यसमपदस्थत्वं तत्पदसम्बन्धास्पष्टाक्रान्तिर्ज्ञेयेत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । विषमपदेक्रान्तिरुपचितासमपदेऽपचिता । अतःसूर्यक्रान्तेर्विषमपदस्थेन्दुक्रान्तिरधिकातदाग्रेसुतरामाधिकत्वाद्रविक्रान्त्युपचयस्यालपत्वाच्च न्यूनयारविक्रान्त्याचन्द्रक्रान्तेःसमत्वमग्रिमकाले न भवति । अतःपूर्वकालेचन्द्रक्रान्तेर्न्यूनत्वाद्रविक्रान्त्यपचयस्यान्यत्वाच्च तत्क्रान्तिसाम्यंजातमित्यनुमितम् । एवंसमपदस्थेन्दुक्रान्तिरूनातदाग्रेसूर्यक्रान्तेर्न्यूनातदाग्रेसुतरांन्यूनत्वात्तत्साम्याभावः । पूर्वत्वाधिकत्वात्तत्समत्वंजातमितिज्ञातम् । यदातुसूर्यक्रान्तेर्विषमपदस्थेन्दुक्रान्त्यधिकत्वेन तत्क्रान्तिसाम्यंभवतिपूर्वतन्न्यूनत्वेतदभावात् । एवंसूर्यक्रान्तेःसमपदस्थेन्दुक्रान्तिरधिकातदाग्रेन्यूनत्वेनतत्साम्यंभवति । अतएवतत्तुल्यत्वेवर्तमानइति । अत्रचन्द्रस्य-

विक्षेपवृत्तंविषुवद्वृत्तेलमंयत्रतत्रस्पष्टक्रान्तेरभावाद्गोलसन्धिः । तस्मात्त्रिभान्तरे-विक्षेपवृत्तेऽयनसन्धिः । स्पष्टक्रान्तिस्तदन्तरालउपचितापचितायनसन्धिस्थक्रान्त्य-नधिका । यदाचन्द्रक्रान्तिर्मध्यमाशरभिन्नदिक्काशरादल्पातदाशराच्छोधनेनस्पष्ट-क्रान्तिर्मध्यमक्रान्तिसम्बन्धपदभिन्नपदसम्बन्धाभवति । अतः "पदान्यत्वंविधोः क्रान्तिर्विक्षेपाच्चेद्विशुध्यति ॥" इतिसम्यगुक्तम् । भास्कराचार्योक्तंच । "चक्रेचक्रार्धे-चव्ययनांशोऽर्कस्यगोलसंधिःस्यात् । एवंत्रिभेचनवभेऽयनसन्धिर्व्ययनतभागेऽस्य ॥ अयनांशोनितपाताद्दोःकोटिज्येलघुज्यकोत्थेये । तेगुणमूर्यैरश्वैर्गुणितेभक्तेकृतैःसूर्यैः॥ अयनांशोनितपातेमृगकर्क्यादिस्थितेहिषड्रामैः । कोटिफलयुतविहीनैर्बाहुफलं-भक्तमाप्तांशैः ॥ मेषादिस्थेगोलायनसन्धीभास्करस्योनौ । तौचन्द्रस्यस्यातांतुला-दिषट्कस्थितेतुसंयुक्तौ ॥ गोलायनसन्ध्यन्तंपदंविधोरत्रधीमताज्ञेयम् । रविगोल-वदस्पष्टस्पष्टाक्रान्तिःस्वगोलदिक्छशिनः॥ इतिपदज्ञानम् । अनेनैवप्रकारेणचन्द्रस्प-ष्टक्रान्तेःपदंज्ञेयंविक्षेपवृत्तसम्बन्धत्वात् । नसाधारणपदज्ञानेनस्पष्टक्रान्तेःक्रा-न्तिवृत्तसम्बन्धाभावात् अन्यथापदज्ञानासम्भवापत्तेः । एतदङ्गीकारेप-दान्यत्वमित्याद्यर्धव्यर्थमपिभगवतातदर्थेनैतादृशं पदंज्ञापितमन्यथातदनुक्त्यापत्ते-रितिदिक् ॥ ७ ॥ ८ ॥

भा०टी०-ओजपदमें स्थित चंद्रमाकी विक्षेप-संस्कृत क्रान्ति रविक्रान्तिसे अधिक होनेपर पात गत हुआ है । अल्प होनेपर भावी है । युग्मपदमें तिस्से विपरीत है । जो विक्षेपसे क्रान्ति अलग करनी हो तो चंद्रमा और पदको प्राप्त करता है ॥ ७ ॥ ८ ॥

अथगतैष्यकालानयनंविवक्षुःप्रथमंस्पष्टक्रान्तिसाम्यानयनप्रकारंश्लोकत्रयेणाह-

क्रान्त्योर्ज्येत्रिज्ययाभिन्नेपरक्रान्तिज्ययोद्धृते ॥
तच्चापान्तरमर्धंवायोज्यंभाविनिशीतगौ ॥ ९ ॥
शोध्यंचन्द्राद्गतेपातेतत्सूर्यगतिताडितम् ॥
चन्द्रभुक्त्याहृतंभानौलिप्तादिशशिवत्फलम् ॥ १० ॥
तद्वच्छशाङ्कपातस्यफलंदेयंविपर्ययात् ॥
कर्मैतदसकृत्तावद्यावत्क्रान्तीसमेतयोः ॥ ११ ॥

सूर्यचन्द्रयोःसाधितक्रांत्योर्ज्येकार्येतेत्रिज्ययागुणिते । परक्रान्तिज्यया । परमापरमज्यातुसप्तरन्ध्रगुणेन्दवः । इतिपूर्वोक्तपरमक्रान्तिज्ययेत्यर्थः । भक्ते । तयोःफलयोर्धनुषीकार्ये । चन्द्रस्ययदात्रिज्याधिकंफलं तदोक्तप्रकारेणा-धनुषोऽसम्भवात्रिज्ययानवत्यंशास्तदेष्टज्ययाकइत्यनुपातेनधनुःकार्य्यमथवात्रिज्या-तोयदधिकंतदुत्क्रमधनुषायुक्ताश्चतुः पञ्चाशच्छतकलाधनुःस्यादितिध्येयम् ।

तयोरन्तरमर्धम् अन्तरार्धम् । वाविकल्पार्थकः । अथवाविषयव्यवस्थार्थकः । सातुयदान्तरमल्पंतदान्तरम् । यदातुबह्वन्तरन्तदान्तरार्धंग्राह्यमिति । भाविनिभविष्यत्पाते । चन्द्रेराश्यात्मके । तत्कलात्मकंयुक्तंकार्य्यम् । गतेपातेसति चन्द्राद्धीनंकार्यंचन्द्रःस्यात् । सूर्य्यसाधनमाह । तदिति । चन्द्रसम्बन्धिसंस्कृतफलम् । स्पष्टसूर्यगत्या गुणितंस्पष्टचन्द्रगत्याभक्तंफलंकलादिकंचन्द्रवत् । चन्द्रयुतहीनक्रमेणसूर्येयुतहीनंकार्येसूर्यः स्यात् । चन्द्रपातसाधनमाह । तद्वदिति । चन्द्रपातस्यफलंकलादिकम् । तद्वत् । चन्द्रफलंपातगत्यागुणितं स्पष्टचन्द्रगत्या भक्तंविपर्ययात् । व्यत्यासात् । देयंसंस्कार्यम् । चन्द्रयुतहीनक्रमेणचन्द्रपातेहीनयुतंकार्यम् । चन्द्रपातःस्यात । उक्तक्रियातिदेशमाह । कर्मेति । एतत् उक्तंकर्मगणितक्रियारूपम् । असकृत् अनेकवारम् । साधितसूर्यात् । सूर्यक्रान्तिमसाध्यसाधितचन्द्रपाताभ्यांचन्द्रस्पष्टक्रान्तिमसाध्यताभ्यांक्रान्तिभ्यांक्रान्त्योर्ज्येइत्यादिनाचापान्तरंतदर्धवातत्क्रान्तिभ्यामवगतगतैष्यपातलक्षणवशात् द्वितीयचन्द्रेहीनयुतंतृतीयचन्द्रःस्यात् । आद्यसूर्यचन्द्रगतिभ्यामवगतसूर्यपातफलंद्वितीयसूर्यपातयोर्यथोक्तंसंस्कृतंतृतीयसूर्यपातौ । एभ्यः सूर्यचन्द्रपातेभ्यःसूर्यचन्द्रक्रांतिभ्यांसाधिताभ्यांचापान्तरंतदर्धवातृतीयचन्द्रेतत्क्रान्त्यवगतगतैष्यपातवशात्संस्कृतंचतुर्थचन्द्रःस्यात् । आद्यसूर्यचन्द्रगत्यवगतस्वफलं संस्कृतौतृतीयसूर्यपातौचतुर्थसूर्यपातौस्तः । एवमेभ्यःपञ्चमाश्चन्द्रसूर्यपाताउक्तरीत्यासाध्याइत्युत्तरोत्तरंमुहुःसाध्याइत्यर्थः । अवधिमाह । तावदिति । यावद्यदवधितयोःसूर्यचन्द्रयोःक्रान्तीस्पष्टक्रान्तितुल्येस्तस्तावत्तदवधिक्रियाकार्येत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । मध्यमक्रान्तिसाम्यरूपपातकालिकस्पष्टक्रान्तिभ्यांस्पष्टक्रान्तिसाम्यरूपंवस्तुभूतपातकालोगतैष्यत्वेनज्ञातोऽपिविशेषतस्तत्कालज्ञानार्थंसूर्यचन्द्रयोः क्रान्तीसमेस्पष्टेउपपन्नेकार्ये । तत्रमध्यपातकालाद्गतैष्यपातवशादभीष्टकालेचन्द्रसूर्यपातान्प्रसाध्यतयोःक्रान्तीसाध्ये । एवंसाधितक्रान्त्योर्यदैवातुल्यत्वंतदैवस्पष्टपातः । अथानियमात्प्रथमंपूर्वाग्रिमकालेचन्द्रसाधनार्थंचन्द्रस्येष्टांशाहीनायोज्याश्चेतिनियताभागाउक्तप्रकारानीताएवेष्टाःकल्पिताः । तथाहि । सूर्यक्रान्तिज्यातः । परक्रान्तिज्ययान्यूनयाचतुर्दशशतमितयात्रिज्यातुल्यादोर्ज्यातदेष्टक्रान्तिज्यायाःकेत्यभीष्टदोर्ज्यायाश्चापंसायनसूर्यभुजएव । एवंचंद्रस्पष्टक्रान्तिज्यातश्चापंसायनसूर्यभुजान्न्यूनमधिकंभवति । क्रांतिसमत्वाभावात् । यद्यपिन्यूनचतुर्दशशताधिकस्पष्टक्रान्तेरुक्तरीत्याभुजज्यायास्त्रिज्याधिकत्वेनचापाकरणमशक्यं तथापि ॥ "त्रिज्याधिकस्यक्रमचापलिप्ताःखखाब्धिबाणाधनुरुत्क्रमात्स्यात् ॥'

इतिसिद्धान्तशिरोमण्युक्तवैपरीत्येनत्रिज्यातोयदधिकंतदुत्क्रमचापयुक्ताश्चतुःपञ्चाशच्छतकलाइत्यनेनचापोत्पत्तौनक्षतिः । एतेनचापासम्भवशङ्कयासार्धाष्टविंशत्यंशानांज्यापरमक्रान्तिज्येति । स्वायनसन्धिस्थस्पष्टक्रान्तिज्याचेतिचनिरस्तम् । ग्रन्थेययोः परमक्रान्तिज्यात्वानुक्तेः । स्पष्टक्रान्तिसाम्यानन्तरमप्युक्तरीत्याकर्मान्तरनिवारणानुपपत्तेश्च । क्रान्त्योस्तुल्यत्वेऽपिहरभेदात्तच्चापान्तरसद्भावेनाक्रियाकुण्ठनासम्भवात् । नह्यसकृत्कर्मणिस्वाभीष्टसिद्ध्यनन्तरंकर्मांतरं सम्भवति । अप्रसिद्धेःस्वरूपव्याघाताच्च । तच्चापयोरन्तरमिष्टांशाश्चन्द्रस्यगतैष्यपातवशाद्धीनयुताअभीष्टचन्द्रोभवति । तदिष्टांशानांबहुत्वेबहुपरिवर्तैरभीष्टसिद्धिरतोऽल्पपरिवर्तैरभीष्टसिद्ध्यर्थंतदर्धमिष्टांशाइति । अथैतेचन्द्रस्येष्टांशा इत्येभ्यश्चन्द्रगतिप्रमाणेनैतेतदासूर्यपातगतिभ्यांकइत्यनुपातेनतयोश्चन्द्रकालिकत्वसिद्ध्यर्थमिष्टांशाएतेसूर्यस्यसंस्कृताश्चन्द्रवदभीष्टसूर्योभवति । पातस्यतुचक्रशुद्धत्वेनविपरीतत्वात्पातेष्टांशाःपातस्यव्यस्तंसंस्कार्या अभीष्टपातोभवति । एभ्यःसूर्यचन्द्रयोःस्पष्टक्रान्तीसाध्ये । तयोरसमत्वउक्तरीत्याचन्द्रस्येष्टांशाएतत्साधितचन्द्रेसंस्कार्याः । नप्रथमचन्द्रे । तत्क्रान्तिजत्वाभावात् । अन्यथासमक्रान्त्यनन्तरमर्पितयोरिष्टांशाभावे प्रथमचन्द्रसूर्यपातानांतत्संस्कृतेऽप्यविकारात्तत्क्रान्त्योर्द्वितीयपरिवर्तक्रान्तिसमत्वेनकर्मान्तरसम्भवात् क्रियाकुण्ठनत्वानुपपत्तेः । अव्यवहितपूर्वग्रहयोजनेत्वन्त्यकर्मणएवासिद्धेः । कर्मान्तरासम्भवाच्च । सूर्यपातयोरिष्टांशास्तुपूर्वचन्द्रसूर्यस्पष्टगतिभ्यामेवस्वल्पान्तरात्कार्याः । अव्यवहितपूर्वकालेस्पष्टगत्यज्ञानात् । एवमसकृत्करणेनक्रान्त्योःसाम्यमुत्तरोत्तरपरिवर्तान्तरेभवत्येवेत्युपपन्नंक्रान्त्योर्ज्येत्यादिश्लोकत्रयम् ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

भा०टी०–दोनोंकी क्रान्तिज्या, त्रिज्यासे गुणकरके परमक्रान्तिज्यासे भाग करनेपर जो दो ज्या हों तिनके धनुका अन्तर तिसको आधापात भावी होनेपर चंद्रमामें योगकरे । पातगत होनेपर सो चंद्रमासे वियोगकरे । ऊपर कहा हुआ फल सूर्यगतिसे भागकरके जो होगा तिसको चन्द्रमाकी नांई सूर्यमें संस्कार करे सूर्यको रीतिके अनुसार पातस्पष्टमें विपरीतरूपसे संस्कार करे । इसप्रकार संस्कार क्रान्तिकी समता न होनेतक असकृत् साधन करे ॥ ९॥ १०॥ ११ ॥

अथक्रान्तिसाम्यंपातइतिस्पष्टंकथयंस्तत्कालज्ञानार्थं साधितक्रान्तिसाम्यसम्बन्धिचन्द्रासन्नार्धरात्रात्पातकालस्यगतगम्यत्वमाह–

क्रान्त्योःसमत्वेपातोऽथप्रक्षिप्तांशोनितेविधौ ॥
हीनेऽर्धरात्रिकाद्यातोभावीतत्कालिकेऽधिके ॥ १२ ॥

सूर्य्यचन्द्रयोःस्पष्टक्रान्त्योःसाम्ये स्पष्टःपातःस्यात् । अथानन्तरम् । स्पष्टपातसम्बन्धी साधितचन्द्रः पूर्वानुसन्धानेनापाततोयद्दिनीयोभवति तदासन्नार्ध-

रात्रकालेस्पष्टचन्द्रोमध्यस्पष्टाधिकारोक्तप्रकारेणसाध्यः । तस्मादर्धरात्रकालिका-च्चन्द्रात्प्रक्षिप्तांशोनितेक्रान्तिचापान्तरेणतदर्धेनवायुतोनिते चन्द्रेस्पष्टक्रान्तिसाम्य-सम्बद्धसाधितचन्द्रेयूनेसतितदर्धरात्रकालात्पातकालोगतः । तात्कालिकेक्रांति-साम्यकालिकसाधितचन्द्रेऽर्धरात्रकालिकचन्द्रादधिकेसतितदर्धरात्रकालात्पातकाल एष्य इत्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । यद्यपिस्पष्टक्रान्तिसाम्यसम्बद्धचन्द्रमध्यक्रांति साम्यकालिकचन्द्राभ्यांवक्ष्यमाणप्रकारेणपातकालस्य मध्यक्रांतिसाम्यकालाद्गतै-ष्यघस्यादिज्ञानंभवतीतिनिकटार्धरात्रिकचन्द्रात्तस्साधनं पुनस्तद्गतैष्यकथनंचगौ-रवम् । आर्धरात्रिकस्पष्टचन्द्रसाधनक्रियाधिक्यात् । तथापिचन्द्रगतेरतिमहत्त्वे नप्रतिक्षणंगतेर्बह्वन्तरेणान्यादृशत्वाद्बहुकालान्तरेबहुकालान्तरितस्पष्टगत्यानीतघ-ट्यात्मकस्यातिस्थूलत्वादासन्नकालेस्वल्पान्तराच्चासन्नार्धरात्रिकःस्पष्टचन्द्रोग्रंथोक्तः सस्पष्टगातिकोऽवश्यमपेक्षितः । अतस्तस्माच्चन्द्रात्स्पष्टक्रांतिसाम्यसम्बद्धचन्द्रस्य-न्यूनाधिकत्वेक्रमेणतदर्धरात्रात्स्पष्टपातोगतैष्यइतिसम्यगुक्तम् । अतएव । " समी पातिश्चयन्तसमीपचालनंविधोस्तुतत्कालजयैवयुज्यते " । इतिभास्कराचार्योक्तं-सङ्गच्छते ॥ १२ ॥

भा०टी०–सूर्य और चन्द्रमाके क्रांतियोंकी समताही पात है। प्रक्षिप्तांश संस्कृत चन्द्र मध्य रात्रिक चन्द्रसे हीन होनेपर मध्यरात्रमें पातगत और तिस कालका चन्द्रमा अधिक होनेसे पातभावी होता है ॥ १२ ॥

अथस्पष्टपातकालज्ञानमाह–

स्थिरीकृतार्धरात्रेन्द्वोर्द्वयोर्विवरालिप्तिकाः ॥
षष्टिघ्नाश्चन्द्रभुक्त्याप्ताःपातकालस्यनाडिकाः ॥ १३ ॥

स्थिरीकृतार्धरात्रेन्द्वोःस्पष्टक्रांतिसाम्यसम्बद्धसाधितासकृत्क्रिया नियतचन्द्रस्त दासन्नार्धरात्रिकस्पष्टचन्द्रः । तयोरुभयोः । अत्रद्वयोरिति पूर्वपदार्थव्यक्तीकर-णाय । अन्यथैकवचनप्रमादाद्याकुलतापत्तेः । अन्तरकलाःषष्ट्यागुणिताअर्ध-रात्रिकचन्द्रस्पष्टकलात्मकगत्याभक्ताःफलम् । पातकालस्यार्धरात्राद्गतैष्यस्पष्टक्रां-तिसाम्यस्यघटिकाभवन्ति । अर्धरात्राद्गतैष्यक्रमेणफलघटीभिः पूर्वमुत्तरत्रस्प-ष्टक्रांतिसाम्यरूपपातःस्यादित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । चन्द्रस्पष्टगत्याषष्टिसावन-घटिकास्तदास्वाभीष्टार्धरात्रकालिकक्रांतिसाम्यकालिकस्पष्टचन्द्रयोरंतरकलाभिःका इत्युपपन्नमुक्तम् । साधितसूर्यस्यप्राथमिकचन्द्रगतिग्रहणेनस्थूलत्वादर्धरात्रिकस्प ष्टसूर्यादुक्तरीत्यापातकालानयनंस्थूलंनोक्तमितिध्येयम् ॥ १३ ॥

भा०टी०–क्रातिसाम्यगत चन्द्रमा और मध्यरात्र चन्द्रमाकी अन्तरकला ६० से गुणकर के चन्द्रभुक्तिद्वारा भागकरनेपर मध्यरात्रसे पातकालके स्पष्टका अन्तर होगा ॥ १३ ॥

अथपातकालस्यस्थित्यर्धानयनमाह–

रवीन्दुमानयोगार्धंषष्टयासङ्गुण्यभाजयेत् ॥
तयोर्भुक्त्यन्तरेणाप्तंस्थित्यर्द्धंनाडिकादितत् ॥ १४ ॥

सूर्यचन्द्रयोश्चन्द्रग्रहणाधिकारोक्तप्रकारेणयेबिम्बमानकलेस्वस्वगतिकलोत्पन्नेतयोरैक्यस्यार्धषष्ट्यागुणयित्वासूर्यचन्द्रयोः कलात्मकस्पष्टगत्योरन्तरेणभजेत् । यल्लब्धंतद्घटिकादिकंस्थित्यर्धपातकालात्पूर्वमपरत्रचस्थित्यर्धकालपर्यन्तंपातस्यावस्थानमित्यर्थः । अत्रोपपत्तिः । सूर्यचन्द्रबिम्बकेन्द्रयोरेकाहोरात्रवृत्तस्थत्वेविषुवद्वृत्तादुभयतस्तुल्यान्तरत्वे वापातमध्यंकेन्द्रसाम्याद्विषुवद्वृत्तात्क्रान्तिसूत्रस्थोमण्डलपरिधिप्रदेशोयआसन्नःसाबिम्बपृष्ठप्रान्तः । दूरस्थस्तुबिम्बाग्रप्रांतः । याम्योत्तरगमनेनपातस्योक्तेः । तत्रशीघ्रबिम्बाग्रप्रान्तमन्दपृष्ठबिम्बप्रान्तयोस्तथात्वेपातारम्भः । सूर्यबिम्बाग्रप्रांतचन्द्रबिम्बपृष्ठप्रांतयोस्तथात्वेपातान्तः । अतआद्यंतकालाभ्यांक्रमेणपूर्वोत्तरकालयोश्चन्द्रार्कबिम्बांतर्गतप्रदेशानां केषामप्युक्तरूपस्थितित्वाभावेनसूर्यचन्द्रयोस्तथाभावात्पाताभावइत्यादिकालमारभ्यांतकालपर्यन्तंसूर्यचन्द्रयोस्तथात्वात्पातस्थितिः पातमध्यकालेक्रान्त्यन्तराभावःपाताद्यन्तकालयोर्मानैक्यार्धतुल्यंक्रांत्यन्तरम् तेनतत्तुल्यांतरस्यापचयकालउपचयकालश्चाद्यंतस्थित्यर्धे । तत्रतत्कालानयनंसूर्यचन्द्रगत्यन्तरेणषष्टिघटिकास्तदामानैक्यखण्डकलाभिः काइत्यनुपातेनोक्तमुपपन्नम् । यद्यपिप्रमाणेच्छयोःसमजातित्वाभावादनुपातोऽसंगतःक्रांतिर्दक्षिणोत्तरांतरस्योपचयापचययोः सूर्यचन्द्रगत्यन्तरस्यपूर्वापरांतरस्योपचयापचयाभ्यामतिविलक्षणत्वात् । तथापिगणितलाघवार्थंभगवतास्वल्पांतरत्वेनानुपातोलोकानुकम्पयांगीकृतइत्यदोषः । भास्कराचार्यैस्तु- । "मानैक्यार्धगुणितंस्पष्टघटीभिर्विभक्तमाद्येन । लब्धघटीभिर्मध्यादादिःप्रागग्रतश्चपातान्तः॥" इतियुक्तमुक्तम् । केचित्तुषष्टिघटिकाभिर्ग्रहान्प्रचाल्यक्रांतिःस्पष्टासाध्या । प्रत्येकंययोरंतरंयोगोवागत्यन्तरमितिभास्कराभिमतमाहुः ॥ १४ ॥

भा०टी०—सूर्य और चन्द्रमाके मान योगार्द्धको ६० से गुणकरके तिसके भुक्त्यन्तरसे भाग करनेपर स्थित्यर्द्ध दण्ड होगा ॥ १४ ॥

अथपातस्यादिमध्यान्तकालानाह--

पातकालःस्फुटोमध्यःसोऽपिस्थित्यर्धवर्जितः ॥
तस्यसम्भवकालःस्यात्तत्संयुक्तोऽन्त्यसंज्ञितः ॥ १५ ॥

स्थिरीकृतार्धरात्रेत्यादिनास्पष्टः पातकालः क्रांतिसाम्यस्यकालआनीतोमध्यसञ्ज्ञोज्ञेयः । समध्यकालआनीतस्थित्यर्धेनहीनस्तस्यपातस्यसम्भवकालआरम्भकालः । अपिःसमुच्चये । तत्संयुक्तः । स्थित्यर्धयुक्तोमध्यकालो-

ऽन्त्यसञ्ज्ञितः पातोभवति । पातस्यान्तकालोभवतीत्यर्थः । अत्रोपपत्तिश्चन्द्रग्रहण-स्पर्शमोक्षवत्स्पष्टा । स्वरूपंतुप्राग्व्यक्तीकृतम् ॥ १५ ॥

भा०टी०-पातकालही मध्य है । तिस्से स्थित्यर्द्ध वियोग करनेपर पातका सम्भवकाल और स्थित्यर्द्ध योग करनेसे अन्त्यकाल होता है ॥ १५ ॥

अथैतज्ज्ञानस्यप्रयोजनंकिमित्यतःपातस्थितिकालोमङ्गलकृत्येनिषिद्धइत्याह–

आद्यन्तकालयोर्मध्यःकालोज्ञेयोऽतिदारुणः ॥
प्रज्वलज्ज्वलनाकारःसर्वकर्मसुगर्हितः ॥ १६ ॥

पातस्यारम्भसमाप्तिसमययोरन्तरालवर्तीसमयः । अत्यन्तंकठिनः । सर्वेषुमङ्गलकृत्येषुनिन्दितोज्ञेयः । अत्रहेतुगर्भविशेषणमाह । प्रज्वलज्ज्वलनाकारइतिदेदीप्यमानाग्निस्वरूपः । तथाचकृतंमंगलकृत्यंभस्मावशेषंस्यादितिभावः ॥ १६ ॥

भा०टी०-सम्भवकालसे अन्त्यतक काल अतिदारुण है; सो देदीप्यमान अग्निस्वरूप और समस्त शुभकर्मोंमें निन्दित है ॥ १६ ॥

ननुपातस्यक्रान्तिसाम्यत्वेनसूक्ष्मकालरूपत्वादागतमध्यकालएवसूक्ष्मःशुभकर्मसुनिन्दितोनपातस्थित्यात्मकस्थूलकालःक्रान्तिसाम्याभावादित्यतआह–

एकायनगतंयावदर्केन्द्वोर्मण्डलान्तरम् ॥
सम्भवस्तावदेवास्यसर्वकर्मविनाशकृत् ॥ १७ ॥

सूर्यचन्द्रयोर्मण्डलान्तरंप्रत्येकंबिम्बैकदेशरूपंयावद्यत्कालपर्यन्तमेकायनगतंतुल्यमार्गस्थितंभवति । तावत्तत्कालपर्यंतम् । एवकारोन्यूनाधिकव्यवच्छेदार्थकः । अस्यपातस्य । सकलशुभकर्मणामाचरितानांनाशकारी । सम्भवउत्पत्तिः । स्थितिरितियावत् । नक्रान्तिसाम्यमात्रंस्थितिरलक्ष्यत्वात् । तथाचविषुवद्वृत्तादुभयतएकतोवाचंद्रार्कबिम्बैकदेशयोःकयोरपितुल्यान्तरेणयावदवस्थानंकेन्द्रावस्थानाभावेऽपिबिम्बसम्बन्धात्पातस्थितिः । अतएव । "तावत्समत्वमेवक्रान्त्योर्विवरंभवेद्यापिबिम्बसम्बन्धात्पातस्थितिः । अतएव । "तावत्समत्वमेवक्रान्त्योर्विवरंभवेद्यावद्विम्बैकदेशजक्रान्त्योः ॥" इतिभास्कराचार्योक्तंयुक्तवत् । मानैक्यार्धादूनंसाम्याद्बिम्बैकदेशजक्रान्त्योः ॥" इतिभास्कराचार्योक्तंयुक्तंतरमितिभावः ॥ १७ ॥

भा०टी०-जितनी देरतक सूर्य और चंद्रमण्डलका कोई अंश एकस्थानमें हो तो सर्व कर्म विनाशकारी इसपातका सम्भव होता है ॥ १७ ॥

नन्वयंकेवलंमंगलनाशकोनशुभकारकइत्यतआह–

स्नानदानजपश्राद्धव्रतहोमादिकर्मभिः ॥

---

१ एककाष्ठागतम् इति पाठान्तरम् । २ कर्मसुइतिवापाठः ।

प्राप्यतेसुमहच्छ्रेयस्तत्कालज्ञानतस्तथा ॥ १८ ॥

व्रतंस्वाभिमतदेवताराधनम् । आदिपदाद्धर्मान्तरम् । इत्यादिपुण्यक्रियाभिस्तत्कालकृताभिः । सुतरामुत्कृष्टंकल्याणमनुष्यैर्लभ्यते । तस्यपातस्यास्थित्यादिकालज्ञानात् । तथासमुच्चये । तेनमहच्छ्रेयःप्राप्यतइत्यर्थः ॥ १८ ॥

भा०टी०–पातकालको जानकर स्नान, दान, जप, श्राद्ध, व्रतहोमादि कार्य करनेसे महान् श्रेष्ठफल प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

अथपातविशेषमाह–

रवीन्द्वोस्तुल्यताक्रान्त्योर्विषुवत्सन्निधौयदा ॥
द्विर्भवेद्धिस्तदापातःस्यादभावोविपर्ययात् ॥ १९ ॥

यदायस्मिन्कालेविषुवन्निकटेक्रान्त्यभावासन्ने । अत्रचन्द्रस्यस्पष्टक्रान्त्यभावासन्नत्वंध्येयम् । सूर्यचन्द्रयोःक्रान्त्योःसमताभवति । तदातस्मिंस्तदासन्नकालेस्थूलरूपे क्रान्त्यभावादुभयत्रद्विर्वैधृतव्यतीपातभेदद्वयात्मकःपातः । द्विः प्रत्येकंद्विधावारद्वयंभवेत् । विपर्ययादुक्तव्यत्यासात् । चान्द्रायणसन्निधिनिकटेतयोः क्रान्त्योस्तुल्यत्वइत्यर्थः । अत्रातुल्यत्वंसूर्यक्रान्तितश्चन्द्रस्पष्टक्रान्तेर्न्यूनत्वमेवनाधिकत्वमितिध्येयम् । अभावः क्रान्तिसाम्यरूपपातस्यतस्मिंस्थूलकालेकिञ्चिन्मितेऽनुत्पत्तिःस्यात् । एतेन ॥ "स्वायनसन्धाविन्दोः क्रान्तिस्तत्कालभास्करक्रान्तेः । ऊनायावत्तावत्क्रान्त्योःसाम्यंतयोर्नास्ति ॥" इतिभास्कराचार्योक्तंसङ्गच्छते । तत्साधनंतुप्रथमागतचापान्तरादिष्टांशाश्चन्द्रेयुताहीनाइतिप्रत्येकमसकृत्क्रिययाद्विधापातकालस्यज्ञेयम् । अत्रोपपत्तिः।व्यतीपातेविषुवद्वृत्तादुभयस्तुल्यान्तरेणसूर्यचंद्रयोरवस्थितिकालेऽपिपातत्वम् । क्रान्तिसाम्यादेववैधृतेऽप्येकाहोरात्रवृत्तस्थत्वकालेपातत्वम् । एवमेववियोगव्यतीपातवैधृतयोरप्येकाहोरात्रवृत्तस्थत्वेविषुवद्वृत्तादुभयतस्तुल्यान्तरावस्थितौचपातत्वम् । क्रान्तिसाम्यादियुक्तगोलसिद्धंचन्द्रगोलसन्धिनिकटेप्रत्यक्षम् । अभावोपपत्तिस्तु । चन्द्रस्यस्वायनसन्धौतत्स्पष्टक्रान्तितुल्यंपरमांविषुवद्वृत्ताद्दक्षिणोत्तरंगमनंभवत्यस्मादग्रेपृष्ठेवाविक्षेपवृत्तेर्भ्रमतश्चन्द्रस्यक्रान्तिर्न्यूनैवसम्भवत्यतः स्वायनसन्धिस्थचन्द्रकालिकसूर्यक्रान्तिः स्वायनसंधिस्थचन्द्रस्पष्टक्रान्तेरधिकातदेष्टचन्द्रक्रान्तेर्न्यूनत्वेनाधिकसूर्येष्टक्रान्त्यासमत्वानुत्पत्तिः । सूर्यस्यचन्द्रात्पगमनत्वात्क्रान्त्यपचयस्यापिचन्द्रक्रान्त्यपचयात्पत्वसम्भवात् । सूर्यक्रान्त्युपचयेतुसुतरांतदसम्भवः । एवंतत्रत्यसूर्यक्रान्तिर्न्यूनातदापचयाधिक्याच्चन्द्रस्पष्टक्रान्तिस्तत्समा तदुत्तरपूर्वकालेसम्भवति । सूर्यक्रान्त्युपचयेतुसुतराम् । तथाचद्वितीयरविगोलस-

न्यासन्नेचन्द्रपातंस्वायनसन्ध्यासन्नेसूर्येचतदसम्भवः कियंतिचिद्दिनानीतियावत्ता वदुक्तमन्यत्रसत्सम्भावनाभवतीतिगोलयुक्त्याफलितम् । अथासम्भवलक्षणेऽपि क्रान्त्यन्तरस्यमानैक्यखण्डादल्पत्वे । "एकायनगतंयावदर्केन्द्वोर्मण्डलान्तरम् ॥" इतिपूर्वोक्तेनपातसम्भवः । तत्रपातमध्यंतस्मिन्नेवकालेस्थित्यर्धंतुरवीन्दुमानयोगार्ध मित्युक्तरीत्यामानयोगार्धमितिस्थानेक्रान्त्यन्तरमानैक्यखण्डयोरन्तरंगृहीत्वासाध्य- मितिध्येयम् ॥ १९ ॥

भा० टी०-विषुवत् निकटके चंद्रमा सूर्यकी क्रान्तिकी तुल्यता होनेपर दो पात दो वार होते हैं, नहीं तो दोनोंकाही अभाव होता है ॥ १९ ॥

अथशुभकार्येमहापातस्यानिषिद्धत्वोक्तिप्रसंगात्पञ्चाङ्गान्तर्गतयोगान्तर्गतव्यती- पातस्यैवज्ञानमाह-

शशांकार्कयुतेर्लिप्ताभभोगेनविभाजिताः ॥
लब्धंसप्तदशान्तोऽन्योव्यतीपातस्तृतीयकः ॥ २० ॥

अयनांशसंस्कृतयोश्चन्द्रसूर्ययोर्योगस्यराश्यादेःकलाअष्टशतेनभक्ताः फलंसप्तद- शान्तः । सप्तदशमध्येषोडशानन्तरंसप्तदशपर्यन्तमित्यर्थः । तदपिव्यतीपातः । अन्यएतदधिकारपूर्वोक्तातिरिक्तः । तृतीयएवतृतीयकः । सूर्यचन्द्रयोगान्तराभ्यां व्यतीपातद्वैविध्यात् । एवमुपलक्षणादुक्तरीत्याफलंषड्विंशत्यनन्तरंसप्तविंशति स्तदातृतीयोवैधृतिः । तत्सञ्ज्ञपातस्यापियोगान्तराभ्यांद्वैविध्यादिति । अत्रो- पपत्तिः । विष्कम्भादिर्व्यतीपातःसप्तदशोयोगइति ॥ २० ॥

भा०टी०-चंद्रमा और सूर्यकी कला मिलाकर ८०० से भाग करनेपर भागफल १७ अन्तमें (निकट) होनेपर व्यतीपात नामक तीसरा पात होताहै ॥ २० ॥

अथप्रसङ्गादेतत्तुल्यनिषिद्धेगण्डान्तभसन्धीविवक्षुस्तयोःस्वरूपज्ञानमाह-

सार्पेन्द्रपौष्णधिष्ण्यानामन्त्याःपादाभसन्धयः ॥
तदग्रभेष्वाद्यपादोगण्डान्तंनामकीर्त्यते ॥ २१ ॥

आश्लेषाज्येष्ठारेवतीनक्षत्राणामन्त्याश्चतुर्थाश्चरणाःनक्षत्रसन्धयोभवंति । तदग्र- भेषुतेषामाश्लेषाज्येष्ठारेवतीनक्षत्राणामग्रिमनक्षत्रेषुमघामूलाश्विनीनक्षत्रेष्वित्यर्थः । प्रथमचरणोगण्डान्तंनामप्रसिद्धमुच्यते । यद्यप्याश्लेषाज्येष्ठारेवतीनक्षत्राणामन्ति- मंघटिकाद्वयंमघामूलाश्विनीनक्षत्राणामादिमंघटिकाद्वयमितिचतस्रोन्तरघटिकागंडा न्तम् । एतदतिरिक्तोनक्षत्रसन्धिःपूर्वनक्षत्रान्तरघटिकोत्तरनक्षत्रादिमघटिकेत्यन्त- रालघटिकाद्वयंचन्द्रमण्डलसम्बन्धेनघटिकाःसार्द्धद्वयमितिसंहिताविरुद्धंतथापिसूर्यो क्तस्यस्वतःप्रामाण्यान्नक्षतिः । अथवैकवाक्यतार्थपादशब्दः करनेत्रादिवाह्निसङ्ख्या

वाचकः । घटिकाइत्यध्याहारश्च । तथाचद्विसङ्ख्यामिताअन्त्यघटिकानक्षत्र-सन्ध्यः । प्रथमद्विघटिकामितःकालोगण्डान्तमित्यर्थः । अत्रापिगण्डान्तत्वा-द्भसंधिकथनमयुक्तंगण्डान्तस्यतदन्तरालरूपत्वात्तथापितत्कालस्यनिषिद्धत्वोक्तिता-त्पर्याद्विभागद्वयेनोक्तावपितदन्तरालकालउत्तरोत्तरं कालस्यातिनिषिद्धत्वमूचना-न्नक्षतिः ॥ २१ ॥

भा०टी०-आश्लेषा, ज्येष्ठा, रेवतीका चौथा चरण भसन्धि और अश्विनी मघा और मूलका आदिपाद गण्डान्त है ॥ २१ ॥

अथैतदधिकारोक्तानांतुल्यनिषिद्धत्वमाह-

व्यतीपातत्रयंघोरंगण्डान्तत्रितयंतथा ॥
एतद्भसन्धित्रितयंसर्वकर्मसुवर्जयेत् ॥ २२ ॥

व्यतीपातानांत्रयंयोगवियोगात्मकौक्रान्तिसाम्यरूपौद्वौव्यतीपातौ । विषुवत्स-न्निधौक्रान्तिसाम्यान्तरेणव्यतीपातस्तयोरेवभेदः । नपृथक् । पञ्चाङ्गान्तर्गतयोगा-न्तर्गतव्यतीपातश्चेतित्रयंस्पष्टम् । उपलक्षणाद्वैधृतित्रयमपि । योगवियोगात्मकौ क्रान्तिसाम्यरूपौद्वौवैधृतिसञ्ज्ञौ । विषुवत्सन्निधौक्रान्तिसाम्यान्तरेण । वैधृतिसञ्ज्ञ-स्तुतयोरन्तर्गतः । नपृथक् । पञ्चाङ्गान्तर्गतयोगान्तर्गतवैधृतियोगश्चेतिस्पष्टं त्रयम् । केचित्तुव्यतीपातवैधृतिसञ्ज्ञंव्यतीपातद्वयंसंज्ञाभेदेनवैधृतिरितिपूर्वमुक्तेः पञ्चाङ्गान्त-र्गतयोगान्तर्गतव्यतीपातश्चेतिव्यतीपातत्रयमितियथाश्रुतमाहुः । घोरंदुष्टंगण्डान्त त्रयम् । तथाघोरंनक्षत्रसन्धित्रयम् । एतत्पूर्वोक्तघोरम् । अतःकारणात्सर्वमाङ्गल्य कर्मसुशुभेच्छुरेतद्दुष्टंजह्यादित्यर्थः ॥ २२ ॥

भा०टी०-तीन, व्यतीपाततीन गण्डान्त, और तीन सन्धिगतकाल अतिदूषितहैं । इन्हें सब कर्मोंमें त्यागै ॥ २२ ॥

अथार्कांशपुरुषःशिष्टावशिष्टंस्ववाक्यमुपसंहरति-

इत्येतत्परमंपुण्यंज्योतिषांचरितंहितम् ॥
रहस्यंमहदाख्यातंकिमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ २३ ॥

हेमय तुभ्यमिति । एवमेतत । शृणुष्वैकमनाइत्यादिसर्वकर्मसुवर्जयेदित्यन्तं ज्योतिषांग्रहनक्षत्रादीनांचरितंमाहात्म्यंगणितादिज्ञानमितियावत् । हितमिह लोकेकीर्तिकरं परमंपुण्यंपरत्र लोकउत्कृष्टंधर्म्यम् । अतएवमहद्रहस्यम् । अतिगोप्यमाख्यातंमयाकथितम् । अथस्वोक्तंयुक्त्यप्रतिपादितमेतस्यमनासिनिश्चि तार्थनागतमितितदधरोष्ठस्फुरणदर्शनादनुमितंचास्मैमत्सङ्कोचेनस्वाशङ्कोद्घाटनाश-क्तायैतत्प्रश्नप्रतीक्षावसानेमयायुक्त्यापिवक्तव्यमित्याशयेनाह । किमिति । अतःपरं त्वमन्यदुक्तातिरिक्तंकिं कतरत् श्रोतुंज्ञातुमिच्छसि । तथाचमयातुभ्यंपूर्वमुक्तं

तत्रयत्रयत्रतवसंशयस्तत्रतत्रमत्संङ्कोचमुपेक्ष्यमांप्रतिप्रश्नस्त्वयाकार्यः । तवसमाधानंकरिष्यामीतिभावः ॥ २३ ॥

भा०टी०-इससमय परमपवित्र ज्योतिष्क वर्गका महान् और हितकर रहस्य कहा। अब क्या श्रवण करना चाहते हो ॥ २३ ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यप्रतिपादिताधिकारासंगतित्वपरिहारायारब्धाधिकारसमाप्तिंफक्किकयाह-

इतिस्पष्टम् । दशभेदंग्रहगणितामितिदशाधिकारात्मकग्रन्थपूर्वार्धं पाताधिकारसमाप्त्यासमाप्तमितितुपाताधिकारान्तस्थेनेत्येतत्परमंपुण्यमित्यादिश्लोकेनैवसूचितम् । रंगनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे । पाताधिकारःपूर्णोयं तद्गूढार्थप्रकाशके ॥ सूर्यसिद्धान्तगूढार्थप्रकाशकमिदंदलम् । रंगनाथकृतंदष्ट्वालभन्तांगणकाःसुखम् ॥

इति श्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरंगनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशकेपूर्वखण्डंपरिपूर्तिमगमत् ।

इतिसूर्यसिद्धान्तेपाताधिकारः ॥

एकादश अध्याय समाप्त ।

इति पूर्वखण्डम् ।

अथोत्तरखण्डे द्वादशोऽध्यायः ।

महादेवंवक्रतुण्डंवाणींसूर्यंप्रणम्यच । कृष्णंगुरुंरङ्गनाथोव्याख्याम्युत्तरखण्डकम् ॥ अथमुनीन्प्रतिसूर्यांशपुरुषवचनमनुवाद्यानन्तरंमयासुरेणसूर्यांशपुरुषःपृष्टइत्याह-

अथार्कांशसमुद्भूतंप्रणिपत्यकृताञ्जलिः ॥
भक्त्यापरमयाभ्यर्च्यपप्रच्छेदंमयासुरः ॥ १ ॥

अथ सूर्यांशपुरुषवचनश्रवणानन्तरंमयासुरोमयनामाश्रोतादैत्यःकृताञ्जलिः रचितहस्ताग्राञ्जलिपुटः। अर्कांशसमुद्भतंसूर्यांशोत्पन्नंपुरुषंस्वाध्यापकंगुरुंपरमयोत्कृष्टयाभक्त्या। आराध्यत्वेनज्ञानरूपया। अभ्यर्च्यसम्पूज्य । प्रणिपत्यनमस्कृत्य । समुच्चयार्थश्चकारोत्रानुसन्धेयः। इदंवक्ष्यमाणंपप्रच्छपृष्टवान् ॥ १ ॥

भा०टी०-इसके उपरान्त मयासुरने सूर्यके अंशसे उत्पन्न हुए पुरुषको हाथ जोड परमभक्ति सहित प्रणाम करके यह पूछा ॥ १ ॥

अथकिम्पप्रच्छेत्यतस्तत्प्रश्नानुवादेप्रथमंतत्कृतंभूप्रश्नमाह-

भगवन्किम्प्रमाणाभूःकिमाकाराकिमाश्रया ॥
किंविभागाकथंचात्रसप्तपातालभूमयः ॥ २ ॥

हेभगवन्भूर्भूमिःकिम्प्रमाणाकियत्प्रमाणंयस्याःसा । किमाकारा कथमाकारः स्वरूपंयस्याःसा । किमाश्रयाकआश्रयोयस्याःसा । किंविभागाकथंविभागा-विभक्तांशायस्याःसा । अत्रभूम्यांपातालभूमयःपातालविभागरूपाआश्रयाः सप्त-सङ्ख्याकाःकथंतिष्ठन्ति । चःसमुच्चयार्थः । किमाकारेत्यादौप्रत्येकमन्वेति । अयमभिप्रायः । योजनानिशतान्यष्टावित्यादिनावगतभूमानंपञ्चाशत्कोटिविस्ती-र्णेतिसर्वजनावगतभूमानाद्भिन्नमिति । त्वदुक्तभूमानेसंशयात्किम्प्रमाणेतिप्रश्नः । अन्यथापूर्वभूमानकथनात् । प्रश्नवैयर्थ्यापत्तेः । उक्तश्रुतत्वापत्तेश्च । एवंलम्ब-ज्याघ्नइत्यादिनास्पष्टपरिध्यन्तरसम्भवात्सर्वजनावगतादर्शाकारतायांभूमौ तदस-म्भवेनभवदभिमतत्वाकारस्तदातिरिक्तइतिकिमाकारेतिप्रश्नः । एवंतेनदेशान्तरा-भ्यस्तेत्यादिनाग्रहाणांभूम्यभितोभ्रमणसूचनादाधारेशेषादौतेषामभितोभ्रमणास-म्भवेनाधारेसंशयात्किमाश्रयेतिप्रश्नः । निराधारायाअवस्थानासम्भवात् । एतेनसर्वजनावगतभूस्वरूपातिरिक्तभूस्वरूपेणोत्तरार्धप्रश्नावपिप्रसङ्गादुक्तौसङ्गता-विति ॥ २ ॥

भा०टी०-हे भगवन्! इस पृथ्वीका परिमाण क्या है? आकार कैसाहै? किसके आश्रयसे टिकी है? क्या २ विभाग हैं। और किसप्रकारसे इसमें सप्तपाताल और भूमि है ॥ २ ॥

अथकिमाश्रयेतिप्रश्नकारणेभूम्यभितोग्रहभ्रमणेसूर्यस्योपलक्षणत्वेनप्रश्नावाह-

अहोरात्रव्यवस्थांचविदधातिकथंरविः ॥
कथंपर्येतिवसुधांभुवनानिविभावयन् ॥ ३ ॥

सूर्यः । अहोरात्रव्यवस्थांदिनरात्र्योर्विवेकंकथंकेनप्रकारेणविदधातिकरोति । अयंभावः।आदर्शाकारभूम्यामध्येमेरुस्तदभितोभूम्युपरिप्रदक्षिणतयासूर्यभ्रमणेनस्व-दृश्यविभागेसूर्येदिनंस्वादृश्यविभागेरात्रिरितिसर्वजनावगताद्भवदभिमतं सूर्यभ्रम-णंभिन्नंतर्हित्वन्मतेसूर्योदिनंरात्रिंचव्यवधायकाव्यवधायकौविनाकथंकरोति । अन्ये-ग्रहाअपिकथंस्वदिनंस्वरात्रिंचकुर्वंति । सूर्योपलक्षणत्वादिति अथभूम्यभिमितोभ्रम-णांगीकारेभूरेवव्यवधायिकेत्यहोरात्रव्यवस्थायुक्तैवेत्यतःप्रश्नान्तरमाह । कथमिति । सूर्योभवनानिवक्ष्यमाणस्वरूपाणि विभावयन् प्रकाशयन् सन्वसुधांपृथ्वींकथंकेन प्रकारेणपर्येतिप्रदक्षिणतयाभ्रमति । भूमेर्निराधारावस्थानासम्भवेनसाधारत्वेभूम्य-भितोग्रहभ्रमणमाधारेबाधितिमितभावः ॥ ३ ॥

भा०टी०-और सूर्यनारायण किसप्रकारसे दिनरातकी व्यवस्था करते हैं ? भुवनगणप्रकाश करके पृथ्वीपर कैसे पर्यटन करते हैं ? ॥ ३ ॥

प्रश्नावाह-

देवासुराणामन्योन्यमहोरात्रंविपर्ययात् ॥
किमर्थंतत्कथंवास्याद्धानोर्भगणपूरणात् ॥ ४ ॥

पूर्वार्धपूर्वार्धेव्याख्यातम् । किमर्थंकोऽर्थोऽभिप्रायोयस्यतदित्यहोरात्रविशेषणम् । देवासुरयोर्दिनंरात्रिश्चाभिन्नाकथंनोक्ताव्यत्यासेनियामकाभावादितिभावः । तद्देवासुरयोरहोरात्रंसूर्यस्यद्वादशराशिभोगादित्यर्थः । कथंकुतः । वाकारः समुच्चयेभवति । उभयत्रनियामकाभावादुभयत्रममसन्देहः । दिनरात्र्योःसूर्यदर्शनादर्शननियामकत्वाद्यत्रसूर्यंषण्मासावधिदेवाःपश्यंतितत्रासुरानपश्यंति । यत्रदेवाः षण्मासावधिनपश्यन्तितत्रासुराः पश्यन्तीत्यहंभगवताबोधनीय इतिभावः ॥ ४ ॥

भा०टी०-देवता व असुराक दिनरात परस्पर विपरीत क्यों हैं ? और यह क्यों सूर्यकी १२ राशियोंके भ्रमणकी समानहैं ॥ ४ ॥

अथप्रश्नान्तरेपूर्वोक्तश्लोकद्वयस्यतात्पर्यप्रश्नंचाह-

पित्र्यंमासेनभवतिनाडीषष्ट्यातुमानुषम् ॥
तदेवकिलसर्वत्रनभवेत्केनहेतुना ॥ ५ ॥

पितृणामिदमहोरात्रंमासेनवर्षादधिकचान्द्रमासेनकेनहेतुनेत्यस्यप्रत्येकंसमन्वयात् । केनकारेणनभवति । अन्यथाप्रश्नानुपपत्तेःसावनघटीषष्ट्यामानुषंमनुष्याणामहोरात्रंकेनकारणेनभवतीत्यर्थः । नचयथा दिव्यन्तदहरुच्यतइत्युक्तंतथापूर्वोक्तेपित्र्यमानुषाहोरात्रयोरनुक्तेःप्रश्नावसङ्गतावितिवाच्यम् । दिव्यंतदहरुच्यतइत्यनेनैवपूर्वोक्तसावनाहोरात्रचान्द्रमासयोस्तदहोरात्रसूचनात् । दिव्यमित्यत्रपितृणामनुक्तेः सूर्यसावनाहोरात्रस्यमानुषाहोरात्रत्वेनतेषामपिप्रत्यक्षत्वाच्चपरिशेषान्मासस्यैवपित्र्याहोरात्रत्वसिद्धेः । ननुतथापिप्रत्यक्षसिद्धमानुषाहोरात्रेप्रश्नोऽनुपपन्नएवेत्यतस्तात्पर्यप्रश्नमाह । तदेवेति । तन्मानुषाहोरात्रम् । एवकारस्तदन्यनिरासार्थकः । सर्वत्रसर्वलोकेकिलनिश्चयेन केनकारणेननस्यात् । पितृदेवदैत्यानाममत्यक्षमहोरात्रंकथमङ्गीकृतम् । कथंचमानुषाहोरात्रं प्रत्यक्षसिद्धंतेषामपिनोक्तमित्यर्थः ॥ ५ ॥

भा०टी०-पितृदिन एकमासका, और मनुष्योंका ६० घड़ीका दिन होता है, दिनरात सबके लिये एकसे क्यों नहीं होते ? दिन, अब्द, मास और होराके अधिपति एकप्रकारके क्यों नहीं होते ॥ ५ ॥

अथाहर्गणादवगतदिनमासवर्षेश्वरेषुतत्प्रसङ्गाद्धोरेश्वरप्रश्नंपश्चाद्भजन्तोऽतिजवादित्यत्रप्रश्नद्वयंचाह-

दिनाब्दमासहोराणामधिपानसमाःकुतः ॥
कथंपर्येतिभगणःसग्रहोऽयंकिमाश्रयः ॥ ६ ॥

दिनवर्षमासहोराणांस्वामिनोऽभिन्नाःकुतःकस्मान्नभवन्ति । यथादिनाधिपतित्वंसूर्यादीनांक्रमेणतथाप्रथमादिमासवर्षक्रमेणसूर्यादीनांक्रमेणमासवर्षाधिपत्वंयुक्तम् । आनयनेयुक्त्यप्रतिपादनादितिभावः यद्यपिपूर्वंहोरेश्वरानयनंनोक्तमितितत्प्रश्नोऽसंगतस्तथापिलोकेप्रसिद्धतरोहोरेश्वरस्त्वयाकिमर्थंनो क्तइतितत्प्रश्नतात्पर्यमितिध्येयम् । द्युगणोनक्षत्रसमूहसग्रहोग्रहसहितःकथंकेनप्रकारेणपर्येतिभ्रमति । नक्षत्राणिग्रहाश्चकेनप्रयुक्ताःसन्तोभूम्यभितोभ्रमन्तीत्यर्थः । अथैषामन्तरिक्षावस्थानेऽपिप्रश्नमाह । अयमिति । सग्रहोभगणोदृश्यमानः किमाश्रयःकआधारोयस्येति । विनाधारमन्तरिक्षावस्थाननंसम्भवतीत्यर्थः ॥ ६ ॥

भा०टी०-भगण किस प्रकारसे ग्रहादिके साथ प्रदक्षिणा करते हैं और उनका आश्रय क्या है ? ॥ ६ ॥

ननुकक्षाएवाधाराःपूर्वतत्रैवस्वमार्गगाइत्युक्तेरित्यतःकक्षाणांप्रश्नचतुष्टयमाह-

भूमेरुपर्युपर्यूर्ध्वाःकिमुत्सेधाःकिमन्तराः ॥
ग्रहर्क्षकक्षाःकिम्मात्राःस्थिताःकेनक्रमेणताः ॥ ७ ॥

भूमेः सकाशादूर्ध्वमुच्चाग्रहर्क्षकक्षाग्रहनक्षत्राणामाकाशे मार्गाःकिमुत्सेधाःकियानुत्सेधउच्चतायासांताः । भूमेःसकाशाद्ग्रहनक्षत्रमार्गकक्षाः कियदन्तरेण संतीत्यर्थः । किमन्तराःकियदन्तरालंयासांताः । उत्तरोत्तरमुच्चाअपिपरस्परंतासांकियदन्तरालमित्यर्थः । किम्मात्राःकिमात्मिकाः । किंस्वरूपाः किंप्रमाणावा । ताग्रहनक्षत्रकक्षाःकेनक्रमेणाधिष्ठिताःसन्ति । पूर्वकस्तदुत्तरंकइत्यादिक्रमोनज्ञातइत्यर्थः ॥ ७ ॥

भा०टी०--पृथिवीसे ग्रहोंकी कक्षा कितनी ऊंची है ? परस्परमें अन्तर कितना है ? परिमाण क्या है ? और वह किसप्रकारसे स्थित हैं ? ॥ ७ ॥

अथानुभवप्रश्नंतत्प्रसङ्गात्सूर्यकिरणप्रचारप्रश्नंचपूर्वोक्तमानानांप्रश्नद्वयं चाह-

ग्रीष्मेतीव्रकरोभानुर्न हेमन्तेतथाविधः ॥
कियतीतत्करप्राप्तिर्मानानिकातिकिंचतैः ॥ ८ ॥

ग्रीष्मर्तौसूर्योयथातीक्ष्णांकरणउष्णकिरणस्तथा विधस्तादृशोहेमन्तेनभवतीति किम् । सूर्यस्यकिरणानांप्राप्तिर्गमनपद्धतिःकियतीकियत्प्रमाणा । मानानिना-क्षत्रसावनचान्द्रसौरादीनिपूर्वोक्तानिकातिकियन्ति । उपक्रमएवसंक्षेपेणमानान्यु-क्तानीतितत्त्वंसम्यङ्नज्ञातमित्यर्थः । तैर्मानैःकिंप्रयोजनम् । चःसमुच्चयार्थः । प्रत्येकमन्वेति ॥ ८ ॥

भा०टी०-ग्रीष्ममें सूर्यकी किरणें तीव्र होती हैं; और हेमन्तमें तैसी नहीं होतीं; तिन-की करप्राप्तिका नियम क्या है? कितने प्रकारके मान हैं? और तिनका प्रयोजन क्या है?॥ ८॥

अथास्यप्रश्नमुपसंहरति-

एतंमेसंशयंछिन्धिभगवन्भूतभावन ॥
अन्योनत्वामृतेछेत्ताविद्यतेसर्वदर्शिवान् ॥ ९ ॥

हेभगवन्षड्गुणैश्वर्यसम्पन्न । सर्वबोधकेतितात्पर्यार्थः । भूतभावनभूतस्या-तीतकालस्यभावनाविचारोयस्य । भूतस्योपलक्षणाद्वर्तमानभविष्यतोरपिकाल-ज्ञेतिसिद्धोऽर्थः । त्वंमेमम । एतमुक्तंसंशयम् । जात्यभिप्रायेणैकवच-नम् । तेनमत्कृतान्प्रश्नानित्यर्थः । छिन्धिच्छेदय । नन्वहमिदानीमेतदु-क्त्यैववक्तुंनशक्नोम्यन्यस्मात्संशयान्दूरीकुर्वित्यतआह । अन्यइति । त्वामृते-विना । अन्यःसर्वदर्शिवान्सर्वद्रष्टा । सर्वज्ञइत्यर्थः । छेत्तासंशयापनोदकः । नविद्यतेनास्ति । तथाचैतावत्कालपर्यंतंयथोक्तंतथान्यदपिकृपयावक्तव्यमि-तिभावः ॥ ९ ॥

भा०टी०-हे भूतभावन भगवन्! मेरे यह समस्त सन्देह दूर कीजिये आपके सिवाय सर्व-दर्शी और संशयका छेदन करनेवाला कोईभी नहीं है ॥ ९ ॥

अथमुनीन्प्रतिमुनिर्मयासुरोक्तप्रश्नानुवादंकृत्वासूर्यांशपुरुषोमयासुरंप्रतिपुनर्वद-तिस्मेत्याह-

इतिभक्त्योदितंश्रुत्वामयोक्तंवाक्यमस्याहि ॥
रहस्यंपरमध्यायंततःप्राहपुनःसतम् ॥ १० ॥

ससूर्यांशपुरुषः । इतिपूर्वोक्तम् । भक्त्याराध्यज्ञानेन । उदितमुत्पन्नम् । मयेनकथितंवचनंश्रुत्वाऽऽकर्ण्य । पुनर्द्वितीयवारंततःपूर्वार्धोक्त्यनन्तरंतंमयासुरंप्र-तिपरंद्वितीयमध्यायंग्रन्थम् । ग्रन्थस्योत्तरखण्डमित्यर्थः । अस्यग्रन्थपूर्वखण्डस्य हिनिश्चयेनरहस्यंगोप्यत्वेनतत्त्वभूतंमाह । प्रकर्षेणावददित्यर्थः ॥ १० ॥

भा०टी-भक्तिभावसे कहे हुए मयके वचन सुनकर सूर्यांश पुरुष फिर परमध्यायरहस्य कहते हुए ॥ १० ॥

अथसूर्यांशपुरुषवचनानुवादेसूर्यांशपुरुषो मयासुरंप्रतिमदुक्तंसावधानतयाश्रोतव्यमित्याह-

शृणुष्वैकमनाभूत्वागुह्यमध्यात्मसञ्ज्ञितम्
प्रवक्ष्याम्यतिभक्तानांनादेयंविद्यतेमम ॥ ११ ॥

यतःकारणात् । अतिभक्तानामत्यन्तमद्भजनकारकाणांभवादृशांममसूर्यस्य पुरुषस्य । अदेयमदातव्यंवस्तुनविद्यते । अतःकारणादहंत्वांप्रतिगुह्यंगोप्यमध्यात्मसञ्ज्ञितमध्यात्मज्ञानसञ्ज्ञं यत्प्रवक्ष्यामिकथयिष्यामितत्त्वमेकमनाएकस्मिन्मदुक्तेमनोविद्यतेयस्यासौभूत्वाशृणुष्वश्रोत्रद्वारात्मनः संयोगेनप्रत्यक्षंकुर्वित्यर्थः ११

भा०टी०-अच्छा तो गुप्त अध्यात्मतत्त्वको कहता हूं तुम एकान्तचित्तसे श्रवण करो। ऐसी कोई वस्तु नहीं है जो हम अतिभक्तोंको न देसकें ॥ ११ ॥

गुह्यंवक्ष्यामीतियदुक्तंतदाह-

वासुदेवःपरंब्रह्मतन्मूर्त्तिःपुरुषःपरः ॥
अव्यक्तोनिर्गुणःशान्तःपञ्चविंशात्परोऽव्ययः ॥ १२ ॥

वसत्यस्मिञ्जगत्समस्तमसौवाजगतिसमस्तेवसतीतिवसतेरुणिवासुः । देवनाद्भासनाद्देवः । वासुश्चासौदेवश्चेतिवासुदेवः । तथाचोक्तम् । "सर्वत्रासौसमस्तंचवसत्यत्रेतिवैयतः । अतोऽसौवासुदेवाख्योविद्वद्भिःपरिगीयते ॥" इति । नतुवसुदेवस्यापत्यमितिविग्रहः । तस्यजगत्कारणतानिरूपणावसरेऽनुपयोगात् । अस्मत्पक्षेपुनरुपादानेकार्यस्याधारतयाकार्येवोपादानस्यानुस्यूततयावासउपयुक्तएव तथाचोक्तंश्रुतौ । 'ईशावास्यमिदंसर्वम् ।' इत्यादि । भागवतेच । "अजनिचयन्मयंतदविमुच्यमियंनृभवेद् ॥" इति । जीवानामपिब्रह्मात्मकतयातद्वारणायपरमितिसर्वोत्तमामित्यर्थकम् । "यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपिचोत्तमः । अतोऽस्मिलोकेवेदेचप्रथितःपुरुषोत्तमः ॥" इतिस्मृतेः । तन्मूर्त्तिस्तस्यवासुदेवस्यमूर्तिरंशः । इदंविशेषणंसंवक्ष्यमाणस्यसङ्कर्षणस्य । चिन्मूर्तिरितिपाठस्तुप्रामादिकः । वासुदेवःसङ्कर्षणइत्यस्माद्वासुदेवात्सङ्कर्षणइत्यस्यार्थस्यविवक्षितस्याप्रतीतेः । अव्यक्तइत्यतीन्द्रियइत्यर्थः । तथाचश्रुतिः । "नतंविदाथयइमाजजानान्यद्युष्माकमन्तरंबभूव । नीहारेणप्रावृताजल्प्याचासुतृपउक्थशासश्चरन्ति ॥ नसंदृशंतिष्ठतिरूपमस्यनचक्षुषापश्यतिकश्चनैनम् ॥" इति । अव्यक्तत्वेहेतुर्निर्गुणइति । शान्तः षडूर्मिरहितत्वात् । पंचविंशात्परः । षोडशविकृतयःसप्तप्रकृतिविकृतयोमूलप्रकृतिश्चेतिचतुर्विंशति-

तत्वानि । पञ्चविंशस्तुजीवस्तस्मात्परइत्यर्थः । पञ्चविंशात्मकइतिपाठेजगदात्मकइति ॥ १२ ॥

भा०टी०-वासुदेव, परब्रह्म, तन्मूर्त्ति परमपुरुष, अव्यक्त, निर्गुण, शान्त, अव्यय और पच्चीसवां वस्तुओंसे पर है ॥ १२ ॥

शुद्धस्यब्रह्मणोजगत्कारणत्वासम्भवादाह-

प्रकृत्यन्तर्गतोदेवोबहिरन्तश्चसर्वगः ॥
सङ्कर्षणोऽयंसृष्ट्यादौतासुवीर्यमवासृजत् ॥ १३ ॥

प्रकृत्यन्तर्गतोमायोपहितोबहिरन्तश्चसर्वगोजगदुपादानत्वात् । एतानिसर्वाणिविशेषणानिसङ्कर्षणस्यवासुदेवांशस्यापिवासुदेवात्मकतावसानेनबोध्यानि । वासुदेवांशात्मकःसङ्कर्षणःप्रथमंजलानिनिर्माय । तास्वप्सु वीर्यंशक्तिविशेषम् । अवासृजत्क्षिक्षेप ॥ १३ ॥

भा०टी०-जगत्के उपादानरूपसे प्रकृतिके अन्तर्गत हैं, सङ्कर्षण वहि और अन्तस्थ व सर्वगत हैं, यह सृष्टिकी आदिके समय एकार्णवादिमें अपने वीर्यको निक्षेप करते हैं ॥ १३ ॥

ततःकिमतआह-

तदण्डमभवद्धैमंसर्वत्रतमसावृतम् ॥
तत्रानिरुद्धःप्रथमंव्यक्तीभूतःसनातनः ॥१४ ॥

तत्तच्छक्तिमिलितंजलंहैमंसौवर्णमण्डंगोलाकारंसर्वत्रबहिरन्तश्चान्धकारेणावृतमभवत् । अन्धकारसहिताकाशेसुवर्णाण्डमजनीत्यर्थः । तत्रसुवर्णाण्डआदावनिरुद्धःसनातनोनित्योवासुदेवांशसङ्कर्षणोंऽशरूपत्वाद्व्यक्तीभूतोऽभिव्यक्तः । नतूत्पन्नः । सत्कार्यवादाभ्युपगमात । यथातिलेभ्यस्तैलंसदेवाभिव्यक्तंनतूत्पन्नम् ॥ १४ ॥

भा० टी०-वह जल अन्धकारसे छाये हुए सुवर्णका अंडरूप बनगया। तिसमें प्रथम सनातन अनिरुद्ध व्यक्तहुए ॥ १४ ॥

अथास्याभिधान्तराणिलोकसुज्ञानार्थमाह-

हिरण्यगर्भोभगवानेषच्छन्दसिपठ्यते ॥
आदित्योह्यादिभूतत्वात्प्रसूत्यासूर्यउच्यते ॥ १५ ॥

एषसङ्कर्षणांऽशोऽनिरुद्धभगवान्षड्गुणैश्वर्यसम्पन्नश्छन्दसिवेदेहिरण्यगर्भः सुवर्णाण्डमध्यरूपगर्भेस्थितत्वात्पठ्यतेनिरूप्यते । वेदेऽस्यहिरण्यगर्भइति प्रसिद्धमभिधान्तरमित्यर्थः । हिनिश्चयेनादित्यः । प्रथममभिव्यक्तत्वादुच्यते । प्रसूत्या । अस्माज्जगतोऽभिव्यक्ततयायमनिरुद्धःसूर्यउच्यते ॥ "हिरण्यगर्भःसमवर्तताग्रेभूतस्यजातःपतिरेकआसीत् ॥" इतिश्रुतिः ॥ १५ ॥

भा०टी०-वेदमें इनको हिरण्यगर्भ कहते हैं, आदिमें थे इसलिये आदित्य, और सृष्टिके अर्थ होनेके कारण सूर्य कहते हैं ॥ १५ ॥

अस्यरूपंस्थितिंचाह-

परंज्योतिस्तमःपारेसूर्योऽयंसवितेतिच ॥
पर्येतिभुवनान्येवभावयन्भूतभावनः ॥ १६ ॥

अयमनिरुद्धःसूर्यनामकःसविता । इतिनाम्ना । चःसमुच्चये । प्रसिद्धः । तमःपारेऽन्धकारस्यविरामेपरमुत्कृष्टंज्योतिस्तेजोरूपम् । अन्धकारनाशकइतितात्पर्यार्थः । "आदित्यवर्णतमसस्तुपारे" इतिश्रुतिः । एषसविताभूतभावनःप्राण्युत्पत्तिस्थितिसंहारकारकोभुवनानिवक्ष्यमाणानिभावयन्प्रकाशयन्पर्येति । भुवर्णाण्डमध्येसदाभ्रमति ॥ १६ ॥

भा०टी०-यह अनिरुद्धही परम ज्योतिष्मान् सविता हैं । अन्धकारस्थानको लांघकर भत. भावन सूर्यकिरणसे समस्त भुवनोंमें घूमते हैं ॥ १६ ॥

अथपरंज्योतिरितिपादंविवृण्वन्नन्यदप्येतत्स्वरूपंश्लोकाभ्यामाह-

प्रकाशात्मातमोहन्तामहानित्येषविश्रुतः ॥
ऋचोऽस्यमण्डलंसामान्युस्रामूर्तिर्यजूंषिच ॥ १७ ॥
त्रयीमयोऽयंभगवान्कालात्माकालकृद्विभुः ॥
सर्वात्मासर्वगःसूक्ष्मःसर्वमस्मिन्प्रतिष्ठितम् ॥ १८ ॥

प्रकाशरूपोऽन्धकारनाशकोऽतएवैषअनिरुद्धाख्यःसूर्योमहान्महत्तत्त्वमिति । एवं विश्रुतोवेदपुराणादौनिरुक्तोऽस्यनिरुक्तस्यसूर्यस्य । ऋचः ऋग्वेदमन्त्रामण्डलं सामानिसामवेदमंत्राउस्राःकिरणायजूंषियजुर्वेदमंत्रामूर्तिःस्वरूपम् । चःसमुच्चये । अतएवायंनिरुक्तोभगवान्षाड्गुण्यैश्वर्यसम्पन्नः । त्रयीमयोवेदत्रयात्मकः । कालरूपःकालस्यकारणम् । विभुर्जगदुत्पत्तिस्थितिनाशायसमर्थः । अतएवसर्वात्माजगत्स्वरूपः सर्वगः सर्वत्रस्थितोव्यापकः सूक्ष्मोऽव्यापकमूर्त्तिधारी । अस्मिन्निरुक्तसूर्येसर्वजगत्प्रतिष्ठितम् । एतेनव्यापकाव्यापकत्वयोरत्राविरोधः॥१७॥१८॥

भा०टी०-प्रकाशरूप, तमोनाशक, और महान् शब्दसे सूर्य ख्यात हैं । ऋग्वेद इसका मण्डल, सामवेद किरण, और यजुर्वेद तिनकी मूर्त्ति हैं । वेदत्रयात्मक यह भगवान्, कालात्मा, कालकर्त्ता, अणिमादिगुणयुक्त, सर्वात्मा सर्वग, सूक्ष्म हैं और इनमेंही समस्त प्रतिष्ठित हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

अथपर्येतिभुवनान्येपेत्यर्धंविवृणोति-

रथेविश्वमयेचक्रंकृत्वासंवत्सरात्मकम् ॥

छन्दांस्यश्वाःसप्तयुक्ताःपर्यटत्येषसर्वदा ॥ १९ ॥

त्रिलोक्यात्मकेरथेसंवत्सरात्मकंद्वादशमासात्मकं वर्षचक्रंनियोज्यसप्तच्छन्दांसिगायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपंक्तित्रिष्टुब्जगत्योऽश्वाःयुक्ताः संयोजिताः कृत्वा । छन्दांस्यश्वास्तत्रयुक्तेति पाठेसप्ताश्वान्रथेनियोज्येत्यर्थः । सर्वदानित्यमेषोऽनिरुद्धनामापर्यटतिभ्रमति ॥ १९ ॥

भा०टी०-विश्वमय रथपर संवत्सर चक्रके द्वारा छंदोंको सात घोड़े बनाकर यह सदा भ्रमण करते हैं ॥ १९ ॥

अथास्यस्वरूपंब्रह्मणउत्पत्तिंचाह-

त्रिपादममृतंगुह्यंपादोऽयंप्रकटोऽभवत् ॥
सोऽहंकारंजगत्सृष्ट्यैब्रह्माणमसृजत्प्रभुः ॥ २० ॥

अस्यवेदात्मनस्त्रिपादंचरणत्रयममृतंदिविज्ञेयम् । अतएवगुह्यमगम्यमिदम् । पादश्चतुर्थचरणः । अयंस्थावरजंगमात्मकजगद्रूपःप्रकटः-प्रत्यक्षोऽभवत् । "त्रिपादूर्ध्वउदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः ॥ " इतिश्रुतिरपिव्यक्ता । सोऽनिरुद्धनामाप्रभुरुत्पत्तिसमर्थः । अहंकारतत्त्वरूपंब्रह्माणंपुरुषंजगत्सृष्ट्यै जगत्सर्जननिमित्तमसृजदुत्पादयामास ॥ २० ॥

भा०टी०-अमृतकी समान उनके तीन पाद छिपे रहते हैं । चतुर्थपादमेंही प्रगट जगत है । उस प्रभानें अहंकाररूप ब्रह्माको संसारकी सृष्टिके लिये उत्पन्न किया ॥ २० ॥

अथोत्पादितब्रह्मपुरुषंजगत्सर्जनार्थंनियुज्यस्वयंभ्रमन्नवतिष्ठतइत्याह-

तस्मैवेदान्वरान्दत्त्वासर्वलोकपितामहम् ॥
प्रतिष्ठाप्याण्डमध्येऽथस्वयंपर्यैतिभावयन् ॥ २१ ॥

अथ ब्रह्मोत्पादनानन्तरंस्वयमनिरुद्धनामा । तस्मै उत्पादितब्रह्मपुरुषाय । वरानुत्कृष्टान्वेदान्दत्त्वावेदोक्तमार्गेणसृष्टिसर्जनार्थ सर्वलोकानां पितामहरूपंतं ब्रह्माणंसुवर्णाण्डमध्येप्रतिष्ठाप्यनिधाय । चोऽत्रानुसन्धेयः । भावयन्प्रकाशयन् सन्पर्यैतिभ्रमति ॥ २१ ॥

भा०टी०-तिस ब्रह्मको सर्वोत्तम वेद देकर सर्वलोकके पितामहरूपसे अण्डमें स्थापित करके स्वयंप्रकाशित होकर भ्रमण करते हैं ॥ २१ ॥

अथजातसृष्टीच्छोब्रह्माचन्द्रसूर्यावस्मत्प्रत्यक्षावुत्पादयामासेत्याह-

अथसृष्ट्यांमनश्चक्रेब्रह्माहंकारमूर्तिभृत् ॥
मनसश्चन्द्रमाजज्ञेसूर्योऽक्ष्णोस्तेजसांनिधिः ॥ २२ ॥

१ पर्येत्येषवशीसदा इति पाठान्तरम् ।

अथाधिकारमास्यनन्तरम् । अहङ्कारतत्त्वमूर्त्तिधारकोब्रह्मासृष्टयांमनोन्तः-करणंचक्रेकरोतिस्म । ब्रह्मणोऽहंसृष्टिंकरोमीतीच्छाजातेत्यर्थः । अनन्तरं तस्यमनसःसकाशाच्चन्द्रमाजज्ञउत्पन्नः । चन्द्रोभवत्त्विितिमनसाचन्द्रो जातइ-त्यर्थः । अक्ष्णोर्नेत्राभ्यांसकाशात्तेजसांनिधिराकरभूतःसूर्यउत्पन्नः । चक्षुरिन्द्रि-यस्यतैजसत्वात् ॥ २२ ॥

भा० टी०-तिसके उपरान्त अहंकारमूर्तिधारी ब्रह्माने जब सृष्टिकरनेका मन किया तब मनसे चंद्रमा, और नेत्रोंके तेजसे तेज निधानरूप सूर्य उत्पन्न हुए ॥ २२ ॥

अथमहाभूतोत्पत्तिमाह-

मनसःखंततोवायुरग्निरापोधराक्रमात् ॥
गुणैकवृद्धयापञ्चैवमहाभूतानिजज्ञिरे ॥ २३ ॥

मनस आकाशोभवत्त्विितीच्छयात्मनः खमाकाशंततआकाशात्क्रमाद्यथो-त्तरंवायुरग्निर्जलंपृथिवी । आकाशाद्वायुर्वायोरग्निरग्नेरापोऽद्भ्यः पृथिवीति गुणैकवृद्धया गुणस्यैकोपचयेनमहाभूतानिपञ्चसङ्ख्याकानि । एवकारान्न्यूना-धिकव्यवच्छेदः । जज्ञिरे उत्पन्नानि । शब्दगुणसहितमाकाशं शब्दस्पर्शगु-णद्वयसमेतोवायुः शब्दस्पर्शरूपात्मकगुणत्रयसमेतोऽग्निः शब्दस्पर्शरूपरसात्म-कगुणचतुष्टयसमेतंजलं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मकगुणपञ्चकसमेतापृथिवीति स्फुटार्थाः ॥ २३ ॥

भा०टी०-मनसे प्रथम शून्य, फिर वायु, अग्नि, जल और धरती, एकगुणकी वृद्धिके द्वारा पांचमहाभूतको उत्पन्न करते हुए ॥ २३ ॥

अथचन्द्रसूर्ययोःस्वरूपंवदन्पञ्चताराणामुत्पत्तिमाह-

अग्नीषोमौभानुचन्द्रौततस्त्वङ्गारकादयः ॥
तेजोभूखाम्बुवातेभ्यःक्रमशःपञ्चजज्ञिरे ॥ २४ ॥

सूर्यचन्द्रौप्रागुदितोत्पत्तीअग्निषोमौसूर्योऽग्निस्वरूपस्तेजोगोलकश्चाक्षुषत्वात् । च-न्द्रस्तुसोमस्वरूपः । मद्यस्यसोमवाच्यत्वाज्जलगोलरूपः । अग्नीषोमावितिप्रयोग-श्छान्दसिकः । ततोऽनन्तरमङ्गारकादयोभौमादयः पञ्चताराग्रहास्तेजोभूखाम्बुवा-तेभ्यः क्रमादुत्पन्नाः । तुकाराद्रुक्तभूतस्यभागाधिक्यमन्यभूतानां चभागसाम्यमि-त्यर्थः । मङ्गलस्तेजसउत्पन्नोऽतएवायमङ्गारकउच्यते । बुधो भूमितः । बृहस्प तिराकाशात् । शुक्रोजलात् । शनिर्वायोः ॥ २४ ॥

भा०टी०-अग्निसोमस्वरूप, रवि, चन्द्र, आदिमें तदोपरान्त मंगलादि ग्रहगण तेज, पृथ्वी आकाश, जलवायुसे क्रमानुसार पांच उत्पन्न हुए ॥ २४ ॥

---

१ भूतावङ्गारकादयः इतिवापाठः ।

अथराशीन्नक्षत्राणिचाह—

पुनर्द्वादशधात्मानंव्यभजद्राशिसञ्ज्ञकम् ॥
नक्षत्ररूपिणंभूयःसप्तविंशात्मकंवशी ॥२५ ॥

पुनरनन्तरमात्मानंद्वादशधाद्वादशस्थानेषुराशिसञ्ज्ञकंव्यभजत् । मनः कल्पितं-वृत्तंद्वादशविभागंराशिवृत्तमकरोदित्यर्थः । भूयोद्वितीयवारमात्मानं नक्षत्ररूपिणं-सप्तविंशात्मकंव्यभजत् । मनःकल्पितंतदेववृत्तंसप्तविंशतिविभागंचाकरोदित्यर्थः । ननुन्यूनाधिकविभागाःकथंनकृताउक्तसङ्ख्यायांनियामकाभावादित्यतआह। वशी-ति । इच्छाविषयंवशंविद्यतेयस्येतिवशीस्वतन्त्रेच्छस्यनियोगानर्हत्वात् । स्वेच्छया-सत्संङ्ख्याकाविभागाःकृताइतिभावः । सप्तविंशतिंविभागव्यञ्जकानिनक्षत्राणिता-रात्मकानिनिर्मितानीत्यर्थसिद्धम् ॥ २५ ॥

भा०टी०—वशी ब्रह्माने फिर मनसे कल्पित वृत्तको १२ भागमें राशिरूपसे और फिर २७ भागमें नक्षत्ररूपसे विभाग किया ॥ २५ ॥

अथचराचरंजगदकरोदित्याह—

ततश्चराचरंविश्वंनिर्ममेदेवपूर्वकम् ॥
ऊर्ध्वमध्याधरेभ्योऽथस्रोतोभ्यःप्रकृतीःसृजन् ॥ २६ ॥

ततःसचक्रग्रहसर्जनानन्तरमूर्ध्वमध्याधरेभ्यःश्रेष्ठमध्याधमेभ्यःस्रोतोभ्योव्यक्ति-भ्यःप्रकृतीःसत्त्वरजस्तमोविभेदात्मकप्रकृतीः सृजन्निर्मायन् देवपूर्वकंदेवमनुष्यासु-रादिकंविश्वंजगच्चराचरंचेतनाचेतनात्मकंनिर्ममेकृतवान् ॥ २६ ॥

भा०टी०—तदोपरान्त श्रेष्ठ, अधम, अनुयायी, प्रकृतिसृजन करके देव मानवादि चराचर विश्वको निर्माण किया ॥ २६ ॥

अथरचितपदार्थानामवस्थानंकृतवानित्याह ।

गुणकर्मविभागेनसृष्ट्वाप्राग्वदनुक्रमात् ॥
विभागंकल्पयामासयथास्वंवेददर्शनात् ॥ २७ ॥

गुणाःसत्त्वरजस्तमोरूपाः । कर्मपूर्वजन्मार्जितंसदसत्कर्म । अनयोर्विभागेनैकी-करणात्मकेनप्राग्वच्चन्द्रसूर्यादिप्रागुक्तसृष्टिरित्यनुक्रमात्सृष्ट्वादेवमनुष्यासुरभूमिपर्व-तादिकचराचरसर्जनंकृत्वा वेददर्शनाद्वेदोक्तप्रकाराद्यथास्वं यथादेशंयथाकालंवि-भागमवस्थानविभागंकल्पयामासकृतवान् ॥ २७ ॥

भा०टी०—गुण और कर्मके विभागसे पूर्वक्रमरूपसे सृष्टिकरके वेदमें कही रीतिके अनुसार विभागादि किये ॥ २७॥

केषामित्यतआह—

ग्रहनक्षत्रताराणांभूमेर्विश्वस्यवाविभुः ॥
देवासुरमनुष्याणांसिद्धानांचयथाक्रमम् ॥ २८ ॥

विभुर्नियोजनसमर्थोब्रह्माग्रहनक्षत्रयोर्बिम्बानांपृथिव्यास्त्रैलोक्यस्य । वाकारः समुच्चये । आकाशेऽवस्थानंकृतवान् । तत्रग्रहनक्षत्राणांयथाकालमनियतावस्थानम् । पृथिव्यास्तुनियतावस्थानम् । पृथिव्यांतुत्रैलोक्यस्ययथादेशमवस्थानम् । तत्रयथाक्रमंयथायोग्यंदेवासुरमनुष्याणांसिद्धानाम् । चःसमुच्चये । अवस्थानंयथादेशंकृतवान् ॥ २८ ॥

भा०टी०-अणिमादिगुणसम्पन्न ब्रह्माजीने ग्रह नक्षत्र ताराओंको, पृथ्वीको और विश्वको तथा देवासुर सिद्धादिको तिन २ के वियोजित क्रमसे स्थित कराया ॥ २८ ॥

ननुसर्वत्राकाशस्यसत्त्वाद्ब्रह्माण्डमध्यस्थेनब्रह्मणाग्रहनक्षत्राणांभूमेश्चावस्थानंब्रह्माण्डबहिराकाशेकृतमथवाब्रह्माण्डान्तराकाशेकृतमित्यतआह-

ब्रह्माण्डमेतत्सुषिरंतत्रेदंभूर्भुवादिकम् ॥
कटाहद्वितयस्यैवसम्पुटंगोलकाकृतिः ॥ २९ ॥

एतत्प्रागुक्तंब्रह्मणाधिष्ठितंसुवर्णाण्डंसुषिरमवकाशात्मकंतत्रावकाशइदंजगत्भूर्भुवःस्वर्गात्मकमवस्थितंनबहिः । नन्वण्डमगोलाकारत्वेनान्तरावकाशात्मकत्वमसम्भवतीत्यतआह । कटाहद्वितयस्येति । कटाहोऽर्धगोलाकारंसावकाशंपात्रंतस्याद्वितयंद्वयंसमंतस्य । एवकारोन्यूनाधिकव्यवच्छेदकार्थः । सम्पुटमाभिमुख्येनमिलितं गोलकाकृतिर्गोलाकारःस्यात् । तथाचनक्षतिः ॥ २९ ॥

भा०टी०-अवकाशयुक्त ब्रह्माण्डमें भूर्भुवादि स्थित हैं। दो कटाहके सम्पुट जातिकी समान गोलाकार हैं ॥ २९ ॥

अथब्रह्माण्डान्तःपरिधिंवदंस्तदंतर्भग्रहादिकमाकाशेयथास्थानंपरिभ्रमतीतिश्लोकाभ्यामाह-

ब्रह्माण्डमध्येपरिधिर्व्योमकक्षाभिधीयते ॥
तन्मध्येभ्रमणंभानामधोऽधःक्रमशस्तथा ॥ ३० ॥
मन्दामरेज्यभूपुत्रसूर्यशुक्रेन्दुजेन्दवः ॥
परिभ्रमन्त्यधोऽधस्थाःसिद्धविद्याधराघनाः ॥ ३१ ॥

ब्रह्माण्डान्तःपरिधिस्तुल्यवृत्तमानंव्योमकक्षावक्ष्यमाणाकाशकक्षोच्यते । तन्मध्येब्रह्माण्डमध्यआकाशेभानां नक्षत्राणांसर्वेषांसर्वतस्तुल्योर्ध्वान्तरितानांभ्रमणंभवति । तथातुल्योर्ध्वान्तरेणाधोनक्षत्रेभ्योधोधःक्रमाच्छनिबृहस्पतिभौमार्कशुक्र-

बुधचन्द्राअधस्तात्परिभ्रमन्ति । सिद्धाविद्याधराश्चाधस्थाश्चन्द्रादधस्थिताअधोऽधः क्रमेणाकाशेस्थिताः । एषांप्रवहवायावस्थानाभावाच्चन्द्रवन्नपरिभ्रमः ॥ ३० ॥ ३१ ॥

भा०टी०-ब्रह्माण्डमें परिधिका नाम व्योमकक्षा है तिसमें नक्षत्रोंका भ्रमण है तिसके नीचे क्रमानुसार शनि, बृहस्पति, मंगल, शुक्र, सूर्य, बुध, चन्द्रमा, भ्रमण करते हैं। तिसके नीचे सिद्ध विद्याधर गण, और सबसे नीचे समस्त मेघ स्थित हैं ॥ ३० ॥ ३१ ॥

अथभूम्यवस्थानमाह-

मध्येसमन्तादण्डस्यभूगोलोव्योम्नितिष्ठति ॥
बिभ्राणःपरमांशक्तिंब्रह्मणोधारणात्मिकाम् ॥ ३२ ॥

अण्डस्यब्रह्माण्डस्यसमन्तात्सर्वप्रदेशान्मध्ये मध्यस्थानेकेन्द्ररूपआकाशेभूगोलस्तिष्ठति । नन्वाकाशेनिराधारवस्तुनोऽवस्थानासम्भवात्कथमवस्थितोभूमिगोलइत्यतोभूगोलविशेषणमाह । बिभ्राणइति । ब्रह्मणःपरमांशक्तिंधारणात्मिकांनिराधारावस्थानरूपांबिभ्राणोधारयन् । तथाचनक्षतिः । एतेनभूःकिमाकाराकिमाश्रयेतिप्रश्नद्वयमुत्तरितम् ॥ ३२ ॥

भा०टी०-ब्रह्माकी धारणात्मिका परमाशक्तिके बलसे अण्डके सर्व प्रदेशके मध्यदेशमें व्योमके बीच भूगोल स्थित है ॥ ३१ ॥

अथकथंचात्रसप्तपातालभूमयइतिप्रश्नस्योत्तरमाह-

तदन्तरपुटाःसप्तनागासुरसमाश्रयाः ॥
दिव्योषधिरसोपेतारम्याःपातालभूमयः ॥ ३३ ॥

तस्यभूगोलस्यान्तरपुटामध्यस्थपुटागुहारूपाः सप्तातलवितलसुतलादिकाःपातालभूमयःपातालप्रदेशारम्यामनोहराःसन्ति । ननुभूगोलेमनुष्यादिकमस्तितथातत्रके सन्तीत्यतस्तद्विशेषणमाह । नागासुरसमाश्रयाइति । वासुकिप्रमुखादयःसर्पादैत्या एषामाश्रयभूताः । ननुतत्रसूर्यसञ्चाराभावात्तमोमयत्वेनतत्स्थितलोकानांव्यवहारः कथंभवतीत्यतोद्वितीयंविशेषणमाह । दिव्यौषधिरसोपेताइतिदिव्यायाऔषधयःस्वप्रकाशास्तासांरसैर्युक्ताः । तथाचतत्प्रकाशेनव्यवहारोभवतिलद्रसेनतल्लोकानांजीवनञ्चभवतीतिभावः ॥ ३३ ॥

भा०टी०-भूगोलके अन्तमें स्थित नागसुराश्रित पातालादि७ भूमियें स्वप्रकाश वृक्षोंसे युक्त और रमणीक हैं ॥ ३३ ॥

अथभूगोलमुक्त्वादक्षिणोत्तरभूव्यासाधिकप्रमाणमेरोरवस्थानमाह-

अनेकरत्ननिचयोजाम्बूनदमयोगिरिः ॥
भूगोलमध्यगोमेरुरुभयत्रविनिर्गतः ॥ ३४ ॥

भूगोलमध्यगतःपर्वतोमेर्वाख्योऽनेकरत्ननिचयोऽनेकानिनानाविधानिमाणिक्य-वज्रादीनितेषांनिचयःसमूहोयत्रासौ । जाम्बूनदमयोजाम्बूनदं । "जम्बूफलामल-गलद्रसतःप्रवृत्ताजम्बूनदीरसयुतामृदभूत्सुवर्णम् । जाम्बूनदंहितदतःसुरसिद्धसङ्-घाःशश्वत्पिबन्त्यमृतपानरसानुभावाः ॥" इतिभास्कराचार्योक्तेश्चसुवर्णतन्मयःस्वर्ण घटितउभयत्रव्यासान्तरितभूपृष्ठप्रदेशाभ्यांविनिर्गतोबहिःस्थितदण्डाकारस्वर्णाद्रि-मध्येभूगोलःप्रोतोऽस्ति । अतएवभूभृदित्यन्वर्थसंज्ञइतितात्पर्यार्थः ॥ ३४ ॥

भा०टी०-भूगोलके मध्यगत और उभय मेरुसे निकली हुई जम्बूनदीसे शोभित विविध रत्नोंका बनाहुआ मेरु है ॥ ३४ ॥

अथमेरोरूर्ध्वाधःप्रदेशयोर्देवादयोऽसुराश्चवसन्तीत्याह-

उपरिष्टात्स्थितास्तस्यसेन्द्रादेवामहर्षयः ॥
अधस्तादसुरास्तद्वद्द्विषन्तोऽन्योऽन्यमाश्रिताः ॥ ३५ ॥

उपरिष्टात्स्थितास्तस्यसेन्द्राइन्द्रसहितादेवाइन्द्रादयोदेवामहर्षयः । चःसमु-च्चयार्थोऽनुसन्धेयः । स्थिताः । अधस्तान्मेरोरधःप्रदेशे । असुरादैत्याः । तद्वत् । यथोर्ध्वभागेदेवास्तद्वदित्यर्थः । आश्रिताआस्थिताः । ननुदेवासुराश्चैकत्रकथंनस्थि-ताइत्यतआह । द्विषन्तइति । अन्योन्यंपरस्परंद्वेषंकुर्वन्तः । तथाचदेवासुरयोः परस्परं द्वेषसद्भावादेकत्रावस्थानासंभवेनोत्तमादेवास्तदूर्ध्वभागेस्थितामहर्षयश्चदे-त्यभीतास्तत्रैव स्थितास्तदधोभागेतन्निकृष्टादैत्याःस्थिताइतिभावः ॥ ३५ ॥

भा०टी०-ऊपर (उत्तरदिशा) में इन्द्रादि देवता और महर्षिगण स्थित हैं । नीचे (दक्षिणमें) असुरोंका वास है । परस्परमें विद्वेष होनेके कारण दूसरी दिशामें आश्रय लिया है ॥ ३५ ॥

अथभूगोलेसमुद्रावस्थानमाह-

ततःसमन्तात्परिधिःक्रमेणायंमहार्णवः ॥
मेखलेवस्थितोधात्र्यादेवासुरविभागकृत् ॥ ३६ ॥

दण्डाकारमेरोःसकाशादभितोयंप्रत्यक्षोमहार्णवोमहासमुद्रः क्रमेणनिरन्तराल-क्रमेणपरिधिरूपोभूम्यामेखलेवकाञ्चीरूपोदेवासुरविभागकृतदेवदैत्ययोर्भूमिगोले-विभागयोरवधिरेखारूपइत्यर्थः। तेनसमुद्राद्रुत्तरंभूगोलस्यार्धजम्बूद्वीपंदेवानांसमुद्रा-द्दक्षिणं समुद्रातिरिक्तंभूमिगोलस्यार्धषड्द्वीपषट्समुद्रोभयात्मकंदैत्यानामितिसि-द्धम् । मेरुदण्डानुरुद्धभूगोलमध्येपरिधिरूपोलवणसमुद्रोऽस्ति । उत्तरगोलार्धदक्षि-णभूगोलार्धान्तर्गतसमुद्रस्यप्रान्तपरिधिस्पृष्टमितिमेखलायाः कट्यधः स्थितत्वेन तात्पर्यार्थः ॥ ३६ ॥

भा०टी०-तिसमें महासमुद्र घेरेके आकारसे मेखलाकी समान स्थित है । समुद्रने भूगोलको देवासुरभूमिमें विभाग किया है ॥ ३६ ॥

अथसमुद्रोत्तरतटेपरिधिरूपेजम्बूद्वीपारम्भेचतुर्विभागेचत्वारिनगराणि सन्तीत्याह-

समन्तान्मेरुमध्यात्तुतुल्यभागेषुतोयधेः ॥
द्वीपेषुदिक्षुपूर्वादिनगर्योदेवनिर्मिताः ॥ ३७ ॥

मेरुमध्याद्दण्डाकारमेरोर्मध्य प्रदेशाद्भूगोलगर्भात्मकादितित्वर्थः । समन्तादभितोभूगोलपृष्ठेतोयधेः परिधिरूपसमुद्रस्यतुल्यभागेषुसमभागेषुद्वीपेषुजम्बूद्वीपारम्भेषुदिक्षुचतुर्विभागेषुचतुर्दिक्षुपूर्वादिनगर्योमेरोः पूर्वदक्षिणपश्चिमोत्तरादिक्क्रमेणचतुःपुर्योदेवनिर्मितादेवैः कृताः सन्तीतिशेषः । समुद्रोत्तरतटेजम्बूद्वीपस्यादिभागरूपे तुल्यान्तरेणचत्वारिनगराणिभूगोलस्यंकल्पितपूर्वादिदिशासुसन्तीतितात्पर्यार्थः ॥ ३७ ॥

भा०टी०-मेरुमध्यप्रदेशमें घेरारूप समुद्रकी पूर्वादि चारों दिशाओंमें देवताओंकी बनाई हुई चार पुरी हैं ॥ ३७ ॥

अथासांनामानिद्वीपोत्थितस्यजम्बूद्वीपादिभागस्थितवर्षाख्यपारिभाषिकविभागेष्वित्यर्थचश्लोकत्रयेणविशदयति-

भूवृत्तपादेपूर्वस्यांयमकोटीतिविश्रुता ॥
भद्राश्ववर्षेनगरीस्वर्णप्राकारतोरणा ॥ ३८ ॥
याम्यायांभारतेवर्षेलङ्कातद्वन्महापुरी ॥
पश्चिमेकेतुमालाख्येरोमकाख्याप्रकीर्त्तिता ॥ ३९ ॥
उदक्सिद्धपुरीनामकुरुवर्षेप्रकीर्तिता ॥
तस्यांसिद्धामहात्मानोनिवसन्तिगतव्यथाः ॥ ४० ॥

भूगोलउभयत्रदण्डाकारोमेरुर्यत्रनिर्गतस्तत्स्थानाभ्यां । वृत्ताकारसूत्रेणोर्ध्वाधरेणभूगोलस्यखण्डद्वयंपूर्वापरंतिर्यग्वृत्ताकारंसूत्रेणोर्ध्वाधोभूमेः खण्डद्वयंतेनभूगोलेवमाकाराश्चत्वारोभूम्यंशास्तत्रोर्ध्वस्थपूर्वंवप्रेभूम्यांयः समुद्रपरिधिस्तस्यचतुर्थांशेभद्राश्वसंज्ञकवर्षेपूर्वस्मिन्नूर्ध्वाधः शकलसन्धौ सुवर्णघटिताःप्रासादास्तोरणानिचयस्यामेतादृशीपुरीयमकोटीतिसंज्ञया विश्रुताविख्याता याम्यायामूर्ध्वशकलद्वयसंधौमेरुस्तस्यदक्षिणत्वाद्भारतसञ्ज्ञवर्षे लङ्कासञ्ज्ञामहानगरीतद्वत्स्वर्णप्राकारतोरणाविश्रुतेत्यर्थः । पश्चिमेपश्चिमशकलाधःस्थशकलसन्धौकेतुमालसंज्ञेवर्षेरोमकसञ्ज्ञानगरीउक्ता । उदक् । अधःशकलद्वयसन्धौकु-

रुसञ्ज्ञकवर्षेसिद्धपुरीनामनगरीप्रोक्ता । अस्याःपुर्याः सिद्धपुरीत्वमन्वर्थमित्याह । तस्यामिति । सिद्धपुर्यांसिद्धायोगाभ्यासकाअस्मदादिभ्योमहान्तुत्कृष्टआत्मायेषांते- गतव्यथादुःखरहितानिरन्तरावसन्ति ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

भा०टी०-भूवृत्तके चतुर्थांशसे पूर्वदेशमें भद्राश्व वर्ष है, तिसमें यमकोटि पुरी है कहते हैं कि यह सुवर्णकी भींत और तोरणोंसे वेष्टित है । दक्षिणदिशामें भारतवर्ष है; तिसके मध्यमें लङ्का महापुरी है। पश्चिमके बीच केतुमालवर्षमें रोमक नगरी है । उत्तरमें कुरुवर्ष पुरीके बीच सिद्धपुरी स्थित है, तहां सिद्ध महात्मालोग सब कष्टोंसे छुटे हुए वास करते हैं ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

अथोक्तानांचतुर्णांपुराणांपरस्परमन्तरालमव्यवहितंमेरोरासामन्तरंचाह-

भूवृत्तपादविवरास्ताश्चान्योन्यंप्रतिष्ठिताः ॥
ताभ्यश्चोत्तरगोमेरुस्तावानेवसुराश्रयः ॥ ४१ ॥

ताउक्तनगर्योऽन्योन्यंपरस्परं भूवृत्तपादविवराभूगोलवृत्तपरिधिचतुर्थांशान्तरालाःप्रतिष्ठिताःसन्तीत्यर्थः । चकारःपूर्वोक्तेनसमुच्चयार्थकः । ताभ्यउक्तपुरीभ्यःसकाशादुत्तरदिक्स्थोमेरुः पूर्वोक्तः सुराश्रयः देवैरधिष्ठितस्तावान्भूपरिधिचतुर्थांशान्तरेणस्थितः । एवकारोन्यूनाधिकव्यवच्छेदार्थः । चकारः श्लोकपूर्वार्धेनसमुच्चयार्थः ॥ ४१ ॥

भा०टी०-नगरियें भूवृत्तके चतुर्थांशमें परस्परके अन्तरमें स्थित हैं । तिनसे तिनकी बराबर उत्तरदेशमें वह मेरुपर्वत है जिसपर देवतालोग रहते हैं ॥ ४१ ॥

अथतेषांपुराणांनिरक्षत्वमस्तीत्याह-

तासामुपरिगोयातिविषुवस्थोदिवाकरः ॥
नतासुविषुवच्छायानाक्षस्योन्नतिरिष्यते ॥ ४२ ॥

तासामुक्तनगरीणांविषुवस्थोविषुवद्वृत्तस्थोयद्दिनेसमरात्रिन्दिवंतद्दिनेयन्मार्गेन- भ्रमतितद्विषुवद्वृत्तंतत्रस्थइत्यर्थः । सूर्यउपरिगःसन्यातिभ्रमति । अतःकारणात्तासुनगरीषुविषुवच्छायाक्षभानभवातितन्नगराणांविषुवद्वृत्ताभिन्नपूर्वापरवृत्तसद्भावात् । तत्रस्थसूर्यमध्याह्नेछायाभावोपलम्भात् । अतएवतेषुनगरेषुअक्षध्रुवस्योन्नतिमुच्चताक्षांशरूपानेष्यतेनांगीक्रियते । अक्षांशाभावान्निरक्षदेशत्वंतेषांसिद्धमितिभावः ॥ ४२ ॥

भा०टी०-विषुवतस्थित सूर्य तिनसे ऊपरको गमन करते हैं । इसकारण तहांपर न विषुवच्छाया है न अक्षोन्नति है ॥ ४२ ॥

अथमेरावुक्तपुरीषुचक्रमेणलम्बांशाक्षांशाभावावुपपत्त्याप्रतिपादयिषुस्तयोःप्रथमंध्रुवस्थितिमाह-

---

१ ताभ्यश्चोत्तरतो मेरुरिति वा पाठः ।

मेरोरुभयतोमध्ये ध्रुवतारे नभःस्थिते ॥
निरक्षदेशसंस्थानामुभये क्षितिजाश्रये ॥ ४३ ॥

मेरोरुभयतोदक्षिणोत्तराग्रयोराकाशस्थितेध्रुवतारेदक्षिणोत्तरे क्रमेणमध्यआकाशमध्येभवतः । निरक्षदेशसंस्थानांप्रागुक्तनगरस्थितमनुष्याणामुभयेदक्षिणोत्तरेध्रुवतारेक्षितिजाश्रयेतद्भूगर्भक्षितिजवृत्तस्थेभवतइत्यर्थः ॥ ४३ ॥

भा०टी०-दोनों मेरुके मध्य आकाशमें दक्षिण और उत्तरमें दो, ध्रुवतारे स्थित हैं। निरक्षदेशमें स्थित होनेके कारण दोनों क्षितिज रेखामें स्थित हैं ॥ ४३ ॥

अथातएवतेष्वक्षांशाभावलम्बांशपरमत्वमितिवदन्मेरावक्षांशपरमत्वमित्याह-

अतोनाक्षोच्छ्रयस्तासु ध्रुवयोः क्षितिजस्थयोः ॥
नवतिर्लम्बकांशास्तु मेरावक्षांशकास्तथा ॥ ४४ ॥

तासूक्तनगरीषु । अतउभयेक्षितिजाश्रयेइतिकारणात् । अक्षोच्छ्रयोध्रुवौच्च्यंन । तथाचक्षितिजाद्ध्रुवौच्च्यमक्षांशाइतितदभावात्तदभावइतिभावः । तुकारात्तन्नगरीषुध्रुवयोःक्षितिजस्थयोः । सतोर्लम्बांशानवतिः शून्याक्षांशोननवतेर्लम्बांशत्वात् । खमध्याद्ध्रुवयोः क्षितिजस्यलम्बांशस्वरूपत्वाच्चमेराक्षांशास्तथानवतिः । ध्रुवस्यपरमोच्चत्वात् । यथानिरक्षदेशेऽक्षांशाभावाल्लम्बांशाःपरमास्तथामेरावक्षांशपरमत्वाल्लम्बांशाभावइत्यर्थसिद्धम् । एतेन । "पुरान्तरंचेदिदमुत्तरंस्यात्तदक्षविश्लेषलवैस्तदाकिम् । चक्रांशकैरित्यनुपातयुक्त्या युक्तंनिरुक्तंपरिधेःप्रमाणम् ॥" इतिभास्कराचार्योक्तंप्रथमप्रश्नस्योत्तरंसूचितम् । स्पष्टपरिधिसाधनंचकल्पितैकमध्यस्थानानुरोधेनापचीयमानंमेरावभावात्मकं नानुपपन्नमितिचसूचितम् ॥ ४४ ॥

भा०टी०-तिसके लिये· तहांपर ध्रुवौच्च्य नहीं है । दो ध्रुव क्षितिज गोलमें स्थित हैं इसकारण तहांके लम्बकांश ९० और मेरुके अक्षांश नब्बे हैं ॥ ४४ ॥

अथाहोरात्रव्यवस्थांचेत्यादिप्रश्नोत्तरंविवक्षुर्देवासुरयोर्दिनारम्भंप्रथममाह-

मेषादौ देवभागस्थे देवानां याति दर्शनम् ॥
असुराणां तुलादौ तु सूर्यस्तद्भागसञ्चरः ॥ ४५ ॥

जम्बूद्वीपलक्षणससुद्रसन्धौपरिधिवृत्तंभूगोलमध्येतत्समसूत्रेणाकाशेवृत्तंविषुवद्वृत्तंतत्रक्रान्तिवृत्तंषड्भान्तरेणस्थानद्वयेलग्नंतन्मेषतुलास्थानं प्रवहवायुनाविषुवद्वृत्तमार्गेभ्रमतिमेषस्थानात्कर्कादिस्थानंविषुवद्वृत्ताच्चतुर्विंशत्यंशान्तरउत्तरतः । मकरादिस्थानंविषुवद्वृत्ताच्चतुर्विंशत्यंशान्तरेदक्षिणतः। तत्स्वस्थानेप्रवहवायुनाभ्रमति।एवं-

क्रांतिवृत्तप्रदेशाःस्वस्वस्थानेप्रवहवायुनाभवन्ति।तत्रमेषादौदेवभागस्थोजम्बूद्वीपेदेवासुरविभागकृदितिपूर्वोक्तेः। तत्सम्बद्धामेषादिकन्यान्ताराशयउत्तरगोलः।तत्रस्थःसूर्योमेषादौमेषादिप्रदेशेदेवानांमेरोरुत्तराग्रवर्तिनांदर्शनंषण्मासानन्तरप्रथमदर्शनंयातिगच्छति । प्राप्नोतीत्यर्थः। विषुवद्वृत्तस्यतत्क्षितिजत्वात् । एवंदैत्यानांमेरोर्दक्षिणाग्रवर्त्तिनामित्यसुराणामित्युक्तेनैवोक्तम् । तद्भागसञ्चरोदैत्यभागेसमुद्राद्दिदक्षिणविभागस्थास्तुलादिमीनान्ताराशयो दक्षिणगोलस्तत्रसञ्चरोगमनंयस्येत्येतादृशसूर्यस्तुलादिप्रदेशेतुकाराददर्शनानन्तरंप्रथमदर्शनंप्राप्नोतीत्यर्थः। तेषामपिविषुवद्वृत्तक्षितिजत्वात् ॥ ४५ ॥

भा०टी०-सूर्यमेषादि देवभागमें स्थित होनेपर देवताओंका दृश्य होता है। तुलादि असुरभागमें स्थितहो तो असुरोंका दृश्य होता है ॥ ४५ ॥

अथप्रसङ्गाद्ग्रीष्मेतीव्रकरइत्याद्यर्धोक्तप्रश्नस्योत्तरमाह-

अत्यासन्नतयातेनग्रीष्मेतीव्रकराररवेः ॥
देवभागेसुराणांतुहेमन्तेमन्दतान्यथा ॥ ४६ ॥

तेन । उत्तरदक्षिणगोलयोः सूर्यस्योत्तरदक्षिणसञ्चाररूपकारणेनेत्यर्थः । देवभागेजम्बूद्वीपे । अत्यासन्नतयासूर्यस्यात्यन्तनिकटस्थत्वेनग्रीष्मेग्रीष्मर्तौ सूर्यस्यतेजोगोलकस्यकिरणास्तीक्ष्णाअत्युष्णाअसुराणांदेवभागइत्यस्यासन्नतयाभागइत्यस्यसमन्वयाद्दैत्यानांभागेसमुद्राद्दिदक्षिणप्रदेशेहेमन्तेहेमन्तर्तौतुकारात्सूर्यस्यात्युष्णाःकिरणाःसूर्यस्यात्यासन्नत्वात् । अन्यथासूर्यस्यदूरस्थत्वेनमन्दताकिरणानामत्युष्णताभावः । देवभागेहेमन्तर्तौकराणांमन्दता । अतएवतत्रशीताधिक्यंदैत्यभागेग्रीष्मेकराणांमन्दताशीताधिक्यंच। तथाच। देवभागेदक्षिणगोलेसूर्यस्यदूरस्थत्वमुत्तरगोलेनिकटस्थत्वंमध्याह्ननतांशानांक्रमेणाधिकाल्पत्वादितिभावः॥४६॥

भा०टी०-इसीकारण अत्यासन्नके वशसे देवभागमें देवताओंके पक्षमें सूर्यकी किरण तीव्र होती हैं। अन्यथा हेमन्तमें मन्दताको प्राप्त करती हैं ॥ ४६ ॥

अथमेषादौदेवभागस्थइत्युक्तंदेवासुराहोरात्रकथनव्याजेनविशदयति-

देवासुराविषुवतिक्षितिजस्थंदिवाकरम् ॥
पश्यन्त्यन्योन्यमेतेषांवामसव्येदिनक्षपे ॥ ४७॥

विषुवतिकालेदेवदैत्याःसूर्यंक्षितिजस्थंपश्यन्ति । विषुवद्वृत्तस्यतयोःस्वस्थानाद्गोलमध्यस्थत्वेनक्षितिजत्वात् । एतेषांदेवदैत्यानामन्योन्यंपरस्परंयेवामसव्येअपसव्यसव्येतेक्रमेणदिनक्षपेदिवसरात्रीभवतः। अयंभावः । देवानांभूमेरुत्तरभागःस्वकीयत्वात्सव्यमतोदैत्यानामपसव्यंस्वकीयत्वाभावात् एवंदैत्यानांभूमेर्दक्षिण-

भागः स्वकीयत्वात्सव्यंदेवानांस्वकीयत्वाभावादपसव्यमतोदैत्यानांवामसव्यभागा-
वुत्तरदक्षिणगोलौदेवानांक्रमेणदिनरात्री । देवानांवामसव्यभागौदक्षिणोत्तरगोलौ
दैत्यानांदिनरात्री । अन्यथान्योन्यंवामसव्येइत्यनयोःसङ्गतार्थानुपपत्तेः । अतए-
वपूर्वमेषादावित्याद्युक्तमिति ॥ ४७ ॥

भा०टी०-विषुवदिनमें सूर्यको देवता और असुर क्षितिजरेखामें देखेते हैं। इसप्रकारसे उत्तर दक्षिण वशसे दिनरातका परस्पर उलटा फेर होता है ॥ ४७ ॥

अथपूर्वश्लोकोत्तरार्धस्यसन्दिग्धत्वंशङ्कयादिनपूर्वापरार्धकथनच्छलेनतदर्थश्लोकाभ्यांविशदयति—

मेषादावुदितःसूर्यस्त्रीन्राशीनुदगुत्तरम् ॥
सञ्चरन्प्रागहर्मध्यंपूरयेन्मेरुवासिनाम् ॥ ४८ ॥
कर्कादीन्सञ्चरंस्तद्वदह्नःपश्चार्धमेवसः ॥
तुलादींस्त्रीन्मृगादींश्चतद्वद्देवसुरद्विषाम् ॥ ४९ ॥

मेषादौविषुवद्वृत्तस्थक्रान्तिवृत्तभागेरेवत्यासन्नेउदितोदर्शनतांप्राप्तःसूर्यउत्तरंयथो-त्तरंक्रमेणेतियावत् । त्रीन्राशीनुदगुत्तरभागस्थान्मेषवृषमिथुनान्सञ्चरन्नतिक्रामन्स-न्मेरुस्थानांदेवानांप्रागहर्मध्यंप्रथमांदिनस्यार्धपूरयेत्पूर्णकरोतीत्यर्थः । मिथुनान्ते सूर्येमेरुस्थानांमध्याह्नंस्यादितिफलितार्थः । कर्कादींस्त्रीन्राशीन्कर्कसिंहकन्यास्त द्वत्क्रमेणेत्यर्थः । अतिक्रामन्सन्ससूर्योदिवसस्यपश्चार्द्धमपरदलम् । एवकारोऽन्य-योगव्यवच्छेदार्थः। पूरयेत् । कन्यान्तेसूर्येमेरुस्थानांसूर्यास्तोभवतीतिफलितार्थः। अथदैत्यानामाह । तुलादीनिति । सुरद्विषांमेरोर्दक्षिणाग्रवर्तिनांदैत्यानामित्यर्थः। तुलादींस्त्रीन्राशींस्तुलावृश्चिकधनुराख्यान्राशीन्मकरकुम्भमीनांस्तद्वत्क्रमेणातिक्राम न्सूर्यः । चकारस्तुलामृगादिक्रमेणपूर्वापरार्धमित्यर्थकः । एवकारउक्तातिरिक्तव्य-वच्छेदार्थः । दिनंपूरयतीत्यर्थः । धनुरन्तेसूर्येदैत्यानांमध्याह्नंमीनान्तेसूर्येसूर्यास्तो भवतीतिफलितार्थः ४८ ॥ ४९ ॥

भा०टी०-उत्तरमेरुवासियोंके पक्षमें मेषादिमेंसूर्यहोनेपर सूर्योदय ३ राशितक क्रमसे उत्तरको होताहै तब मेरुमें रहनेवाले देवोंके दिनका पूर्वार्द्ध होताहै कर्कट आदि उत्तरराशियोंमें होनेसे परार्द्ध दिवा है। वैसेही तुलादि और मकरादिमें असुरोंकी पूर्वपरार्द्ध दिवाहै॥४८॥४९॥

अथातोदेवासुराणामितिप्रश्नस्योत्तरंसिद्धमित्याह—

अतोदिनक्षपेतेषामन्योन्यंहिविपर्ययात् ॥
अहोरात्रप्रमाणंचभानोर्भगणपूरणात् ॥ ५० ॥

अतउक्तकारणात्तेषांदेवदैत्यानामन्योन्यंपरस्परंहिनिश्चयेनाविपर्ययाद्व्यत्यासाद्दिनरात्रीस्तइतिफलितम् । एतत्फलितार्थस्तुपूर्वंबहुधोक्तः । अथतत्कथंवास्यात् । भानोर्भगणपूरणादितिप्रश्नस्याप्युत्तरं फलितमित्याह । अहोरात्रप्रमाणमिति । सूर्यस्यमेषादिद्वादशराशिभोगाद्देवदैत्यानामहोरात्रमानंभवति । चकारःपूर्वार्धेन समुच्चयार्थकस्तेनद्वयोःपूर्वोक्तमेकंकारणमितिस्पष्टम् ॥ ५० ॥

भा०टी०-इसलिये परस्पर उनके दिनरात अदलबदलसे हैं । सूर्यके भगण का पूरण कालही अहोरात्र है ॥ ५० ॥

अथमेषादावुदितइत्यादिश्लोकद्वयस्यफलितार्थंतदुपपत्तिंचाह-

दिनक्षपार्धमेतेषामयनान्तेविपर्ययात् ॥
उपर्यात्मानमन्योन्यंकल्पयन्तिसुरासुराः ॥ ५१ ॥

एतेषांदेवदैत्यानामयनान्तेऽयनसन्धौविपर्ययाद्व्यत्यासाद्दिनक्षपार्धं दिनार्धरात्र्यर्धं चभवति । यत्रदेवानां मध्याह्नंरात्र्यर्धंतत्रदैत्यानांक्रमेणरात्र्यर्धमध्याह्नेयत्रचदैत्यानांमध्याह्नरात्र्यर्धंतत्रदेवानांक्रमेणरात्र्यर्धमध्याह्नेइतिफलितार्थः । अत्रहेतुमाह । उपरीति । देवदैत्यामेरोरुत्तरदक्षिणाग्रवर्तिनोऽन्योन्यमात्मानंस्वस्वुपरिभागऊर्ध्वभागेकल्पयन्त्यङ्गीकुर्वन्ति ।वस्तुतोभूमेर्गोलकत्वेनसर्वत्रतुल्यत्वान्निरपेक्षोर्ध्वाधोभागयोरनुपपत्तेः । तथाचदेवादैत्यापेक्षयोर्ध्वस्थत्वंमन्यमानादैत्यानधःस्थानङ्गीकुर्वन्ति । दैत्याश्चदेवस्थानापेक्षयोर्ध्वस्थंमन्यमानादेवानधःकुर्वन्तीतितात्पर्यार्थः । एवंचदेव दैत्ययोर्विपरीतावस्थानाद्दिनरात्र्योर्वैपरीत्यंयुक्तमेवेतिभावः ॥ ५१ ॥

भा० टी०-दिवार्द्ध और रात्र्यर्द्ध याम्योत्तर अयनान्तमें होताहै । सुरासुरका विपरीत भावसे हुआ करताहै । और वे अपने २ स्थानको ऊपर समझते हैं ॥ ५१ ॥

अथदेवदैत्ययोरूर्ध्वाधोरीतिमन्यत्रापिसदृष्टान्तमातिदिशति-

अन्येऽपिसमसूत्रस्थामन्यन्तेऽधः परस्परम् ॥
भद्राश्वकेतुमालस्थालङ्कासिद्धपुराश्रिताः ॥ ५२ ॥

अन्येदेवदैत्याभिन्नाभूगोलस्थाः । अपिशब्दोदेवदैत्ययोःसमुच्चयार्थकः । समसूत्रस्थाभूव्यासान्तरितानराःपरस्परमधोमन्यन्ते । तत्रोदाहरति । भद्राश्वकेतुमालस्थाइति । भद्राश्वकेतुमालशब्दौस्वस्यान्तर्गतयमकोटिरोमकनगरविशेषाभिधायकौस्पष्टभूव्यासान्तरस्थत्वाङ्गीकोरतुयथाश्रुतपरस्परमधोमन्यन्तेतुर्यचरणस्तु व्यक्तएव ॥ ५२ ॥

भा० टी०-वैसेही समसूत्रवाले गण परस्परको नीचे समझते हैं । जैसे भद्राश्व और केतुमाल अथवा लंका और सिद्धपुरवासी समसूत्रवाले हैं ॥ ५२ ॥

अथोक्तकाल्पनिकमेवेतिद्रढयन्नाह-

सर्वत्रैवमहीगोलेस्वस्थानमुपरिस्थितम् ॥
मन्यन्तेखेयतोगोलस्तस्यक्वोर्ध्वंक्वाप्यधः ॥ ५३ ॥

भूगोलेसर्वत्रसर्वप्रदेशेषुमध्येस्वस्थानंनिजाधिष्ठितस्थानमूर्ध्वंस्थिततंतदधिष्ठितामनुष्याःस्वाभिमानेनाङ्गीकुर्युः । अतःकारणाद्भूगोलेसर्वएवोर्ध्वस्थाः । अधः स्थास्तुनभवन्त्येव । स्वापेक्षयोर्ध्वाधःस्थत्वंनवस्तुतइतितत्वम् । अन्यथाधःस्थत्वेनपतनशङ्कयाभूगोलेमनुष्याद्यवस्थानानुपपत्तेः । अत्रकारणमाह । खइति । यतःकारणात्खेब्रह्माण्डाकाशमध्यभागेभूगोलोऽस्ति । तथाच भूगोलादभितस्तुल्यत्वाद्भूगोलेतत्त्वतयोर्ध्वाधोभागादेरसम्भवइतिभावः । स्वाभिप्रायंस्पष्टयति । तस्येति । भूगोलस्याकाशमध्यस्थस्यसमन्तादाकाशेक्वकस्मिन्भागऊर्ध्वमूर्ध्वत्वं । कस्मिन्भागे । वासमुच्चये । अधोऽधस्त्वम् । अपिरूर्ध्वत्वेनसमुच्चयार्थकः । तथाचसमन्तादाकाशस्यतुल्यत्वेनभूमेरूर्ध्वाधोभागौनिर्वचनीकर्तुमशक्यौयाभ्यामूर्ध्वाधोलोकानियताः स्युरितिभूमेरूर्ध्वाधोभागाद्यसम्भवादितिभावः ॥ ५३ ॥

भा०टी०-पृथ्वीके गोलहोनेसे सर्वत्र अपने २ स्थानको ऊपर स्थितहुआ समझतेहैं, शून्य मध्यस्थित गोलमें नीचाही क्या है? और उसमें ऊंचाईही कहां है? ॥ ५३ ॥

नन्वियंभूःसमादर्शाकाराप्रत्यक्षाकथंगोलाकारेत्यतआह-

अल्पकायतयालोकाःस्वात्स्थानात्सर्वतोमुखम् ॥
पश्यन्तिवृत्तामप्येतांचक्राकारांवसुन्धराम् ॥ ५४ ॥

जनाःस्वाधिष्ठितप्रदेशात्सर्वतःसर्वदिक्षु । अभिमुखंवृत्तांगोलाकारामेतां प्रत्यक्षांपृथ्वींचक्राकारांमण्डलाकारांसमांपश्यन्ति । एवकारार्थेऽपिशब्दः । तेनभूमेर्वस्तुतोगोलाकारत्वेऽपितदाकारेणादर्शनंमुकुराकारतयादर्शनंच न विरुद्धम् । अत्रहेतुमाह । अल्पकायतयेति । ह्रस्वशरीरत्वेनेत्यर्थः । तथाच महतीभस्तत्पृष्ठस्थस्यमनुष्यस्यातिह्रस्वस्याल्पदृष्टिप्रचाराद्गोलाकारतयानभासतेकिन्तुसममण्डलतयाभासतेगोलवृत्तशतांशस्यसमत्वेनभानात् । अन्यथा प्रथमज्यायाश्चापसमत्वानुपपत्तिरितिभावः ॥ ५४ ॥

भा०टी०-छोटे शरीरवाले होनेसे लोग चारोंओर इस पृथ्वीको गोलाकाररूपसे देखते हैं ॥ ५४ ॥

अथनिरक्षादिदेशेषुमेरुव्यतिरिक्तान्यदेशेषुदिनरात्र्योर्मानंविवक्षुर्मेरोरग्रभागयोर्निरक्षदेशेषुभचक्रभ्रमणमाह-

सव्यंभ्रमतिदेवानामपसव्यंसुरद्विषाम् ॥
उपरिष्टाद्भगोलोऽयंव्यक्षेपश्चान्मुखःसदा ॥ ५५ ॥

अयंप्रत्यक्षोभगोलोनक्षत्राधिष्ठितमूर्तगोलोदेवानांमेरोरुत्तराग्रवर्तिनांसव्यम् । पूर्वादिक्रममार्गेणेत्यर्थः । भ्रमतिभ्रमपरिवर्तंकरोतीत्यर्थः । दैत्यानांमेरोर्दक्षिणाग्रवर्तिनामपसव्यंपूर्वादिदिग्व्युत्क्रममार्गेण । पूर्वोत्तरपश्चिमदक्षिणक्रमेणेत्यर्थः । नक्षत्राधिष्ठितगोलेभ्रमति । व्यक्षेनिरक्षदेशेषु । जात्यभिप्रायेणैकवचनम् । उपरिष्टान्मस्तकोर्ध्वमध्यभागोभगोलःपश्चान्मुखःपश्चिमदिगभिमुखः सदानित्यंपरिभ्रमति। भगोलस्यध्रुवमध्यस्थत्वेनभ्रमणात् । तयोस्तत्राक्षितिजवृत्तस्थत्वाच्च॥५५॥

भा०टी०-यह भूगोल देवताओंके निकट सव्यादिमें (दक्षिणसे वाममें) और असुरोंके निकट अपसव्यादिमें और निरक्षमनुष्योंके निकट मस्तकोर्द्ध मध्यभागमें पश्चिम दिशामें भ्रमण करता है ॥ ५५ ॥

अथनिरक्षेदिनरात्र्योर्मानंकथयन्नन्यत्रापिततोन्यूनाधिकंमानंभवतीत्याह-

अतस्तत्रदिनंत्रिंशन्नाडिकंशर्वरीतथा ॥
हानिवृद्धीसदावामंसुरासुरविभागयोः ॥ ५६ ॥

अतोनिरक्षेमस्तकोर्ध्वभगोलोभ्रमतीतिकारणात्तत्रनिरक्षदेशेत्रिंशन्नाडिकं त्रिंशद्घटीमितंदिनंस्यात् । शर्वरीरात्रिस्तथात्रिंशद्घटीपरिमितास्यात् । तत्क्षितिजवृत्तस्यध्रुवद्वयसंलग्नतयागोलमध्यस्थत्वादिनरात्र्योस्तुल्यत्वंयुक्तमेवेति भावः । सुरासुरविभागयोर्जम्बूद्वीपसमुद्रादिदक्षिणदेशयोःसदाविषुवत्क्रमणातिरिक्तकालेक्षयवृद्धीदिनरात्र्योःप्रत्येकंवामंव्यस्तंयथास्यात्तथाज्ञेयम् । एतदुक्तंभवति । जम्बूद्वीपेदिनह्रासेरात्रिवृद्धिस्तदादक्षिणदेशेदिनरात्र्योःक्रमेण वृद्धिहानी । जम्बूद्वीपदिनवृद्धौरात्रिहानिस्तदादक्षिणदेशेदिनरात्र्योःक्रमेणहानिवृद्धी । एवंदक्षिणदेशेहानिवृद्ध्योर्जम्बूद्वीपेवृद्धिहानीदिनेरात्रौवायथायोग्यमिति । अत्रोपपत्तिः । तत्क्षितिजवृत्तस्यध्रुवसम्बन्धभावेनगोलमध्यस्थत्वाभावाद्दिनरात्र्योः सदाविषुवद्दिनव्यतिरिक्तेनतुल्यत्वंकिन्तुन्यूनाधिकत्वमहोरात्रस्यषाष्टिघटिकात्मकत्वादिति ॥ ५६ ॥

भा०टी०-निरक्षदेशमें सदा तीस घड़ीका दिन और ३० हीकी रात होती है । सुरासुरविभागमें दिनरातके विपरीतरूपसे हानि वृद्धि होती है ॥ ५६ ॥

अथैतत्श्लोकोत्तरार्द्धार्थंश्लोकाभ्यांविशदयति-

मेषादौतुसदावृद्धिरुदगुत्तरतोऽधिका ॥
देवांशेचक्षपाहानिर्विपरीतंतथासुरे ॥ ५७ ॥
तुलादौद्युनिशोर्वामंक्षयवृद्धीतयोरुभे ॥
देशक्रान्तिवशान्नित्यंतद्विज्ञानंपरोदितम् ॥ ५८ ॥

१ मेषादौप्रत्यहम् इति वा पाठः।

मेषादौषड्भउदगुत्तरगोलेमूर्येसति । उत्तरतोयथोत्तरंसदायावदुत्तरगोलेदेवांशे-
जम्बूद्वीपेऽधिकायथोत्तरमधिकावृद्धिर्निरक्षदेशीयादिनेतुकाराद्यथोत्तरंसूर्यस्योत्तरग-
मनेयथोत्तरंदिनेवृद्धिःपरमोत्तरगमनात्परावर्तते । यथोत्तरंन्यूनावृद्धिरित्यर्थः ।
क्षपाहानीरात्रेरपचयः । चःसमुच्चये । आसुरेसमुद्रादिदक्षिणभागेतथादिनरात्र्योः
क्षयवृद्धीविपरीतंव्यस्तम् । दिनेहानीरात्रौवृद्धिरित्यर्थः । तुलादौषड्भेदक्षिणगोले-
सूर्येसतितयोर्जम्बूद्वीपसमुद्रादिदक्षिणभागयोर्दिनरात्र्योरुभेदेक्षयवृद्धीउपचयापच-
यौवामंव्यस्तम् । अयमर्थः । जम्बूद्वीपेदिनरात्र्योरुत्तरगोलस्थवृद्धिक्षयक्रमेणक्षयवृ-
द्धीस्तः।समुद्रादिदक्षिणभागेदिनरात्र्योर्वृद्धिक्षयौस्तइति । ननुक्षयवृद्ध्योःकियन्मित-
त्वमित्यतःपूर्वोक्तंस्मारयति । देशक्रान्तिवशादिति।तद्विज्ञानंतयोःक्षयवृद्ध्योर्ज्ञानंसं-
ख्याज्ञानंनित्यंप्रत्यहंदेशक्रान्तिवशात् । देशपलभाक्रान्तिरेतदुभयानुरोधात्पुरापू-
र्वखण्डस्पष्टाधिकारे । क्रांतिज्याविषुवद्भाघ्नीक्षितिज्याद्वादशोद्धृता । त्रिज्यागुणा-
होरात्रार्धकर्णाप्ताचरजासवः ॥ तत्कार्मुकमित्यनेनदिनरात्र्योरर्धमुक्तम् । तद्विगुणं-
दिनरात्र्योरित्यर्थसिद्धम् । अत्रोपपत्तिः । निरक्षदेशेध्रुवद्वयलग्नंक्षितिजवृत्ततत्तउत्तर-
भागेस्वस्थानक्षितिजं स्वभूगोलमध्यस्थमुत्तरध्रुवादधोदक्षिणध्रुवाच्चोच्चमित्यतउ-
त्तरगोलेनिरक्षक्षितिजादधोदक्षिणगोलऊर्ध्वमितिपञ्चदशघटिकानिरक्षदेशदिनार्ध-
क्षितिजान्तररूपचरेणगोलक्रमेणयुतहीनं दिनार्धरात्र्यर्धचविपरीतम् । एवंदक्षि-
णभागेऽभीष्टदेशेक्षितिजमुत्तरध्रुवाद्युन्नतंदक्षिणध्रुवान्नतमितिनिरक्षक्षितिजान्निरक्षक्षि-
तिजंगोलक्रमेणोर्ध्वाधइत्युत्तरभागाद्व्यस्तम् ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

भा०टी०-सूर्यमेषादिमें (कर्कतक) संचरण करनेसे देवांशमें क्रमानुसार दिनमान वृद्धि और रात्रिमानकी हानि होती है, किन्तु असुरांशमें विपरीत होता है। तुलादिमें दिवानिशि मान और क्षय वृद्धि विपर्यय होता है। क्षय वृद्धि देशकी क्रान्तिके वशसे जैसा होता है वही सर्वोत्तम ज्ञान पूर्वमें (२ अध्यायमें) कह आयाहूं ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

अथोक्तस्यावधिंदेशंविवक्षुःप्रथमंतदुपयुक्तानिक्रान्त्यंशयोजनान्याह-

भूवृत्तंक्रान्तिभागघ्नंभगणांशविभाजितम् ॥
अवाप्तयोजनैरर्कोव्यक्षाद्यात्युपरिस्थितः ॥ ५९ ॥

भूवृत्तंभूपरिधियोजनमानंप्रागुक्तमभीष्टक्रान्त्यंशैर्गुणितंद्वादशराशिभागैःषष्ट्य-
धिकशतत्रयमितैर्भक्तंलब्धयोजनैः कृत्वासूर्यउपरिआकाशेस्थितोवर्तमानोदक्षिणं-
तउत्तरतोवायांतिगच्छति । क्रान्त्यभावेतुनिरक्षदेशोपर्येवपरिभ्रमति । अत्रोपप-
त्तिः । निरक्षदेशान्मेरोरुत्तरदक्षिणाग्राभिमुखंसूर्यःक्रान्त्यंशैर्गच्छति । तद्योजनज्ञा-
नंतुभगणांशैर्मेर्वग्रद्वयनिरक्षदेशस्पृष्टभूपरिधियोजनानितदाक्रान्त्यंशैःकानीत्यनुपाते-
नेत्युपपन्नम् ॥ ५९ ॥

भा० टी०-भूवृत्तको (५०५९) सूर्यक्रान्तिसे गुणकरके ३६० से भागकरनेपर जो योजन संख्या होगी निरक्ष देशसे तितने योजन दूर स्थित स्थानमें सूर्य मध्याह्नके समय मस्तकपर होगा ॥ ५९ ॥

अथदिनमानानयनगणितस्यावधिदेशज्ञानं श्लोकाभ्यामाह--

परमापक्रमादेवंयोजनानिविशोधयेत् ॥
भूवृत्तपादाच्छेषाणियानिस्युर्योजनानितैः ॥ ६० ॥
अयनान्तेविलोमेनदेवासुरविभागयोः ॥
नाडीषष्ट्यासकृदहर्निशाप्यास्मिन्सकृत्तथा ॥ ६१ ॥

परमक्रान्तिभागाच्चतुर्विंशन्मितात् । एवंपूर्वोक्तरीत्यायोजनानिजातानि । भूपरिधेःपूर्वोक्तस्यचतुर्थांशात्परिवर्जयेत् । अवशिष्टानियानियत्सङ्ख्यामितानियोजनानिभवन्तितैर्योजनैर्देवासुरविभागयोर्निरक्षदेशादुत्तरदक्षिणप्रदेशयोर्यौदेशौतयोरित्यर्थः । अयनान्तउत्तरदक्षिणायनसन्धौकर्कादिस्थेसूर्येदक्षिणोत्तरायणसन्धौमकरादिस्थेसूर्येविलोमेनव्यत्यासेनसकृदेकवारंनाडीषष्ट्याघटीषष्ट्याहर्दिनमानंभवति । अस्मिन्नेताद्दशेदेशेतस्मिन्नेवायनसन्ध्यासन्नेसकृदेकवारंतथाषष्टिघटीमिताविलोमेनरात्रिर्भवति । अपिशब्दोदिनेनसमुच्चयार्थः । एतदुक्तंभवति । कर्कादिस्थेसूर्येनिरक्षदेशादुत्तरतद्योजनान्तरितदेशेषष्टिघटीमितदिनंतदैवनिरक्षदेशाद्दक्षिणतद्योजनान्तरितदेशेषष्टिघटीमितारात्रिः । मकरादिस्थेसूर्येताद्दशोत्तरभागेषष्टिघटीमितारात्रिर्दक्षिणभागेताद्दशेषष्टिमितंदिनमिति । अत्रोपपत्तिः । परमक्रान्तियोजनानिभूवृत्तचतुर्थांशयोजनेभ्योहीनानि । निरक्षदेशात्तन्मितयोजनान्तरितोयोदक्षिणोत्तरदेशस्तस्मान्मेरोर्दक्षिणोत्तराग्रंक्रमेणपरमक्रान्तियोजनान्तरितम् । अतस्तत्रलंबांशाश्चतुर्विंशतिःपलांशाश्चषट्षष्टिरिति । तद्देशेक्रान्तिवृत्तानुकारंक्षितिजमित्ययनान्तेपञ्चदशघटीमितमहोरात्रवृत्तचतुर्भागखण्डंनिरक्षतद्देशक्षितिजयोरन्तरालरूपंचरमतउक्तरीत्यादिनार्धरात्र्यर्धवोक्तरीत्यायथायोग्यंत्रिंशत्तद्द्विगुणंषष्टिघटीमिततन्मानंगणितरीत्योपपन्नम् । युक्तंचैतत् । अयनान्ताहोरात्रवृत्तस्यैकस्यतत्क्षितिजप्रदेशएकत्रैवसंलग्नत्वाद्द्विधासंलग्नत्वाभावात्प्रवहभ्रमितसूर्यपरिवर्त्तपूर्तिःषष्टिघटीभिर्दर्शनमदर्शनंयथायोग्यंतद्गोलस्थित्याप्रत्यक्षसिद्धमेवेति ॥ ६० ॥ ६१ ॥

भा०टी०-सूर्यके परमापक्रमके अनुसार योजन, भूवृत्त योजन पादसे अलग करनेपर जो योजन रहते हैं निरक्ष देशसे तितने दूर अयनान्त दिनको देवासुर विभागमें विपरीतरूपसे दिनरात ६० घटीका होता है ॥ ६० ॥ ६१ ॥

अथोक्तदिनरात्रिमानगणितंतदवधिदेशपर्यन्तंदक्षिणोत्तरभागयोर्नाग्रइत्याह--

तदन्तरेऽपिषष्टचन्तेक्षयवृद्धीअहर्निशोः ॥
परतोविपरीतोऽयंभगोलःपरिवर्तते ॥ ६२ ॥

तदन्तरेनिरक्षदेशोक्तावधिदेशयोरन्तरालदक्षिणोत्तरविभागदेशेषष्ट्यन्तेषष्टिघटी मध्येक्षयवृद्धीअपचयोपचयावुक्तरीत्यादिनरात्र्योर्यथायोग्यंभवतः । परतोऽवधिदेशादग्रिमदेशदक्षिणोत्तरेदैत्यदेवस्थाननिकटेऽयं प्रत्यक्षोभगोलोनक्षत्राद्यधिष्ठितो मूर्तोगोलोविपरीतोऽवधिदेशान्तर्गतदेशसम्बन्धीगणितविरुद्धः परिवर्त्ततेभ्रमाति तत्रोक्तरीत्यादिनरात्र्योर्वृद्धिक्षयौनभवतइत्यर्थः । त्रिज्याधिकाराच्चरानयनानुपपत्तेः । चरस्वरूपासम्भवाच्च ॥ ६२ ॥

भा०टी०–दोनों दिशामें उस दूरताके मध्य ६० दण्डके मध्यमें दिन या रात घटता बढता है । तिस्से ऊपर दोनों स्थानोंमें विपरीत भावसे भूगोल परिभ्रमण करता है ॥ ६२ ॥

अथविपरीतगोलस्थितिंश्लोकाभ्यांप्रदर्शयति–

ऊनेभूवृत्तपादेतुद्विज्यापक्रमयोजनैः ॥
धनुर्मृगस्थःसवितादेवभागेनदृश्यते ॥ ६३ ॥
तथाचसुरभागेतुमिथुनेकर्कटेस्थितः ॥
नष्टच्छायामहीवृत्तपादेदर्शनमादिशेत् ॥ ६४ ॥

द्विराशिज्यायायेक्रान्त्यंशास्तेषांयोजनैः पूर्वावगतैर्भूपरिधिचतुर्थांशेहीनेकृतेसति । तुकारान्निरक्षदेशाद्यद्योजनांतरितेदेशेदेवभागउत्तरभागेधनुर्मकरराशिस्थोर्कस्तद्देशवासिभिर्नदृश्यते । धनुर्मकरस्थेऽर्केतेषांरात्रिः सदास्यादित्यर्थः । असुरभागेनिरक्षदेशाद्दक्षिणप्रदेशे । चःसमुच्चयार्थः । तुकारात्तद्योजनान्तरितप्रदेशेमिथुनेकर्केकर्कराशौस्थितोऽर्कस्तथातद्देशवासिभिर्नदृश्यते । नष्टच्छायामहीवृत्तपादे । अभावंप्राप्ताछायाभूच्छायायत्रतादृशेभूपरिधिचतुर्थांशेसूर्यस्यदर्शनंसदाकथयेत् । यत्रभूच्छायात्मिकारात्रिर्नास्तितत्रदिनमित्यर्थः । तथाचनिरक्षदेशात्तद्योजनान्तरितोत्तरप्रदेशेकर्कमिथुनस्थोऽर्कोदृश्यतेतद्योजनान्तरितदक्षिणप्रदेशेधनुर्मकरस्थोऽर्कोदृश्यतइतिफलितार्थः । अतएव । "त्र्यंशयुङ्नवरसाः पलांशकायत्रतत्रविषयेकदाचन । दृश्यतेनमकरोनकार्मुकंकिंचकार्किमिथुनौसदोदितौ ॥ "इतिभास्कराचार्योक्तंसङ्गच्छते ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

भा०टी०–द्विराशिके अपक्रमागत योजन भूवृत्तपादसे वियोग करनेपर जो योजन होता है, तितनी दूर देवभावमें धनु वा मृगास्थित सूर्य कभी दिखाई नहीं देता । असुरभागमें वैसेही दूरस्थानसे मिथुनकर्क स्थित सूर्य कभी दिखता नहीं । जिंसस्थानमें पृथ्वीकी छाया नहीं है तहांपर सूर्यका दर्शन होता है ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

अथान्यत्रापिविपरीतस्थितिंश्लोकाभ्यांदर्शयाति-

एकज्यापक्रमानीतैर्योजनैःपरिवर्जितैः ॥
भूमिकक्षाचतुर्थांशेव्यक्षाच्छेषैस्तुयोजनैः ॥ ६५ ॥
धनुर्मृगालिकुम्भेषुसंस्थितोऽर्कोनदृश्यते ॥
देवभागेऽसुराणांतुवृषाद्येभचतुष्टये ॥ ६६ ॥

एकराशिज्यायाःक्रान्त्यंशेभ्योभूपरिधिचतुर्थांशेहीनेकृतेसति निरक्षदेशादवशिष्टैर्योजनैः । तुकारादन्तरितेदेशेदेवभागउत्तरभागेधनुर्मकरवृश्चिककुंभराशिषु-स्थितः सूर्यस्तद्देशवासिभिर्नदृश्यते। असुराणांदैत्यानांनिरक्षदेशात्तद्योजनान्तरितदक्षिणभागेवृषादिकेराशिचतुष्टयेस्थितोऽर्कस्तद्देशवासिभिर्नदृश्यते ।तुकारादुत्तरभागे-वृषादिचतुष्टयस्थितोऽर्कस्तद्देशवासिभिर्दृश्यते वृश्चिकादिचतुष्टयस्थितोर्कोदक्षिणभागेतद्देशवासिभिर्दृश्यतइत्यर्थः । अतएव । " यत्रसाङ्घ्रिगजवाजिसम्मिता-स्तत्रवृश्चिकचतुष्टयंनच । दृश्यतेचवृषभाद्यचतुष्टयंसर्वदासमुदितं हिलक्ष्यते ॥ " इति भास्कराचार्योक्तंचसङ्गच्छते ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

भा०टी-एक राशिके अपक्रमगत योजन भूवृत्तपादसे घटालेनेपर जो योजन होता है तिस दूरके स्थानसे देवभागमें वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भके स्थित सूर्य नहीं दीखते । तावत स्थित असुरभागमें वृषादि चार राशिके सूर्य नहीं देखे जाते ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

अथशून्यराशिक्रान्त्यानीतयोजनेभ्योवगतमेर्वग्रभागयोरपिस्थितिवैलक्षण्यमाह-

मेरौमेषादिचक्रार्धेदेवाःपश्यन्तिभास्करम् ॥
सकृदेवोदितंतद्वदसुराश्चतुलादिगम् ॥ ६७ ॥

मेरावुत्तराग्रावस्थितादेवामेषादिचक्रार्धेमेषादिराशिषट्केऽवस्थितमर्कंसकृदेकवारम् । एवकारादनेकवारनिरासनिश्चयः । उदितमदर्शनानन्तरंप्रथमदर्शनविषयं निरन्तरं पश्यन्ति । असुरामेरुदक्षिणाग्रस्थादैत्याः । चः देवैः समुच्चयार्थः । तुलादिराशिषट्कस्थंतद्वत्सकृदुदितंनिरंतरंपश्यन्ति ॥ ६७ ॥

भा०टी०-मेरुस्थितदेवतालोग मेषादिचक्रार्द्धगत सूर्यको सदा देखते हैं और असुरलोग तुलादिगत सूर्यको तैसाही देखते हैं ॥ ६७ ॥

अथनिरक्षदेशादयनसन्धौकियद्भिर्योजनैरूर्ध्वमर्कोभवतितदाह-

भूमण्डलात्पञ्चदशेभागेदेवेऽथवासुरे ॥
उपरिष्टाद्व्रजत्यर्कःसौम्ययाम्यायनान्तगः ॥ ६८ ॥

देवउत्तरभागे । अथवासुरेदक्षिणभागें । निरक्षदेशाद्भूपरिधेःपंचदशेभागेतत्फलयोजनांतरितेदेशेक्रमेणसौम्ययाम्यायनान्तगउत्तरायणांतदक्षिणायनांतास्थितोऽर्कउपरिष्टादूर्ध्वंव्रजतिपरिभ्रमति । यथागोलसंधौनिरक्षदेशेतथात्रभागद्वयइतिफलितार्थः । अत्रोपपत्तिः । अयनांतस्थेपरमक्रांतिश्चतुर्विंशत्यंशास्तद्योजनानि । 'भूवृत्तंक्रांतिभागघ्नंभगणांशविभाजितम् ।' इत्यत्रचतुर्विंशतिमितगुणभगणांशमितहरौगुणेनापवर्त्यहारस्थानेपंचदशेतिभूमंडलात्पंचदशेभागइत्युक्तमुपपन्नम् ॥६८॥

भा०टी०-भूवृत्तके पंचदश भाग दूर उत्तर अयनमें देवभागमें और दक्षिणायनमें असुरभागमें सूर्य मस्तकके ऊपर होकर भ्रमण करते हैं ॥ ६८ ॥

अथनिरक्षदेशाद्भूपरिधिपञ्चदशभागपर्यन्तंसूर्यस्यदक्षिणोत्तरतोगमनमुक्त्वातच्छायागमनंप्रतिपादयति-

तदन्तरालयोश्छायायाम्योदक्सम्भवत्यपि ॥
मेरोरभिमुखंयातिपरतःस्वविभागयोः ॥ ६९ ॥

तदन्तरालयोर्निरक्षदेशात्पञ्चदशभागमध्यस्थितदक्षिणोत्तरदेशयोश्छायाद्वादशांगुलशंकोर्मध्याह्नच्छायाभीष्टकालिकच्छायाग्रंवादक्षिणाग्रमुत्तराग्रंवासंभवति । एतदुक्तंभवति । निरक्षदेशात्पंचदशभागान्तरालोत्तरदेशेमध्याह्ननतांशानांदक्षिणत्वेछायाग्रमुत्तरम् । नतांशानामुत्तरत्वेछायाग्रंदक्षिणम् । एवंनिरक्षदेशात्पञ्चदशभागान्तरालस्थितदक्षिणदेशेसूर्यस्योत्तरस्थत्वेछायाग्रंदाक्षिणंदक्षिणस्थत्वेछायाग्रमुत्तरमिति । परतःपञ्चदशभागान्तरालदेशेस्वविभागयोर्दक्षिणोत्तरविभागयोर्मेरोरभिमुखंमेर्वेकयोः सम्मुखंक्रमेणदक्षिणाग्रमुत्तराग्रंयथास्यात्तथेत्यर्थः । छायायातिगच्छति भवतीत्यर्थः । अपिशब्दःपूर्वार्धार्थेनसमुच्चयार्थकः ॥ ६९ ॥

भा०टी०-इन दोनोंके मध्यस्थित स्थानमें छाया दक्षिण या उत्तरमें स्थित होसकती इतने ऊपर अपने २ भागमें छाया मेरुके सामने पतित होती है ॥ ६९ ॥

अथकथंपर्येतिभुवनानिविभावयन्निति प्रश्नस्योत्तरंश्लोकाभ्यामाह-

भद्राश्वोपरिगःकुर्याद्भारतेतूदयंरविः ॥
रात्र्यर्धंकेतुमालेतुकुरावस्तमयंतदा ॥ ७० ॥
भारतादिषुवर्षेषुतद्वद्देवपरिभ्रमन् ॥
मध्योदयार्धरात्र्यस्तकालात्कुर्यात्प्रदक्षिणम् ॥ ७१ ॥

भद्राश्ववर्षोपरिगतःसूर्योभरतवर्षेस्वोदयंकुर्यात् । तुकाराद्भद्राश्ववर्षेमध्याह्नंकुर्यात् । तदातस्मिन्कालेकेतुमालवर्षेऽर्धरात्रंकुरौकुरुवर्षेऽस्तमयंस्वास्तंकुर्यात् । तुका-

राद्रुक्तवर्षयोरन्तरालेदिनस्यगतंशेषंवारात्रेश्चतद्यथायोग्यंकुर्यादित्यर्थः । अतिस्थूल-देशग्रहणेयथाश्रुतमिदंभव्यंकिञ्चित्सूक्ष्मदेशग्रहणे तुयमकोटिलङ्कारोमकसिद्धपुरा-ण्यन्तर्गतानितच्छब्दवाच्यानिज्ञेयानि । "लङ्कापुरेऽर्कस्ययदोदयःस्यात्तदा दिनार्धयमकोटिपुर्याम् । अधस्तदासिद्धपुरेऽस्तकालःस्याद्रोमकेरात्रिपलंतदैव ॥" इतिभास्कराचार्योक्तभूगोलउक्तनगराणांभूपरिधि-चतुर्थांशान्तरत्वात्संगच्छते । अथभारतादिषुत्रिषुवर्षसञ्ज्ञेषुभारतकेतुमालकुरु-वर्षेषुतद्वद्भद्राश्ववर्षोपरिगवत् । एवकारात्तन्न्यूनाधिकव्यवच्छेदःपरिभ्रमन्प-रिभ्रमेणस्वस्वाभिमतस्थानोपरिस्थितिंकुर्वन्सूर्यः प्रदक्षिणंयथास्यात्तथासव्यक्र-मेणस्वस्थानादिक्रमेणेतियावत् । उक्तचतुर्वर्षेषुमध्योदयार्धरात्र्यस्तकालान्मध्या-ह्नोदयार्धरात्र्यस्तसञ्ज्ञान्कालान्कुर्यात् । एतदुक्तंभवति । भारतवर्षोपरिगतेऽर्केभा-रतकेतुमालकुरुभद्राश्ववर्षेषुक्रमेणमध्याह्नसूर्योदयार्धरात्रास्ताःस्युः । केतुमालवर्षो-परिगतेऽर्केकेतुमालकुरुभद्राश्वभारतवर्षेषुक्रमेणमध्याह्नसूर्योदयार्धरात्रास्ताः । कुरु-वर्षोपरिगतार्केकुरुभद्राश्वभारतकेतुमालवर्षेषुक्रमेणमध्याह्नसूर्योदयार्धरात्रास्ताभ-वन्तीति ॥ ७० ॥ ७१ ॥

भा०टी०-जिस समय भद्राश्वमें मस्तकपर सूर्य होता है, तब भारतमें लंकोदयगत होता है, केतुमालमें रात्र्यर्द्ध (आधीरात) और कुरुवर्षमें अस्त प्रायः होता है । भारतादिवर्षमें वैसेही सूर्यभ्रमणके द्वारा मध्य, उदय, आधीरात, अस्तकाल आदिकरके प्रदक्षिण करते हैं ॥ ७० ॥ ७१ ॥

ननुग्रहाणांगतिसद्भावात्प्रतिदेशंयाम्योत्तरयोर्ग्रहगमनंप्रतिक्षणंचाविलक्षणंभास-तांपरन्तुनक्षत्राणांगत्यभावात्प्रतिक्षणभ्रमेणैकत्रावस्थानाभावेऽपिप्रतिदेशमेकरूपा-वस्थानंकुतोन । एवंध्रुवयोःपरिभ्रमस्याप्यभावात्सदासर्वत्रैकरूपावस्थानदर्शनाप-त्तिश्चेत्यतआह-

ध्रुवोन्नतिर्भचक्रस्यनतिर्मेरुंप्रयास्यतः ॥
निरक्षाभिमुखंयातुर्विपरीतेनतोन्नते ॥ ७२ ॥

मेरुंमेरोरुत्तराग्रंदक्षिणाग्रंवातदभिमुखंप्रयास्यतोगच्छतःपुरुषस्यध्रुवोन्नतिःक्रमे-णोत्तरदक्षिणयोर्ध्रुवयोरौच्च्यंभवति । भचक्रस्यनक्षत्राधिष्ठितगोलमध्यभागवृत्तस्य नतिःक्रमेणदक्षिणोत्तरयोर्नतत्वंभवति । निरक्षदेशाभिमुखंगच्छतःपुरुषस्यनतोन्नते पूर्वोक्तेव्यस्तेभवतः । उत्तरभागस्थपुरुषस्यनिरक्षाभिमुखंगच्छतःपूर्वोक्तस्थानापे-क्षयोत्तरध्रुवस्यनतत्वंपूर्वस्थानापेक्षयाभचक्रस्योन्नतत्वम् । एवंदक्षिणभागस्थ पुरुषस्यनिरक्षाभिमुखंगच्छतःपूर्वस्थानापेक्षयादक्षिणध्रुवस्यनतत्वंभचक्रस्योन्नतत्व-मिति ॥ ७२ ॥

भा०टी०-मेरुके सामने गमन करनेसे क्रमानुसार ध्रुवकी उन्नति और भचक्रकी नति दिखाई देती है और निरक्षके सामने गमन करनेसे विपरीत दिखाई देताहै अर्थात् ध्रुवकी नति और भचक्रकी उन्नति दिखाई देती है ॥ ७२ ॥

अथकुतएवमित्यतः । कथंपर्येतिभगणः सग्रहोऽयंकिमाश्रयः । इतिप्रश्नस्योत्तरंभचक्रभ्रमणवस्तुस्थितिमाह-

भचक्रंध्रुवयोर्बद्धमाक्षिप्तंप्रवहानिलैः ॥
पर्येत्यजस्रंतन्नद्धाग्रहकक्षायथाक्रमम् ॥ ७३ ॥

भचक्रंनक्षत्राधिष्ठितमूर्तगोलरूपं ध्रुवयोर्दक्षिणोत्तरास्थिरतारयोर्बद्धंब्रह्मणानिबद्धंनियतवायुगतिनागोलाकारेणप्रतिबद्धंप्रवहानिलैः प्रवहवाय्वंशैः स्वस्वस्थानस्थैराक्षिप्तंस्वस्वस्थानाभिघातंप्राप्तंसदजस्रंनिरन्तरंपर्येति । पश्चिमाभिमुखंभ्रमतीत्यर्थः । ननुनक्षत्रचक्रंवायुनाभ्रमति । ग्रहास्त्वधोऽधःस्थाः सम्बन्धाभावात्कथंभ्रमन्तीत्यतआह । तन्नद्धाइति । ग्रहाणांशन्यादीनांकक्षामार्गावाय्वंशरूपाभचक्रान्तर्गताकाशस्थायथाक्रममधोऽधस्तन्नद्धामहाप्रवहवायुगोलस्थापितभचक्रेवायुसूत्रेणनिबद्धाअतोभचक्रेणसहभ्रमंति । तत्रस्थाग्रहाअपिभ्रमन्तीतिकिंचित्रम् । तथाचप्रवहवायुगोलमध्यस्थविषुवद्वृत्तपूर्वापरनिरक्षदेशेध्रुवयोः क्षितिजस्थत्वाद्भचक्रस्यमस्तकोपरिभ्रमणान्मेर्वग्राभिमुखंप्रयातुर्ध्रुवउच्चोभवति । ततआसन्नत्वाद्भचक्रंनतंभवति । ततोदूरत्वादितिसर्वंयुक्तम् ॥ ७३ ॥

भा०टी-दो ध्रुवमें बँधाहुआ भचक्र प्रवहवायुसे आक्षिप्त होकर सदा घूमता है और क्रमानुसार तिसमें बद्ध ग्रहकक्षा, भचक्रके साथ चलती रहती है ॥ ७३ ॥

अथ पित्र्यंमासेनभवतीतिप्रश्नयोरुत्तरमाह-

सकृदुद्गतमब्दार्धंपश्यन्त्यर्कंसुरासुराः ॥
पितरः शशिगाः पक्षंस्वदिनंचनराभुवि ॥ ७४ ॥

यथादेवदैत्याएकवारमुदितंसूर्यंसौरवर्षार्धपर्यन्तंपश्यन्ति । तथापितरश्चन्द्रबिम्बगोलोर्ध्वस्थिताः । पक्षंपंचदशतिथिपर्यन्तंपश्यन्ति । नराभूमौस्वदिनपर्यन्तमर्कंपश्यन्त्यतः । 'पित्र्यंमासेनभवतिनाडीषष्ट्यातुमानुषम् ।' इतिसर्वंयुक्तमतएव । "विधूर्ध्वभागेपितरोवसन्तः स्वाधः सुधादीधितिमामनन्ति । पश्यन्तितेर्कंनिजमस्तकोर्ध्वेदर्शेयतोऽस्माद्द्युदलंतदैषाम् । भार्धान्तरत्वान्नविधोरधःस्थंतस्मान्निशीथः खलुपौर्णमास्याम् । कृष्णेरविः पक्षदलेऽभ्युदेतिशुक्लेऽस्तमेत्यर्थतएवसिद्धम् ॥ इतिभास्कराचार्येणविस्तार्योक्तंसङ्गच्छते ॥ ७४ ॥

भा०टी०-देवता और असुरलोग जैसे एकवार उदय हुए सूर्यको ६ मासपर्यन्त देखते हैं। पितृगण चन्द्रस्थित होनेका कारण पक्षभरतक और पृथ्वीके आदमी सारे दिन सूर्यको देखते हैं ॥ ७४ ॥

अथप्रसङ्गादूर्ध्वस्थस्याल्पभगणानामधःस्थस्याधिकभगणानांयुक्त्याप्रतिपादनार्थंप्रथमंकक्षायाऊर्ध्वाधः क्रमेणमहदल्पत्वं तत्रस्थभागानांमहदल्पप्रदेशत्वंचाह-

उपरिस्थस्यमहतीकक्षाल्पाधः स्थितस्यच ॥
महत्याकक्षयाभागामहन्तोऽल्पास्तथाल्पया ॥ ७५ ॥

ऊर्ध्वस्थग्रहस्यकक्षावायुवृत्तमार्गरूपामहतीमहापरिधिप्रमाणा । अधःस्थस्यग्रहस्यकक्षाल्पाल्पपरिधिप्रमाणा । चोनिश्चयार्थे । लघुकक्षाणांमहाकक्षान्तर्गतत्वेनमहाकक्षाणांचान्तर्गतलघुकक्षात्वेनोर्ध्वाधः स्थयोर्महदल्पपरिधिकेकक्षे । अन्यथोक्तस्वरूपानुपपत्तेः । एवंमहतिवृत्तपरिधौद्वादशराशिभागानांसमत्वेनाङ्कनेभागाएकैकभागप्रदेशामहत्याकक्षयाकृत्वामहान्तोबहुस्थलात्मकालघुनिवृत्तेतदङ्कनेतथाभागाअल्पयाकक्षयाकृत्वाल्पाअल्पस्थलात्मकाः क्रमेणैकैकभागप्रमाणमंधिकाल्पंनसमंचक्रांशपूर्त्यनुपपत्तेरितितात्पर्यम् ॥ ७५ ॥

भा०टी०-ऊपर स्थितहुई कक्षा बड़ी है नीचे स्थित हुई कक्षा अल्प है, तिसकारणसे कक्षागत अंश बृहत् और अल्प होते हैं ॥ ७५ ॥

अथोर्ध्वाधः क्रमेणग्रहभगणभोगकालयोर्महदल्पत्वमाह-

कालेनाल्पेनभगणंभुङ्क्तेऽल्पभ्रमणाश्रितः ॥
ग्रहः कालेनमहतामण्डलेमहतिभ्रमन् ॥ ७६ ॥

अल्पभ्रमणाश्रितः । अल्पभ्रमणंपरिधिमानंयस्याः साल्पभ्रमणाधःस्थकक्षा। तत्स्थोग्रहोऽल्पेनसमयेनभगणंद्वादशराश्यात्मकंभुङ्क्तेऽतिक्रमते । महतिमण्डले। ऊर्ध्वस्थकक्षायामित्यर्थः । भ्रमन्गच्छन्महताबहुनासमयेनद्वादशराशीन्भुंक्ते । वक्ष्यमाणयोजनगतेरभिन्नत्वात् ॥ ७६ ॥

भा०टी०-अल्पकक्षाश्रित ग्रह अल्पकालमे भगणको भोग करता है। और महत्कक्षास्थित ग्रह दीर्घकालमें भोग करता है ॥ ७६ ॥

अथातएवोर्ध्वाधः क्रमेणग्रहयोर्भगणास्तुल्यकालेऽल्पाबहवोभवन्तीतिसोदाहरणमाह-

स्वल्पयातोबहून्भुङ्क्तेभगणाञ्छीतदीधितिः ॥
महत्याकक्षयागच्छंस्ततः स्वल्पंशनैश्चरः ॥ ७७ ॥

स्वल्पप्रमाणयाकक्षया । तुकारादतिक्रामंश्चंद्रोबहुप्रमाणान्भगणान्बहुवारं

द्वादशराशीनित्यर्थः । भुंक्ते । महाप्रमाणयाकक्षयागच्छञ्छनिस्ततश्चन्द्रात्स्वल्पंभगणमल्पप्रमाणान्भगणान् । जात्यभिप्रायेणैकवचनम् । अल्पवारंद्वादशराशीन्भुंक्ते । अतएवशनैश्चरइति ॥ ७७ ॥

भा० टी०-एक समयके मध्यमें स्वल्प कक्षागत चंद्रमा बहुतसे भगण भोगताहैः परन्तु शनिकी कक्षाके महत्त्ववशसे भगण अल्प होते हैं ॥ ७७ ॥

अथदिनाब्दमासहोराणामधिपानसमाः कुतः । इतिप्रश्नस्योत्तरंश्लोकाभ्यामाह-

मंदादधःक्रमेणस्युश्चतुर्थादिवसाधिपाः ॥
वर्षाधिपतयस्तद्वत्तृतीयाश्चप्रकीर्त्तिताः ॥ ७८ ॥
ऊर्ध्वंक्रमेणशशिनोमासानामधिपाःस्मृताः॥
होरेशाःसूर्यतनयादधोऽधःक्रमतस्तथा ॥ ७९॥

शनेःसकाशादधः कक्षाक्रमेणचतुर्थसङ्ख्याकाग्रहादिनाधिपतयोवारेश्वराभवन्ति । यथाशनिरविचन्द्रभौमबुधगुरुशुक्राइतितत्क्रमः । वर्षस्यषष्ट्यधिकशतत्रयदिनात्मकस्यस्वामिनस्तद्वन्मन्दादधःक्रमेणतृतीयसङ्ख्याकाग्रहाउक्ताः । चःसमुच्चयार्थे । तत्क्रमश्चयथाशनिभौमशुक्रचन्द्रगुरुसूर्यबुधाइति । चन्द्रात्सकाशादूर्ध्वकक्षाक्रमेणग्रहामासानांत्रिंशद्दिनात्मकानांस्वामिनःकथिताः । तत्क्रमश्चचन्द्रबुधशुक्ररविभौमगुरुशनयइति । शनेः सकाशादधःक्रमशः । अधःक्रमेणहोरेशाः । होरेतिलग्नं भगणस्यचार्धम् । इतिपञ्चदशभागात्मकहोराणांदिनेद्वादशरात्रौद्वादशेत्यहोरात्रेचतुर्विंशतिहोराणामित्यर्थः । होरासार्धद्विनाडिका । इतिषष्टिघटिकात्मकेऽहोरात्रे । चतुर्विंशतिहोराणामित्यन्ये । स्वामिनस्तथामासेश्वरवदव्यवहिताः कथिताः । यथातत्क्रमः शनिगुरुभौमरविशुक्रबुधचन्द्राइति । अत्रशनेःसर्वोर्ध्वस्थत्वाच्चन्द्रस्यसर्वाधःस्थत्वात्ताभ्यामधऊर्ध्वंक्रमः क्रमेणोक्तः । अन्यग्रहस्यावधित्वाभ्युपगमेविनिगमनाविरहापत्तेः । नतुशनेराद्यावधित्वेनसृष्ट्यादौदिनवर्षहोराणांस्वामित्वं नवाचन्द्रस्याद्यवधित्वेनसृष्ट्यादौमासेशत्वंपूर्वखण्डोक्तानीततदशैर्विरोधापत्तेः । अत्रोपपत्तिः । होरारूपलग्नानांक्रान्तिवृत्तेऽधः क्रमेणमेषादीनांसम्भवादूर्ध्वकक्षातोऽधः क्रमेणहोरेशत्वंयुक्तम् । एवमहोरात्रेचतुर्विंशतिहोराःसप्ततष्टास्त्रयोहोरेशागताः । चतुर्थो होरेशोद्वितीयदिनप्रारम्भेसएवप्रथमहोरेशत्वाद्द्वितियदिनेशः । एवमुत्तरत्रापि एवमेतद्वारक्रमेणसावनवर्षेत्रयोवाराइतिपूर्ववर्षेशादग्रिमवर्षेशोऽधः कक्षाक्रमेणतृतीयउत्तरोत्तरम् । एवंसावनमासेद्वौवारौवारक्रमेणमासेश्वरस्याधिकाविति कक्षोर्ध्वक्रमे-

वारक्रमेणैकान्तरितत्वात्कक्षोर्ध्वक्रमेण मासेश्वरउत्तरोत्तरमित्युपपन्नंमन्दादित्यादि-श्लोकद्वयम् ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

भा०टी०-शनिसे नीचेके वृत्तमें गयाहुआ क्रमशः चौथा ग्रह दिनका स्वामी और तीसरा ग्रह वर्षाधिपती है ॥ ७८ ॥ चंद्रमासे क्रमानुसार ऊपर गयेहुए मासके स्वामी हैं। शनिसे क्रमानुसार नीचेको गयेहुए ग्रह होराधिपति हैं ॥ (होरा =२ दण्ड) ॥ ७९ ॥

अथग्रहर्क्षकक्षाःकिंमात्राः। इतिप्रश्नस्योत्तरंविवक्षुःप्रथमंनक्षत्राणांकक्षामानमाह-

भवेद्भकक्षातिग्मांशोर्भ्रमणंषष्टिताडितम् ॥
सर्वोपरिष्टाद्भ्रमतियोजनैस्तैर्भमण्डलम् ॥ ८० ॥

सूर्यस्यभ्रमणंकक्षापरिधिमानंयोजनात्मकम्। 'खखार्थैकसुरार्णवाः।' इतिवक्ष्यमाणंषष्ट्यागुणितंसन्नक्षत्राणांकक्षानक्षत्राधिष्ठितगोलस्यमध्यवृत्तंस्यात् । तैर्नक्षत्रकक्षामितैर्योजनैर्भमण्डलंनक्षत्राधिष्ठितगोलमध्यवृत्तंसर्वोपरिष्टाच्चन्द्रादिसप्तग्रहेभ्यउपरिदूरंभ्रमतिभूगोलादभितःपरिभ्रमति ।अत्रोपपत्तिः। नक्षत्राणांगत्यभावाच्छनेरप्यत्यूर्ध्वंनक्षत्रमण्डलंतत्रसूर्यगत्यासूर्यकक्षातदानक्षत्रगत्यभावेऽप्येककलागतिकल्पनयानुपातान्यथानुपपत्तितया। 'कल्प्योहरोरूपमहारराशेः।' इतीच्छाह्रासेफलवृद्ध्यपेक्षितत्वाद्यस्तानुपातोलाघवात्सूर्यगतिःषष्टिकलामिताचभगवताकृता ।नक्षत्रगतेरभावाच्चेतिषष्टिताडितमित्युपपन्नम् ॥ ८० ॥

भा०टी०-सूर्यकी कक्षाको ६० से गुणा करनेपर भकक्षा होती है। वह सबके ऊपर भ्रमण करती है ॥ ८० ॥

अथग्रहकक्षाणांमानज्ञानार्थमाकाशकक्षामानम्। कियतीतत्करप्राप्तिः। इतिप्रश्नस्योत्तरमाह-

कल्पोक्तचन्द्रभगणागुणिताःशशिकक्षया ॥
आकाशकक्षासाज्ञेयाकरव्याप्तितयारवेः ॥ ८१ ॥

कल्पोक्तचन्द्रभगणाः । "एतेसहस्रगुणिताःकल्पेस्युर्भगणादयः।" इत्युक्त्यायुगचन्द्रभगणाःसहस्रगुणिताःकल्पचन्द्रभगणाइत्यर्थः । चन्द्रकक्षयाखत्रयाब्धिद्विदहनाइतिवक्ष्यमाणयागुणितासातन्मिताकाशकक्षापरिधिरूपाज्ञेया । धीमतेतिशेषः । नन्वनन्ताकाशस्यकथंपरिधिरित्यतआह । करव्याप्तिरितिसूर्यस्यकिरणप्रचारस्तथाकाशकक्षापरिमितइत्यर्थः । तथाचयद्देशावच्छेदेनसूर्यकिरणप्रचारस्तद्देशच्छिन्नाकाशगोलस्यब्रह्माण्डकटाहान्तर्गतस्यपरिधिमानंसम्भवत्येवेतिभावः । अत्रोपपत्तिः । समनंतरमेवयद्भगणभक्ताखकक्षातस्यक

क्षास्यादित्युक्तेर्भगणकक्षाघातःखकक्षासिद्धा । अतश्चन्द्रभगणकक्षयोर्घातःखकक्षातु-ल्यएवेतिदिक् ॥ ८१ ॥

भा०टी०-एक कल्पमें चन्द्रमाके भगण चंद्रकक्षासे गुणा किये जाय तो आकाशकक्षा होती है, तितनी दूरतक सूर्यकी किरणें व्याप्त हैं ॥ ८१ ॥

अथग्रहाणांकक्षानयनंयोजनगत्यानयनंचाह-

सैवयत्कल्पभगणैर्भक्तातद्भ्रमणंभवेत् ॥
कुवासरैर्विभज्याह्नःसर्वेषांप्राग्गतिः स्मृता ॥ ८२ ॥

सार्ककरव्याप्तिरूपाकाशकक्षायत्कल्पभगणैर्यस्यकल्पभगणैर्भक्ताफलंतस्य कक्षा-भवेत् । एवकारोनिश्चयार्थे । खकक्षाकल्परविसावनैर्भक्ताप्राप्तं फलं सर्वेषामुक्तभग-णसम्बन्धिनांग्रहादीनामह्नोदिवसस्यदिनसंम्बन्धिनीत्यर्थः । प्राग्गतिर्योजनात्मिका-कथिता । अत्रोपपत्तिः । कल्पभगणकक्षाघातरूपाकाशकक्षाकल्पभगणभक्ताकक्षा स्यादेव । कल्पेखकक्षामितयोजनानिग्रहः क्रामतीतिकल्परविसावनदिनैराकाशक-क्षामितयोजनानितदैकरविसावनदिनेनकानीत्यनुपातेन पूर्वगतिर्योजनात्मिकाप्रत्यहं तुल्येत्युपपन्नम् ॥ ८२ ॥

भा०टी०-उस कक्षाको ग्रहोंके कल्प भगणसे भाग कियाजाय तो स्वकक्षा होगी। कक्षाको कुदिनसे भाग कियाजाय तो सबकी प्रात्यहिक प्राक्गति होगी ॥ ८२ ॥

अथयोजनात्मकगतेःकलात्मकगतिंस्वीयामाह-

भुक्तियोजनजासङ्ख्यासेन्दोर्भ्रमणसङ्गुणा ॥
स्वकक्षाप्तातुसातस्यतिथ्याप्तागतिलिप्तिकाः ॥ ८३ ॥

गतियोजनोत्पन्नायासङ्ख्यासासङ्ख्याचन्द्रस्यभ्रमणसङ्गुणाकक्षयागुणितास्वक-क्षयाप्ताभिमतग्रहस्यकक्षयाभक्तासाफलरूपातिथ्याप्तापञ्चदशभक्ता । तुकारात्फलं तस्याभिमतग्रहस्यगतिकलाभवन्ति । अत्रोपपत्तिः । कक्षायोजनैश्चक्रकलास्त-दागतियोजनैःकाइत्यनुपातेनगतिकलाः । तत्रापिचन्द्रकक्षापंचदशभक्ताश्चक्रकला-इतिचक्रकलास्वरूपंधृतमित्युपपन्नम् ॥ ८३ ॥

भा०टी०-भुक्ति योजन चन्द्र कक्षासे गुणकरके स्वकक्षासे भागकरने पर गतिकला होगी ॥ ८३ ॥

अथकिमुत्सेधाइतिप्रश्नस्योत्तरमाह-

कक्षाभूकर्णगुणितामहीमण्डलभाजिता ॥
तत्कर्णाभूमिकर्णोनाग्रहौच्च्यंस्वदलीकृताः ॥ ८४ ॥

ग्रहाणांयोजनात्मिकाकक्षाभूकर्णेप्रयोजनानिशतान्यष्टौभूकर्णोद्विगुणानीत्युक्तभू-व्यासेनषोडशशतेनगुणिताभुपरिधिनातदवगतेनभक्ताफलंतस्याःकक्षायाः कर्णाव्या-

साभवन्ति । एतेभूव्यासेनहीनाअर्धिताः सन्तः स्वगृहीत व्याससम्बन्धिग्रहौच्च्यं-ग्रहस्योच्चताभूमेः सकाशाद्भवति । अत्रोपपत्तिः । भूपरिधिनाभूव्यासस्तदाकक्षा-योजनैः कइत्यनुपातेनकक्षाव्यासास्तेऽर्धिताः कक्षाव्यासार्धभूगर्भकक्षापरिधिप्रदे-शान्तरालरूपंभूपृष्ठात् तदन्तरज्ञानार्थंभूव्यासार्धेनहीनंभूपृष्ठात् कक्षौच्च्यंतत्रकक्षा-व्यासाभव्यासोनाअर्धिताः कृताः । उभयथासमत्वात् । कक्षौच्च्यमेवग्रहौच्च्यं-ग्रहस्यतत्राधिष्ठानादिति । एतेनसिद्धग्रहौच्च्येभ्यः परस्परान्तरगतज्ञानंसुगम-मिति । किमन्तराइतिप्रश्नस्योत्तरंस्वतःसिद्ध मेवेतिदिक् ॥ ८४ ॥

भा०टी०-स्वकक्षाको भूकर्णसे गुणकरके भूवृत्तद्वारा भागकरनेपर स्वकक्षाकर्ण होगा तिस्से भूकर्णको वियोग करके दोसे भाग करनेपर पृथ्वीसे दूरताका निर्णय हो जायगा ॥ ८४ ॥

अथोर्ध्वक्रमेणसिद्धाःकक्षाविवक्षुःप्रथमचन्द्रस्यकक्षांबुधशीघ्रोच्चकक्षांचाह-

खत्रयाब्धिद्विदहनाःकक्षातुहिमदीधितेः ॥
ज्ञशीघ्रस्याङ्कखद्वित्रिकृतशून्येन्दवस्ततः ॥ ८५ ॥

चन्द्रस्यकक्षासहस्रगुणितसिद्धरामाः । तुकारादागमप्रामाण्येनाङ्गीकार्या । अन्यथान्योन्याश्रयापत्तेस्ततश्चंद्रादूर्ध्वं बुधशीघ्रोच्चस्यकक्षानखदन्तवेदादिशः । यद्यपिबुधशीघ्रोच्चमाकाशे प्रत्यक्षंनेति तत्कक्षोक्तिरयुक्तातथापिबुधशीघ्रोच्चभ-गणानीतकक्षायांगत्यनुरोधेनचन्द्रोर्ध्वगायांबुधोभ्रमति । पूर्वंसूर्यशुक्रेन्दुजे-न्दवः । इतिक्रमोक्तेः । अन्यथाभगणैक्यादेककक्षायांरविबुधशुक्राणामवस्थितौ मण्डलभङ्गापत्तेरितिसूचनार्थमुक्ता ॥ ८५ ॥

भा०टी०-चं० ३२४०००, बु० शी० चन्द्रसे १०४३२०९, ॥ ८५ ॥

अथशुक्रशीघ्रोच्चस्यकक्षांसूर्यबुधशुक्राणामभिन्नांकक्षांचाह-

शुक्रशीघ्रस्यसप्ताग्निरसाब्धिरसषड्यमाः ॥
ततोऽर्कबुधशुक्राणांखखार्थैकसुरार्णवाः ॥ ८६ ॥

तदूर्ध्वंशुक्रशीघ्रोच्चस्यकक्षाद्रित्र्यंगवेदषड्रसपक्षाःशुक्रावस्थानसूचनार्थमुक्ताः । ततस्तदूर्ध्वसूर्यबुधशुक्राणांभगणैक्यादभिन्नाकक्षाखखपञ्चभूदेवाब्धयः । यद्यपि-बुधशुक्रयोःसूर्याधःस्थत्वात्केवलंसूर्यकक्षैववक्तुमुचितातथापिकक्षयैकोभगणस्तदा-कल्परविसावनदिनैःखकक्षामितयोजनानितदाहर्गणेनकानीत्यनुपातागतयोजनैःक-इत्यनुपातेनसूर्यबुधशुक्राणामभिन्नत्वसिद्ध्यर्थंबुधशुक्रयोरप्युक्ता । अन्यथासमत्वा-नुपपत्तेरिति ॥ ८६ ॥

भा०टी०शु०-शी०बु०शी०से २६६४६३७, । सूर्य, बु, शु, मध्य ४३३१५०० ॥ ८६ ॥

अथभौमस्यकक्षांचन्द्रमन्दोच्चस्यकक्षांचाह--

कुजस्याप्ययङ्कशून्याङ्कपड्वेदैकभुजंगमाः ॥
चन्द्रोच्चस्यकृताष्टाब्धिवसुद्वित्र्यष्टवह्नयः ॥ ८७ ॥

भौमस्य । अपिशब्दात्सूर्याद्दूर्ध्वकक्षानवखनवषडिन्द्रसर्पाः । चन्द्रमन्दोच्चस्यकक्षावेदाहिवेदसर्पपक्षरामनागरामाः । इयमप्याकाशेनदृश्यातथापिगतयोजनैश्चन्द्रोच्चज्ञानायोक्ता ॥ ८७ ॥

भा०टी०-मं८=१४६९०९। चन्द्रोच्च ३८=,३२८=,४८४ ॥ ८७ ॥

अथगुरुराह्वोः कक्षेआह--

कृतर्तुमुनिपञ्चाद्रिगुणेन्दुविषयागुरोः ॥
स्वर्भानोर्वेदतर्काष्टद्विशैलार्थखकुञ्जराः ॥ ८८ ॥

बृहस्पतेर्भौमाच्चन्द्रोच्चाद्वोर्ध्वकक्षावेदाङ्गमुनिपञ्चस्वररामचन्द्रशराः । राहोः कक्षावेदाङ्गगजयमसप्तपञ्चाशीतयः । इयमदृश्यापिराहोर्गतियोजनैर्ज्ञानार्थमुक्ता । अत्रापिपातस्यचक्रशुद्धत्वमवधेयम् ॥ ८८ ॥

भा०टी०-बृह० ५१=, ३७५=, ७६४। राहु ८०, ५७२=, ८६४ ॥ ८८ ॥

अथशनेःकक्षांनक्षत्राधिष्ठितमूर्तगोलमध्यकक्षांचाह--

पञ्चबाणाक्षिनागर्तुरसाद्यर्काःशनेस्ततः ॥
भानांरविखशून्यांकवसुरन्ध्रशराश्विनः ॥ ८९ ॥

ततोबृहस्पतेराहोर्वोर्ध्वंशनेःकक्षापञ्चपञ्चद्व्यष्टषड्रससप्तार्काः ।नक्षत्राणांगोलमध्ये कक्षाशनेरूर्ध्वंद्वादशनवशताष्टनवतितत्त्वानि । यद्यपि । 'भवेद्भकक्षातीक्ष्णांशोर्भ्रमणं षाष्टिताडितम् ॥'' इत्यनेनभकक्षायाद्वादशांतारितत्वादयुक्तत्वंतथापिसैवयत्कल्पभगणैरित्यनेनसूर्यकक्षायाउक्त्याद्वादशाधोऽवयवस्यनिबन्धनेत्यागेऽपिभकक्षार्थभगवताग्रहीतत्वाददोषः । एतेनाधोऽवयवस्यार्धन्यूनत्वेनत्यागोऽर्धाभ्यधिकत्वेनोर्ध्वभेकाधिकग्रहणंकक्षानिबन्धेनकृतमितिसूचितम् ॥ ८९ ॥

भा०टी०-शनि १२७६६८२२५। भकक्षा २५९८९००१२ ॥ ८९ ॥

ननुचन्द्रकक्षायाआगमनप्रामाण्येनांगीकारेसर्वकक्षाणामागमप्रामाण्यापत्त्यासैवयत्कल्पभगणैर्भक्तातद्भ्रमणंभवेत् । इतिकक्षानयनंव्यर्थम् । अन्यथाकाशकक्षाज्ञानासम्भवापत्तेरित्यतआकाशकक्षैवागमप्रामाण्येनांगीकार्येतिवसन्ततिलकयाह--

खव्योमखत्रयखसागरषट्कनागव्योमाष्टशून्ययमरूपनगा-

ष्टचन्द्राः ॥ ब्रह्माण्डसम्पुटपरिभ्रमणंसमन्तादभ्यन्तरेदिनक
रस्यकरप्रसारः ॥ ९० ॥

वेदाङ्गाष्टाशीतिनखभूसप्तधृतयः प्रयुतगुणितायोजनानिपूर्वार्धोक्तानि । ब्रह्माण्ड-सम्पुटपरिभ्रमणंब्रह्माण्डगोलस्यपरिधिः । कल्पभगणकक्षाहातित्वेनाकाशकक्षायाः पूर्वस्वरूपोक्तेरितिनपौनरुक्त्यम् । अभ्यन्तरेब्रह्माण्डगोलान्तः सूर्यस्याभितः किर-णानांप्रसारः सूर्यकिरणप्रचारदेशस्यपरिधिस्तत्तुल्यः । एतनब्रह्माण्डगोलान्तः परिधिर्नबाह्यइतिसूचितम् ॥ ९० ॥

भा०टी०-ब्रह्माण्डकी कक्षा १८७१२०८०८६४०००००० योजन इसके मध्यमें सूर्यकी किर-णोंका विस्तार है ॥ ९० ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतित्वपरिहारार्थमध्यायसमाप्तिंफक्किकयाह-

इतिसूर्यसिद्धान्तेभूगोलाध्यायः ॥ १२ ॥

इतिभिन्नच्छन्दसाप्रारब्धप्रसंगः समाप्तइत्यर्थः । पूर्वखण्डेग्रन्थैकदेशस्याधिका-रसञ्ज्ञाकृता । उत्तरखण्डेग्रन्थैकदेशस्याध्यायसंज्ञाभिन्नप्रसंगवशात्कृतेतिध्येयम् ।

रंगनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे ॥
उत्तरार्धसमाप्तोऽयंभूगोलाध्यायसंज्ञकः ॥

इतिश्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरंगनाथविरचितेगूढार्थप्रकाशके-उत्तरखण्डेभूगोलाध्यायःपूर्णः ॥ १२ ॥

द्वादश अध्याय समाप्त ॥ १२ ॥

त्रयोदशोऽध्यायः ।



अथपुनर्मुनीन्श्रोतॄन्प्रतिश्लोकाभ्यामाह--

अथगुप्तेशुचौदेशेस्नातःशुचिरलङ्कृतः ॥
सम्पूज्यभास्करंभक्त्याग्रहान्भान्यथगुह्यकान् ॥ १ ॥
पारम्पर्योपदेशेनयथाज्ञानंगुरोर्मुखात् ॥
आचार्यःशिष्यबोधार्थंसर्वंप्रत्यक्षदर्शिवान् ॥ २ ॥

---

१ करप्रचारः इति वा पाठः ।

अथशब्दोमङ्गलार्थः । द्वितीयोथशब्दःपूर्वोक्तानन्तर्यार्थकः । गुप्तेरहसिशुचौ-पवित्रेदेशेस्थानआचार्यःसूर्यांशपुरुषोमयासुराध्यापकः । स्नातःकृतस्नानःशुचिः शुद्धमनाः । अलङ्कृतोहस्तकर्णकण्ठादिभूषणभूषितः । निश्चिन्तत्वद्योतकमिदं-विशेषणम् । अन्यथाग्रहादिव्यवहारादिव्याकुलतयामनस्थैर्यानुपपत्तेः । भास्करं श्रीसूर्यस्वोपजीव्यंभक्त्याराध्यत्वेनज्ञानरूपयासम्पूज्यनमस्कारस्तुतिविषयंकृत्वाग्र-हान्चन्द्रादिग्रहान् । सूर्यस्यपृथगुद्देशःप्राधान्यज्ञानार्थम् । भानिनक्षत्राणिराशींश्च-गुह्यकान्यक्षादीन्क्षुद्रदेवताःसम्पूज्य । समुच्चयार्थकश्चोत्रानुसन्धेयः । गुरोःसूर्यस्य-मुखाद्वदनारविन्दात् । पारम्पर्योपदेशेनसूर्येणमुनीन्प्रत्युक्तं मुनिभिःसूर्यांशपुरुषं-प्रत्युक्तमितिपरम्परयाकथनेन । वस्तुतस्तु । शिष्यस्याग्रहोत्पादनार्थंज्ञानेतिगोप्य त्वसूचनमेतदुक्त्याकृतम् । कथमन्यथासूर्याज्ञप्तांशपुरुषोमयासुरंप्रत्यवदद्दूरस्थमुनी-न्प्रतिकथनउद्यतोऽर्कःस्वांशपुरुषंप्रतिकथनेऽनुद्यतःकुतःकारणाभावाच्च । यथास्वश-क्त्यायादृशंज्ञानंपूर्वोक्तमवगतंशिष्यबोधार्थमयासुरस्याभ्रमज्ञानोत्पादनार्थंसर्वप्राग-ध्यायोक्तंप्रत्यक्षदर्शिवान्प्रत्यक्षंदर्शितवानित्यर्थः ॥ १ ॥ २ ॥

भा०टी०-गुप्त, पवित्रतायुक्त स्थानमें सजकर बैठा हुआ प्रत्यक्षदर्शी आचार्य रवि, ग्रह, नक्षत्र और गुह्यक लोगोंका पूजन करनेके पीछे शिष्यपरम्पराकरके जो गुरुमुखसे सुनाथा, वह सब शिष्यको समझानेके लिये ॥ १ ॥ २ ॥

कथंदर्शितवानितिमयासुरंप्रत्युक्तसूर्यांशपुरुषवचनस्यानुवादेसूर्यांशपुरुषोमयासु-रंप्रतिगोलबन्धोद्देशंतदुपक्रमंचश्लोकाभ्यामाह-

भूभगोलस्यरचनांकुर्यादाश्चर्यकारिणीम् ॥
अभीष्टंपृथिवीगोलंकारयित्वातुदारवम् ॥ ३ ॥
दण्डंतन्मध्यगंमेरोरुभयत्रविनिर्गतम् ॥
अधारकक्षाद्वितयंकक्षावैषुवतीतथा ॥ ४ ॥

भगोलस्यभूगोलादभितःसंस्थितस्यनक्षत्राधिष्ठितगोलस्यप्रागध्यायोक्तार्थस्यर-चनांस्थितिज्ञानार्थंदृष्टान्तात्मकगोलस्यनिर्मितंसुधीर्गणकोगोलशिल्पज्ञःकुर्यात् । ननुत्वदुक्तेनसर्वज्ञानंभवतीतिदृष्टान्तगोलनिबन्धनंव्यर्थमेवेत्यतआह । आश्चर्यका-रिणीमिति । उक्तप्रतीत्युद्भूताद्भुतबुद्धिजनयित्रींतथाचोक्तेनस्वाधस्तिर्यग्भागयोर्लो-कावस्थानस्यतद्भागस्थभगोलप्रदेशस्यचभूमेर्निराधारत्वादेश्चज्ञानंमनसिसप्रतीतिकं-नभवत्यतोदृष्टान्तगोलेनिश्चयसम्भवात्तन्निबन्धनमावश्यकमितिभावः । कथंरच-नांकुर्यादित्यतआह । अभीष्टमिति । भुवोगोलमभीष्टंस्वेच्छाकल्पितपरिधि-प्रमाणकंदारवं काष्ठघटितंसच्छिद्रंकारयित्वाकाष्ठशिल्पज्ञद्वाराकृत्वेत्यर्थः ।

मेरोरनुकल्परूपंदण्डकाष्ठंतन्मध्यगंतस्यकाष्ठघटितभगोलस्यमध्येच्छिद्रमध्येशिथिलतयास्थितम् । उभयत्रभूगोलस्थव्यासप्रमाणच्छिद्रस्याग्राभ्यांबहिरित्यर्थः । विनिर्गतमेकाग्रादन्यतराग्रावशिष्टदण्डप्रदेशतुल्यंनिःसृतम् । उभयाग्राभ्यांतुल्यौदण्डदिशौयथास्यातांतथाकुर्यादित्यर्थः । भगोलनिबन्धनार्थमाधारवृत्तद्वयमाह । आधारकक्षाद्वितयमिति । भगोलनिबन्धनार्थमादावाश्रयार्थवृत्तयोर्द्वितयमूर्द्धाधस्तिर्यगवस्थानक्रमेणैकमेकमेवंद्वयमित्यर्थः । भूगोलादुभयतस्तुल्यान्तरेणदण्डप्रदेशयोःप्रोतमेकंवृत्तंकुर्यात् । तत्तुल्यंवृत्तमपरंतदर्धच्छेदेनदण्डप्रोतंकुर्यादितिसिद्धोऽर्थः । एतद्वृत्तद्वयव्यतिरेकेणभूगोलादभितोभगोलनिबन्धनानुपपत्तेः । भगोलनिबन्धनारंभमाह । कक्षेति । वैषुवतीविषुवसंबन्धिनीकक्षावृत्तपरिधिर्विषुवद्वृत्तमित्यर्थः । तथाधारवृत्तद्वयस्यार्धच्छेदेनभगोलमध्यवृत्तानुकल्पेनगणकेनानिबद्धमित्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥

भा०टी०—काठका बना अभीष्ट (इच्छित) पृथ्वीगोल आगे करके आश्चर्यकारी भूगोल बनावै । उस गोलेके दोनों ओर निकला हुआ मेरुदण्ड, आधारकी दो कक्षा और विषुवकी कक्षा बनावे ॥ ३ ॥ ४ ॥

अथमेषादिद्वादशराशीनामहोरात्रवृत्तनिबन्धनमन्यदपिश्लोकपंचकेनाह—

भगणांशाङ्गुलैःकार्यादलितैस्तिस्रएवताः ॥
स्वाहोरात्रार्धकर्णैश्चतत्प्रमाणानुमानतः ॥ ५ ॥
क्रान्तिविक्षेपभागैश्चदलितैर्दक्षिणोत्तरैः ॥
स्वैःस्वैरपक्रमैस्तिस्रोमेषादीनामपक्रमात् ॥ ६ ॥
कक्षाःप्रकल्पयेत्ताश्चकर्कादीनांविपर्ययात् ॥
तद्वत्तिस्रस्तुलादीनांमृगादीनांविलोमतः ॥ ७ ॥
याम्यगोलाश्रिताःकार्याःकक्षाधाराद्वयोरपि ॥
याम्योदग्गोलसंस्थानांभानामभिजितस्तथा ॥ ८ ॥
सप्तर्षीणामगस्त्यस्यब्रह्मादीनांचकल्पयेत् ॥
मध्येवैषुवतीकक्षासर्वेषामेवसंस्थिता ॥ ९ ॥

भगणांशाङ्गुलैः द्वादशराशिभागैः षष्ट्यधिकशतत्रयपरिमिताङ्गुलैःदलितैःसमविभागेनखण्डितैरङ्कितैरित्यर्थः । ताःकक्षाःवंशशलाकावृत्तात्मिकास्तिस्रः त्रिसङ्ख्याकाः । एवकारादङ्कनेवृत्तेचन्यूनाधिकव्यवच्छेदः । शिल्पज्ञेनगोलगणितज्ञेनकार्याः । एताःपूर्ववृत्तप्रमाणेननकार्याइत्यभिप्राये-

णाह । स्वाहोरात्रार्धकर्णैरिति । स्वशब्देनमेषादित्रिकंतस्यप्रतिराश्यहोरात्रवृत्तस्यार्धकर्णोव्यासार्धद्युजाताभिरित्यर्थः । चकारात्कार्याः । स्वस्वद्युज्याभितेन व्यासार्धेनमेषादित्रयाणांवृत्तत्रयंकुर्यादित्यर्थः । ननुस्पष्टाधिकारोक्ताहोरात्रार्धकर्णानयनेयुक्त्यभावात्तैर्वृत्तिनिर्माणंकुतःकार्यमित्यतआह । तत्प्रमाणानुमानत इति । विषुवत्कक्षाप्रमाणानुमानाद्वृत्तत्रयंकार्यम् । यथाविषुवद्वृत्तंपूर्ववृत्तसमम् । तथातदनुरोधेनमेषान्तवृत्तमल्पंतदनुरोधेनवृषान्तवृत्तमल्पंतदनुरोधेनामिथुनान्तमल्पमित्युत्तरोत्तरमल्पव्यासार्धवृत्तम् । तत्त्वहोरात्रवृत्तमितिद्युज्याव्यासार्द्धेनवृत्तनिर्माणं युक्तियुक्तंक्रान्तिज्यावर्गोनात्रिज्यावर्गान्मूलस्वाहोरात्रवृत्तव्यासार्धत्वादितिभावः । वृत्तत्रयंसिद्धंकृत्वादृष्टान्तगोलेनिबध्नाति । क्रांतिविक्षेपभागैरितिक्रान्तिवृत्तस्याविषुवद्वृत्तप्रदेशाद्विक्षिप्तप्रदेशायैरंशैःचकारादाधारवृत्तस्थैर्दलितैःसमविभागेनखण्डितैरङ्कितैः दक्षिणोत्तरैर्विषुवद्वृत्तक्रान्तिवृत्तप्रदेशयोर्दक्षिणोत्तरान्तरात्मकैरुक्तलक्षणैः स्वकीयैःस्वकीयैः स्वराशिसम्बद्धैरपक्रमैः स्पष्टाधिकारानीतक्रान्त्यंशैर्मेषादीनांमेषादिराशित्रयान्तानांमेषान्तवृषान्तमिथुनान्तानामित्यर्थः । तिस्रस्त्रिसङ्ख्याकाःप्राग्निर्मितावृत्तरूपाःकक्षाः । अपक्रमात् अपशब्दस्योपसर्गत्वात्क्रमादित्यर्थः । प्रकल्पयेत् शिल्पज्ञगणकोविषुवद्वृत्तानुरोधेनाधारवृत्तद्वय उत्तरतोनिबन्धयेदित्यर्थः । कर्कादीनामाह । ताइति । मेषादिकक्षानिबद्धाःकर्कादीनांकर्कसिंहकन्यानामादिप्रदेशानांविपर्ययाद्व्यत्यासात् । चकारःसमुच्चये । तेनप्रकल्पयेदित्यर्थः । मिथुनान्तवृत्तंकर्कादेर्वृषान्तवृत्तंसिंहादेर्मेषान्तवृत्तंकन्यादेरितिफलितम् । तुलादीनामाह । तद्वदिति । तुलादीनांतुलावृश्चिकधन्विनांतिस्रः । अन्यास्त्रिसङ्ख्याकाःकक्षास्तद्वदेकद्वित्रिराशिक्रान्त्यंशैस्तुलान्तवृश्चिकान्तधनुरन्तानांयाम्यगोलाश्रिताः । विषुवद्वृत्ताद्दक्षिणभागआधारवृत्तद्वयेनिबद्धाःकार्याः । गणकेनेतिशेषः । मकरादीनामाह । मृगादीनामिति । विलोमतउत्क्रमात्तुलादिसम्बद्धाःकक्षामकरादीनांभवन्ति । धनुरन्तवृत्तंमकरादेर्वृश्चिकान्तवृत्तंकुम्भादेस्तुलान्तवृत्तंमीनादेरितिफलितम् । ताराणांकक्षानिबन्धनमाह । कक्षाधारादिति । भानामश्विन्यादिसप्तविंशतिनक्षत्रबिम्बानांयाम्योदग्गोलसंस्थानां विषुवद्वृत्ताद्दक्षिणोत्तरभागयोर्यथायोग्यमवस्थितानांयन्नक्षत्रध्रुवकस्पष्टक्रान्तिरुत्तरातन्नक्षत्राणामुत्तरभागावस्थितानांयेषांस्पष्टक्रान्तिर्दक्षिणातेषांदक्षिणभागावस्थितानामित्यर्थः । द्वयोर्दक्षिणोत्तरभागयोः । अपिशब्दोयाम्योत्तरनक्षत्रक्रमेणव्यवस्थार्थकः । कक्षाधारात्कक्षाणामाधारवृत्तद्वयात्तयोरित्यर्थः । सप्तम्यर्थेपञ्चमी । कक्षाःस्वस्पष्टक्रान्तिज्योत्पन्नद्युज्याव्यासार्धप्रमाणेनवृत्ताकाराःप्रकल्पयेत् । शिल्पज्ञोनिबन्धयेत् । अन्येषामप्याह । अभिजितइति ।

अभिजिन्नक्षत्रबिम्बस्यसप्तर्षिबिम्बानामगस्त्यनक्षत्रबिम्बस्यब्रह्मसंज्ञकताराद्युक्तलुब्धकापांवत्सादिनक्षत्रबिम्बानांचकारोऽनुसन्धेयः । तथाकक्षायथायोग्यंप्रकल्पयेदित्यर्थः । निबन्धनप्रकारमुपसंहरति । मध्यइति । सर्वासामुक्तकक्षाणांमध्ये तुल्यभागेऽनाधारवृत्तमध्यप्रदेशे । एवकारादन्ययोगव्यवच्छेदः । वैषुवती-कक्षाविषुवसम्बन्धिनीवृत्तरूपासंस्थितावस्थिताभवति । तथाशिल्पज्ञःकक्षांनि-बन्धयेदित्यर्थः । विषुवद्वृत्तात्स्वस्पष्टक्रान्त्यन्तरेणस्वद्युज्याव्यासार्धप्रमाणेनाहो-रात्रवृत्तमाधारवृत्तयोर्निबन्धयेदितिनिष्कृष्टोऽर्थः ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

भा०टी०-स्वाहोरात्रार्द्धकर्णके परिमाणसे व्यासयुक्त तीन वृत्तोंको बनाकर प्रत्येकमें ३६० भाग अंकित करे । क्रांतिविक्षेपांश अंकित दक्षिण उत्तररेखामें मेषादिके अपक्रमके अनुसार, अपक्रमांशमें कहे हुए तीन वृत्त संयोग करे। वही विपरीतभावसे कर्कादिकी कक्षा है वैसेही दक्षिण दिशामें तुलादिकी तीनकक्षा संयुक्त करे । वही विलोमके अनुसार मकरादिकी कक्षा होगी उत्तर दक्षिणमें साभिजित् (अभिजित्के सहित) नक्षत्रोंकी कक्षाएँ आधार कक्षाके ऊपर संयुक्त करे । इसी प्रकारसे सप्तर्षि, अगस्त्य, ब्रह्महृदयादि की कक्षा करे। सबके मध्यभागमें वैषुवती कक्षा स्थित रहेगी ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

अथगोलेमेषादिराशिसन्निवेशंसार्धश्लोकेनाह-

तदाधारयुतेरूर्ध्वमयनेविषुवद्वयम् ॥
विषुवस्थानतोभागैःस्पष्टैर्भगणसञ्चरात् ॥
क्षेत्राण्येवमजादीनांतिर्यग्ज्याभिःप्रकल्पयेत् ॥ १० ॥

तदाधारयुतेस्तद्विषुवद्वृत्तमाधारमाधारवृतंतयोर्युतेःसम्पातादूर्ध्वमुपरि । अन्तिमाहोरात्राधारवृत्तयोःसम्पातेऽयनेदक्षिणोत्तरायणसंधिस्थानेभवतः । अत्रोर्ध्वपद-सञ्चारादाधारवृत्तमूर्ध्वाधरंग्राह्यंनातिर्यगुन्मण्डलाकारम् । तेनैतत्फलितम् । विषु-वद्वृत्तस्योर्ध्वाधराधारवृत्तऊर्ध्वमधश्चसम्पातस्तत्रोर्ध्वसम्पातान्मकराद्यहोरात्रवृत्तं चतुर्विंशत्यंशैस्तदाधारवृत्तेदक्षिणतोयत्रलग्नंतत्रोत्तरायणसन्धिस्थानम्।एवमधःसम्पा तात्कर्काद्यहोरात्रवृत्तंचतुर्विंशत्यंशैस्तदाधारवृत्तउत्तरतोयत्रलग्नंतत्रदक्षिणायनसन्धि स्थानमिति।अयनाद्विषुवस्यविपरीतस्थितत्त्वादूर्ध्वशब्दद्योतितविपरीताधःशब्दस-म्बन्धाद्विषुवद्वयंभवति।तात्पर्यार्थस्तु तिर्यगुन्मण्डलाकाराधारवृत्ताविषुवद्वृत्तसम्पातौ पूर्वापरौक्रमेणमेषादितुलादिरूपौविषुवत्स्थानेभवतइति।अथराशिसाफल्यसन्निवश-माह । विषुवत्स्थानतइति । विषुवप्रदेशात्स्फुटैराशिसम्बन्धिभिस्त्रिंशन्मितैरंशैर्भग-णसञ्चराद्राशिसाकल्यसन्निवेशात्तिर्यग्ज्याभिरुक्तवृत्तानुकारातिरिक्तानुकारसूत्र-

वृत्तप्रदेशैरजादीनांमेषादीनाम् । एवमयनविषुवकल्पनरीत्यातदन्तरालेक्षेत्राणि-स्थानानिसुधीर्गणकःप्रकल्पयेदङ्कयेत् । यद्यथापूर्वदिक्स्थविषुवस्थानाद्गोलवृत्तद्वादशांशखण्डप्रदेशेनमेषान्ताहोरात्रवृत्तेपूर्वभागेयत्रस्थानंतत्रमेषान्तस्थानंतस्मात्तदन्तरेणवृषान्ताहोरात्रवृत्तेतदन्तरेणवृषान्तस्थानमस्मादयनसन्धिस्थानं तत्प्रदेशान्तरेणमिथुनान्तस्थानमस्मात्पश्चिमभागेकर्कान्ताहोरात्रवृत्ते तदन्तरेणकर्कान्तस्थानमस्मादपिसिंहान्ताहोरात्रवृत्तेतदन्तरेण सिंहान्तस्थानमस्मादपितदन्तरेणपश्चिमविषुवस्थानंकन्यान्तस्थानमस्मादपिपूर्वभागेतुलान्ताहोरात्रवृत्तेतदन्तरेणतुलान्तस्थानमस्मादपिवृश्चिकान्ताहोरात्रवृत्तेतदन्तरेणवृश्चिकान्तस्थानमस्मादपितदन्तरेणायनसन्धिस्थानंधनुरन्तस्थानमस्मात्कुम्भाद्यहोरात्रवृत्तेतदन्तरेणमकरान्तस्थानमस्मादपिमीनाद्यहोरात्रवृत्तेतदन्तरेणकुम्भान्तस्थानंमीनादिस्थानंच । अस्मादपिपूर्वविषुवेमीनान्तस्थानंमेषादिस्थानंचतदन्तरेणेतिव्यक्तम् ॥ १० ॥

भा०टी०-विषुवती और आधारकक्षाके संयुत स्थान से ऊपरकी ओर दो विषुव अंकितकरे । तदुपरान्त विषुवतीसे राशि अन्तरमें मेषादि १२ क्षेत्र तिरछे भावसे निर्णयकरे ॥ १० ॥

ननुगोलेवृत्तेद्वादशराशीनांसत्त्वादन्यथाचक्रकलानुपपत्तेरित्यत्रैकवृत्ताभावात् कथंराश्यङ्कनंराशिविभागानुपपत्तिश्च । अन्तरालभागस्याकाशात्मकत्वादित्यतोवृत्तकथनच्छलेनपूर्वोक्तंस्पष्टयन्सूर्यस्तद्वृत्तेभगणभोगंकरोतीत्याह-

अयनादयनंचैवकक्षातिर्यक्तथापरा ॥
क्रान्तिसंज्ञातयासूर्यःसदापर्येतिभासयन् ॥ ११ ॥

अयनस्थानमारभ्यपरिवर्तनतदयनस्थानपर्यन्तंचकारआरम्भसमाप्त्योर्भिन्नायनस्थाननिरासार्थकः । अपरागोलआधारवृत्तसमावृत्तरूपाकक्षातथाराश्यङ्कमार्गेण । एवकारोऽन्यमार्गव्यवच्छेदार्थकः । तिर्यक् । उक्तवृत्तानुकारविलक्षणानुकाराक्रान्तिसंज्ञाक्रमणंक्रान्तिः । ग्रहगमनभोगज्ञानार्थंवृत्तंतत्संज्ञमुपकल्पितम् । अयनविषुवद्वयसंसक्तंक्रान्तिवृत्तंद्वादशराश्यङ्कितंगोलेनिबंधयेदितितात्पर्यार्थः । भासयन्भुवनानिप्रकाशयन्सन्ससूर्यः । एतेन चन्द्रादीनांनिरासः । सदानिरन्तरंतयाक्रान्तिसंज्ञयाकक्षयापर्येतिस्वशक्त्या गच्छन्भगणपरिपूर्तिभागंकरोति । सूर्यगत्यनुरोधेननियतंक्रान्तिवृत्तंकल्पितमितिभावः ॥ ११ ॥

भा०टी०-एक अयनसे दूसरे अयनमें गयीहुई तिरछी कक्षाको क्रांतिकक्षा कहतेहैं तिसके ऊपर सूर्यप्रकाशकरके भ्रमण करते हैं ॥ ११ ॥

ननुचन्द्राद्याःक्रान्तिवृत्तेकुतोनगच्छन्तीत्यतआह-

चन्द्राद्याश्चस्वकैःपातैरपमण्डलमाश्रितैः ॥
ततोऽपकृष्टाद्दृश्यन्तेविक्षेपान्तेष्वपक्रमात् ॥ १२ ॥

चन्द्रादयोऽर्कव्यतिरिक्ताग्रहाःस्वकैःस्वीयैःपातैःपाताख्यदैवतैरपमण्डलंक्रान्तिवृत्तमाश्रितैःस्वस्वभोगस्थानेधिष्ठितैस्ततःक्रान्तिवृत्तान्तर्गतग्रहभोगस्थानादित्यर्थः। चकाराद्विक्षेपान्तरेणापकृष्टादक्षिणउत्तरतोवाकर्षिताभवन्ति । अतःकारणादपक्रमात्क्रान्तिवृत्तान्तर्गतस्वभोगस्थानादित्यर्थः । दक्षिणउत्तरतोवा विक्षेपान्तेषुगणितागतविक्षेपकलाग्रस्थानेषुभूस्थजनैर्दृश्यन्ते । तथाचक्रान्तिवृत्तं यथाविषुवन्मण्डलेऽवस्थितंतथाक्रान्तिवृत्तेपातस्थानेतत्षड्भान्तरस्थानेचलग्नमुक्त परमविक्षेपकलाभिस्तत्रिभान्तरस्थानादूर्ध्वाधः क्रमेणदक्षिणोत्तरतोलग्नंचवृत्तंविक्षेपवृत्तंचंद्रादिगत्यनुरोधेनस्वंस्वंभिन्नंकल्पितं तत्रगच्छंतीतिभावः ॥ १२ ॥

भा०टी०-चन्द्रादि अपने पातसे खिंचकर और वृत्तको आश्रित करते हैं । वैसेही आकृष्टहोकर अपने अपक्रमसे विक्षेपान्तमें दिखाई देते हैं ॥ १२ ॥

अथत्रिप्रश्नाधिकारोक्तलग्नमध्यलग्नयोःस्वरूपमाह-

उदयक्षितिजेलग्नमस्तंगच्छच्चतद्वशात् ॥
लङ्कोदयैर्यथासिद्धंखमध्योपरिमध्यमम् ॥ १३ ॥

उदयक्षितिजेक्षितिजवृत्तस्यपूर्वदिग्देशइत्यर्थः । लग्नंक्रान्तिवृत्तंयत्प्रदेशेप्रवहवायुनासंसक्तंतत्प्रदेशोमेषाद्यवधिभोगेनोदयलग्नमुच्यतइत्यर्थः । प्रसंगादस्तलग्नस्वरूपमाह । अस्तमिति । तद्वशादुदयलग्नानुरोधादस्तमस्तक्षितिजंक्षितिजवृत्तस्यपश्चिमदिक्प्रदेशमित्यर्थः । क्रान्तिवृत्तंगच्छत् यत्प्रदेशेनप्रवहवायुनासँल्लग्नंतत्प्रदेशोमेषाद्यवधिभोगेनास्तलग्नंसमुच्यतइत्यर्थः । तथाचक्षितिजोर्ध्वंसदाक्रांतिवृत्तस्यसद्भावादुदयास्तलग्नयोःषड्राश्यन्तरंसिद्धंलङ्कोदयैर्निरक्षदेशीयराश्युदयासुभिः । यथात्रिप्रश्नाधिकारोक्तप्रकारेणतत्सङ्ख्यामितंसिद्धंनिष्पन्नम् । मध्यमंमध्यलग्नंतत्खमध्योपरिखस्यदृश्याकाशविभागस्यमध्यं मध्यगतदक्षिणोत्तरसूत्रवृत्तानुकारप्रदेशरूपंनतुखमध्यंभास्कराचार्याभिमतंस्वस्वस्तिकंतल्लग्नस्यकदाचित्कत्वेनसदानुत्पत्तेः । तस्योपरिस्थितंक्रान्तिवृत्तंयाम्योत्तरवृत्तेतत्प्रदेशेनलग्नंतत्प्रदेशोमेषाद्यवधिभोगेनमध्यलग्नमुच्यतइतितात्पर्यार्थः ॥ १३ ॥

भा०टी०-उदयक्षितिज वृत्तमें जिसका अंशही लग्न है । अस्तमें अस्त (सातवां) होता है । लंकोदयसे जो मध्यम सिद्ध होता है, वह अपनी मध्यरेखाके ऊपर है ॥ १३ ॥

अथत्रिप्रश्नाधिकारोक्तान्त्यायाःस्वरूपंस्पष्टाधिकारोक्तचरज्यायाःस्वरूपंचाह-

मध्यक्षितिजयोर्मध्येयाज्यासान्त्याभिधीयते ॥

ज्ञेयाचरदलज्याचविषुवत्क्षितिजान्तरम् ॥ १४ ॥

याउत्तरगोलेत्रिज्याचरज्यायुतिरूपादक्षिणगोलेचरज्योनत्रिज्यारूपात्रिप्रश्नाधिकारोक्ता । अन्त्यासामध्यंयाम्योत्तरवृत्तंक्षितिजंस्वाभिमतदेशक्षितिजवृत्तंतयोर्मध्येऽन्तरालेऽहोरात्रवृत्तस्यैकदेशेज्या । उदयास्तसूत्रयाम्योत्तरसूत्रसम्पातादहोरात्रयाम्योत्तरवृत्तसम्पातावधिसूत्ररूपाज्यासूत्रानुकारा नतुज्या । अहोरात्रक्षितिजवृत्तसम्पातद्वयबद्धोदयास्तसूत्रस्याहोरात्रवृत्तव्यासमूत्रत्वाभावात्। अतएवोत्तरगोलेऽन्त्यात्रिज्याधिकासङ्गच्छते अभिधीयतेगोलज्ञैःकथ्यते । नन्वन्त्योपजीव्यचरज्यैवकिंस्वरूपाययातात्सिद्धिरित्यतआह। ज्ञेयेति । उन्मण्डलंचविषुवमण्डलंपारिकीर्त्यते । इतित्रिप्रश्नाधिकारोक्तेनद्वयोःशब्दयोरेकार्थवाचकत्वात्तिर्यगाधारवृत्तानुकारंस्थिरंनिरक्षक्षितिजंवृत्तमुन्मण्डलं क्षितिजंस्वाभिमतदेशक्षितिजवृत्तमनयोरन्तरम् । चकारोविशेषार्थकस्तुकारपरस्तेनतदन्तरालस्थिताहोरात्रवृत्तैकदेशस्यार्धज्यारूपमृजुसूत्रमन्तरविशेषात्मकम् । तथाचस्वनिरक्षदेशस्वदेशयोरुदयास्तसूत्रयोरन्तरमूर्ध्वाधरमितिफलितार्थः । चरदलज्यातदन्तरालस्थिताहोरात्रवृत्तैकदेशरूपचराख्यखण्डकस्य । नतुदलमर्धम् । ज्याचरज्येत्यर्थः । गोलज्ञैर्ज्ञातव्या ॥ १४ ॥

भा०टी०–मध्य और क्षितिजके मध्यमें जो ज्या है वही अन्त्य है । विषुवत् और क्षितिजके अन्तरको चरदल ज्या कहते हैं ॥ १४ ॥

ननुपूर्वश्लोकद्वयोक्तंक्षितिजस्याज्ञानाद्दुर्बोधमित्यतःश्लोकार्धेनाक्षितिजस्वरूपमाह–

कृत्योपरिस्वकंस्थानंमध्येक्षितिजमण्डलम् ॥ १५ ॥

भूगोलेस्वकंस्वीयंस्थानंभूप्रदेशैकदेशरूपमुपरिसर्वप्रदेशेभ्यऊर्ध्वंकृत्वाप्रकल्पमध्येताद्दशभूगोलऊर्ध्वाधःखण्डसन्धौयद्वृत्तंतत्क्षितिजवृत्तंतदनुरोधेनदृष्टान्तगोलेक्षितिजवृत्तंस्थिरंसंयुक्तंकार्यमितिभावः ॥ १५ ॥

भा०टी०–अपने स्थानको सबसे ऊपर करके मध्यमें क्षितिजमण्डल स्थिर करे ॥ १५ ॥

अथैनंदृष्टान्तगोलंसिद्धंकृत्वास्यस्वतएवपाश्चिमभ्रमोयथाभवतितथाप्रकारमाह–

वस्त्रच्छन्नंबहिश्चापिलोकालोकेनवेष्टितम् ॥
अमृतस्रावयोगेनकालभ्रमणसाधनम् ॥ १६ ॥

बहिः । गोलोपरीत्यर्थः । गोलाकारेणवस्त्रेणच्छन्नंछादितंदृष्टान्तगोलम् । चकाराद्वस्त्रोपरितत्तद्वृत्तानामङ्कनंकार्यम्। लोकालोकेनवेष्टितंदृश्यादृश्यसन्धिस्थवृत्तेनक्षितिजाख्येनसंसक्तम्।अपिःसमुच्चये । एतेनक्षितिजंवस्त्रच्छन्नंकार्य्यंकिंतुवस्त्रोपरिक्षितिजंगोलसंसक्तंकेनापिप्रकारेणस्थिरंयथाभवतितथाकार्यमितितात्पर्यम् । अमृतस्रा-

वयोगेनैतादृशंगोलंकृत्वाजलप्रवाहाघोघातेनकालभ्रमणसाधनंषष्टिनाक्षत्रघटीभिर्दृष्टान्तगोलस्यभ्रमणंयथाभवतितथासाधनंकारणंकार्यस्वयंवहगोलयन्त्रंकार्यमित्यर्थः। एतदुक्तंभवति । दृष्टान्तगोलंवस्त्रच्छन्नंकृत्वातदाधारयष्ट्यग्रेदक्षिणोत्तराभित्तिक्षिप्तनलिकयोःक्षेप्ये । यथायष्ट्यग्रंध्रुवाभिमुखंस्यात् । ततोयष्ट्यग्रर्जुमार्गगतजलप्रवाहेणपूर्वाभिमुखेनतस्याधःपश्चाद्भागेघातोऽपियथास्यात्तथास्यादर्शनार्थमेववस्त्रच्छन्नमुक्तम्। अन्यथागोलवृत्तान्तरवकाशमार्गेणजलाघातदर्शनभ्रमेणचमत्कारानुत्पत्तेः । आकाशाकारतासम्पादनार्थमपिवस्त्रच्छन्नमुक्तम् । इदंवस्त्रमार्द्रंयथानभवतितथाचिक्कणवस्तुनामदनादिनालिप्तंकार्य्यम् । क्षितिजवृत्ताकारेणाधोगोलोदृश्योयथास्यात्तथा परिखारूपाभित्तिःकार्या । परन्तुदक्षिणयष्टिभागस्तत्रशिथिलोयथाभवति । अन्यथाभ्रमणानुपपत्तेः । पूर्वदिक्स्थपरिखाविभागाद्बहिर्जलप्रवाहोऽदृश्यःकार्यइत्यादिस्वबुध्यैवज्ञेयमिति ॥ १६ ॥

भा०टी०-क्षितिजके बाहिर बस्त्रसे ढककर वारिसंघातसे कालभ्रमण साधन करे ॥१६॥

अथयदिजलप्रवाहस्तत्रनसम्भवतितदाकथंस्वयंवहोदृष्टान्तगोलोभवतीत्यतस्तत्स्वयंवहार्थमुक्तंचगोप्यंकार्यमित्याह-

तुङ्गबीजसमायुक्तंगोलयन्त्रंप्रसाधयेत् ॥
गोप्यमेतत्प्रकाशोक्तंसर्वगम्यंभवेदिह ॥ १७ ॥

दृष्टान्तगोलरूपंयन्त्रंतुङ्गबीजसमायुक्तंतुङ्गोमहादेवस्तस्यबीजंवीर्यपारदइत्यर्थः । तेनयोजितंसत्प्रसाधयेत्। गणकःशिल्पज्ञः । प्रकर्षेणयथानाक्षत्रयष्टिघटीभिर्गोलभ्रमस्तथापारदप्रयोगेणसिद्धंकुर्यादित्यर्थः । एतदुक्तंभवति। निबद्धगोलबहिर्भूतयष्टिप्रान्तयोर्यथेच्छयास्थानद्वयेस्थानत्रयेवानेमिपरिधिरूपामुत्कीर्यतांतालपत्रादिनाचिक्कणवस्तुलेपेनाच्छाद्यतत्रछिद्रंकृत्वातन्मार्गेणपारदोऽर्धपरिधौपूर्णोदेय इतरार्द्धपरिधौजलंचदेयंततोमुद्रितच्छिद्रंकृत्वायष्ट्यग्रेभित्तिस्थनलिकयोःक्षेप्ये यथागोलोऽन्तरिक्षोभवति । ततःपारदजलाकर्षितषष्टिःस्वयंभ्रमति । तदाश्रितोगोलश्च । एतत्पक्षेवस्त्रच्छन्नमाकाशाकारतासम्पादनार्थमेवचेत् क्रियतइति । नन्वियंस्वयंवहक्रियाव्यक्तानोक्तेत्यतआह । गोप्यमिति । एतत्स्वयंवहकरणंगोप्यमप्रकाश्यंकुतइत्यतआह । प्रकाशोक्तमिति । अतिव्यक्ततयोक्तंस्वयंवहकरणमिहभूलोकेसर्वगम्यंसर्वजनगम्यंभवेत् । तथाचसर्वज्ञेयवस्तुनिचमत्कारानुत्पत्तेश्चमत्कृत्यर्थंसर्वत्रनप्रकाश्यमित्याशयेनतत्करणंव्यक्तंनोक्तमितिभावः ॥ १७ ॥

भा०टी०-पारेके साथ गोलयंत्रको सिद्धकरे; यह अतिगोपनीय प्रकाश करके कहनेसे जाना जायगा ॥ १७ ॥

ननुत्वयागोप्यत्वेनोक्तंमयाकथमवगन्तव्यंमादृशैरन्यैश्चकथमवगन्तव्यमित्यतःसार्धश्लोकेनाह-

तस्माद्गुरूपदेशेनरचयेद्गोलमुत्तमम् ॥
युगेयुगेसमुच्छिन्नारचनेयंविवस्वतः ॥
प्रसादात्कस्यचिद्भूयःप्रादुर्भवतिकामतः ॥ १८ ॥

तस्मात्स्वयंवहकरणस्यगोप्यत्वाद्गुरूपदेशेनपरम्पराप्राप्तगुरोर्निर्व्याजकथनेनगोलंदृष्टान्तगोलमुत्तमंस्वयंवहात्मकंगणकःकुर्यात् । तथाचमयातुभ्यमुक्ताग्रन्थेगोप्यत्वेनातिव्यक्तानोक्तेतिभावः । अन्यैःकथंज्ञेयमिदमित्यतआह । युगइत्यादि । विवस्वतः सूर्यमंडलाधिष्ठातुर्जीवविशेषस्येयंस्वयंवहरूपारचनाक्रियायुगेयुगेबहुकाल इत्यर्थः । समुच्छिन्नालोकेलुप्ता कस्यचिन्मादृशस्यप्रसादादनुग्रहाद्भूयःवारंवारमिच्छयाप्रादुर्भवतिव्यक्ताभवतीत्यथः।तथाचयथामत्तस्त्वयावगतंतथान्यस्मान्मादृशादन्यैरवगन्तव्यंकालस्यनिरवधित्वात्सृष्टेरनादित्वाच्चेतिभावः ॥ १८ ॥

भा०टी०--तिसके लिये गुरुके उपदेशसे उत्तम गोलको बनावै । यह युग २ में उच्छिन्न होताहै । परन्तु सूर्यके प्रसादसे किसीके लियेही फिर प्रगट होता है ॥१८ ॥

अथोक्तस्वयंवहक्रियारीत्यास्वयंवहगोलातिरिक्तान्यस्वयंवहयंत्राणिकालज्ञानार्थसाध्यानितत्साधनंरहसिकार्यमितिचाह-

कालसंसाधनार्थायतथायन्त्राणिसाधयेत् ॥
एकाकीयोजयेद्बीजंयन्त्रेविस्मयकारिणि ॥ १९ ॥

तथायथास्वयंवहगोलयन्त्रंसाधितंतद्वदित्यर्थः कालसंसाधनार्थायकालस्य दिनगतादेःसूक्ष्मज्ञाननिमित्तंयन्त्राणिस्वयंवहगोलातिरिक्तानिस्वयंवहतंत्राणि साधयेत् । गणकःशिल्पादिस्वकौशल्येनकारयेत् । यन्त्रेकालसाधकेविस्मयकारिणिस्वयंवहरूपतयालोकानामुत्पन्नाश्चर्यस्यकारणभूतेबीजंस्वयंवहतासम्पादकंकारणमेकाकीएकव्यक्तिकोऽद्वितीयःसन्योजयेत् । शिल्पज्ञतयास्वयमेवनिष्पादयेदित्यर्थः । अन्यथाद्वितीयस्यतज्ज्ञानेनतन्मुखात्तद्यन्त्रहार्दस्यलोकश्रवणगोचरतायांकदाचित्सम्भावितायांविस्मयानुत्पत्तेः ॥ १९ ॥

भा०टी०-कालसाधनके लिये यंत्रोंको बनावै; बिस्मयकारी बीज अकेलाही यंत्रमें मिलावै ॥ १९ ॥

अथैषांस्वयंवहयन्त्राणांदुर्घटत्वाच्छङ्क्वादियन्त्रैःकालज्ञानंज्ञेयमित्याह-

शङ्कुयष्टिधनुश्चक्रच्छायायन्त्रैरनेकधा ॥
गुरूपदेशाद्विज्ञेयंकालज्ञानमतंद्रितैः ॥ २० ॥

शङ्कुयष्टिधनुश्चक्रैः प्रसिद्धैश्छायायन्त्रैश्छायासाधकयन्त्रैरनेकधानानाविधगणितप्रकारैर्गुरूपदेशात्स्वाध्यापकस्यनिर्व्याजकथनादतन्द्रितैरभ्रमैः पुरुषैःकालज्ञानंदिनगतादिज्ञानंविज्ञेयंसूक्ष्मत्वेनावगम्यम् । एतत्सर्वंसिद्धान्तशिरोमणौ भास्कराचार्यैः स्पष्टीकृतम् । तत्रशङ्कुस्वरूपम् । "समतलमस्तकपरिधिर्भ्रमसिद्धो दन्तिदन्तजः शङ्कुः । तच्छायातःप्रोक्तंज्ञानंदिग्देशकालानाम् ॥" इति । यष्टियन्त्रंच । "त्रिज्याविष्कम्भार्धवृत्तंकृत्वादिगङ्कितंतत्र । दत्त्वाग्रांप्राक्पश्चाद्द्युज्यावृत्तंचतन्मध्ये । तत्परिधौषष्टचङ्कंयष्टिर्नष्टद्युतिस्ततःकेन्द्रे । त्रिज्याङ्गुलानिधेयायष्टचग्राग्रान्तरंयावत् ॥ यावत्यामौर्व्यायद्द्वितीयवृत्तेधनुर्भवेत्तत्र । दिनगतशेषानाडचःप्राक्पश्चात्स्युःक्रमेणैवम् ॥" इति । चक्रयन्त्रन्तु । "चक्रंचक्रांशाङ्कंपरिधौश्लथशृङ्खलादिकाधारम् । धात्रीत्रिभआधारात्कल्प्याभार्धेऽत्रखार्धंच ॥ तन्मध्येसूक्ष्माक्षंक्षिप्त्वार्काभिमुखनेमिकंधार्यम् । भूमेरुन्नतभागास्तत्राक्षच्छाययाभुक्ताः ॥ तत्खार्धान्तश्चरताउन्नतलवसंगुणंद्युदलम् । द्युदलोन्नतांशभक्तंनाडचःस्थूलाःपरैःप्रोक्ताः ॥" इति धनुर्यन्त्रंतु । 'दलीकृतंचक्रमुशन्तिचापम्॥, इति । अथग्रन्थविस्तरभयादेतेषांनिरूपणविस्तरोगणितादिविचारश्चोपेक्षितइतिमन्तव्यम् ॥ २० ॥

भा०टी०--विना भ्रमवालां पुरुष गुरुके उपदेशसे शंकु, यष्टि, धनु, चक्र, अनेक प्रकारके छायायंत्रसे कालको जाने ॥ २० ॥

अथघटीयंत्रादिभिश्चमत्कारियन्त्रैर्वासर्वोपजीव्यंकालंसूक्ष्मसाधयेदितिकालसाधनमुपसंहरति-

तोययंत्रकपालाद्यैर्मयूरनरवानरैः ॥
ससूत्ररेणुगर्भैश्चसम्यक्कालंप्रसाधयेत् ॥ २१ ॥

जलयन्त्रंचतत्कपालंचकपालाख्यंजलयंत्रंवक्ष्यमाणंतदाद्यंप्रथमंयेषांतैर्यन्त्रैर्वालुकायन्त्रप्रभृतिभिःसापेक्षघटीयन्त्रैर्मयूरनरवानरैः । मयूराख्यंस्वयंवहयन्त्रं निरपेक्षंनरयन्त्रंशङ्क्वाख्यंछायायन्त्रंपूर्वोद्दिष्टवानरयत्रंस्वयंवहंनिरपेक्षमेतैः ससूत्ररेणुगर्भैःसूत्रसहितारेणवोधूलयोगर्भेमध्येयेषांतैः सूत्रप्रोता षष्टिसङ्ख्याका मृदुघटिकामयरोदरस्थानमुखाद्घटिकान्तरेणस्वतएवनिःसरन्तीति लोकप्रसिद्ध्यातादृशैर्यन्त्रैरित्यर्थः । यद्वा सूत्राकारेणरेणवः सिकतांशागर्भेउदरेयस्यैतादृशंयन्त्रंवालुकायन्त्रंप्रसिद्धम् । तेनसहितैर्मयूरादियन्त्रैर्वालुकायन्त्रेणचेति सिद्धोर्थः । चकारस्तोययन्त्रकपालाद्यैरि नेकसमुच्चयार्थकः । कालंदिन-

गतादिरूपंसम्यक्सूक्ष्मंप्रसाधयेत् । प्रकर्षेणसूक्ष्मत्वेनातिसूक्ष्मत्वेनेत्यर्थः । जानीयादित्यर्थः ॥ २१ ॥

भा०टी०-कपालादि जलयंत्र, मयूर, नर वानराकार सूत्रयुत आदिरेणु गर्भसे भलीभाँति करके साधन करै ॥ २१ ॥

ननुमयूरादिस्वयंवहयन्त्राणिकथंसाध्यानीत्यतस्तत्साधनप्रकाराबहवोदुर्गमाश्चसन्तीत्याह-

पारदाराम्बुसूत्राणिशुल्बतैलजलानिच ॥
बीजानिपांसवस्तेषुप्रयोगास्तेपिदुर्लभाः ॥ २२ ॥

तेषुमयूरादियन्त्रेषुस्वयंवहार्थमेतेप्रयोगाः प्रकर्षेणयोज्याः । प्रकर्षस्तुयावदभिमतासिद्धेः । एतेकइत्यतआह । पारदाराम्बुसूत्राणीति । पारदयुक्ताआराः । यथाचसिद्धान्तशिरोमणौ । "लघुकाष्ठजसमचक्रेसमसुषिराराः समान्तरानेम्याम्। किंचिद्वक्रायोज्याः सुषिरस्यार्धेपृथक्तासाम् ॥ रसपूर्णेतच्चक्रंद्व्याधाराक्षस्थितस्वयं भ्रमति ॥" इति । अम्बुजलस्यप्रयोगः । सूत्राणिसूत्रसाधनप्रयोगः । शुल्बंशिल्पनैपुण्यम् । तैलजलानितैलयुक्तजलस्यप्रयोगः । चकारात् तयोः पृथक्प्रयोगोऽपि । यथाचसिद्धान्तशिरोमणौ । "उत्कीर्यनेमिमथवापरितोमदनेनसंलग्नम् । तदुपरितालदलाद्यंकृत्वासुषिरेरसंक्षिपेत्तावत् ॥ यावद्रसैकपार्श्वेक्षिप्त जलंनान्यतोयाति । पिहितच्छिद्रंतदतश्चक्रंभ्रमतिस्वयंजलाकृष्टम् ॥ ताम्रादिमयस्यांकुशरूपनलस्याम्बुपूर्णस्य । एकंकुण्डजलान्तर्द्वितीयमग्रंत्वधोमुखंचबहिः॥ युगपन्मुक्तंचेत्कंनलेनकुण्डाद्बहिः पतति । नेम्यांबध्वाघटिकाश्चक्रंजलयन्त्रवत्तथाधार्यम् ॥ नलकप्रच्युतसलिलंपततियथातद्घटीमध्ये। भ्रमतिततस्तत्सततंपूर्णघटीभिः समाकृष्टम् ॥ चक्रच्युतंस्वमुदकंकुण्डेयातिप्रणालिकया ॥ " इति । बीजानिकेवलंतुङ्गबीजप्रयोगः । पांसवोधूलिप्रयोगास्तैर्युक्ताः प्रयोगाः । अपिशब्दात्प्रयोगेषुसुगमतराइत्यर्थः । दुर्लभाः साधारणत्वेनमनुष्यैः कर्तुमशक्याइत्यर्थः अन्यथाप्रतिगृहंस्वयंवहानांप्राचुर्यापत्तेः । इयंस्वयंवहविद्यासमुद्रान्तर्निवासिजनैः फिरङ्ग्याख्यैः सम्यगभ्यस्तेति कुहकविद्यात्वादत्रविस्तारानुद्योग इतिसंक्षेपः ॥ २२ ॥

भा० टी०-और सब, पारेसे युक्त, जल, सूत्र, शिल्पकी निपुणता, तेलयुक्त जल, पारा, बालू. सब यंत्रोंका प्रयोग करना अत्यन्त दुर्लभ है ॥ २२ ॥

अथकपालाख्यंजलयन्त्रमाह-

ताम्रपात्रमधश्छिद्रंन्यस्तंकुण्डेऽमलाम्भसि ॥
षष्टिर्मज्जत्यहोरात्रेस्फुटंयन्त्रंकपालकम् ॥ २३ ॥

यत्ताम्रघटितंपात्रमधश्छिद्रमधोभागेछिद्रंयस्यतत् । अमलाम्भसिनिर्मलंजलं विद्यतेयस्मिंस्तादृशेकुण्डेबृहद्भाण्डेन्यस्तंधारितंसदहोरात्रेनाक्षत्राहोरात्रेषष्टिः षष्टिवारंभवनन्यूनाधिकंमज्जति । अधश्छिद्रमार्गेणजलागमनेनजलपूर्णतयानिमग्नंभवति । तत्कपालकंकपालभवकपालकंघटखण्डानांकपालपदवाच्यत्वाद्धटाधस्तनार्धाकारंयन्त्रंघटीयन्त्रंस्फुटंसूक्ष्मंतद्घटनंतु । "शुल्बस्यदिग्भिर्विहितंपलैर्यत्षडङ्गुलोच्चंद्विगुणायतास्यम् । तदम्भसाषष्टिपलैः प्रपूर्यपात्रं घटार्धप्रतिमंघटीस्यात् ॥ सत्र्यंशमाषत्रयनिर्मितायाहेम्नः शलाकाचतुरङ्गुलास्यात् । विद्धंतयाप्राक्तनमत्रपात्रंप्रपर्यतेनाडिकयाम्बुभिस्तत् ॥ " इतिव्यक्तम् । भगवतातुसूक्ष्ममुक्तम् ॥२३॥

भा०टी०-निर्मल जलभरे हुए कुम्भमें (नाद) नीचे जिसमें छेद है ऐसा तांबेका पात्र रक्खे, (कटोरा) यह कपालक यंत्र दिनरातमें साठवार जलमें डूबैगा ॥ २३ ॥

अथशङ्कुयन्त्रंदिवैवकालज्ञानार्थनान्यदेत्याह-

नरयन्त्रंतथासाधुदिवाचविमलेरवौ ॥
छायासंसाधनैः प्रोक्तंकालसाधनमुत्तमम् ॥ २४ ॥

विमलेमेघादिव्यवधानरूपमलेनरहितेसूर्यएतद्रूपेदिने । चकारएवकारार्थस्तेनसाभ्रदिनव्यवच्छेदः । नरयन्त्रंद्वादशाङ्गुलशङ्कुयन्त्रंतथाघटीयन्त्रवत्कालसाधकंसाधुसूक्ष्मंरात्रौनेत्यर्थसिद्धम् । ननुशङ्कोश्छायासाधकत्वंनकालसाधकत्वंतेनतस्यकथंयन्त्रत्वंकालसाधकवस्तुनोयन्त्रत्वप्रतिपादनादित्यतआह । छायासंसाधनैरिति । इदंशङ्कुरूपनरयन्त्रंछायायाः सम्यक्सूक्ष्मत्वेनसाधनैरवगमैः कृत्वाकालसाधनंदिनगतादिकालस्यकारणमुत्तमम् । अन्ययन्त्रेभ्योऽस्मान्निरन्तरतयातिश्रेष्ठम् । तथाचच्छायासाधकत्वेनैवच्छायाद्वाराशङ्कोःकालसाधकत्वमितिनयन्त्रत्वव्याघातः । अतएवसाभ्रदिनेरात्रौचानुपयुक्तः । नरस्यच्छायायन्त्रोपलक्षणत्वात्यष्टिधनुश्चक्राण्यपितथेतिध्येयम् ॥ २४ ॥

भा० टी०-दिनके समय जब निर्मल सूर्यहों तब छायासंशोधनके लिये अत्युत्तम नरयंत्र (१२ अंगुल) समयको साधनेके लिये कहाहै ॥ २४ ॥

अथादितएतदन्तग्रन्थज्ञानस्यैकफलकथनेनविभक्तमपिखण्डद्वयंक्रोडयति-

ग्रहनक्षत्रचरितंज्ञात्वागोलंचतत्त्वतः ॥
ग्रहलोकमवाप्नोतिपर्यायेणात्मवान्नरः ॥ २५ ॥

ग्रहनक्षत्राणांचरितंगणितविषयकंज्ञानंग्रन्थपूर्वखण्डरूपंगोलंभूगोलभगोलस्वरूपप्रतिपादकग्रन्थंग्रन्थोत्तरार्धान्तर्गतम् । चकारः समुच्चये । तत्त्वतः वस्तुस्थितिसद्भावेनसार्वविभक्तिकस्तसिरित्येके । ज्ञात्वावगम्यनरः पुरुषः । ग्रहलोकंचन्द्रादिग्रहाणांलोकंतल्लोकाधिष्ठितस्थानंग्रहोपलक्षणान्नक्षत्राधिष्ठितस्थानमपीति-

ध्येयम् । प्राप्नोति । ननुग्रहलोकप्राप्त्याकःपुरुषार्थइत्यतोमोक्षरूपंपुरुषार्थफलमाह । पर्यायेणेति । जन्मान्तरेणपुरुषआत्मवानात्मज्ञानीभवति । तथाचात्मज्ञानान्मोक्षप्राप्तिरेवेतिभावः ॥ २५ ॥

भा०टी०-ग्रहनक्षत्रचरित, और गोल इनको भलीभांतिसे जानकर मनुष्य ग्रहलोकको प्राप्त होकर अंतमें आत्मवान् होता है ॥ २५ ॥

अथाग्रिमग्रन्थस्यासङ्गतिपरिहारायारब्धाध्यायसमाप्तिंफक्किकयाह-

इतिज्योतिषोपनिषदध्यायः ॥ १३ ॥

इतियथावेदेआत्मस्वरूपनिरूपणान्नारायणोपनिषदुच्यते । तथाज्योतिःशास्त्रेप्रदिपादितानांग्रहनक्षत्राणामेतद्ग्रन्थैकदेशेस्वरूपादिनिरूपणाज्ज्योतिःशास्त्रसारंज्योतिषोपनिषदुच्यते । तत्संज्ञोऽध्यायोग्रन्थैकदेशः सम्पूर्णइत्यर्थः ।

रङ्गनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे ।
ज्योतिषोपनिषत्सञ्ज्ञोध्यायः पूर्णोपरार्धके ॥

इतिश्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरंगनाथगणकविरचितेगूढार्थप्रकाशकेउत्तरखण्डेज्योतिषोपनिषदध्यायःपूर्णः ॥ १३ ॥

तेरहवां अध्याय समाप्त ।

चतुर्दशोऽध्यायः ।

अथमानानिकतिकिञ्चैतैरित्यवशिष्टप्रश्नस्योत्तरभूतआरब्धमानाध्यायोव्याख्यायते । तत्रप्रथमंमानानिकतीतिप्रथमप्रश्नस्योत्तरमाह-

ब्राह्मंदिव्यंतथापित्र्यंप्राजापत्यंगुरोस्तथा ॥
सौरंचसावनंचान्द्रमार्क्षंमानानिवैनव ॥ १ ॥

वैनिश्चयेन । नवसङ्ख्याकानिकालमानानि । तत्रप्रथमंब्राह्ममानम् । 'कल्पोब्राह्ममहःप्रोक्तम् ।' इत्यादि । 'परमायुःशतंतस्यतयाहोरात्रसंख्यया ।' इत्यन्तंमध्यमाधिकारेप्रतिपादितम् । द्वितीयंदिव्यंदेवमानम् । 'दिव्यंतदहउच्यते ।' इत्यादि । 'तत्षष्टिःसङ्गुणादिव्यंवर्षम् ।' इत्यन्तंतत्रैवप्रतिपादितम् । तथातृतीयमानंपित्र्यंपितॄणांमानंवक्ष्यमाणम् । प्राजापत्यंमानंवक्ष्यमाणंचतुर्थम् । बृहस्पतेस्तथामानंपञ्चमंसमुदीरितम् । सौरं चकारात्षष्ठंमानम् । सावनंसप्तमंमानं । चन्द्रमानमष्टमम् । नाक्षत्रंमानंनवमम् । एतान्यंपितत्रैवोक्तानि ॥ १ ॥

भा०टी०-ब्राह्म, दैव, पित्र्य, प्राजापत्य, बार्हस्पत्य, सौर, सावन, चान्द्र और नाक्षत्र यह नौ मान हैं ॥ १ ॥

अथकिंचित्तैरितिद्वितीयप्रश्नस्योत्तरंविवक्षुःप्रथमंव्यवहारोपयुक्तमानानिदर्शयति-

चतुर्भिर्व्यवहारोऽत्रसौरचान्द्रर्क्षसावनैः ॥
बार्हस्पत्येनषष्ट्यब्दंज्ञेयंनान्यैस्तुनित्यशः ॥ २ ॥

अत्रमनुष्यलोकेसौरचान्द्रनाक्षत्रसावनैश्चतुर्भिर्मानैर्व्यवहारःकर्मघटना । षष्ट्यब्दंप्रभवादिषष्टिवर्षजात्यभिप्रायेणैकवचनम् । बार्हस्पत्येनबृहस्पतिमानेनबृहस्पतिमध्यमराशिभोगात्मककालेनप्रत्येकंज्ञेयम् । अन्यैरवशिष्टैर्ब्राह्मदिव्यपित्र्यप्राजापत्यैः । नित्यशःसदेत्यथः । व्यवहारोनास्ति । तुकारात्कदाचित्कत्वेनतैर्व्यवहारः ॥ २ ॥

भा०टी०-इनमें चारका व्यवहार हुआ है । सौर, चान्द्र, नाक्षत्रिक, और सावन, षष्ट्यब्द जाननेके लिये बार्हस्पत्यमानको जानना चाहिये । शेषमानोंका नित्य प्रयोजन नहीं होता ॥ २ ॥

अथसौरेणव्यवहारंप्रदर्शयति-

सौरेणद्युनिशोर्मानंषडशीतिमुखानिच ॥
अयनंविषुवच्चैवसंक्रान्तेःपुण्यकालता ॥ ३ ॥

अहोरात्रयोर्मानंसौरेणज्ञेयम् । प्रात्यहिकसूर्यगतिभोगादहोरात्रंभवतीत्यर्थः। षडशीतिमुखानिवक्ष्यमाणानि । चःसमुच्चये । तेनसौरमानेनज्ञेयानि । अयनंविषुवत् । चःसमुच्चये । संक्रान्तेःपुण्यकालतासूर्यबिम्बकलासम्बद्धासौरमानेन ॥ ३ ॥

भा० टी०-दिनरात्रिका परिमाण षडशीति आदि अयन, विषुवत् संक्रान्ति आदि पुण्य० काल; यह सब सौरमानमें निर्णीत होते हैं ॥ ३ ॥

अथषडशीतिमुखमाह-

तुलादिषडशीत्यह्नांषडशीतिमुखंक्रमात् ॥
तच्चतुष्टयमेवस्याद्विस्वभावेषुराशिषु ॥ ४ ॥

तुलारम्भात्षडशीतिदिवसानांसौराणांषडशीतिमुखंभवात । तच्चतुष्टयंषडशीतिमुखस्यचतुःसंख्याद्विस्वभावेषुराशिषुचतुर्षुक्रमादेवंवक्ष्यमाणाभवति ॥ ४ ॥

भा०टी०-तुलाके आरम्भसे परस्पर सौर ८६ दिनमें षडशीति होता है । यह चार द्विस्वभाव राशिमें स्थित हैं ॥ ४ ॥

तदेवाह-

षडिंशेधनुषोभागेद्वाविंशेनिमिषस्यच ॥
मिथुनाष्टादशेभागेकन्यायास्तुचतुर्दश ॥ ५ ॥

धनूराशेःषड्विंशतितमेंऽशेषडशीतिमुखंमीनराशेर्द्वाविंशतितमेंऽशेषडशीतिमुखम्। चकारः समुच्चयार्थकः प्रत्येकमन्वेति । मिथुनराशेरष्टादशेंऽशेषडशीतिमुखंकन्यायाश्चतुर्दशेभागेषडशीतिमुखम् । अतएवतुलादितः षडशीत्यंशोगणनयायेषुराशिषुभवंतितेराशयोद्विस्वभावाः षडशीतिमुखसञ्ज्ञाः संक्रान्तिप्रकरणेसांहितिकैरुक्ताः ॥ ५ ॥

भा० टी०-प्रथम षड़शीतिमुख धनुके २६ अंशमें । दूसरा मीनके २२ अंशमें; तीसरा मिथुनके १८ अंशमें; चौथा कन्याके १४ अंशमें है ॥ ५ ॥

अथषडशीत्यंशगणनयाचत्वारिषडशीतिमुखान्युक्त्वाभगणांशपूर्त्यर्थमवशिष्टांशाः षोडशातिपुण्याइत्याह-

ततः शेषाणिकन्यायायान्यहानितुषोडश ॥
क्रतुभिस्तानितुल्यानिपितॄणांदत्तमक्षयम् ॥ ६ ॥

ततः कन्यादिचतुर्दशभागानन्तरंशेषाणिभगणभागेऽवशिष्टानिकन्यायायान्यहानिसौरभागसमानिषोडशतानि । तुकारात्पूर्वदिनासमानिक्रतुभिर्यज्ञैः समानि । अतिपुण्यानीत्यर्थः । तत्रपितॄणांदत्तंश्राद्धादिकृतमक्षयमनन्तफलदंभवति ॥ ६ ॥

भा० टी०-कन्याके पिछले १६ अंश यज्ञकार्यके लिये पुण्यदायी हैं। इस समयमें पितृलोगोंके लिये कियाहुआ दान अक्षयं होता है ॥ ६ ॥

अथराश्यधिष्ठितक्रान्तिवृत्तेचत्वारिस्थानानिपदसन्धिस्थानेविषुवायनाभ्यांप्रसिद्धानीत्याह-

भचक्रनाभौविषुवद्वितयंसमसूत्रगम् ॥
अयनद्वितयंचैवचतस्रःप्रथितास्तुताः ॥ ७ ॥

भचक्रनाभौभगोलस्यध्रुवद्वयाभ्यांतुल्यान्तरेणमध्यभागेविषुवद्वितीयंविषुवद्वयंसमसूत्रगंपरस्परंव्याससूत्रान्तरितंध्रुवमध्येविषुवद्वृत्तस्थानात्तद्वृत्तेक्रान्तिवृत्तभागौयौलग्नौतौक्रमेणपूर्वापरौविषुवत्संज्ञौमेषतुलाख्यौचेत्यर्थः । अयनद्वितयमयनद्वयंकर्कमकरादिरूपम् । चःसमुच्चये । तेनसमसूत्रगंताविषुवायनाख्याःक्रान्तिवृत्तप्रदेशरूपाभूमयश्चतस्रश्चतुःसङ्ख्याकाःप्रथितागणितादौपदादित्वेनप्रसिद्धाः।एवकारादन्यराशीनांनिरासः। तुकारात्तासांसमसूत्रस्थत्वेऽपिविषुवायनत्वाभावात्पदादित्वेनाप्रसिद्धिरित्यर्थः ॥ ७ ॥

भा०टी०-नक्षत्रचक्रमें दो विषुवद् विन्दु समसूत्रग हैं, और दो अयनभी तैसेही हैं । यह चारबिन्दु सदा कहे जाते हैं ॥ ७ ॥

अथावशिष्टनामादिस्वरूपमन्यदप्याह-

तदन्तरेषुसंक्रान्तिद्वितयंद्वितयंपुनः ॥
नैरन्तर्यात्तुसंक्रान्तेर्ज्ञेयंविष्णुपदीद्वयम् ॥ ८ ॥

तदन्तरेषुविषुवायनान्तरालेषु । अत्रान्तरालानांचतुः स्थानेसद्भावाद्बहुवचनम् । संक्रान्तिद्वितयंद्वितयंपुनाराश्यादिभागेग्रहाणामाक्रमणंवारद्वयंभवतितदन्तराले-राश्यादिभागौद्वौभवतइत्यर्थः । यथाहिमेषाख्यविषुवकर्काख्यायनयोरन्तरालेवृष-मिथुनयोरादी । कर्कतुलयोरन्तरालेसिंहकन्ययोरादी । तुलामकरयोरन्तरालेवृ-श्चिकधनुषोरादी । मकरमेषयोरन्तरालेकुंभमीनयोरादीइति । एवंविषुवानन्तरं संक्रमणद्वयमन्तरमयनंतदनन्तरंसंक्रान्तिद्वयंतदनन्तरंविषुवमनन्तरंसंक्रांतिद्वयम-नन्तरमयनमित्यादिपौनः पुन्येनज्ञेयमित्यर्थः । संक्रांतिद्वयमध्येप्रथमसंक्रान्तौवि-शेषमाह । नैरन्तर्यादिति । निरन्तरतयासम्भूतायाःसंक्रान्तेःसकाशाद्विष्णुपदी-द्वयंतदन्तरालइतित्वर्थः । अवगम्यंप्रथमसंक्रांन्तिर्विष्णुपदसञ्ज्ञातयोर्द्वयं-तदभ्यन्तरेप्रत्येकंभवतीतितात्पर्यार्थः । षडशीतिसञ्ज्ञंद्वितीयसंक्रमणंपूर्वसू-चितंतयोरपिद्वयंतदन्तरालेभवतीतिध्येयम् ॥ ८ ॥

भा०टी०-कहेहुए दो बिन्दुओंके मध्यमें दो संक्रान्ति होती हैं जो चार संक्रान्ति तिनके पीछे होती हैं तिनको विष्णुपदी कहते हैं । (औरका नाम षड्शीति है) ॥ ८ ॥

अथायनद्वयमाह-

भानोर्मकरसंक्रान्ते षण्मासाउत्तरायणम् ॥
कर्कादेस्तुतथैवस्यात्षण्मासादक्षिणायनम् ॥ ९ ॥

सूर्यस्यमकरसंक्रान्तेःसकाशात्षट्सौरमासाउत्तरायणंभवति । कर्कादेः कर्क-संक्रान्तेःसकाशात्तथासूर्यभोगात् एवकारादन्यग्रहनिरासः । षण्मासाः । तुकारा त्सौराः । दक्षिणायनंभवति ॥ ९ ॥

भा०टी०-सूर्यके मकरसंक्रमणके पीछे ६ मास उत्तरायण हैं । कर्कटसंक्रमणके पीछे ६मास दक्षिणायन है ॥ ९ ॥

अथर्तुमासवर्षाण्याह-

द्विराशिनाथाऋतवस्ततोऽपिशिशिरादयः ॥
मेषादयोद्वादशैतेमासास्तैरेववत्सरः ॥ १० ॥

ततोमकरसंक्रान्तेःसकाशात् । अपिशब्दउत्तरायणावधिनासमुच्चयार्थकः । द्विराशिनाथाराशिद्वयस्वामिकाराशिद्वयार्कभोगात्मकाइत्यर्थः । शिशिरादयः शिशिरवसन्तग्रीष्मवर्षाशरद्धेमन्ताऋतवःकालविभागविशेषाभवन्ति । एते सूर्य-भोगविषयकामेषादयोराशयोद्वादशमासास्तैर्द्वादशभिर्मासैः । एवकारान्न्यूनाधि-क्यव्यवच्छेदः । वत्सरःसौरवर्षंभवति ॥ १० ॥

भा०टी०-वह समय (मकरसंक्रमण) से शिशिरादि सब ऋतुमें द्विराशि करके भोग करता है। मेषादि १२ मासमें एकवर्ष होताहै ॥१०॥

अथप्रसङ्गात्संक्रान्तौपुण्यकालानयनमाह-

अर्कमानकलाःषष्ट्यागुणिताभुक्तिभाजिताः ॥
तदर्धनाड्यःसंक्रांतेरर्वाक्पुण्यंतथापरे ॥ ११ ॥

सूर्यस्यबिम्बप्रमाणकलाःषष्ट्यागुणिताः सूर्य्यगत्याभक्तास्तस्यफलस्यार्द्धतत्संख्याकाघटिकाइत्यर्थः। संक्रान्तेःसूर्यस्यराशिप्रवेशकालादित्यर्थः। अर्वाक्पूर्वंपुण्यंस्नानादिधर्मकृत्येपुण्यघटिकाः पुण्यवृद्धिकारिकाः। अपरेसंक्रांत्युत्तरकालेतथास्नानादिधर्मकृत्येपुण्यवृद्धिदाइत्यर्थः। अत्रोपपत्तिः। सूर्यबिम्बकेन्द्रस्यराश्यादौसञ्चरणकालःसंक्रमणकालस्तस्यसूक्ष्मत्वेनदुर्ज्ञेयत्वात्स्थूलकालःकोप्यभ्युपेयः सतुराश्यादौबिम्बसञ्चरणरूपोऽङ्गीकृतोबिम्बसम्बन्धात्। अतःसूर्य्यगत्याषष्टिसावनघटिकास्तदासूर्यबिम्बकलाभिःकाइत्यनुपातानीताबिम्बघटिकाःसंक्रान्तिकालःस्थूलःप्राङ्नेमिसञ्चरणकालात्पश्चिमनेमिसञ्चरणकालपर्य्यन्तंतदर्धघटिकाव्यासार्धघटिकाइति संक्रान्तिकालात्ताभिःपूर्वमपरत्रकालेप्रागपरनेम्योः क्रमेणसंचरणात्पूर्वोत्तरकालेपुण्याइति ॥ ११ ॥

भा०टी०-सूर्यमानकला ६० से गुणकरके भुक्तिसे भाग करनेपर जोहो, तिस्का आधा संक्रमणकालमें वियोग और योग करनेंसे जो दो समय होते हैं तिनका अन्तर अतिपुण्यदाई होता है॥ ११ ॥

अथसौरमुक्त्वाक्रमप्राप्तंचान्द्रमानमाह-

अर्काद्विनिसृतःप्राचींयद्यात्यहरहःशशी ॥
तच्चान्द्रमानमंशैस्तुज्ञेयाद्वादशभिस्तिथिः ॥ १२ ॥

सूर्यात्समागमंत्यक्त्वाविनिर्गतःपृथग्भूतःसंश्चन्द्रोऽहरहःप्रतिदिनंयत् तत्संख्यामितंप्राचींपूर्वांदिशंगच्छतितत्प्रतिदिनेचान्द्रमानंतत्तुगत्यन्तरांशमितम्। ननुसौरदिनंसूर्यांशेनयथाभवतितथैतद्रूपैर्भागैःकियद्भिः पूर्णंचान्द्रंदिनंभवतीत्यतआह। अंशैरिति। भागैस्तुकारात्सूर्य्यचन्द्रान्तरोत्पन्नैस्तस्यतद्रूपत्वात्। द्वादशभिर्द्वादशसंख्याकैस्तिथिर्ज्ञेया। एकंचान्द्रदिनंज्ञेयमित्यर्थः। एतदुक्तंभवति। सूर्यचन्द्रयोगाच्चान्द्रदिनप्रवृत्तेःपुनर्योगेमाससमाप्तेर्भगणान्तरेणचान्द्रोमासस्त्रिंशच्चान्द्रदिनात्मकः। अतस्त्रिंशद्दिनैर्भगणांशान्तरंतदेकेनकिमिति। द्वादशभागैरेकंचान्द्रदिनम्। 'दर्शःसूर्येन्दुसङ्गमः।' इत्यभिधानाद्दर्शावधिकमासस्यात्रिंशत्तिथ्यात्मकत्वात्तिथिश्चान्द्रदिनरूपेति ॥ १२ ॥

भा०टी०-सूर्यसे निकलकर अहरह चन्द्रमा पूर्वदिशामें जाता है; तिसके लिये सूर्यसे १२ अंशमें जानेको जितना समय लगता है, वह तिथि है ॥ १२ ॥

अथचान्द्रव्यवहारमाह-

तिथिःकरणमुद्वाहःक्षौरंसर्वक्रियास्तथा ॥
व्रतोपवासयात्राणांक्रियाचान्द्रेणगृह्यते ॥ १३ ॥

तिथिःप्रतिपदाद्याकरणंबवादिकमुद्वाहोविवाहःक्षौरंचौलकर्म । एतदाद्याःसर्वक्रियाव्रतबन्धाद्युत्सवरूपाव्रतोपवासयात्राणांनियमोपवासगमनानांक्रियाकरणम् । तथासमुच्चयार्थकः । चान्द्रमानेनगृह्यते । अङ्गीक्रियते ॥ १३ ॥

भा०टी०-तिथि,करण, विवाह क्षौरादि समस्तकर्म व्रत, उपवास, यात्रा सबही चान्द्रमानमें ग्रहण किये जाते हैं ॥ १३ ॥

अथचान्द्रमासंप्रसङ्गात्पितृमानंचाह-

त्रिंशतातिथिभिर्मासश्चान्द्रःपित्र्यमहःस्मृतम् ॥
निशाचमासपक्षान्तौतयोर्मध्येविभागतः ॥ १४ ॥

त्रिंशतात्रिंशन्मितैस्तिथिभिश्चान्द्रोमासःपित्र्यंपितृसंवन्धि । अहर्दिनम् । निशारात्रिःपितृसंबद्धा । चकारोव्यवस्थार्थकः । तेनोभयंनैकःप्रत्येकंकिंतु मिलितंस्मृतमितिलिंगानुरोधेनोभयत्रान्वेति । तथाचचान्द्रोमासः । पित्र्याहोरात्रमित्यर्थः फलितः । मासपक्षान्तौमासान्तौदर्शान्तःपक्षान्तःपूर्णिमान्तः । एतावित्यर्थः । विभागतःक्रमेणेत्यर्थः तयोःपित्र्याहोरात्रयोर्मध्येऽर्धंभवतः । दर्शान्तःपितॄणांमध्याह्नः पूर्णिमान्तःपितृणांमध्यरात्रइत्यर्थः । अर्थात्कृष्णाष्टम्यर्ध्येदिनप्रारंभः । शुक्लाष्टम्यर्धेदिनान्तइतिसिद्धम् ॥ १४ ॥

भा०टी०-३०तिथिमें चान्द्रमास या पितृदिन और पक्षान्तमें निशा है इसप्रकार विभागमें एक मासका दिनरात होता है ॥ १४ ॥

अथक्रमप्राप्तंनक्षत्रमानंप्रसंगान्मासंसंज्ञांचाह-

भचक्रभ्रमणंनित्यंनाक्षत्रंदिनमुच्यते ॥
नक्षत्रनाम्नामासास्तुज्ञेयाःपर्वान्तयोगतः ॥ १५ ॥

नित्यंप्रत्यहंभचक्रभ्रमणंनक्षत्रसमूहस्यप्रवहवायुकृतपरिभ्रमः । नाक्षत्रंनक्षत्रसम्बन्धिदिनंमानज्ञैःकथ्यते । नित्यमित्यनेनचन्द्रभोगनक्षत्रभोगोनाक्षत्रमित्यस्यनिरासः । भचक्रभ्रमणानुपपत्तेः । माससंज्ञामहानक्षत्रनाम्नेति । पर्वान्तयोगतःपर्वान्तपूर्णिमान्तः । तस्ययोगात्तत्सम्बन्धात् । नक्षत्रसंज्ञयामासाः । तुकाराच्चान्द्राअवगम्याःपूर्णिमान्तास्थितचन्द्रनक्षत्रसंज्ञोमासो ज्ञेयइतितात्पर्यार्थः । यथाहि यद्दर्शान्तावधिकश्चान्द्रोमासस्तदभ्यंतरास्थितपूर्णिमान्तस्थितचन्द्रनक्षत्रसंज्ञः । चित्रासम्बन्धाच्चैत्रः । विशाखासम्बन्धा-

वैशाखः । ज्येष्ठासम्बन्धाज्ज्येष्ठः । आषाढासम्बन्धादाषाढः । श्रवणसम्बन्धाच्छ्रावणः । भाद्रपदासम्बन्धाद्भाद्रपदः । अश्विनीसम्बन्धादाश्विनः । कृत्तिकासम्बन्धात्कार्तिकः । मृगशीर्षसम्बन्धान्मार्गशीर्षः । पुष्यसम्बन्धात्पौषः । मघासंबन्धान्माघः । फाल्गुनीसम्बन्धात्फाल्गुनइति ॥ १५ ॥

भा०टी०-दैनिकभचक्रका भ्रमण करनाही नाक्षत्रिकदिन है । पूर्णिमान्ताधिष्ठित नक्षत्रके नामसे मासका नाम जानना चाहिये ॥ १५ ॥

ननुपूर्णिमान्तेतत्तन्नक्षत्राभावेकथंसत्संज्ञामासानामुचितेत्यतआह-

कार्तिक्यादिषुसंयोगेकृत्तिकापिद्वयंद्वयम् ॥
अन्त्योपान्त्यौपञ्चमश्चत्रिधामासत्रयंस्मृतम् ॥ १६ ॥

नक्षत्रसंयोगार्थमितिनिमित्तसप्तमी । कार्तिक्यादिषुकार्तिकमासादीनांपौर्णमासीष्वित्यर्थः । कृत्तिकादिद्वयंद्वयंनक्षत्रंकथितंकृत्तिकारोहिणीभ्यांकार्त्तिकःमृगार्द्राभ्यांमार्गशीर्षः । पुनर्वसुपुष्याभ्यांपौषः । आश्लेषामघाभ्यांमाघः । चित्रास्वातीभ्यांचैत्रः । विशाखानुराधाभ्यांवैशाखः । ज्येष्ठामूलाभ्यांज्येष्ठः । पूर्वोत्तराषाढाभ्यामाषाढः । श्रवणधनिष्ठाभ्यांश्रावणइतिफलितम् । अवशिष्टमासानाह । अन्त्योपान्त्याविति । अत्रकार्तिकस्यादित्वेनग्रहादन्त्यआश्विनः । उपान्त्योभाद्रपदः । एतौमासौ । पञ्चमःफाल्गुनः । चकारःसमुच्चयइति । मासत्रयंत्रिधास्थानत्रयउक्तम् । रेवत्यश्विनीभरणीतिनक्षत्रत्रयसम्बन्धादाश्विनः । शततारापूर्वोत्तराभाद्रपदेतिनक्षत्रत्रयसम्बन्धाद्भाद्रपदः । पूर्वोत्तराफाल्गुनीहस्तेतिनक्षत्रत्रयसंबन्धात्फाल्गुनइतिसिद्धम् ॥ १६ ॥

भा०टी०-कार्तिकमासकी पूर्णिमासे दो दो नक्षत्रमें एक एक मासका नाम केवल आश्विन, भाद्र, और फाल्गुन मासका नाम तीन नक्षत्रोंमें सिद्ध है ॥ १६ ॥

अथप्रसङ्गात्कार्तिकादिबृहस्पतिवर्षाण्याह-

वैशाखादिषुकृष्णेचयोगःपञ्चदशेतिथौ ॥
कार्त्तिकादीनिवर्षाणिगुरोरस्तोदयात्तथा ॥ १७ ॥

यथापौर्णमास्यांनक्षत्रसम्बन्धेनतत्संज्ञोमासोभवति । तथेतिसमुच्चयार्थकम् । बृहस्पतेःसूर्यसान्निध्यदूरत्वाभ्यामस्तादुदयाद्वावैशाखादिषुद्वादशसुमासेषुकृष्णपक्षेपञ्चदशेतिथौ । अमायामित्यर्थः । चकारःपौर्णमासीसम्बन्धात्समुच्चयार्थकः । योगोदिननक्षत्रसम्बन्धः । कार्तिकादीनिद्वादशवर्षाणिभवन्ति । वैशाखकृष्णपक्षपञ्चदश्याममारूपायांबृहस्पते स्तउदयेवाजातेसतितदापिबृहस्पतिवर्षंकृत्तिकादिनक्षत्रसम्बन्धात्कार्तिकसञ्ज्ञम् । एवंज्येष्ठाषाढश्रावणभाद्रपदाश्विनकार्तिकमार्गशीर्षपौषमाघफाल्गुनचैत्रामासुमृगपुष्यमघापू०फा० चित्राविशाखाज्येष्ठापू० षा० श्रव-

णपू० भा० अश्विनीदिननक्षत्रसम्बन्धान्मार्गशीर्षादीनिभवन्ति । अत्रापिप्रोक्तन-क्षत्रद्वयत्रयसम्बन्धःप्रागुक्तोबोध्यः । अनेनेत्युपलक्षणम् । तेनयद्दिनेबृहस्पतेरुदयोऽस्तोवातद्दिनेयच्चन्द्राधिष्ठितनक्षत्रंतत्सञ्ज्ञंबार्हस्पत्यंवर्षंभवतीतितात्पर्यम् । संहिताग्रन्थेऽस्तोदयवशाद्वर्षोक्तिःपरमिदानीमुदयवर्षव्यवहारोगणकैर्गण्यतेयेनोदितेज्यइत्युक्तेरिति ॥ १७ ॥

भा०टी०-जैंसे वैशाखादिमें पूर्णिमाकी तिथिके नक्षत्रसे मासका नाम होता है तैंसे ही बृहस्पतिके अस्तोदयसमय कृष्णापंचदशी तिथिके नक्षत्रानुसार वर्षका नाम होता है ॥ १७ ॥

अथक्रमप्राप्तंसावनमाह-

उदयादुदयंभानोःसावनंतत्प्रकीर्तितम् ॥
सावनानिस्युरेतेनयज्ञकालविधिस्तुतैः ॥ १८ ॥

सूर्यस्योदयादुदयकालमारभ्याव्यवहितोदयकालपर्यन्तंयत्कालात्मकंतत्सावनंमानज्ञैरुक्तम् । एतेनोदयद्वयान्तरात्मककालस्यगणनयासावनानिवसुद्व्यष्टाद्रीत्यादिनामध्याधिकारोक्तानिभवन्ति । तद्व्यवहारमाह । 'यज्ञकालविधिरिति ।' यज्ञस्ययःकालस्तस्यगणनातैःसावनैः । तुकारोऽन्यमाननिरासार्थकैवकारपरः ॥ १८ ॥

भा०टी०-एक सूर्योदयसे लेकर दूसरे सूर्योदयतक कालका नाम सावन है । इस्से ही यज्ञकालकी विधिका निर्णय होता है ॥ १८ ॥

अथव्यवहारान्तरमाह-

सूतकादिपरिच्छेदोदिनमासाब्दपास्तथा ॥
मध्यमाग्रहभुक्तिस्तुसावनेनैवगृह्यते ॥ १९ ॥

सूतकंजन्ममरणसम्बन्धि । आदिपदग्राह्यंचिकित्सितचान्द्रायणादि तस्यपरिच्छेदोनिर्णयः । दिनाधिपमासेश्वरवर्षेश्वराः । तथासमुच्चये । ग्रहाणांगतिर्मध्यमा । तुकारात्स्पष्टगतेर्निरासः । तस्याःप्रतिक्षणंवैलक्षण्याद्दिनसम्बन्धस्याभावात् । एतेनस्पष्टगत्यास्पष्टग्रहस्यचालनंनिरस्तंस्थूलत्वादितिसूचितम् । सावनमानेन । एवकारादन्यमाननिरासः । गृह्यतेसुधीभिरङ्गीक्रियते । अत्रबहुवचनानुरोधेनगृह्यतइत्यत्रबहुवचनंज्ञेयम् ॥ १९ ॥

भा०टी०-सूतकादि आशौच दिन मास और अब्दपति ग्रहकी मध्यभुक्ति सावनके अनुसार ग्रहण कीजाती है ॥ १९ ॥

अथदिव्यमानमाह-

सुरासुराणामन्योन्यमहोरात्रंविपर्ययात् ॥
यत्प्रोक्तंतद्भवेद्दिव्यंभानोर्भगणपूरणात् ॥ २० ॥

पूर्वार्धपूर्वंव्याख्यातम् । यदहोरात्रंपूर्वार्धोक्तंसूर्य्यस्यभगणभोगपूर्तेःप्रोक्तंपूर्वमने-कधानिर्णीतंतदहोरात्रंदिव्यमानंस्यात् ॥ २० ॥

भा०टी०-सुर असुरोंके परस्पर विपरीतभावसे दिनरात होता है सूर्यके भगणपूरणक कालही दिव्य दिन है ॥ २० ॥

अथावशिष्टप्राजापत्यब्राह्ममानेआह-

मन्वन्तरव्यवस्थाचप्राजापत्यमुदाहृतम् ॥
नतत्रद्युनिशोर्भेदोब्राह्मःकल्पःप्रकीर्तितम् ॥ २१ ॥

मन्वन्तरव्यवस्थामन्वन्तरावस्थितिः । 'युगानांसप्ततिःसैका ।' इत्यादिनाम-ध्याधिकारोक्तेतिचार्थः । प्राजापत्यंमानंमानज्ञैरुदाहृतमुक्तं मनूनांप्रजापतिपुत्र-त्वात् । ननुदेवपितृमानयोर्दिनरात्रिभेदोयथोक्तस्तथास्मिन्मानेदिनरात्रिभेदप्रति-पादनंकथंनोक्तमित्यतआह । नेति । तत्रप्राजापत्यमानेद्युनिशोर्दिनरात्र्योर्भेदो-विवेकोगुरुसौरचान्द्रमानवन्नास्ति । ब्रह्ममानमाह । ब्राह्मःइति । कल्पोयुगसह-स्रात्मकःप्रागुक्तः । ब्रह्ममानंमानज्ञैरुक्तम् । यद्यपिपूर्वंपित्र्यबार्हस्पत्यमानयोरनु-क्तेरत्रतयोरेवनिरूपणमुक्तमन्येषांनिरूपणंतुपूर्वोक्त्यापुनरुक्तंतथापि पूर्वगणिताद्यु-पजीव्यपरिभाषाकथनावश्यकतयागणितप्रवृत्त्यर्थंतेषाममानत्वेन निरूपणादत्रतुवि-शेषकथनार्थंमानत्वेनपुनस्तेषांनिरूपणंप्रश्नोत्तरत्वेनाक्षतिकरमन्यथाप्रश्नानुपपत्तेरि-तिदिक् ॥ २१ ॥

भा०टी०-प्रजापति आदि मन्वन्तरकी व्यवस्था पहले कही है। इसमें दिनरातका भेद नहीं। कल्पही ब्रह्ममान है ॥ २१ ॥

अथस्वोक्तमुपसंहरति-

एतत्तेपरमाख्यातंरहस्यंपरमाद्भुतम् ॥
ब्रह्मैतत्परमंपुण्यंसर्वपापप्रणाशनम् ॥ २२ ॥

हेपरमदैत्यश्रेष्ठसूर्य्यभक्तत्वात् । तेतुभ्यमेतदधुनोक्तंपरंद्वितीयकथनमाख्यातं-निराकाङ्क्षतयासम्पूर्णकथितम् । पूर्वंसावशेषमुक्तंस्थितमितित्वयाप्रश्नाः कृता-स्तदुत्तररूपद्वितीयकथनमिदंनिःसंदिग्धमस्तीतितवसंशयानोद्भवन्तीतिभावः । ननुमत्प्रश्नंविनापूर्वमेवेदंकथंनोक्तमित्यतआह । रहस्यमिति । कुतइत्यतआह । अद्भुतमिति । आकाशस्थग्रहनक्षत्रादिस्थितिज्ञानसम्पादकत्वादाश्चर्यकरमित्यर्थः । तथाचमत्पूर्वोक्तंयेनसावधानतयाश्रुतंतेनैवत्वदुक्ताःप्रश्नाःकर्तुंशक्यास्तदुत्तरत्वेनद्वि-तीयंमदुक्तमितित्वांपरीक्ष्यत्वांप्रत्युक्तंरहस्यमितिभावः । नन्वन्यशास्त्राणांज्ञानाद्-ब्रह्मानन्दावाप्तिरस्मान्नेत्यतआह । ब्रह्मेति । एतन्मदुक्तंब्रह्मब्रह्मसमंतथाचान्य-शास्त्राणांब्रह्मसमत्वाभावेऽपितज्ज्ञानाद्ब्रह्मानन्दावाप्तिरस्माद्ब्रह्मस्वरूपाद्ब्रह्मानन्दा-

वाप्तौकिंचित्रमितिभावः । कुतइदंब्रह्मसममित्यतआह । परमिति । उत्कृष्टम् । अत्रहेतुभूतं विशेषणद्वयमाह । पुण्यंसर्वपापप्रणाशनमिति । पुण्यजनकंसर्वपाप-नाशकम् ॥ २२ ॥

भा०टी०-हे श्रेष्ठ ! यह परम अद्भुत रहस्य कहा । यह सर्वपापका नाश करनेवाला अति-पवित्र है, वरन् ब्रह्मस्वरूप है ॥ २२ ॥

नन्वस्माद्ब्रह्मानन्दप्राप्तिरुक्तापूर्वंग्रहलोकप्राप्तिश्चोक्तातत्रानयोः किंफलभवती-त्यतआह-

दिव्यंचार्क्षग्रहाणांचदर्शितंज्ञानमुत्तमम् ॥
विज्ञेयार्कादिलोकेषुस्थानंप्राप्नोतिशाश्वतम् ॥ २३ ॥

आर्क्षंनक्षत्रसंबन्धिज्ञानंग्रहाणांज्ञानम् । चःसमुच्चये । उत्तमंसर्व्वशास्त्रेभ्यउत्कृ-ष्टम् । अत्रहेतुभूतंविशेषणंदिव्यंस्वर्गलोकोत्पन्नंदर्शितंमयातुभ्यमुपदिष्टंविज्ञायज्ञा-त्वार्कादिलोकेषुसूर्यादिग्रहलोकेषुस्थानमधिष्ठानं प्राप्नोतिशाश्वतं नित्यंब्रह्मसायु-ज्यरूपंस्थानम् । पूर्वार्धस्थद्वितीयचकारःसमुच्चयार्थकोऽत्रान्वेति । तथाचोभयंफलं क्रमेणभवतीतिभावः । यत्त्वेतत्तेपरमाख्यातमित्यादिश्लोकः क्वचित्पुस्तकेऽस्मात्-श्लोकात्पूर्वंनास्ति किन्तुमाननिरूपणान्तस्थदिव्यंचार्क्षमित्यादिश्लोकान्तेमानाध्या-यसमाप्तिंकृत्वाग्रे । "यथाशिखामयूराणांनागानांमणयो यथा ॥ तद्वद्वेदाङ्गशास्त्रा-णांगणितंमूर्धनिस्थितम् ॥ १ ॥ नदेयंतत्कृतघ्नायवेदविप्लावकायच । अर्थलुब्धा-यमूर्खायसाहङ्कारायपापिने ॥ २ ॥ एवंविधायपुत्रायाप्यदेयंसहजायच । दत्ते-नवेदमार्गस्यसमुच्छेदःकृतोभवेत् ॥ ३ ॥ व्रजेतामन्धतामिस्रंगुरुशिष्यौसुदारुणम् । ततःशान्तायशुचयेब्राह्मणायैवदापयेत् ॥ ४ ॥ चक्रानुपातजोमध्योमध्यवृत्तां-शजःस्फुटः । कालेनदृक्समोनस्यात्ततोबीजक्रियोच्यते ॥ ५ ॥ राश्यादिरिन्दु-रङ्कघ्नोभक्तोनक्षत्रकक्षया । शेषंनक्षत्रकक्षायास्त्यजेच्छेषकयोस्तयोः ॥ ६ ॥ यद-ल्पंतद्भजेद्धानांकक्षयातिथिनिघ्नया । बीजंभागादिकंतत्स्यात्कारयेत्तद्धनंरवौ ॥ ७ ॥ त्रिगुणंशोधयेदिन्दौजिनघ्नंभूमिजेक्षिपेत् । दृग्यमघ्नमृणंज्ञोच्चेखरामघ्नं गुरावृणम् ॥ ८ ॥ ऋणंव्योमनवाघ्नंस्याद्दानवेज्यचलोच्चके ॥ धनंसप्ताहतंम-न्देपरिधीनामथोच्यते ॥ ९ ॥ युग्मान्तोक्ताःपरिधयोयेतेनित्यंपरिस्फुटाः ॥ ओजान्तोक्तास्तुतेज्ञेयाःपरबीजेनसंस्कृताः ॥ १० ॥ वच्मिनिर्बीजकानोज-पदान्तेवृत्तभागकान् ॥ सूर्येन्द्वोर्मनवोदन्ताधृतितत्त्वकलोनिताः ॥ ११ ॥ बाणतर्कामहीजस्य सौम्यस्याचलबाहवः ॥ वाक्पतेरष्टनेत्राणिव्योमशीतां-शवोभृगोः ॥ १२ ॥ सूर्यर्तवोऽर्कपुत्रस्यबीजमेतेषुकारयेत् ॥ बीजंखा-

ग्न्युद्धृतंशोध्यंपरिध्यंशेषुभास्वतः ॥ १३ ॥ इनाप्तंयोजयेदिन्दोःकुजस्याश्वहतंक्षिपेत् । विदश्चन्द्रहतंयोज्यंसूरेरिन्द्रहतंधनम् ॥ १४ ॥ धनंभृगोर्भुवान्निघ्नं रविघ्नंशोधयेच्छनेः ॥ एवंमान्दाःपरिध्यंशाःस्फुटाःस्युर्वच्मिशीघ्रकान् ॥१५॥ भौमस्याभ्रगुणाक्षीणिबुधस्याब्धिगुणेन्दवः ॥ बाणाक्षादेवपूज्यस्यभार्गवस्येन्दुषडचमाः ॥ १६ ॥ शनेश्चन्द्राब्धयःशीघ्राः ओजान्तेबीजवर्जिताः ॥ द्विघ्नं स्वंकुजभागेषुबीजंद्विघ्नमृणंविदः ॥ १७ ॥ अन्त्यष्टिघ्नंवनंसूरेरिन्दुघ्नंशोधयेत्कवेः ॥ चन्द्रघ्नमृणमार्कस्यस्युरेभिर्दृक्समाग्रहाः ॥ १८ ॥ एतद्बीजंमयाख्यातंप्रीत्यापरमयातव ॥ गोपनीयमिदं नित्यंनोपदेश्यंयतस्ततः ॥ १९ ॥ परीक्षितायशिष्यायगुरुभक्तायसाधवे॥ देयंविप्रायनान्यस्मैप्रतिकंचुककारिणे॥२०॥ बीजंनिःशेषसिद्धान्तरहस्यंपरमंस्फुटम् । यात्रापाणिग्रहादीनांकार्याणांशुभसिद्धिदम् ॥'' २१ ॥ इत्यस्यक्कचित्पुस्तकेलिखितस्यबीजोपनयनाध्यायस्यान्तेलिखितोदृश्यतेतत्तुनसमञ्जसम् । उत्तरखण्डेग्रहगणितनिरूपणाभावात्तन्निरूपणप्रसङ्गनिरूपणीयस्याध्यायस्यालेखनानौचित्यात्स्पष्टाधिकारेतदन्तेवास्यलेखनस्ययुक्तत्वाच्च । किञ्च । 'मानानिकतिकिंश्चतैः ।' इतिप्रश्नाग्रेप्रश्नानामभावात्प्रश्नोत्तरभूतोत्तरखण्डेऽस्यलेखनमसंगतम् । अपिच । उपदेशकालेबीजाभावादग्रेऽन्तरदर्शनमनियतंकथमुपदिष्टमन्यथान्तर्भूतत्वेनैवोक्तः स्यादित्यादिविचारेणकेनचिद्दृष्टेनबीजस्यार्षमूलकत्वज्ञापनायान्तेऽत्रबीजोपनयनाध्यायःप्रक्षिप्तइत्यवगम्यनव्याख्यातइतिमन्तव्यम् ॥ २३ ॥

भा०टी०-ग्रह और नक्षत्रसंम्बन्धीय दिव्य उत्तम ज्ञान जो मैंने कहा तिसके प्राप्तकरनेसे सूर्यादि लोकमें नित्यस्थान मिलता है ॥ २३ ॥

अथमुनीन्प्रतिकथितसम्वादस्योपसंहारमाह–

इत्युक्त्वामयमामन्त्र्यसम्यक्तेनाभिपूजितः ॥
दिवमाचक्रमेर्कांशःप्रविवेशस्वमण्डलम् ॥ २४ ॥

सूर्यांशपुरुषोमयासुरमामन्त्र्यसम्यक्तत्त्वतोग्रहादिचरितमुपदिश्य । इति । एतत्तेइत्यादिश्लोकद्वयमुक्त्वाकथयित्वा । समुच्चयार्थकश्चोऽनुसन्धेयः । दिवंस्वर्गमाचक्रमे । आक्रमणविषयंचक्रे । ननुसूर्यांशपुरुषस्यतदुपदेशेकोवापुरुषार्थइत्यतआह । तेनेति । मयासुरेणाभिपूजितः । गन्धधूपादिनैवेद्यवस्त्रालङ्करणादिभिःपूजाविषयीकृतः । मयद्वारामर्त्यलोकेसिद्धिंसूर्यतुल्यत्वेनप्राप्तइतिभावः । ननुस्वर्गेऽपिकिंस्थानंगतइत्यतआह । प्रविवेशेति । स्वमण्डलंसूर्यविम्बंविशतिस्माधिष्ठितवान् । अत्रापिसमुच्चयार्थोऽनुसन्धेयश्चकारः ॥ २४ ॥

भा०टी०-इसप्रकार मयको भली भांति उपदेश देनेके पीछे तिस्से पूजित होकर सूर्यांश पुरुष स्वर्गमें चढकर सूर्यमण्डलमें प्रवेश करते हुए ॥ २४ ॥

अथमयासुरावस्थांतात्कालिकीमाह-

मयोऽथदिव्यंतज्ज्ञानंज्ञात्वासाक्षाद्विवस्वतः ॥
कृतकृत्यमिवात्मानंमेनेनिर्धूतकल्मषम् ॥ २५ ॥

अथसूर्य्यांशपुरुषाऽन्तर्धानानन्तरंमयासुरस्तज्ज्ञानंग्रहर्क्षस्थित्यादिज्ञानंपूर्वोक्तंदिव्यंस्वर्गस्थंसूर्यात्साक्षादनन्यद्वारेत्यर्थः । सूर्यांशपुरुषस्यसूर्याभिन्नत्वंतदुत्पन्नत्वादतएवभेदेऽपिसाक्षादुक्तंयुक्तम् । ज्ञात्वात्मानंस्वंनिर्धूतकल्मषंनिवारितपापंकृतकृत्यंसम्पादितकार्यंमेनेमन्यतेऽस्म ॥ २५ ॥

भा०टी०-मयभी साक्षात् सूर्यनारायणसे दिव्यज्ञान प्राप्त करके कृतार्थ हो कलुषशून्य हुआ और ऐसाही मनमें समझने लगा ॥ २५ ॥

अथत्वमिदंज्ञानंकथंप्राप्तवानितिश्रोतृमुनिभिःपृष्टोमुनिस्तान्प्रतितत्रत्याअस्मत्प्रभृतयऋषयोमयंप्रत्येतज्ज्ञानंपृष्टवन्तइत्याह-

ज्ञात्वातमृषयश्चाथसूर्यलब्धवरंमयम् ॥
परिवव्रुरुपेत्याथोज्ञानंपप्रच्छुरादरात् ॥ २६ ॥

अथमयासुरस्यज्ञानप्राप्त्यनन्तरमृषयःसूर्य्यांशपुरुषमयासुरसम्वादाश्रितभूमिप्रदेशासन्नभूमिप्रदेशस्थाअस्मत्प्रभृतयोमुनयस्तं कृतकृत्यंमयासुरंसूर्य्यलब्धवरंसूर्यात्प्राप्तोवरोज्ञानप्रसादोयेनैतादृशंज्ञात्वा।उपसमीपएत्यागत्य। चःसमुच्चये। परिवव्रुःवेष्टितवन्तः । अथोअनन्तरमादरादत्यन्तंसाभिलाषितयातंज्ञानं ग्रहादिचरितंपप्रच्छुःपृष्टवन्तः ॥ २६ ॥

भा०टी०-मयने सूर्यभगवानसे वर पायाहै. ऐसा जानकर मुनियोंने तिसके निकट आय आदरसहित पूछाथा ॥ २६ ॥

अथमयासुरःस्वज्ञानंतत्प्रश्नकारकानस्मत्प्रभृतीन्मुनीन्प्रतिकथयामासेत्याह-

सतेभ्यःप्रददौप्रीतोग्रहाणांचरितंमहत् ॥
अत्यद्भुततमंलोकेरहस्यंब्रह्मसम्मितम् ॥ २७ ॥

मयासुरःप्रीतःसन्तुष्टःसन्तेभ्योऽस्मत्प्रभृतिभ्यऋषिभ्योग्रहाणांस्थित्यादिज्ञानंमहदपरिमेयमतएवब्रह्मसाम्मितंब्रह्मतुल्यं लोकेभूलोकेऽत्यद्भुततममत्यन्तमाश्चर्य्यकारकंश्रेष्ठमतएवप्रददौप्रकर्षेणनिर्व्याजतयादत्तवान्कथयामासेत्यर्थः ॥ २७ ॥

भा०टी०-ग्रहोंको चरित्ररूप अत्यन्त अद्भुत ब्रह्मसम्मित रहस्य मैंने प्रसन्न होकर ऋषियोंको दियाथा ॥ २७ ॥*

अथमानाध्यायसमाप्त्यासूर्यसिद्धान्तसमाप्तिंकस्यचित्प्रक्षिप्ताध्यायस्यनिवारिकां फक्किकयाह-

सूर्यसिद्धान्तेमानाध्यायः ॥ १४ ॥

रङ्गनाथेनरचितेसूर्यसिद्धान्तटिप्पणे ॥ मानाध्यायोत्तरदलेपूर्णोगूढप्रकाशके ॥ भागीरथीतीरसंस्थेशम्भोर्वाराणसीपुरे। बल्लालगणकोरुद्रजपासक्तोऽभवद्बुधः॥१॥ तस्यात्मजाःपञ्चगुणाभिरामाज्ज्येष्ठःसरामःसकलागमज्ञः । येनोपपत्तिःस्वधिया नितान्तंप्रकाशितानन्तसुधाकरस्य ॥ २ ॥ ततःसकृष्णोजहंगीरसार्वभौमस्यसर्वाधिगतप्रतिष्ठितः ॥ श्रीभास्करीयंनिवृतंतुयेनवीजंतथाश्रीपतिपद्धतिःसा ॥ ३ ॥ गोविन्दसञ्ज्ञस्तुततस्तृतीयस्तस्यानुजोऽहंगुरुलब्धविद्यः ॥ विश्वेशपत्पद्मनिविष्टचेताः काशीनिवासीसकलाभिमान्यः ॥ ४ ॥ श्रीरङ्गनाथोर्कमुखोर्त्थशास्त्रेगूढप्रकाशाभिधटिप्पणंसः ॥ कृत्वामहादेवबुधाग्रजोथविश्वेश्वरायार्पितवान्सुवृद्ध्यै ॥ ५ ॥ शकेतत्त्वतिथ्युन्मितेचैत्रमासेसितेशम्भुतिथ्यांबुधेऽर्कोदयान्मे । दलाढ्यद्विनाराचनाडीषुजातौसुनीशार्कसिद्धान्तगूढप्रकाशौ ॥ ६ ॥ गूढप्रकाशकंदृष्ट्वारङ्गनाथभवंभुवि ॥ मुनीश्वरस्यसहजंलभन्तांगणकाःसुखम् ॥ ७ ॥

इतिश्रीसकलगणकसार्वभौमबल्लालदैवज्ञात्मजरङ्गनाथविरचितःसूर्यसिद्धान्तगूढार्थप्रकाशकःसम्पूर्णः ॥

समाप्तश्चसूर्यसिद्धान्तः ॥

चतुर्दशअध्यायसमाप्त ॥

उत्तरखण्ड पूर्णहुआ।

---

* सिद्धान्तरहस्यमते। कल्यब्दपिण्डात्त्रिसहस्रलब्धं भागादिबीजं धनमिन्दुदेज्ये। त्रिघ्नं शनौ वेदहतं बुधोच्चे द्वित्रिघ्नभिज्यास्फुजितोर्विशोध्यम् ॥ जातकार्णवे-खबाणगिरिभिर्बुधे धनमृणं खखेष्विन्दुभिर्गुरावथ ऋणं सिते रविसुते धनं दिक्छतैः। विधुस्तदविधूच्चये शतहताभ्रवैश्वानरैर्ऋणं कलियुगाब्दतो नयनगोचराः खेचराः ॥

सूर्यसिद्धान्तः समाप्तः।

उदाहरणम् ।



अहर्गणानयन (१ अ० ५१ श्लो०)। शाके १८१७ के प्रथमदिनका अहर्गण कृतयुगके शेषतक १९५३७२०००० त्रेता और द्वापरमान २१६०००० और कलियुगके बीतेहुए ४९९६ मिलानेसे १९५५८८४९९६ कल्पगताब्दवर्ष हुआ। इसको १२ से गुणा करनेपर २३४७०६१९९५२ मास हुए। इस संख्याका अधिमास संख्या १५९३३३६ से गुणाकरनेपर ३७३९६५८३७११८३९८७२ हुए। इनको सौरमासकी संख्या ५१८४०००० से भाग करनेपर ७२१३८४७१६ हुए भागावशेष छोडे गए। यह संख्या माससंख्यामें मिलाकर २४१९२००४६६८ इस माससंख्याको ३० तीससे गुणाकरके मधुशुक्लादि तिथिसंख्या १८ मिलानेसे ७२५७६०१४००५८ दिन हुए। इस दिन संख्याको तिथि क्षय २५०८२२५२ से गुणा करनेपर १८२०३६९८७२४४९००५०६१६ हुए। इसको चान्द्र दिन १६०३०००००८० से भाग करके भागावशेषको छोड़ देनेसे ११३५६०१८६०० येलब्ध हुए। यह सख्या दिनसंख्यासे घटानेपर ७१४४०४१२१४५८ शेष रही। शनिवार होनेसे ७१४४०४१२१४५९ अहर्गण हुआ॥

मध्यानयन। (१ अ० ५३ श्लोक) अहर्गणको सूर्यभगण ४३२०००० से गुणा करनेपर ३०८६२२५८०४७०२८८०००० ये हुए। इस संख्याको सौरदिन १५७७९१७८२८ से भाग करनेपर लब्ध १९५५८८४९९५ भगण हुए। शेष १५७४६८९१४० को १२ से गुणकरके सौरदिनसे भाग करनेपर ११ राशि हुई और अवशेषको ३० से गुण करके सौरदिनसे भाग करनेपर २९ अंश हुए। बाकीकी कला विकलादि करके १५ कला ४८ विकला और ९ अनुकला हुई। शेष छोड दिये गए। भगण संख्याको छोड़ देनेसे रविमध्य ११। २९। १५ ४८। ९ हुआ।

देशान्तरानयन (१ अ० ६० श्लो०)। भूकर्ण १६०० योजनके वर्गको १० से गुणाकरनेपर २५६००००० हुए (इसका मूल निकालनेसे ५०६० योजन हुए। ५ अंगुल छायाके वर्ग करनेसे २५ और शंकुवर्ग १४४ मिलाकर मूल निकालनेसे १३ हुए। यह छायाकर्ण है। विषुवदिनके शंकु १२ से त्रिज्या (३४३८) को गुणाकरनेसे ४१२५६ हुए। इस संख्याको छायाकर्ण १३ से भाग करनेपर ३१७३ भाग फल लम्बज्या हुई इसको योजन संख्या ५०६० से गुणाकरनेपर १६०५५३८० हुए।

इसको त्रिज्या ३४३८ से भाग करनेपर स्फुट भूपरिधि ४६६९ योजन हुई किसीदेशकी योजनसंख्या १५० है। सूर्यकी दैनिक भुक्ति कलासे गुणा करनेपर ८८७० हुए। इसको स्फुट भूपरिधिसे भाग करनेपर १।५३ कला विकलाहुई। यह रविमध्यमें स्वदेशकी पूर्वदिशामें होनेसे वियोग करनेसे ११ २९।१३।५५।९ ये हुए।

मन्दोच्चानयन। (१ अ० ५४ श्लो०) कृतयुगके शेषमें शनिका मन्दोच्चनिरूपणकरना। १९५३७२०००० वर्ष संख्याको, शनिके मन्दोच्च कल्पभगण ३९ से गुणा करनेपर ७६१९५०८०००० हुए। इसको कल्पमान ४३२०००००० से भाग करनेपर १७ भगण राश्यादि ७।१९। ३५। २४ हुई। गतिकी अल्पताके वशसे देशान्तरका संस्कार मध्यसाधन और चन्द्रमाके मन्दोच्चसाधन विना निष्प्रयोजन है।

पातमध्यानयन। शाके १८१७ के आरम्भमें शनिका पातानयन है। १९५५८८४९९६ वर्षको भगण ६६२ से गुणकरके ४३२०००००० से भागकरनेपर २९९।२१।३८।१६ भगणादि शनिके पातमध्य हुए।

रविस्फुटानयन। (२ अ० ४६ श्लो०) रविमन्दोच्च २।१७।१७।२८ से रविमध्य ११।२९।१५।४८। अलगकरनेसे २।१८।१।४० मन्दकेन्द्र हुआ। केन्द्रविषमपादमें स्थित (२ अ० ३४ श्लो०) हुआ। अत एव गतकेन्द्रही भुज है। केन्द्रको कलाकरके २२५ से भागकरके २० भागफलके अनुसार ज्याकरनेसे ३३२१ हुए। भागावशिष्टसे ज्यान्तर ५१ को गुणाकरके २२५ से भाग करनेपर लब्ध ४१ कला हुआ। यह ज्या ३३२१ के साथ मिलनेसे ३३६२ मन्दभुजज्या हुई। सूर्यकी दोमन्दपरिधि अन्तर २० कला है। इसकोज्या ३३६२ से गुणकरके त्रिज्या ३४३८ से भागकरनेपर १९ कला ३४ विकला हुआ। युग्मअन्तमें मन्दपरिधि १४। ० से १९ कला ३४ विकला अलग करदेनेसे १३।४०। २६ स्फुट परिधि हुई। इसको ज्यासे गुणकरके ३६० से भागकरनेपर २।७।३६ अंशादि हुए। यही मन्दभुजज्याफल है। इसके धनुकरनेसे अंश २।७।३६ वही हुए। मन्दकेन्द्र मेषादिकेन्द्र होनेके कारण रविमध्यमें मिलानेसे ०।१।२३।२४। राश्यादि रवि स्फुट हुआ। रविभुजमान्यफल १२८ कला रविस्पष्ट भुक्तिसे गुणकरके २१६०० से भागकरनेपर २ विकला हुई। सो रविस्फुटमें मान्यफलका योग होनेसे योग करनेपर ०।१।२३।२६ मध्यरात्रिक भुज संस्कृत रवि स्फुटहुआ।

शनिस्फुटसाधन । शनिमध्य ५।२९।७।८ शनिशीघ्र ११ । २९ । १५ । ४२ से वियोगकरनेपर शेष ६ । ० । ८ । ३४ शीघ्रकेन्द्र हुआ । केन्द्रविषमपादमेंस्थितहै । गतकला ८ । ३४ भुज इसकी ज्या और कलादि ८ । ३४ । गम्यकला कोटीकला । तिसको २२५ से भागकरके भागफलके अनुसार ज्यानिर्देशकरके शेष ज्यान्तरसे गुणाकरके २२५ से भागकरनेपर लब्धज्यामें संस्कार करनेसे ३४३७ । ४९ । कोटीज्या हुई । भुजज्याको त्रिज्यासे भागकरनेपर ९ विकला हुई । स्फुट शीघ्र परिधिमें संस्कार करनेसे ३९ । ० । ९ अंशादि हुई । भुजज्याको शुद्ध स्फुट परिधिसे गुणा करके ३६० से भागकरनेपर ५६ विकला शीघ्रभुजफल हुआ । कोटिज्याको स्फुटपरिधिसे गुणा करके ३६० से भागकरनेपर कला विकला ३७२ । २२ । हुई । शीघ्रकेन्द्र कर्कादिमें होनेसे त्रिज्या ३४३८ से फल ३७२ । २२ । अलग करनेपर ३०६५ । ३८ शीघ्रकोटीफल हुआ । शीघ्रकोटीफलको विकलाकरके वर्ग करनेपर ३३८३३१८७८४४ हुए । भुजज्याविकलाको वर्ग करनेसे ३१३६ हुए । शीघ्रकोटीफलवर्गके साथ भुजज्यावर्ग मिलाकर मूल निकालनेसे १८३९३८ विकला शीघ्रकर्ण हुआ । भुजफल ५६ विकलाको त्रिज्या ३४३८ से गुणाकरके शीघ्रकर्णद्वारा भागकरनेपर ६३ विकला हुई । कला १ । ३ शनिका प्रथम शीघ्रफल हुआ (यही प्रथमसंस्कार है) इसका अर्द्ध शनिमध्यमें शीघ्रकेन्द्र तुलादि होनेसे वियोगकरनेपर ५ । २९ । ६ । ३७ । शीघ्रफलार्द्धसंस्कृतमध्यशनि हुआ । शनिमन्दोच्च ७ । २६ । ३७ । २४ से शीघ्रफलार्द्धसंस्कृतमध्य वियोगकरने पर १ । २७ । ३० । ४७ प्रथममन्दकेन्द्र हुआ । कलाकरके २२५ से भागकरने पर १५ संख्यातुल्य ज्याग्रहण करके ज्यान्तर ११९ से भागशेष ७५ को गुणाकरके २२५ से भागकरके कला ४० । ४ । हुई । यह ज्या २८५९ इसमें मिलानेसे २८९९ । ४ प्रथममन्द भुजज्या हुई । इसभुजज्याको युग्मायुग्म मन्दपरिधिके अन्तर १ अंशसे गुणकरके ३४३८ त्रिज्यासे भाग करनेपर कला ५० । ३६ हुई युग्मपरिधिसे हीन करनेपर ४८ । ९ । २४ शुद्ध स्फुटपरिधि हुई भुजज्याको शुद्धस्फुट मन्दपरिधिसे गुणाकरके ३६० से भागकरनेपर कला ३८७ । ४९ हुई । इनके धनुकरनेसे ३८८ । २८ मन्दफल हुआ (यह दूसरा संस्कार है) यह प्रथममन्दफलार्द्ध शैघ्यार्द्ध संस्कृत मध्यशनिमें मेषादिकेन्द्रमें मिलानेसे ६ । २ । २० । ५१ शीघ्रार्द्ध मन्दार्द्ध संस्कृतमध्य शनि हुआ ।

फिर शनिमन्दोच्च ७ । २६ । ३७ । २४ से प्रथम मन्दफल संस्कृत मध्य ६ । २ । २० । ५१ वियोग करनेपर १ । २४ । १६ । ३३ येहुए इसकी कला करके २२५ से भागकरने पर भागफल १४ के । अनुसार ज्या २७२८ और ज्या

न्तर १३१ को अवशिष्ट १०६ से गुणाकरके २२५ से भाग करके लब्ध ६१। ४४ को ज्या २७२८ इसमें मिलानेसे २७८९। ४४। द्वितीय मन्दभुजज्या हुई इसको ३४३८ त्रिज्यासे भागकरनेपर फल ४८ । ४१ होताहै । सो ४९ अंशसे हीन करनेसे ४८। ११। १९ द्वितीय शुद्ध मन्द परिधि हुई। द्वितीय मन्दभुजज्या २७८९। ४४ को इससे गुणाकरके ३६० से भागकरनेपर कला ३७३। २६ इसके धनु करनेसे ३७४। ५ दूसरा मन्दफल हुआ। (यही तीसरा संस्कार है) यह शनिमध्यमें ५। २९। ७। ८ में मेषादि केन्द्रहेतु योगकरनेसे ६। ५। २१। १३ यह द्वितीय मन्दस्पष्ट शनि हुआ। शनिशीघ्र ११। २९। १५। ४२ से मन्द स्पष्ट शनि ६। ५।२१। १३ हीन करनेसे शेष ५। २३। ५४। २९ शीघ्रकेन्द्र हुआ। इस्से ३ राशिहीन करके कला बनाय २२५ से भागकरके भागफल २२ के अनुसार ज्या ३४०९ और ज्यान्तर २२ से अवशिष्ट ८४। २९ का अनुपातद्वारा लब्ध ८।१५ ग्रहणकरके ज्या ३४०९ में युक्त करनेसे ३४१७। १५ हुए। युग्म पात होनेसे गत ज्या कोटीज्या हुई। गम्य ३। ६। ५। २५। भुजकी ज्या बनानेसे २६०। २३ भुजज्या हुई। इसको त्रिज्यासे भागकरने पर कला ६। २१ हुई। शीघ्रपरिधिमें संस्कार करनेसे ३९। ६। २१। शुद्ध परिधि हुई। चतुर्थ शीघ्रभुजज्या को शुद्ध परिधिसे गुणकरके ३६० से भागकरनेपर लब्ध ३९। ३५ कला विकला चतुथ शीघ्रभुजफल हुआ। कोटीज्याको शुद्ध परिधिसे गुणकरके ३६० से भाग करनेपर ३७१। १३ हुए। कर्कादि केन्द्र होनेसे त्रिज्या ३४३८ से वियोगकरनेपर ३०६६।४७ चतुर्थ शीघ्रकोटी फल हुआ। शीघ्रभुजफल वर्ग और शीघ्रकोटी फल वर्गके योग फलका मूल निकालनेसे ३०६८ कला शीघ्रकर्ण हुआ। शीघ्रभुज फलको त्रिज्यासे गुणकरके इस शीघ्रकर्णसे भाग करनेपर कलादि ४४। २२ हुए, इसके धनु और कला ४४। २२ शीघ्रफल हुआ (यही चौथा संस्कार है) शनिमन्दस्पष्टमें मेषादि केन्द्रहोनेसे युक्त करने पर ६। ६। ५। ३५ शनिस्फुट हुआ।

ग्रहगति। (२ अ० ४७–५३श्लो.) सूर्यके मन्दसंस्कारमें ५१ कला दोर्ज्यान्तरहै। उसको रविभुक्ति मध्य ५९। ८ से गुणाकरके २२५ से भागकरने पर कला १३। २४ विकला हुई। इसको शुद्ध स्फुट परिधि १३।४०।२६ से गुणाकरके ३६० से भागकरने पर ३० विकला हुई। यह मकरादि केन्द्रके वशसे मध्यभुक्ति ५९। ८ से वियोग करने पर ५८। ३८ सूर्यकी स्पष्ट गति हुई।

चन्द्रग्रहण। (४ अ० १७ आदिश्लो०) सूर्य व्यासयोजन ६५०० सूर्यकी स्पष्ट

गति ६० कलासे गुणाकरके सूर्यकी मध्य भुक्ति ५९।८ से भाग करनेपर ६५९९ योजन रविस्पष्ट व्यास हुआ। चन्द्र व्यास योजन ४८० को चन्द्र स्पष्टगति ८६० कलासे गुणाकरके चन्द्रमध्य भुक्ति ७९०। ३८ से भागकरनेपर ५२२ योजन चन्द्रव्यास और १५ से भाग करनेपर ३५ कला चन्द्र स्पष्ट व्यास हुआ। महीव्यास १६०० को चन्द्र स्पष्टगति ८६० से गुणा करके चंद्र मध्य भुक्तिसे भागकरनेपर लब्ध १७४० सूची हुई। रवि स्पष्ट व्यास ६५९९ से मही व्यास १६०० अलग करके चन्द्रमध्य व्यास ४८० से गुणाकरके सूर्यमध्यव्यास ६५०० से भागकरने पर ३६९ हुआ। इसको सूचीसे वियोग करनेपर १३७१ छायाव्यास और १५ से भाग करनेपर ९१ छायाव्यासकलाहुआ। चन्द्रस्पष्ट ०। २०। ९ से राहुस्फुट ०। १५। ६ अलगकरनेपर ०। ५। ३ हुआ। इसकी भुजज्या ३०४ को परमविक्षेप २७० से गुणाकरके त्रिज्या ३४३८ से भाग करनेपर २४ चन्द्र स्पष्ट विक्षेप हुआ। छाया व्यासकला ९१ और चंद्र व्यासकला ३५ एकत्रकरके आधे करनेसे ६३ हुए। इसके वर्ग ३९६९ से चन्द्र विक्षेपवर्ग ५७६ अलग करके मूल निकालनेसे ५८ हुए। इसको ६० से गुणाकरके सूर्यचन्द्रमाके गत्यन्तर ८०० से भाग करनेपर दण्ड ४। २२। हुई। यही मध्यस्थित्यर्द्ध है। इस समयके चन्द्रस्फुट ०। १९। ८ से राहुस्फुट अलग करदेनेपर ०। ४। २ हुआ इसकी भुजज्या २४२ है। इसको परमविक्षेप २७० से गुणाकरके ३४३८ त्रिज्या से भाग करनेपर १९ यह हुआ। सो वर्ग मान योगार्द्ध वर्गसे अलग करनेपर ३६०६ हुआ। इसके मूल ६० को ६० से गुणकरके गत्यंतरसे भाग करनेपर ४। ३० स्फुट स्थित्यर्द्ध हुआ। पूर्णिमाके अन्तमें वियोग और योग करनेसे स्पर्श और मोक्ष स्थिरहुआ।

चरानयन। वृषका चर निरूपण करना। (२ अ० ६१ श्लो.) राशिअर्थात् ३६०० कलाकी ज्या २९७८ है। इसको परम अपक्रम १३९७ से गुणा करके त्रिज्या ३४३८ से भाग करनेपर १२१५ क्रान्तिज्या हुई। १२१५ क्रान्तिज्याके अनुसार उत्क्रमज्याको ग्रहण करनेसे २२१ येहुए। त्रिज्या ३४३८ से उत्क्रमज्या २२१ को अलग करनेपर ३२१७ दिन व्यास हुआ। क्रान्तिज्या १२१५ को विषुवच्छाया ५ से गुणकरके गुणन फलको १२ से भाग दे भागफलको त्रिज्या ३४३८ से गुणा करके ३२१७ दिन व्याससे भाग करनेपर ५३७ प्राण चर नियत हुआ। इससे मेषका चर प्राण अलग करनेपर वृषकी चर खण्डा होगी।

लम्बन (५ अ० ८श्लो०) ५ । १२ दशम लग्न । ३ । ८ रविस्पष्ट । दशम लग्नकी क्रान्तिज्या ४३० और धनु ४३० कला हुआ । अक्षांश (अं० २२ । ३०) से वियोगकरनेपर ९२० कला नत हुई । इसकी भुजज्या ९१० और कोटिज्या ३३१२ हुई । एक राशिके ज्या वर्ग २९२४९६१ कोटिज्यासे भाग करनेपर ८९२ छेद हुए । दशम लग्न और रविस्पष्टान्तरित ज्या २०९० को छेदसे भाग करने पर दण्ड ३ । २८ लम्बन होताहै । ९१० भुजज्याको ७० से भागाकरने पर १३ नति होतीहै ।

भुजज्याखण्ड ।

अंश	०राशिज्या	१राशिज्या	२राशिज्या
१	०१७४५	५१५०४	८७४६२
२	०३४९०	५२९९२	८८२९५
३	०५२३४	५४४६४	०९१०१
४	०५९७६	५५९१९	८९८७९
५	०८७१६	८७३५८	९०६३१
६	१०४५३	५८७७९	९१३५५
७	१२१८७	६०१८१	९२०५०
८	१३९१७	६१५६६	९२७१८
९	१५६४३	६१९३२	९३३५८
१०	१७३६५	६४२७९	९३९६९
११	१९०८१	६५६०६	९४५५२
१२	२०७९१	६६९१३	९५१०६
१३	२२४९५	६८२००	९५६३०
१४	२४१९२	६९४६६	९६१२६
१५	२५८८२	७०७११	९६५९३
१६	२७५६४	७१९३४	९७०३०
१७	२९२३७	७३१३५	९७४३७
१८	३०९०२	७४३१४	९७८१५
१९	३२५५७	७५४७१	९८१६३
२०	३४२०२	७६६०४	९८४८१
२१	३५८३७	७७७१५	९८७६९

२२	३७४६१	७८८०१	९९०२७
२३	७९०७३	७९८६४	९९२५५
२४	४०६७४	८०९०२	९९४५२
२५	४२२६५	८१९१५	९९६१९
२६	४३८३७	८२९०४	९९७५६
२७	४५३९९	८३८६७	९९०६३
२८	४६९४७	८४८०५	९९९३९
२९	४१४८१	८५७१७	९९९०५
३०	५००००	०६६०३	१०००००

उपरोक्त ज्याको ३४३७ ७४६७७ से गुणा करनेपर सिद्धान्तानुयायी ज्या होगी पृथ्वी व्यासार्द्ध माइल विषुवस्थहै । वेसेल

प्रश्नावली।

१ सिद्धान्तरहस्यके बनानेवालेने लिखाहै, कि कलिके आदिमें ७१४४०२२९ ६६२७ अहर्गणथे। उन्होंने १५१२ शाकेकी आदिमें रविवारमध्यरात्रमें र० म ११।१७।५६।४१ चं०म ५।१६।५३।५२, चं०के ११।१९।४०।२६, मं०म ७।१०। १३।९ बु० शी ७।११।५५।३३ बृ० ६।२९।५०।४८, शु० शी० ।२५।४०।२९, श० २८।१।६ रा० ८।२६।३०।४१ स्थिर करेहैं।

२ मथुरानाथ दैवज्ञनें लिखाहैं कि कलिके आदिमें चन्द्रोच्च २।१७।७।४८, मं० ४।९।५८, बु० ७।१०।१९, बृ० ५।२१ शु०२।१९।३९।, श० ७।२६।३७।

३ चंद्रगतिको १७ से गुण करके ४२० से भाग करनपर चन्द्रमान होताहै। इस मानको १० से गुण करके ३ से भाग करनेपर तिस्से ६० गुणित रविगतिसे ८७३ घटाकर १११ भागलब्ध अंकहीन करनेसे राहुमान होगा।

४ शुक्रके १० अंश शीघ्रकेन्द्रमें अंशादि २ । १२ फलहुआ।

५ दिनचंद्रिकाके मतसे १५२१ शाकेमें मध्यरेखामें वारादि ४ । ४४ । ८। १३ समयके मध्य विषुवरेखामें सूर्यसंक्रमण है ।

६ वराहमिहिरनें जातकार्णवमें ९ । ७ । २६ । ३४ आदि २४ रविका खण्डा कीहैं। और केंद्रानुपातमें खण्डा लेकर फलनिर्णय करनेको कहाहै ।

इति ।

मुद्रक एवं प्रकाशक:

खेमराज श्रीकृष्णदास,

अध्यक्ष : श्रीवेंकटेश्वर प्रेस,

खेमराज श्रीकृष्णदास मार्ग, मुंबई - ४०० ००४.

